ISSN 0973-3914

RESEARCH JOURNAL OF SOCIAL AND LIFE SCIENCES

HALF YEARLY, BILINGUAL (English/Hindi)

A REGISTERED REVIEWED/REFEREED RESEARCH JOURNAL
Indexed & Listed at: Ulrich's International Periodicals Directory©, ProQuest, U.S.A (Title Id: 715205)

अंक–XXIII-I हिन्दी संस्करण वर्ष–12 दिसम्बर, 2017

UGC Sl.No. 1962
Journal No. 40942
Impact Factor 3.112

JOURNAL OF
Centre for Research Studies
Rewa-486001 (M.P.) India
Registered under M.P. Society Registration Act, 1973, Reg. No. 1802,Year-1997
www.researchjournal.in

आई एस एस एन 0973–3914

रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्सेस

पंजीकृत रिव्यूड/रेफर्ड रिसर्च जरनल

A Registered Reviewed/ Refereed

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942, Impact Factor 3.112

Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, ProQuest, U.S.A. Title Id : 715205

अंक-XXIII-I हिन्दी संस्करण वर्ष-12 दिसम्बर, 2017

प्रमुख सम्पादक

प्रोफेसर ब्रजगोपाल

प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड से सम्मानित

ऑनरेरी सम्पादक

डॉ. एस. अखिलेश

प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत एवार्ड से सम्मानित

डॉ. संध्या शुक्ल

प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, राजनीतिविज्ञान

शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा

सम्पादक

डॉ. गायत्री शुक्ल

संयुक्त निदेशक, सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा

सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा

की मुख्य शोध पत्रिका

म.प्र. सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1973 के अंतर्गत पंजीकृत

पंजीयन क्रमांक 1802, सन् 1997

www.researchjournal.in

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज

एक अंक रुपये 500.00

-सदस्यता शुल्क -		
अवधि	व्यक्तिगत सदस्यता	संस्थागत सदस्यता
पांच वर्ष	2000.00	2500.00
आजीवन (15 वर्ष)	4500.00	5500.00

सदस्यता शुल्क की राशि गायत्री पब्लिकेशन्स के स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रांच–रीवा सिटी (आईएफएस कोड 0004667 MICR Code 486002003) के खाता क्रमांक 30016445112 में जमा की जाय नगद जमा की स्थिति में 75 रु. अतिरिक्त बैंक चार्ज जोड़ा जाय।

विषय विशेषज्ञ/परामर्श मण्डल

1. डॉ. राजेश मिश्रा, लखनऊ
2. डॉ. प्रज्ञा मिश्रा, चित्रकूट
3. डॉ. गौतम ज्ञानेन्द्र, भोपाल
4. डॉ. प्रियंकर उपाध्याय, वाराणसी
5. डॉ. अरविन्द जोशी, वाराणसी
6. डॉ. के.के. शर्मा, रीवा
7. डॉ. प्रमिला पूनिया, जयपुर
8. डॉ. बी.सी.एम. पटनायक, भुवनेश्वर
9. डॉ. जयशंकर शाही, अलवर
10. अजय कुमार सिंह, वर्धमान
11. डॉ. आर. एन. शुक्ला, रीवा
12. डॉ. प्रहलाद मिश्रा, जबलपुर
13. डॉ. ए.के. श्रीवास्तव, रीवा
14. डॉ. एन.पी. पाठक, रीवा
15. डॉ. आनन्द कुमार, नई दिल्ली
16. डॉ. जी. के शर्मा, उज्जैन
17. डॉ. बी.पी. बडोला, धर्मशाला
18. डॉ. सुनीता द्विवेदी, नईदिल्ली
19. प्रो. गीता नायर, मुम्बई
20. डॉ. सविता शर्मा, धर्मशाला
21. प्रो. अंजली बहुगुणा, श्रीनगर
22. डॉ. मंजरी अवस्थी, इटारसी
23. डॉ. आर.एन. शर्मा, रीवा
24. डॉ. रामलला शुक्ला, रीवा
25. डॉ. कामराज सिंधु, कुरुक्षेत्र
26. डॉ. सी.एम. शुक्ला, छतरपुर
27. डॉ. बी.के. सिंह, वाराणसी
28. डॉ. ज्योति उपाध्याय, उज्जैन
29. डॉ. आभा सक्सेना, वाराणसी
30. डॉ. पातंजलि मिश्र, रीवा
31. अखिलेश गुप्ता, रीवा
32. डॉ. नन्दलाल मिश्रा, चित्रकूट

संपादकीय कार्यालय- **एस.एस.डी.-4, 'गोकुल', विन्ध्य विहार कालोनी, ए.जी. कॉलेज रोड, दुर्गा मंदिर के सामने, रीवा- 486001 (म.प्र.)**
E-mail-researchjournal97@gmail.com
researchjournal.journal@gmail.com

प्रकाशक- **गायत्री पब्लिकेशन्स, रीवा- 486001 (म.प्र.)**
www.researchjournal.in

रिसर्च जरनल में प्रस्तुत किये गये विचार और तथ्य लेखकों के हैं, जिनके विषय में सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। रिसर्च जरनल के सम्पादन एवं प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी गई है, किन्तु किसी त्रुटि के लिए सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। सम्पादन का कार्य अव्यावसायिक और ऑनरेरी है। सभी विवादों का न्यायालय क्षेत्र, रीवा जिला रीवा (म.प्र.) रहेगा।

सम्पादकीय

रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्सेस का 23वाँ अंक प्रस्तुत करते हुए हमें अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। इस अंक से जरनल के नियमित प्रकाशन के 11 वर्ष पूर्ण हो गये हैं। अभी हाल ही में गुजरात और हिमाचल प्रदेश में विधानसभा के निर्वाचन सम्पन्न हुये है। भारतीय समाज में इस समय यह प्रश्न प्रासंगिक है कि क्या लोकसभा और विधानसभा के चुनाव एक साथ कराये जाने चाहिये। भारत में पहले भी लोकसभा और विधानसभा के चुनाव एक साथ हो चुके हैं। लेकिन किसी विशेष कारणों से इसे बंद करना पड़ा था। चार लोकसभा और विधानसभा चुनाव लगातार साल 1952, 1957, 1962 और 1967 में एक साथ हुए थे। लेकिन 1971 में इंदिरा गांधी ने लोकसभा भंग कर दी थी और तब से इसका सिलसिला टूट गया। आज फिर लोकसभा और विधानसभा चुनावों को एक साथ कराए जाने की संभावना को बल मिल रहा है। पीएम मोदी और पूर्व राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी भी इस संबंध में अपनी राय जाहिर कर चुके हैं। भारत की सबसे बड़ी खूबसूरती यह है कि तमाम विवादों के बाद भी लोकतांत्रिक प्रणाली में लोगों का भरोसा बरकरार है। चुनाव प्रक्रिया के जरिए लोग अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करते हैं और उनके जरिए अपनी दिक्कतों को लोकतंत्र के मंदिर यानि संसद या राज्यों की विधानसभा में रखते हैं। लेकिन चुनावी प्रक्रिया को अगर देखें तो जनप्रतिनिधियों को चुनने की यह कवायद देश के किसी न किसी हिस्से में निरंतर चलती ही रहती है। इससे न केवल विकास प्रक्रिया पर असर होता है, बल्कि आर्थिक बोझ भी बढ़ जाता है। चुनावों को एक साथ कराने की मांग अलग-अलग समय पर उठती रही है। ये कहा जा रहा है कि 2018 में सात राज्यों की विधानसभा के साथ ही लोकसभा के चुनाव कराए जा सकते हैं।

लोकसभा और विधानसभा चुनाव एक साथ कराए जाने की बात प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी कई मौकों पर कह चुके हैं। 31 दिसंबर 2016 को राष्ट्र के नाम संबोधन में पीएम ने कहा कि विकास के पहिए में गति बरकरार रहे इसके लिए जरूरी है कि चुनावी प्रक्रिया एक साथ ही पूरी की जाए। ऐसा करने से आम लोगों के लिए सरकारों के पास पर्याप्त समय होगा। इससे पहले अप्रैल 2016 में दिल्ली में मुख्यमंत्रियों और मुख्य न्यायाधीशों के सम्मेलन में भी पीएम ने एक साथ चुनाव कराने का जिक्र किया था। इस संबंध में नीति आयोग ने 2024 से लोकसभा और विधानसभा चुनावों को एक साथ कराए जाने पर अपनी रिपोर्ट दी थी। नीति आयोग के मुताबिक इसे जमीनी स्तर पर उतारने के लिए कुछ राज्यों की विधानसभाओं के कार्यकाल में बढ़ोतरी और कुछ के कार्यकाल में कटौती करना होगा। एक साथ चुनाव कराने के लिए संविधान के कई अनुच्छेदों में संशोधन कराना होगा और संशोधन प्रस्ताव को संसद के दोनों सदनों में पारित कराना होगा।

2019 में लोकसभा और विधानसभा चुनाव कराने के लिए करीब 14 लाख नए इवीएम की जरूरत होगी। सरकार ने चुनाव आयोग को इस संबंध में 1009 करोड़ रुपये आवंटित किए हैं। मध्य प्रदेश, राजस्थान, छत्तीसगढ़, बिहार, केरल, तमिलनाडु समेत 18 राज्य भी एक साथ चुनाव कराने के सैद्धांतिक रूप से पक्ष में हैं। भाजपा, असम गण परिषद, कांग्रेस, डीएमके, एआईडीएमके व इंडियन मुस्लिम लीग जैसी पार्टियां लोकसभा व विधानसभा चुनाव एक साथ कराने का वैचारिक समर्थन करती हैं, अगर व्यवहारिक मुश्किलों को दूर कर लिया जाए तो चुनावों को एक साथ कराने का तर्क इस बात से पुष्ट होता हैं कि विधि आयोग ने भी अपनी 170वीं रिपोर्ट में इसका समर्थन किया था। राष्ट्रीय खजाने से साल 2014 के लोकसभा चुनाव में 3426 करोड़ रुपये खर्च किए गए, वहीं राजनीतिक दलों द्वारा 2014 के लोकसभा चुनाव में

लगभग 26,000 करोड़ रुपये खर्च किए गए थे। वहीं साल 2009 के लोकसभा चुनाव में सरकारी खजाने से 1483 करोड़ रुपये का खर्च हुआ था। 1952 के चुनाव में प्रति मतदाता खर्च 60 पैसे था, जो साल 2009 में बढ़कर 12 रुपये पहुंच गया। चुनाव आयोग के अनुसार विधानसभाओं के चुनावों में लगभग 4500 करोड़ रुपये का खर्च बैठता है। लेकिन एक साथ चुनाव कराए जाने पर इस खर्च को काफी हद तक कम किया जा सकता है। चुनावों की निरतंर चलती प्रक्रिया की वजह से देश के किसी न किसी कोने में आदर्श आचार संहिता लगी रहती है, जिससे योजनाएं प्रभावित होती हैं। अगर चुनाव एक साथ करा लिए जाते हैं तो सरकारी काम बाधित नहीं होते। सरकारी अधिकारियों, शिक्षकों व कर्मचारियों को चुनावी ड्यूटी लगती है, जिससे बच्चों की पढ़ाई व प्रशासनिक कार्य प्रभावित होते हैं उस पर अंकुश लगेगा। एक साथ लोकसभा व विधानसभा के चुनाव होने पर सरकारी मशीनरी की कार्य क्षमता बढ़ेगी तथा आम लोगों को इससे फायदा होगा। एक साथ चुनाव होने से राजनीतिक स्थिरता का दौर शुरू होगा, जिससे विकास-कार्यो में तेजी आएगी।

विधि मंत्रालय की संसदीय स्थायी समिति भी इस सुझाव के पक्ष में अपनी राय दे चुकी है। हालांकि फिलहाल यह दावा नहीं किया जा सकता कि इस पर राजनीतिक दलों के बीच आम राय बन ही जाएगी, मगर लगता है इस पर देश में गंभीरता से विचार मंथन शुरू हो गया है। आखिर यह मसला क्यों इतना बहसतलब है? दरअसल, प्रधानमंत्री का सुझाव सामने आने के पहले से यह तर्क जब-तब दिया जाता रहा है कि अगर देश में सारे चुनाव एक साथ हों, तो इससे कई लाभ होंगे। स्थिति यह है कि कोई साल ऐसा नहीं जाता जब चुनावी माहौल न रहता हो। कुछ विधानसभा चुनावों का दौर पूरा होता है, तो एक नए दौर की गहमागहमी शुरू हो जाती है। ऐसे कई देश हैं जहां केंद्रीय और प्रांतीय चुनाव साथ-साथ होते हैं। मसलन, दक्षिण अफ्रीका और स्वीडन में। लेकिन समस्या यह है कि एक साथ चुनाव का सुझाव तब तक अमल में नहीं आ सकता जब तक इसके लिए देश में राजनीतिक आम सहमति नहीं बनती, क्योंकि इसके लिए संविधान के कई अनुच्छेदों में संशोधन करना होगा और संशोधन प्रस्ताव को संसद के दोनों सदनों में दो तिहाई बहुमत से पारित कराना होगा।

संसदीय लोकतंत्र को सफल बनाने में हम सभी भारतवासियों को अपने कर्तव्यों को प्रथमतः स्थान देना होगा, मत का सही प्रयोग करना चाहिए और लोकतंत्र को स्वस्थ बनाये रखने में योगदान करना होगा। सरकार को इन सभी संवेदनशील मुद्दों पर विचार विमर्श करना चाहिए और विपक्ष को भी साथ लेकर कठोर कदम उठाना चाहिए। 2018 के जून माह मे इस शोध जरनल का 12वाँ वर्ष पूर्ण हो जायगा। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होता रहेगा।

प्रोफेसर ब्रजगोपाल शुक्ल
प्रमुख सम्पादक

अनुक्रमणिका

1. वृहद परिवर्तन और सामाजिक विघटन का परिणाम बाल अपचार (एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण) 09
अखिलेश शुक्ल

2. कोल जनजाति की परम्पराओं में सामाजिक परिवर्तन (रीवा जिले की सेमरिया तहसील के ग्राम पुरवा के विशेष संदर्भ में) 17
के.के. शर्मा, प्रीति शर्मा

3. ग्रामीण बच्चों एवं महिलाओं के स्वास्थ्य का मनोसामाजिक अध्ययन (ग्राम पटेहरा के विशेष संदर्भ में) 24
रेखा सेन

4. घरेलू कामकाजी महिलाओं की आवासीय समस्याओं का अध्ययन (बलौदाबाजार नगरपालिका के विशेष संदर्भ में) 30
डी.एन.शर्मा, संतोष कुमार देवांगन

5. महिलाओं के विरूद्ध अपराध–कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न के विशेष संदर्भ में 38
सप्तमुनि द्विवेदी

6. जनांकिकी समस्या–मध्यप्रदेश के कन्या भ्रूण हत्या के संदर्भ में 43
शशिकिरण नायक
अनुष्का मिश्रा

7. मिड–डे मील योजना का प्रभाव : एक सर्वेक्षण
अनुपम सिंह

8. स्वतंत्र भारत में नारी शक्ति–सामाजिक स्थिति एवं अपराध 55
अर्चना श्रीवास्तव

9. भारत में नगरीकरण, स्मार्ट सिटी तथा इसकी चुनौतियाँ 60
विजय कुमार

10. आधुनिकीकरण व महिला शिक्षा एवं सशक्तीकरण 68
दीप्ति दीक्षित

11. अनुशासित जीवन के लिए योग–दर्शन का महत्व 72
विमलेश

12. महिलाओं के प्रति यौन एवं अन्य प्रकार के उत्पीड़न का 77
विश्लेषणात्मक अध्ययन
रुपाली एस. कणसे

13. ई–शासन का समाज वैज्ञानिक विश्लेषण 82
नीरज कुमार राय

14. दक्षिण एशिया में बाजपेयी शासन काल की विदेश नीति के समक्ष 86
प्रमुख चुनौतियाँ एवं उनके समाधान के लिए उठाये गये कदम
विजय सेन यादव
अमरजीत सिंह

15. राज्य, मानव अधिकार एवं पुलिस 96
सन्ध्या शुक्ल, नीरज मिश्रा

16. सावरकर का हिंदू–राष्ट्रवाद की अवधरणा 101
राजन कुमार

17. साझा सरकार के सैद्धांतिक पक्ष का विवेचनात्मक अध्ययन 106
संध्या कुमारी

18. लोकतांत्रिक सरकार की अलोकतांत्रिक पुलिस 114
मनीष कुमार

19. भारत में नक्सलवाद का बढ़ता स्वरूप 123
महेन्द्र कुमार बिसेन

20. लोकतंत्र, सुशासन एवं नागरिक समाज : एक अन्तः क्रियात्मक अध्ययन 127
धर्मेन्द्र कुमार

21. भारतीय राष्ट्रवाद– एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 136
सुधा गुप्ता

22. रीवा विधान सभा निर्वाचन 2008 के मतदान व्यवहार का अध्ययन 140
सरोज पाठक

23. प्रधानमंत्री आवास योजना (ग्रामीण) – एक विश्लेषण 147
सीमा श्रीवास्तव

24. महिलाओं के आर्थिक विकास में स्व–सहायता समूहों की 152
भूमिका का विश्लेषण (कांकेर जिले एवं चारामा ब्लॉक के विशेष संदर्भ में)
वन्दना विश्वकर्मा
नीलम अग्रवाल

25. जिनिंग एवं प्रेसिंग उधोगों की वित्तीय स्थिति 157
(खंडवा जिले के विशेष संदर्भ में)
डी.के. सिंघल
दीपा चौरसिया

26. औद्योगीकरण का पर्यावरण पर प्रभाव : एक सैद्धान्तिक अध्ययन 161
वर्षा राहुल

27. पंचवर्षीय योजना तथा कृषि एवं ग्रामीण विकास 168
अरूण कुमार पाण्डेय

28. मध्यप्रदेश में महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी 177
योजना का क्रियान्वयन, मूल्यांकन एवं प्रभाव
पूजा तिवारी

29. सिक्ख साम्राज्य : बंदा बहादुर 184
गजेन्द्र सिंह, भूपेश

30. गुप्तकालीन साहित्यिक स्रोतों के आधार पर नारियों का 194
धार्मिक क्षेत्र में योगदान
रक्षा सिंह

31. जल जनित रोग मलेरिया का भौगोलिक अध्ययन (मंडला जिले के विशेष संदर्भ में) 200
जे0 श्याम
प्रतिमा संत, नागमणि मानिकपुरी

32. राम काव्य में नारी चरित्र 204
मंजरी अवस्थी

33. माखनलाल चतुर्वेदी के कहानी साहित्य का परिचय 209
उर्मिला वर्मा

34. पुराणकालीन साहित्य में वर्णित गढ़वाल हिमालय के पर्वत शिखर व नदियां 214
डी.एस. भण्डारी

35. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के साहित्य में नारी सौन्दर्य 219
कंचनलता यादव

36. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों में सांस्कृतिक दृष्टिकोण 225
किरण वर्मा

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

वृहद परिवर्तन और सामाजिक विघटन का परिणाम बाल अपचार (एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण)

* अखिलेश शुक्ल

सारांश- **आधुनिक समाज वृहद परिवर्तन और सामाजिक विघटन के दौर से गुजर रहा है। सामाजिक व्यवस्था में, समाज में तेज और असामान्य परिवर्तन असामंजस्य पैदा कर रहे हैं। किशोर, अवयस्क और युवा पीढ़ी असामान्य तरीके से इनसे प्रभावित होती जा रही है और अनेक सामाजिक समस्याएं नये रूप से उभर कर सामने आ रही है। बाल अपचार की सामाजिक समस्या भी एक ऐसी समस्या है। जब किसी बच्चे द्वारा कोई कानून-विरोधी या समाज विरोधी कार्य किया जाता है तो उसे किशोर अपराध या बाल अपचार कहते हैं। कानूनी दृष्टिकोण से बाल अपचार 8 वर्ष से अधिक तथा 16 वर्ष से कम आया के बालक द्वारा किया गया कानूनी विरोधी कार्य है जिसे कानूनी कार्यवाही के लिये बाल न्यायालय के समक्ष उपस्थित किया जाता है। विधि का उल्लंघन चाहे अवयस्कों द्वारा किया जाये या किशोरों और युवाओं द्वारा, राष्ट्र के लिए एक चिन्ता का विषय है। संसार के विभिन्न भागों में इस विषय पर नयी दृष्टि से चिन्तन हो रहा है। विगत कुछ दशकों में अवयस्कों, किशोरों और युवा पीढ़ी के अपराध की दिशा में बढ़ते हुए कदमों की ओर समाजशास्त्रियों का ध्यान केन्द्रित हुआ है। इस दिशा में किये गये अध्ययनों से यह तथ्य उभर कर सामने आया है कि यह प्रवृत्ति दुनिया में बढ़ रही है। प्रचार के साधनों ने दुनिया के लोगों का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया है परिणामस्वरूप आज लोग पूर्व की तुलना में आपराधिक व्यवहार से अधिक चिंतित हैं।**

मुख्य शब्द– बाल अपचार, विधि, सामाजिक विघटन, समाज विरोधी।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से बाल अपचार के लिये आयु को अधिक महत्व नहीं दिया जाता क्योंकि व्यक्ति की मानसिक एवं सामाजिक परिपक्वता सदा ही आयु से प्रभावित नहीं होती, अतः कुछ विद्वान, बालक द्वारा प्रकट व्यवहार प्रवृति को बाल अपचार के लिए आधार मानते हैं, जैसे आवारागर्दी करना, स्कूल से अनुपस्थित रहना, माता-पिता एवं संरक्षकों की आज्ञा न मानना, अश्लील भाषा का प्रयोग करना, चरित्रहीन व्यक्तियों से संपर्क रखना आदि। किन्तु जब तक कोई वैध तरीका सर्वसम्मिति से स्वीकार नहीं कर लिया जाता तब तक आयु को ही बाल अपचार का निर्धारक आधार माना जायेगा। गिलिन एवं गिलिन के अनुसार समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से एक बाल अपचारी वह व्यक्ति है जिसके व्यवहार को समाज अपने लिए हानिकारक समझता है और इसलिए वह उसके द्वारा

* सह प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

निषिद्ध होता है। इस प्रकार बाल अपचार में बालको के असामाजिक व्यवहारों को लिया जाता है अथवा बालकों के ऐसे व्यवहारों का जो लोक कल्याण की दृष्टि से अहितकर होते हैं, ऐसे कार्यो को करने वाला बाल अपचारी कहलाता है। रॉबिन्सन के अनुसार आवारागर्दी, भीख माँगना, निरूद्देश्य इधर-उदर घूमना, उदण्डता बाल अपचारी के लक्षण है। उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर कानून की अवज्ञा करने वाला एवं समाज विरोधी आचरण करने वाला बालक बाल अपचारी होता है जैसा कि न्यूमेयर का कहना है कि बाल अपचारी एक निश्चित आयु से कम वह व्यक्ति है जिसने समाज विराधी कार्य किया है तथा जिसका दुर्व्यवहार कानून को तोड़ने वाला है।

मनोवैज्ञानिक एवं समाजशास्त्रीय अध्ययनों द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि मनुष्य में अपराधवृत्तियों का जन्म बचपन में ही हो जाता है। अंकेक्षणों (स्टैटिस्टिक्स) द्वारा यह तथ्य प्रकट हुआ है कि सबसे अधिक और गंभीर अपराध करनेवाले किशोरावस्था के ही बालक होते हैं। इस दृष्टि से किशोर अपराध (जुवेनाइल डेलिंक्वेंसी) को एक महत्वपूर्ण कानूनी, सामाजिक, नैतिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्या के रूप में देखा जाने लगा है। किशोर अपराधों का स्वरूप सामान्य अपराधों से भिन्न होता है। कानूनी शब्दावली में देश के निर्धारित कानूनों के विरुद्ध आचरण करना अपराध है, किंतु किशोर अपराध समाजशास्त्रीय एवं मनोवैज्ञानिक प्रत्यय है। किशोर अवस्था के बालकों द्वारा किए गए वे सभी व्यवहार जो कानूनी ही नहीं वरन् किसी भी दृष्टि से समाज तथा व्यक्ति के लिये अहितकर हों, किशोर अपराध की सीमा में आते है। यथा---विद्यालय से भागना कानूनी दृष्टि से अपराध नहीं है, किंतु सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टि से हानिकर है। यह एक ओर तो सभी प्रकार के उत्तरदायित्वों से भागना सिखाती है और दूसरी ओर बालक को उचित कार्य से हटाकर अनुचित कार्यो की ओर प्रेरित करती है। इस प्रकार किशोर अपराध का क्षेत्र अधिक व्यापक है। किशोरावस्था में व्यक्तित्व के निर्माण तथा व्यवहार के निर्धारण में वातावरण का बहुत हाथ होता है। अत: अपने उचित या अनुचित व्यवहार के लिये किशोर बालक स्वयं नहीं वरन् उसका वातावरण उत्तरदायी होता है। इस कारण अनेक देशों में किशोर अपराधों का अलग न्यायविधान है उनके न्यायाधीश एवं अन्य न्यायाधिकारी बालमनोविज्ञान के जानकार होते है। वहाँ बाल-अपचारियों को दंड नहीं दिया जाता, बल्कि उनके जीवनवृत्त (केस हिस्ट्री) के आधार पर उनका तथा उनके वातावरण का अध्ययन करके वातावरण में स्थित असंतोष जनक, फलत: अपराधों को जन्म देनेवाले, तत्वों में सुधार करके बच्चों के सुधार का प्रयत्न किया जाता है। अपराधी बच्चों के प्रति सहानुभूति, प्रेम, दया और संवेदना का व्यवहार किया जाता है। भारत में भी कुछ राज्यों में बालन्यायालयों और बालसुधारगृहों की स्थापना की गई है।

किशोर बालक अपराध क्यों करते है, इस संबंध में विभिन्न मत हैं। मानवशास्त्रियों (ऐंथ्रोपालोजिस्ट्स) ने यह निष्कर्ष निकाला है कि अपराध का संबंध वंशानुक्रम, शारीरिक बनावट एवं जातिगत विशेषताओं से है। इसी कारण अपराधी जाति (क्रिमिनल ट्राइब्ज) के सभी व्यक्ति एक ही जातिगत विशेषताओं और एक सी शारीरिक बनावट के होते हैं तथा वे एक सा अपराध करते हैं। शरीरवैज्ञानिकों का मत भी इसी से मिलता जुलता है। उनके मतानुसार विशेष प्रकार की शारीरिक बनावट और प्रक्रियावाला व्यक्ति विशेष प्रकार का अपराध करेगा। किंतु मनोविज्ञान ने सिद्ध किया है कि अपराध का संबंध न तो

उत्तराधिकार से होता है और न शारीरिक बनावट से। उत्तराधिकार में केवल शारीरिक विशेषताएँ ही प्राप्त होती हैं, उनका व्यक्ति की भावनाओं, आकांक्षाओं, प्रवृत्तियों एवं बुद्धि से सीधा संबंध नहीं होता। समाजशास्त्रियों का कथन है कि अपराध का जन्मदाता दूषित वातावरण, यथा---गरीबी, उजड़े परिवार, अपराधी साथी आदि है। किंतु आधुनिक मनोवैज्ञानिक शोधों द्वारा यह जाना गया है कि एक ही वातावरण ही नही वरन् एक ही परिवार में पले, एक ही मातापिता के बच्चों में से एकआध ही अपराधी होता है, सभी नहीं। यदि अपराध का जन्मदाता वातावरण होता है तो अन्य भाई बहिनों को भी अपराधी बनना चाहिए। आधुनिक मनोविज्ञान किशोर अपराधों का मूल मनोवैज्ञानिक स्थितियों में ढूँढ़ता है। उसके अनुसार हर बच्चे की कुछ इच्छाएँ, आकांक्षाएँ और आवश्यकताएँ होती हैं। उन्हें पूरा करने का वह प्रयत्न करता है। उसके इस प्रयास में अनेक बाधाएँ आती हैं, जिन्हें वह जीतने का प्रयत्न करता है। अपने प्रयत्नों के फल से वह या तो संतुष्ट होता है या असंतुष्ट अथवा उदासीन। किंतु उदासीनता के भाव कम ही हो पाते है। संतोष और असंतोष का संबंध सफलता या उपलब्धि से नहीं हैं वरन् संतोष आपेक्षिक प्रत्यय है। निर्धन किसान अपनी स्थिति में संतुष्ट रह सकता है किंतु करोड़पति व्यवसायी नहीं। असंतोष को दूर करने का प्रयास मानव स्वभाव है। इसे दूर करने के समाज द्वारा स्वी.त ढंग जब असफल हो जाते है तब व्यक्ति ऐसा ढंग अपनाता है जो सफल हो, भले ही वह समाज के लिये हानिकर और उसके द्वारा अस्वीकृत ही क्यों न हो। तभी वह अपराधी बन जाता है। यथा---कोई कमजोर विद्यार्थी अनुत्तीर्ण होने पर अपनी कमजोरी का ध्यान करके अपनी स्थिति में संतुष्ट रह सकता है किंतु कक्षा का तेज विद्यार्थी तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण होने पर आत्महत्या तक कर सकता है। प्रश्न संतोष और असंतोष की मात्रा का है। निष्कर्ष यह कि बच्चा चाहे शारीरिक कमजोरी से पीड़ित हो, उसकी बुद्धि कम हो, उसके माता पिता अपराधी हों, उसका वातावरण खराब हो, उसी उपलब्धियाँ निम्न स्तर की हों, फिर भी वह तब तक अपराधी नहीं बनेगा, जब तक कि वह अपनी स्थिति से असंतुष्ट न हो और असंतोष को दूर करने के उसके समाजस्वीकृत प्रयास असफल न हो चुके हों। अपराध एक प्रकार का आत्मप्रकाशन तथा व्यवहार है। किशोर अवस्था के अपराध भी स्वाभाविक व्यवहार के ढंग हैं, केवल उनका परिणाम समाज तथा व्यक्ति के लिये अहितकर होता है। अतः समाज को इस अहितकर स्थिति से बचाने के लिये मनावैज्ञानिक की सहायता से अभिभावकों तथा अध्यापकों को यह देखना होगा कि बच्चे के अपराधी आचरण की कारणभूत कौन सी असंतोषजनक स्थितियाँ विद्यमान है। रोग के कारण को दूर कर दीजिए, रोग दूर हो जाएगा, यह चिकित्साशास्त्र का सिद्धांत है। अपराधी व्यवहार भी सामाजिक रोग हे। इसके कारण असंतोषजनक स्थिति को दूर करने पर अपराधी व्यवहार स्वयं समाप्त हो जाएगा और अपराधी बालक बड़ा बनकर समाज का योग्य सदस्य तथा देश का उत्तरदायित्वपूर्ण नागरिक बन सकेगा।

बाल अपचार कोई अलग-अलग समस्या नहीं है। इसे वर्तमान सामाजिक समस्याओं के पृष्ठभूमि में ही समझा जा सकता है। बाल अपचार की मूलभूत दशाएं सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था के ताने-बाने का ही अंग है जिन पर विगत काल से हो रहे अनेकानेक सामाजिक परिवर्तनों का प्रभाव पड़ा है। आज के समाज की सामाजिक समस्याओं की जड़ें भूतकाल में हैं और जिनका वर्तमान और भावी स्वरूप उसका परिणाम है। किसी भी जटिल समस्या

का गहन अध्ययन बिना ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को समझे और उस समस्या के मौलिक कारकों को जाने बगैर नहीं किया जा सकता है। समस्या की परिस्थितियों का ज्ञान भी आवश्यक है और तभी उसके उपचार की दिशा में सोचा जा सकता है। इस तरह किसी समस्या के उपचार के ज्ञान के लिए भी सम्बंधित सामाजिक व्यवस्था का गहन अध्ययन आवश्यक होता है।

सामाजिक समस्याओं में संस्कृति की निरंतरता और वर्तमान समाज में हो रहे लगातार परिवर्तन दोनों का ही प्रभाव पड़ता है। यदि सामाजिक व्यवस्था में हो रहे परिवर्तनों की गति धीमी हो और यदि इन परिवर्तनों का समाज के प्रत्येक अंग के विकास में बराबर का प्रभाव पड़ता हो तब इन दशाओं में सामाजिक विघटन का प्रभाव बहुत कम परिलक्षित होता है।[1] वास्तव में समस्याओं का जन्म मुख्य रूप से तेज या असामान्य परिवर्तनों से होता है, जिनसे समय के बदलते हुए परिवेश में पर्याप्त सामाजिक सामंजस्य नहीं रह पाता और उससे उत्पन्न होने वाले कारणों पर नियंत्रण नहीं हो पाता।

आधुनिक समाज एक गतिशील समाज है जिसमें निरंतर परिवर्तन हो रहे हैं। परिवर्तन प्रकृति का शास्वत नियम है। समाज और संस्कृति में भी अनवरत परिवर्तन होते रहते हैं। मानव सभ्यता के इतिहास में 20वीं शताब्दी परिवर्तनों की शताब्दी है। इस सदी में जिस गति और जिस स्वरूप के परिवर्तन हुए हैं वैसे परिवर्तन मानव सभ्यता के ज्ञात इतिहास में पूर्व में कभी नहीं हुए हैं। इस शताब्दी ने दो महायुद्ध झेले, वैज्ञानिक क्षेत्र में इस सदी ने हिमालयीन ऊँचाइयाँ प्राप्त की, औद्योगीकरण और नगरीयकरण की तीव्र गति ने समाज के कार्यों और उसके ढाँचे में तेजी से परिवर्तन किये हैं। इस तरह इन परिवर्तनों ने सामाजिक जीवन में जहाँ एक तरफ तेज गति से प्रगति हुई है वहीं दूसरी तरफ अनेक समस्याएं भी उत्पन्न हुई हैं। भारतीय सामाजिक व सांस्कृतिक जीवन इनसे प्रभावित हुआ है। पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति, औद्योगीकरण व नगरीयकरण, संस्कृतिकरण के साथ-साथ 1947 में देश की आजादी और संविधान का निर्माण, संविधान में प्रगति के लिए किये गये वायदे और एक लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना, कृषि व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन, ग्रामीण जीवन में मशीनीकरण व आधुनिकीकरण, देश के विकास के लिए नियोजन, समाजवादी समाज की स्थापना का संकल्प महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार, शिक्षा के अवसर और समाज की कुरीतियों को दूर करने के लिए बनाये गये सामाजिक विधान, भारतीय सामाजिक जीवन के प्रत्येक पक्ष में अनेक उल्लेखनीय परिवर्तन किये हैं। 1950 के बाद भारतीय समाज में द्रुत गति से परिवर्तन हुआ है। यह परिवर्तन हमें पारिवारिक जीवन, संयुक्त परिवार का स्वरूप, जाति के ढांचे एवं प्रभाव, विवाह की आयु और विधवा विवाह, दहेज प्रथा, स्त्रियों की दशाओं एवं सामुदायिक जीवन के प्रत्येक कोने में परिलक्षित हो रहा है। वैज्ञानिक आविष्कार, प्रौद्योगिकीय और नगरीयकरण ने जहां भारत में कृषि व उद्योग के क्षेत्र में उत्पादन का रिकार्ड लक्ष्य प्राप्त कर इसे विकासशील राष्ट्रों की अग्रिम पंक्ति में पहुंचा दिया है वहीं इनके कारण ग्रामीण और कुटीर उद्योगों का ह्रास, मंहगाई व बेरोजगारी में सुरसा के मुंह के समान वृद्धि हुई है। इस परिवर्तन ने भारत के सांस्कृतिक जीवन और राजनीतिक जीवन को प्रभावित किया है। इस तरह हम कह सकते हैं कि भारतीय समाज में हो रहे द्रुत गति से यह परिवर्तन जिस तेजी के साथ राष्ट्र की प्रगति में सहायक हुए हैं वहीं दूसरी ओर इनके कारण सामाजिक विघटन की अनेक समस्याएं भी

उत्पन्न हुई हैं। उत्पादन की प्रणाली में बड़े-बड़े उद्योगों की भूमिका आधुनिक वाणिज्य और व्यवसाय की प्रणाली ने मनुष्य के आर्थिक जीवन को एक नया स्वरूप प्रदान किया है। आज शहरी जीवन की ओर जो ललक बढ़ रही है वह इन्हीं सब कारणों का मिला-जुला प्रभाव है। आजादी के बाद देश में नगरों की संख्या बढ़ी है और ग्रामीण क्षेत्रों में जिस तेजी से शहरों की ओर पलायन विगत चार दशक में हुआ है उतना इसके पूर्व कभी नहीं हुआ था। नगरों में जनसंख्या का बढ़ता हुआ दबाव नये प्रकार की सामाजिक समस्याओं को जन्म दे रहा है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि भारतीय समाज इस समय एक संक्रमण की स्थिति से गुजर रहा है।

बाल अपचार की प्रकृति और अर्थ के संबंध में कोई सर्वसम्मत्ति नहीं है। विधिक दृष्टि में यह वह है जो विधि कहती है। इसके अंतर्गत वे अपराध आते हैं जो एक निश्चित आयु समूह के भीतर के अवयस्कों, किशोरों द्वारा संघीय, प्रांतीय या स्थानीय विधियों का उल्लंघन करते हैं और जो किसी वयस्क के द्वारा होने पर उसे दण्ड जुर्माना या सजा दी जाती है। यह एक किस्म का व्यवहार है जो किशोरों या अवयस्कों द्वारा किया जाता है। जैसे बिना सहमति के घर से भागना, स्कूल से भागना और ऐसे ही अनेक प्रकार के विचलित व्यवहार, उन स्थानों में जाना या रहना जो युवाओं के लिए हानिप्रद है और जिसके लिए विधिक रूप में शासकीय कार्यवाही की जा सकती है। अवयस्कों और किशारों द्वारा विधि के उल्लंघन के क्षेत्र में बाल न्यायालयों को स्वविवेकीय अधिकार प्रदान किये जाते हैं। इसलिए यद्यपि बाल न्यायालय अधिनियमों में एक निश्चित आयु के भीतर के बालकों या बालिकाओं द्वारा विधि और अध्यादेशों के उल्लंघन को बाल अपचार के रूप में परिभाषित करते हुए उनके निर्धारण में स्वविवेकीय शक्तियां बाल न्यायाधीशों को प्रदान की जाती है। ससमैन ने बाल अपचार की परिभाषा करते समय उन त्यों या दशाओं की एक सूची बनायी है जिन्हें इसकी श्रेणी में रखा जा सकता है।

इस तरह बाल अपचार सामान्य लक्षणों की तरह अपराध की भांति ही है। यह भी समाज विरोधी कार्य हैं और इसमें भी किसी विधि का उल्लंघन होता है। अंतर सिर्फ इतना ही है कि जब किसी समुदाय की सांस्कृतिक या सामाजिक मूल्यों का किसी बालक द्वारा उल्लंघन होता है तो हम उसे बाल अपचार कहते हैं। प्रसिद्ध समाज वैज्ञानिक एवं बाल अपचार के अध्येता प्रो. मार्टिन एच. न्यूमेयर, इसको परिभाषित करते हुए कहते हैं कि 'बाल अपचार का अर्थ समाज विरोधी व्यवहार का कोई ऐसा प्रकार है, जिसमें व्यक्तिगत तथा सामाजिक विघटन का समावेश होता है। इसमें एक निर्धारित आयु से कम वह व्यक्ति होता है जो समाज विरोधी कार्य करता है तथा कानून की दृष्टि से अपराधी होता है।

अध्ययन की प्रकृति-

व्यक्ति और समाज का अटूट सम्बंध है। इनमें से किसी एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती है। इलियट तथा मेरिल ने इसीलिए कहा है कि, 'व्यक्ति अत्यंत विशाल समाज का एक सूक्ष्म रूप है'।[2] समाज और एकांगी व्यवस्था नहीं है। प्रत्येक समाज में अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के तत्व सदैव विद्यमान रहते हैं। इसमें अच्छे तत्व समाज को संगठित करते हैं, वहीं बुरे तत्व समाज को विघटन की ओर ले जाते हैं। दूसरे शब्दों में सामाजिक संगठन को दृष्टि में रखते हुये व्यक्तियों को दो वर्गों में सामाजिक और समाज विरोधी रखा जा सकता है। यही समाज विरोधी तत्व जब सामाजिक संरचना और उसकी

व्यवस्था के विपरीत कार्य करते हैं तब अपराध का जन्म होता है। सामाजिक संरचना में समाज की विभिन्न संस्थाओं में पारस्परिक सम्बंधों, सामाजिक स्थिति और कार्यों की एक निश्चित व्यवस्था रहती है। जब इस व्यवस्था के विपरीत कार्य होता है तब उसे हम सामाजिक विघटन कहते हैं, ए.के. कोहेन ने इसलिए सामाजिक विघटन को विचलित व्यवहार कहा है।[3] सामाजिक जीवन की अनेक समस्यायें विघटन की ही देन हैं। बाल अपचार की समस्या इस दृष्टि से सामाजिक विघटन का परिणाम है।

अध्ययन के उद्देश्य-

बाल अपचार मानव समाज की एक प्राचीन समस्या है। इस पर विगत कुछ दशकों से गहन अध्ययन किया जा रहा है और उसके परिणामस्वरूप इस संबंध में कुछ नये दृष्टिकोण सामने आये हैं। विधि का उल्लंघन बालकों, किशारों या अवयस्कों द्वारा एक अन्तर्राष्ट्रीय चिन्तन का विषय हो गया है। आधुनिक समाज भीषण परिवर्तन और सामाजिक विघटन के काल से गुजर रहा है। सामाजिक व्यवस्था में तीव्र गति से हो रहे यह असामान्य परिवर्तन अवयस्क मन को शीघ्रता से प्रभावित करते हैं। समाज की दशायें और पारिवारिक वातावरण अवयस्कों को सदाचार या अपचार का मार्ग पकड़ने में सहायता करती है। आज बाल-अपचार पर इसीलिए गहन चिन्तन एवं शोध की आवश्यकता है। सामाजिक व्यवस्था में असामान्य परिवर्तन और उससे उत्पन्न होने वाली परिस्थितियां मानव जीवन में सामंजस्य के ताने-बाने को क्षतिग्रस्त करती हैं। बाल अपचारी ऐसी परिस्थितियों से शीघ्र प्रभावित हो जाते हैं।

अध्ययन क्षेत्र-

इस शोध अध्ययन में मध्यप्रदेश के तीन जिलों- रीवा, सतना एवं सीधी को लिया गया है। यह शोध अध्ययन बाल न्यायालय रीवा के क्षेत्राधिकार में आने वाले शहरी एवं ग्रामीण अंचलों तक सीमित है। इस न्यायालय का गठन मध्यप्रदेश शासन द्वारा बाल अधिनियम 1970 की धारा 4 के अनुसार किया गया है। यह न्यायालय 01 जनवरी 1983 से कार्यरत है। प्रारंभ में इसका मुख्यालय रीवा और क्षेत्राधिकार राजस्व जिला रीवा और सतना निर्धारित किया गया था। आगे चलकर इस न्यायालय के क्षेत्राधिकार में जून 1984 में राजस्व जिला सीधी को भी शामिल किया गया।

शोध प्रविधि-

बाल अपचार एक सामाजिक समस्या है जिस पर इस बदलते हुए परिवेश में शोध की नितांत आवश्यकता है। विंध्यांचल में बाल अपचार के अंतर्निहित कारणों की खोज इसलिए भी आवश्यक है कि इसके पूर्व इस विषय पर कोई व्यवस्थित शोधकार्य नहीं हुआ है। इस शोध कार्य में चूंकि बाल अपचारियों की क्रिया को ध्यान में रखकर उसके निकट कारणों को खोजना तथा कार्यकारणों के सम्बंध का प्रतिष्ठापन करना है इसलिए अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना अपनाई गयी है। मूल रूप से इस शोध प्ररचना में पूर्व निर्धारित उपकल्पना का परीक्षण किया जाता है। अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना की सफलता के लिए कुछ अनिवार्यताओं का पालन करना पड़ता है।

1. सम्बद्ध साहित्य का अध्ययन
2. सर्वेक्षण
3. अन्तरदृष्टि प्रेरक घटनाओं का विश्लेषण

इस शोध कार्य में इन तीनों ही अनिवार्यताओं को ध्यान में रखा गया है। इस तरह अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना के द्वारा इस समस्या के मूलभूत आधारों को प्रस्तुत करने में पूर्ण सहायता मिली है। इस शोध कार्य में प्राथमिक तथ्यों के साथ-साथ द्वैतीयक तथ्यों की सहायता ली गई है। प्राथमिक स्रोत में समस्या से संबंधित व्यक्तियों से साक्षात्कार करके अनुसूची की सहायता से तथ्यों को एकत्रित किया गया है। साक्षात्कार के लिए बाल अपचारियों का चयन उद्देश्य पूर्ण निदर्शन प्रणाली के आधार पर किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में समग्र की कुल संख्या 2000 है जिसमें से अध्ययन हेतु 200 बाल अपचारियों का चयन उद्देश्य पूर्ण (सविचार) निदर्शन विधि के द्वारा किया गया। इस अंचल की 65 बालिका अपचारियों में से 20 का चयन आयु समूह को ध्यान में रखते हुए निम्नवत् किया गया है।

आयु समूह	समूह की संख्या	चयन की गई इकाई की संख्या
07—12	32	10
12—16	31	10
16—18	02	—
कुल योग	**65**	**20**

इसी तरह अपचारी बालकों की कुल संख्या 1935 में से अध्ययन हेतु 180 का चयन निम्नवत किया गया है।

आयु समूह	समूह की संख्या	चयन की गई इकाई की संख्या
07—12	548	60
12—16	1387	120
कुल योग	**1935**	**180**

इस तरह बाल अपचारियों की समग्र संख्या 2000 का 10 प्रतिशत उद्देश्यपूर्ण निर्देशन प्रणाली के आधार पर चयन करते हुये अध्ययन किया गया है।

जाति और धर्म- विंध्याचल के इस भू-भाग में समाज का परम्परागत स्वरूप आज भी विद्यमान है। यहां विभिन्न जातियों के लोग पारस्परिक सामंजस्य और सद्भाव की भावना से शताब्दियों से रहते आये हैं। सीधी जिले में आदिवासियों की संख्या रीवा व सतना की तुलना में अधिक है। इस क्षेत्र में बाल अपचारियों में 23.3 प्रतिशत ब्राह्मण 13. 2 प्रतिशत क्षत्रिय 7.2 प्रतिशत वैश्य, 34.8 प्रतिशत पिछड़ी जातियों, 7% अनुसूचित जातियाँ, 8.1 प्रतिशत अनसूचित जन जातियाँ और 6.4 प्रतिशत मुस्लिम पाये गये हैं। इनमें सर्वाधिक संख्या पिछड़ी जातियों के अपचारियों की है। इन जातियों में मुख्य रूप से कबाड़ी, काछी, मल्लाह, कुरगी, औधियाँ, तेली, कहार, लखेर, कुचवधियाँ, अहीर, नाई और दर्जी जाति के बाल अपचारी पाये गये हैं। हरिजन (अनुसूचित जातियाँ) आदिवासी (अनुसूचित जन जातियाँ) और पिछड़ी जातियों के बाल अपचारियों को मिलाकर देखा जाये तो इनकी संख्या 49.9 प्रतिशत हो जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में जहां श्वेत जनसंख्या का प्रतिशत 90 है वहां श्वेत अपचारी बालकों (बालक-बालिकाओं) का प्रतिशत 70.9 और अश्वेतों का प्रतिशत 29.1% पाया गया है। बाल्टीमोर के एक अध्ययन में बाल अपचार की दरों में श्वेतों और अश्वेतों का अनुपात बालकों में 43.8 : 13.0 और

बालकाओं में 10.0 : 1.86 पाया गया है। इस दृष्टि से यदि देखा जाये तो वहाँ सवर्णों और पिछड़ी जातियों (हरिजन, आदिवासी सहित) के बाल अपचारियों का अनुपात 8:10 का है।

जाति	अपचारियों की संख्या			प्रतिशत
	बालक	बालिका	योग	
ब्राह्मण	435	21	466	23.3
क्षत्रिय	263	2	265	13.2
वैश्य	138	6	144	7.2
अन्य पिछड़ी जातियां	669	26	695	34.8
अनुसूचित जातियां	136	4	140	7.0
अनुसूचित जन जातियां	158	5	163	8.1
मुस्लिम	126	1	127	6.3
योग	**1935**	**65**	**2000**	–

इलियट तथा मेरिल ने बाल अपचार को प्रोत्साहन देने वाले कारकों को तीन मुख्य भागों में विभाजित किया है- पारिवारिक कारक, वैयक्तिक कारक तथा सामुदायिक कारक। प्रसिद्ध समाजशास्त्री चार्ल्स वड्रेस ने इसके लिए सामाजिक कारक, मानसिक दुर्बलता और व्यक्तित्व संरचना के कारकों को स्वीकार किया है। इसी तरह गिलिन, मावरर, हीली और ब्रानर ने इसी तरह के विचार प्रकट किये हैं। गिलिन और गिलिन जहां भौतिक पर्यावरण, शारीरिक और मानसिक लक्षण, वंशानुगत विशेषताओं, आर्थिक और सामाजिक दशाओं को बाल अपचार के कारक स्वीकार करते हैं वही मावरर इसके लिए शारीरिक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक कारकों को उत्तरदायी मानते हैं। हीली और ब्रानर ने बाल अपचार के कारणों में बुरी संगति, किशोर अस्थिरता और भावनाये, पूर्ण यौन अनुभव, मानसिक संघर्ष, पूर्ण सामाजिक सुझाव ग्राह्यता, खतरों से प्यार, चलचित्र, मूल असन्तोष, अस्वस्थ मनोरंजन, आवारा जीवन, व्यावसायिक असन्तोष, अचानक घटनाएं और भौतिक दशाओं को प्रमुखता दी है। समाज में व्यक्ति का अस्तित्व उसकी भूमिका और स्थिति को प्रभावित करता है। इसीलिए प्रख्यात मनोवैज्ञानिकों और मनोचिकित्सकों ने बाल अपचार की समस्या का गतिशील केन्द्र बाल अपचारी के व्यक्तित्व को माना है।

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. Annual Reports of Crime, National Crime Records Bureau, New Delhi.
2. Dr. S. Akhilesh, Criminology, Gayatri Publications, Rewa, 2002.
3. Dr. S. Akhilesh, Police Science, Gayatri Publications, Rewa, 2002.
4. Dr. S. Akhilesh, Police Procedure, Gayatri Publications, Rewa, 2002.
5. Dr. S. Akhilesh, LAW, Gayatri Publications, Rewa, 2002.
6. Prof. S. Akhilesh & Advocate Dr. Gayatri Shukla, Crime Investigation, Gayatri Publications, Rewa, 2004.

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

कोल जनजाति की परम्पराओं में सामाजिक परिवर्तन (रीवा जिले की सेमरिया तहसील के ग्राम पुरवा के विशेष संदर्भ में)

* के.के. शर्मा
** प्रीति शर्मा

_सारांश_- समाज में परिवर्तन का होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। सामाजिक जीवन में उसके स्वरुप संरचना, व्यवस्था, प्रथा, रीति-रिवाज, मूल्य- आदर्श सभी में परम्परा में परिवर्तन की प्रक्रिया निरंतर जारी है। ऐसा कोई भी समाज नहीं है जिसमें परिवर्तन की प्रक्रिया न हो। सामाजिक परिवर्तन के लिये अनेक कारक उत्तरदायी होते हैं। मुख्य रूप प्रोद्योगिकी सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक कारक महत्वपूर्ण है। कोल जनजाति में परम्परा में जो परिवर्तन हो रहे हैं अब दृष्टिगोचर होने लगे हैं। जनजातीय परम्पराओं के परिवर्तन को जानने में किए 100 उत्तरदाताओं को चयनित कर तथ्य एकत्र किये गए है।

मुख्य शब्द– परम्परा, मनोरंजन, प्रवास, जनजाति, आदिवासी

प्रस्तावना- प्रकृति के खुले प्रांगण में जीवन-यापन करने वाले आदिवासी सदैव अन्वेषण के विषय रहे हैं। प्रजातियों के विवरण में कोल समूह की जनजातियाँ न केवल मध्यप्रदेश में बल्कि भारत के विभिन्न क्षेत्रों में प्रारंभिक रूप से थी। 'कोल समूह की जनजातियाँ वनों से संबंधित कार्य जैसे मछली पकड़ना, मिट्टी का कार्य, वनोपज एकत्रित करने में विशेष भूमिका रही हैं। मध्यप्रदेश के रीवा जिले में कोल जनजाति रीवा, सीधी, सतना, शहडोल में ज्यादा पाई जाती है। कोल जनजाति की जनसंख्या अन्य जनजातियों की अपेक्षा रीवा जिले में सबसे ज्यादा है। रीवा जिले की सेमरिया तहसील में कोल जनजातियों की संख्या कुछ गाँवों में अधिक है। जिसमें पुरवा, चचाई, बरौ, मझियार, कपसा, बीड़ा, ककरेड़ी आदि गाँव हैं। कोल जनजाति मध्यप्रदेश में छोटा नागपुर से ही आयी है। कोल जनजाति रीवा, बिलासपुर, रायगढ़ और सरगुजा जिले में प्रमुख रूप से पायी जाती है। गोड़ के कोल मध्यप्रदेश की दूसरी सबसे बड़ी जनजाति है। मध्यप्रदेश के अलावा कोल छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा और महाराष्ट्र में भी निवास करते हैं। मध्यप्रदेश में कोल जनजाति बघेलखण्ड, शहडोल जबलपुर, रायगढ़ और मण्डला क्षेत्र में रहती है। कोल अपने को रीवा जिले के फरेन्दा और कुराली का मूल निवासी मानते हैं। प्रदेश में इनकी सबसे सघन आबादी रीवा, सीधी और सतना में ही है। परम्परा प्रथाओं का वह योग है जो

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, शासकीय टी.आर.एस. कॉलेज रीवा, म.प्र.
** नेहरू नगर, रीवा (म.प्र.)

सामाजिक विरासत से प्राप्त होती है। परम्पराओं का अर्थ समाज के उन जनकल्याणकारी एवं भावनात्मक तत्वों से है जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती है। परम्परा का तत्पर्य उन विचारों एवं व्यवहार करने के तरीको से है जो अभौतिक होती है तथा पूर्वजों से सामाजिक विरासत के रूप में प्राप्त होती हैं।

मोरिस जिन्सवर्ग - ''परम्परा का अर्थ उन सम्पूर्ण विचारों, आदतों और प्रथाओं का योग है जो एक समूह विशेष से संबंधित रहती है तथा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती है''।[1]

जेम्स ड्रेवर- ''परम्परा, कानून, कहानी और पौराणिक गाथाओं का वह संकलन जो मौखिक रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती है''।[2]

परम्परा समाज की एक वह सामाजिक विरासत है जो सामाजिक संगठन के सभी स्तरों में व्याप्त रहती है उदाहरण के लिए सामाजिक संरचना, मूल व्यवस्था और व्यक्तित्व की संरचना।

कोल जनजाति की 22 उपशाखाएँ मानी गई है। कोल भारत की प्रचीन जनजातियों में से है, जिसका जिक्र ऋग्वेद तथा अन्य कई पौराणिक ग्रन्थों में आता है। 'नृतत्त्व शास्त्र' के अनुसार कोल कोलारियन या मुण्डा समूह में आते हैं, जो आदिम समूह माना जाता है। 'कोल ' शब्द का अर्थ मानक है। कोल और कोरकू दोनों मुण्डारी भाषा परिवार के शब्द हैं और कोल या मुण्डा जनजाति की मूल भाषा में समाज के व्यक्ति के लिये कोरे, होर शब्द का प्रयोग आज भी होता है। कोल एक समय में इतना प्रभावशाली थे और उनका जैविक प्रसार इतना था कि उनसे उत्पन्न कई उपजातियों के समूह को नृशास्त्रियों ने मुण्डा या कोलारियन समूह का नाम दिया था।

कोलो में भी प्रत्येक गाँव की पंचायत तथा उसके कुछ पारम्परिक पद हैं- जैसे महतो, बरा, भुइहार, ओझा, पण्डा, देवार और निउतिया। महतो या चौधरी गाँव का मुखिया होता है, निउतिया गाँव किसी भी परिवार में अच्छे-बुरे सभी अवसरों पर सबको खबर करने, न्यौता देने का काम करता है। पंचायत सभी तरह के विवादों को निपटाने में सक्षम मानी जाती है। कोल समुदाय आमने-सामने टोला बनाकर रहना पसंद करते हैं, जिसे कोल्हिन टोला कहा जाता है। यदि पूरा गाँव कोलो का होता तो, तब उसे कोल्हान कहा जाता है। कोल मड़िया या घर की दीवारें मिट्‌टी में पैरा मिलाकर बनाई जाती है। बाँस-बल्ली को बाँधने के लिये बकोहड़ा पेड़ की छाल से बनाई गई रस्सी का प्रयोग किया जाता है, अन्य आदिवासी समुदायों की तरह कोलों के लिये भी मवेशी घर के सदस्य के समान ही होते हैं इसीलिये घर के चार कमरों में से एक कमरा मवेशियों के लिये होता है। कोल खुद अल्प संतोषी कोदई-भाजी में खुश रहने वाले होते हैं। मर्दाइन यानी महुआ की शराब और शिकार का कोल जनजाति के लोग काफी शौक के साथ प्रयोग करते है।

खेती के अलावा वन-उपज एकत्रित करना इनका प्रमुख काम है। इनकी वेश भूषा, त्यौहार, शादी-ब्याह बहुत हद तक हिन्दु रीति-रिवाजों में ढ़ल गये हैं, और अपनी अलग पहचान नहीं बना पाते। स्त्रियों के गहनों में 'अबत्ता' अभी भी आदिवासी समुदाय की छाप है। प्रस्तुत शोध-पत्र में कोल जनजातियों की परम्परा में सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न पक्षों का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। कोल जनजाति के कई उपभेद हैं जैसे- रौतिया, ठकुरिया, रउतेज, बिजां, पुरहा, गढ़ भारिया, कठोतिया, भवासी, खैखार आदि।

कोई भी समाज ऐसा नहीं है जो परम्परा से मुक्त हो। परम्परा व्यक्ति और समाज के लिए गर्व की बात होती है। हम कभी परम्पराओं से मुक्त हो ही नहीं सकते। एडबडीशील्स के अनुसार -वर्तमान में जितनी भी चीजें हैं, उनका एक भूतकाल (इतिहास) रहा है। जो कुछ भी घटित होता है, वह अपनी भूतकाल की पकड़ से पूर्णतः मुक्त नहीं होता, जो भी नवीनताएं है, वे पूर्व में जो कुछ भी मौजूद था, उसी का रूपान्तरण है। स्पष्ट है कि प्रत्येक समाज अपने भूतकाल और परम्पराओं की देन है।

कोल जनजाति में भी विभिन्न परम्पराएं विद्यमान है। धार्मिक क्रियाएं, लोकनृत्य, लोकगीत, व्यवसाय, मनोरंजन के साधनों आदि की परम्पराओं में परिवर्तन स्पष्टतः देखा जा सकता है।

प्रस्तुत शोधपत्र कोल जनजाति की परम्पराओं में परिवर्तन पर आधारित है।

अध्ययन क्षेत्र व अध्ययन पद्धति-

सामाजिक अनुसंधान में अध्ययन क्षेत्र बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। तथ्यों के संकलन में यथार्थता लाने के लिए अध्ययन क्षेत्र तथा उसकी सीमा का निर्धारण करना आवश्यक होता है। सामाजिक शोध का अध्ययन क्षेत्र सम्पूर्ण सामाजिक जीवन, सामाजिक प्रक्रियाओं व नियमों तक विस्तृत होता है। क्षेत्र निर्धारित हो जाने के बाद विषय सीमा में बंध जाता है इसलिए अनुसंधान क्षेत्र को स्पष्ट होना चाहिये।

प्रस्तुत अध्ययन का क्षेत्र रीवा जिले के सेमरिया तहसील के अंतर्गत आने वाले ग्राम पुरवा का है। सेमरिया तहसील से इसकी दूरी 11 कि.मी. है। पुरवा पर्यटन का महत्वपूर्ण स्थान है। पुरवा प्रपात को देखने के लिए दूर-दूर शहरों एवं ग्रामीण अंचलों से लोग आते हैं। पुरवा के पास ही धार्मिक स्थल बसामन मामा का पवित्र मंदिर है, यहां भी लोग दूर-दूर से दर्शन करने आते रहते हैं। यह स्थल धार्मिक परम्पराओं के आस्था का प्रतीक है। यहां की कोल जनजातियों में बसामन मामा के प्रति गहरी आस्था है।

सेमरिया तहसील के कोल बाहुल्य गाँव के अंतर्गत ग्राम पुरवा को चुना गया है। ग्राम पुरवा की कुल जनसंख्या 2361 है। जिसमें कोल जनजाति की जनसंख्या 1142 है। जिसमें पुरूषों की जनसंख्या 601 तथा महिलाओं की संख्या 541 है। पुरवा में (बड़ी डीह) में कोलों की संख्या अत्याधिक हे। यहाँ की कोल जनजाति कृषि एवं लकड़ी का कार्य ज्यादा करते हैं।

बहुत दिनों तक मनुष्य ने सामाजिक घटनाओं की व्याख्या, पारलौकिक शक्तियों, कोरी कल्पनाओं और तर्क-वाक्यों के सत्यों के आधार पर की है। सामाजिक अनुसंधान का बीजारोपण वहीं से होता है जहाँ वह अपनी व्याख्या के संबंध में संदेह प्रकट करना प्रारंभ करता है। अनुसंधान की जो विधियाँ प्राकृतिक विज्ञानों में सफल हुई है, उन्हीं के प्रयोग द्वारा सामाजिक घटनाओं की समझ उत्पन्न करना, घटनाओं में कारणता स्थापित करना और वैज्ञानिक तटस्थता बनाए रखना, सामाजिक अनुसंधान की मुख्य लक्षण है। ऐसी व्याख्या नहीं प्रस्तुत करनी होती है जो आलोचनात्मक दृष्टि वालों या विरोधियों का संदेह दूर कर सके। इसके लिए निरीक्षण को व्यवस्थित करना, तथ्य संकलन और तथ्य-निर्वचन के लिए विशिष्ट उपकरणों का प्रयोग करना और प्रयोग में आने वाले प्रत्ययों को स्पष्ट करना आवश्यक है। सामाजिक अनुसंधान के लिये सबसे महत्वपूर्ण है अनुसंधान पद्धतियों का चुनाव करना। प्रत्येक शोध कार्य का कुछ निश्चित उद्देश्य होता है। इन

उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये शोध कार्य को व्यवस्थित ढंग योजनाबद्ध रूप से सम्पन्न करना पड़ता है। तथ्य युक्त अध्ययन कार्य में वर्गीकरण, सारणीयन तथा उनका विश्लेषण आदि के लिये अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया जाता है। सामाजिक अनुसंधान में शोध विषय से संबंधित सामाजिक तथ्यों एवं सूचनाओं को संकलित कर निष्कर्ष निकालने की आवश्यकता होती है। ''अध्ययन पद्धति का अर्थ उस तरीके से है जिसके द्वारा अध्ययन कार्य का संगठन तथा विश्लेषण एवं परिणामों का निर्वाचन किया जाता है''।

प्रस्तुत शोध अनवेषणात्मक एवं वर्णनात्मक अध्ययन पर आधारित है अध्ययन में सविचार निदर्शन पद्धति से उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। अध्ययन के लिये साक्षात्कार, अनुसूची, अवलोकन पद्धति का भी प्रयोग किया गया है साथ ही प्राथमिक एवं द्वितीयक सामग्री का संग्रहण किया गया है। संकलित आंकड़ों का सरल व्यवस्थित रूप प्रदान करने के लिये उनका सारणीयन किया गया है। ग्राम पुरवा के कोल जनजाति की संख्या 1142 है जिसमें महिलाओं की जनसंख्या 541 है। कुल 541 महिलाओं में से सविचार निदर्शन पद्धति के माध्यम से 50 महिला उत्तरदाताओं का चयन किया गया है।

शोध कार्य के उद्देश्य- प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य निम्नलिखित है-

1. कोल जनजाति की सामाजिक परम्पराओं जैसे (पारिवारिक वैवाहिक) में परिवर्तनों को जानना।
2. कोल जनजाति के रहन-सहन के स्तर पारंपरिक स्तर में परिवर्तन का पता लगाना।
3. कोल जनजाति में शैक्षणिक, व्यवसायिक परम्पराओं में आए बदलाव को खोजना।

पूर्व अध्ययनों का विश्लेषण- जनजातियों में सामाजिक परिवर्तन के अंतर्गत पारिवारिक एवं वैवाहिक स्थिति, शैक्षणिक स्थिति, शैक्षणिक स्थिति, रहन-सहन की स्थिति, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि पर जो अध्ययन हुये है, उनमें जेनाब बाबू 2004 जनजातीय महिलाओं की निम्न स्थिति के कारणों को भारतीय समाज में परिवर्तन एवं आधुनिक विकास की प्रक्रिया में देखने का प्रयास किया है। बी.एस. बिष्ट 2004 द्वारा उत्तराखण्ड में विकास योजनाओं और जनजातीय महिलाओं की भूमिका एवं स्थिति पर अध्ययन किया गया है।

डॉ. श्रीमती शोभा शर्मा 2001 जनजातीय महिलाओं की परिवर्तित जीवन शैली का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन किया है जिसमें कोल महिला जनजातियों के सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, स्वास्थ्य आदि पर उनके द्वारा प्रकाश डाला गया है।

उपकल्पना- ''कोल जनजाति के पारंपरिक मनोरंजन के साधनो में परिवर्तन हो रहा है''

तथ्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन- कोल जनजाति की परम्पराओं में हुए परिवर्तनों को जानने के लिए अध्ययन क्षेत्र में उत्तरदाताओं से विविध प्रश्न पूंछे गए। उत्तरदाताओं के परिवार के सम्बन्ध मे जानने का प्रयास किया गया है, जिसका विवरण निम्न है।

तालिका क्र.-01, परिवार का स्वरूप

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	व्यक्तिगत	32	64
2	संयुक्त	18	36
	योग	**50**	**100**

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि कुल 50 परिवारों में व्यक्तिगत परिवार 64 प्रतिशत है जबकि संयुक्त परिवार का प्रतिशत 36 है। पहले संयुक्त परिवार की सख्या ज्यादा होती थी किन्तु अब परिवर्तन होने लगा है, जिसके कारण व्यक्तिगत परिवार की संख्या मे वृद्धि होने लगी है।

कोल जनजाति मुख्ययतः कृषि व्यवसाय पर आश्रित है। किन्तु वर्तमान समय में पारंपरिक अर्थव्यवस्था में क्या परिवर्तन हुए हैं, यह जानकारी तालिका क्र. - 2 में दी जा रही हैं।

तालिका क्र.-02, परम्परागत व्यवसाय में परिवर्तन की जानकारी

क्र.	प्रवास हुआ है	संख्या	प्रतिशत
1.	हॉ	27	54
2.	नहीं	23	46
	योग :—	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 48 प्रतिशत सूचनादाता ही पारंपरिक, व्यवसाय कृषि के द्वारा अपना जीवन यापन करते हैं, जबकि 52 प्रतिशत उत्तरदाता कृषि के स्थान पर मजदूरी, ठेकेदारी व नगरों में जाकर अन्य व्यवसाय को भी करने लगे हैं। ये उनके पारंपरिक व्यवसाय में परिवर्तन का परिचायक है।

कोल जनजाति में शिक्षा के क्षेत्र में भी अनेक परिवर्तन हुए हैं। शैक्षणिक परिवर्तन को तालिका क्र.-03 में वर्णित किया गया ह ।

तालिका क्र.-3, शिक्षा के क्षेत्र में परिवर्तन

क्र.	परम्परागत व्यवसाय	संख्या	प्रतिशत
1	कृषि	24	48
2	मजदूरी व अन्य	26	52
	योग :—	**50**	**100**

76 प्रतिशत उत्तरदाताओं की शिक्षा में बढ़ी हुई रूचि उनके पारंपरिक स्वरूप में परिवर्तन को दर्शाती है। वर्तमान समय में कोल जनजाति में शिक्षा का प्रसार तीव्र गति से हुआ है। यह परिवर्तन उनकी परम्पराओं में परिवर्तन को दिखाता है। शिक्षा के स्तर में परिवर्तन का कारण जागरूकता की भावना, औद्योगिकरण, नगरीकरण की प्रक्रिया का प्रभाव कोल जनजातियों पर पड़ रहा है।

शिक्षित होने के पश्चात अध्ययन क्षेत्र के उत्तरदाताओं में प्रवास की प्रवृत्ति भी बढ़ी है। मूल निवास में परिवर्तन को प्रदर्शित करने के लिए तथ्यों की तालिका क्र.-04 में शामिल किया गया है।

तालिका क्र.-4, प्रवास की प्रवृत्ति

क्र.	शिक्षा में रूचि बढ़ी है	संख्या	प्रतिशत
1	हॉ	38	76
2	नहीं	12	24
	योग :—	**50**	**100**

54 प्रतिशत उत्तरदाताओं में प्रवास का प्रवाह गांव से नगर की ओर हुआ है। शिक्षा ग्रहण के पश्चात् व्यक्ति रोजगार की तलाश में नगर की ओर जा रहा है। कोल जनजाति में पारंपरिक निवास स्थान का यह बदलाव उनमें पारंपरिक परिवर्तनों को इंगित करता है। 46 प्रतिशत उत्तरदाता भी अवसर मिलने पर अन्यत्र जाने का इरादा रखते हैं। अर्थात् उनमें पलायन की रोजगार में प्रवृत्ति बढ़ी है।

कोल जनजाति में मनोरंजन के पारंपरिक साधन भी विद्यमान है। उनमें पाये गए परिवर्तनो को तालिका क्र. 05 में दर्शाया गया है।

तालिका क्र.-5, मनोरंजन के पारंपरिक साधनों में परिवर्तन

क्र.	परिवर्तन हुआ है	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	36	72
2.	नहीं	14	28
	योग :–	**50**	**100**

72 प्रतिशत उत्तरदाता ने स्वीकार किया है कि मनोरंजन के पारंपरिक साधनों में परिवर्तन हुआ है। केवल 28 प्रतिशत सूचनादाता पारंपरिक तरीको के मनोरंजन से जुड़े हैं।

कोल जनजाति के पारंपरिक लोक नृत्य भी परिवर्तित हुए हैं। तालिका क्र. 06 में यह प्रदर्शित है।

तालिका क्र.-6, लोकनृत्य में परिवर्तन संबंधी जानकारी

क्र.	लोकनृत्य में परिवर्तन हुआ है	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	28	76
2.	नहीं	22	24
	योग :–	**50**	**100**

कोल जनजाति में लोकनृत्य मनोरंजन का सर्व प्रिय साधन है। आधुनिकता के प्रभाव से इस परम्परा में परिवर्तन आया है। 76 प्रतिशत सूचनादाता मानते हैं कि जनजातीय लोकनृत्य के स्थान पर मनोरंजन के अन्य साधन भी स्वीकार किए जाने लगे हैं।

लोकगीत भी कोल जनजाति में मनोरंजन का एक प्रमुख साधन है। तालिका क्र. 07 में पारंपरिक लोकगीतों में परिवर्तन को दिखाया गया है।

तालिका क्र.-7, लोकगीतों में परिवर्तन संबंधी जानकारी

क्र.	परिवर्तन हुआ है	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	26	52
2.	नहीं	24	48
	योग :–	**50**	**100**

लोकगीत कोल जनजाति में प्रचलित मनोरंजन का साधन है। इसके पारंपरिक स्वरूप में परिवर्तन को 52 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया है। उनका कहना है कि फिल्मी गीतों का चलन लोकगीतो को पीछे धकेलने में काफी सहायक हुआ है। आधुनिक उपकरणों के प्रभाव स्वरूप पारंपरिक लोकगीतों में बदलाव भी उत्तरदाताओं में पाया गया। 48 प्रतिशत सूचनादाता पारम्परिक लोकगीतो में आज भी आनंद की अनुभूति करते

हैं।

निष्कर्ष एवं सुझाव-

कोल जनजाति के परम्परागत व्यवसायों में परिवर्तन आया है। 48 प्रतिशत परिवार कृषि का कार्य करते हैं, जबकि मजदूरी 52 प्रतिशत परिवार करते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में भी परिवर्तन आया है। पारंपरिक कार्यों को छोड़कर शिक्षा ग्रहण करने में रूचि बढ़ी है, ऐसे परिवारों का प्रतिशत 76 है, जबकि शिक्षा ग्रहण करने में रूचि नहीं है ऐसे परिवारों का प्रतिशत 24 है। कोल जनजाति पहले परम्परा को ज्यादा महत्व देते थे। गांव में ही अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे, लेकिन वे अब शहरों की ओर प्रवास करने लगे हैं। शहर की ओर प्रवास करने वाले परिवारों का प्रतिशत 54 है, जबकि शहर न आने वाले परिवारों का प्रतिशत 46 है। कोल जनजाति के पारम्परिक मनोरंजन में भी परिवर्तन आया है। 72 प्रतिशत परिवारों मनोरंजन के वर्तमान साधनों टी.व्ही., सिनेमा, रेडियो, मोबाइल, टेप रिकार्ड एवं कम्प्यूटर आदि का प्रयोग करने लगे हैं, जबकि 28 प्रतिशत परिवार पारम्परिक मनोरंजन का ही प्रयोग करते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि कोल जनजाति के पारम्परिक व्यवसाय, मनोरंजन, शिक्षा, प्रवास आदि में परिवर्तन आया है। नये-नये साधनों का प्रयोग करने लगे हैं। लोकगीत एवं लोकनृत्यों में भी आधुनिकता का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

सुझाव-

1. पारंपरिक व्यवसाय कृषि को उन्नत करने की आवश्यकता है। साथ ही कृषि व्यवसाय को बढ़ावा दिया जाए।
2. रोजगार की तलाश में कोल जनजाति नगरों की ओर पलायन कर रही है। उन्हें अधिकाधिक रोजगार दिलवाने के प्रयास सरकार की ओर से किये जाने चाहिए।
3. जनजातियों में शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए व्यवहारिक अभियान चलाये जाने चाहिए।
4. कोल जनजाति की लोक परम्पराओं को बचाये रखने के लिए जनजातीय जन-जागरूकता उत्पन्न करना आवश्यक है।
5. कोल जनजातीयों में स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार के अवसर को सरलता से उपलब्ध कराने के लिए स्वयं जनजातीय लोगों व सरकार को आगे आना होगा।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. मेरिस गिन्स वर्ग दा साइकोलाजी आफ सोसाइटी पेज -104
2. ड्रेवर जेम्स - ए डिक्सनरी आफ साइकोलाजी पृष्ठ -157
3. उपाध्याय डॉ0 विजयशंकर 1993 भारत की जनजातीय संस्कृति म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ आकादमी पेज-2
4. तिवारी डॉ0 शिव कुमार 1997 मध्यप्रदेश की जनजातियां पेज-99
5. तिवारी डॉ0 शिव कुमार 1997 मध्यप्रदेश की जनजातियां पेज-100
6. जिला सांख्यिकीय पुस्तिका रीवा 2011
7. मुखर्जी रवीन्द्रनाथ 2011 सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी
8. शर्मा डॉ0 शोभा 2001 शोध प्रबंध (अप्रकाशित)अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
9. बानू जेनाब 2001 ट्राइबल बुमेन जेन्डर इश्यू कनिश्का पब्लिकेशन दिल्ली।

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

ग्रामीण बच्चों एवं महिलाओं के स्वास्थ्य का मनोसामाजिक अध्ययन (ग्राम पटेहरा के विशेष संदर्भ में)

* रेखा सेन

सारांश- **ब्लाक जवा से 20 किलोमीटर दूरी पर स्थित पटेहरा गांव चारों तरफ से घने जंगल तथा पहाड़ों से घिरा हुआ है, यहाँ का मुख्य व्यवसाय कृषि तथा कृषि मजदूरी है कृषि के साथ-साथ पशुपालन भी यहाँ का मुख्य व्यवसाय है। मजदूर व्यक्तियों के वर्ष में कुछ दिन ही मजदूरी मिल पाती है। इसलिए मजदूरी की तलाश में मजदूर व्यक्ति अकेले या अपने परिवार के साथ रीवा शहर एवं शंकरगढ़ में पलायन कर जाते है। अतः ग्रामीण जन समुदाय बुनियादी समस्याओं बेरोजगारी, शिक्षा, स्वास्थ्य, भोजन आदि गम्भीर समस्याओं से जूझ रहा है।**

मुख्य शब्द– जच्चा बच्चा, स्वास्थ्य, नवजात, पौष्टिक

प्रस्तावना- संयुक्त राष्ट्र समर्थित सर्वेक्षण के शुरूआती नतीजों के अनुसार बीते दशक में भारत की महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य में काफी सुधार हुए हैं। सर्वे के मुताबिक सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े माने जाने वाले अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों में कमजोर और कुपोषित बच्चों की संख्या में अन्य जातियों की तुलना में ज्यादा तेजी से गिरावट देखी गई। स्वास्थ्यकर्मी इसका श्रेय स्तनपान को बढ़ावा देने के लिए सामुदायिक कार्यकर्ताओं के उपयोग किए जाने जैसे सरल हस्तक्षेपों और सरकार द्वारा बुनियादी स्वास्थ्य अभियानों पर दिए जा रहे जोर को दे रहे हैं। ये अभियान शिशुओं और बच्चों को पौष्टिक खानपान मिलने और बच्चों का जन्म अस्पतालों में करवाने पर बल देते हैं। यूनिसेफ द्वारा समर्थित और महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा कराया गया यह सर्वे पिछले एक दशक में भारत में जच्चा बच्चा स्वास्थ्य पर कराया गया पहला राष्ट्रीय सर्वेक्षण है। पिछले दशक में सरकार ने गांवों में आशा नाम का कार्यक्रम शुरू किया। इस कार्यक्रम के तहत गांवों में प्रशिक्षित महिला स्वास्थ्यकर्मियों को नियुक्त किया जाता है। इन महिलाएं को आशा के नाम से जाना जाता है और वे गर्भवती महिलाओं और नई माताओं को प्रसव के पहले और बाद में स्वास्थ्य संबंधी सलाह देती हैं। सरकार ने कई मुफ्त योजनाएं लागू की हैं जिनमें गर्भवती महिलाओं और बीमार नवजात शिशुओं को अस्पताल आने जाने की निःशुल्क सेवाएं शामिल हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार 'स्वास्थ्य' का अर्थ किसी बीमारी या कमजोरी का न होना मात्र नहीं है। यह शारीरिक, मानसिक व सामाजिक रूप से पूर्ण स्वस्थ्य होने का

* अतिथि विद्वान, समाजशास्त्र, शासकीय महाविद्यालय बरका, जिला-सीधी (म.प्र.)

नाम है। पर स्वास्थ्य की यह अवधारणा काल्पनिक है। व्यवहार में हम देखते हैं कि स्वास्थ्य एक परिवर्तनशील स्थिति है और ज्यादातर लोग पूर्ण व खराब स्वास्थ्य के बीच में लगातार झूलते रहते हैं। पोषणता स्वास्थ्य की पूर्व आवश्यकता है। पोषणता की सर्वाधिक स्वीकृत परिभाषा रोबिन्दसन की है। वे कहते हैं- ''यह खाद्यान्न, पुष्टिकर व अन्य पदार्थों का विज्ञान है जिसमें इनके बीच क्रिया अंतरक्रिया व संतुलन से अंग पोषक तत्वों को ग्रहण करते हैं, पचाते हैं, आत्मसात करते हैं और उनका उपयोग करने के बाद अवशिष्ट को बाहर फेंक देता है।'' व्यक्ति को अपने को स्वस्थ्य व सक्रिय रखने के लिए काफी अधिक पोषक तत्वों को जरूरत होती है।

स्वास्थ्य प्रत्येक व्यक्ति की आधारभूत जरूरत और मौलिक अधिकार है। महिलाओं के संदर्भ में यह बात कई कारणों से और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। सबसे पहले तो वे कुल जनसंख्या का आधा हिस्सा हैं और कुल श्रम बल का एक तिहाई से ज्यादा भी वे ही हैं। दूसरा, बच्चा पैदा करने से लेकर उसके पालन-पोषण की मुख्य जिम्मेदारी उनकी ही है। उनके स्वास्थ्य का बच्चों के स्वास्थ्य व तंदुरस्ती पर सीधा असर पड़ता है। पौष्टिक तत्वों का सेवन न करने से वे कुपोषण और अंततः रूग्णता का शिकार हो सकती है। खराब स्वास्थ्य का वैसे भी अर्थ है ज्यादा संख्या में महिलाओं का बीमार होना। कम उम्र में ज्यादा मौतें, प्रजनन क्षमता में कमी और आजीविका कमाने के लिए शारीरिक व मानसिक बल की कमी।

ग्राम की बुनियादी समस्याओं को जानने के लिए गांव का सर्वे किया जिसकी रिपोर्ट इस प्रकार है -

सर्वे सारांश एक नजर में

क्र.	विवरण	बालक/बालिका	संख्या
1.	ग्राम की कुल जनसंख्या	––	1366
2.	कुल परिवारों की संख्या	––	417
3.	कुल महिलाओं की संख्या	––	669
4.	कुल पुरूषों की संख्या	––	697
5.	0–5 वर्ष के बच्चों की संख्या	बालक	211
		बालिका	193
6.	टीकाकरण से वंचित बच्चों की संख्या	बालक	47
		बालिका	36
7.	6–17 वर्ष के बच्चों व किशोरों की संख्या	बालक	115
		बालिका	109
8.	शिक्षा से वंचित बच्चों की संख्या	बालक	13
		बालिका	21
9.	बाल श्रमिक बच्चों की संख्या	बालक	5
		बालिका	0
10.	कामकाजी बच्चों की संख्या	बालक	10
		बालिका	21
11.	वृद्धावस्था विधवा पेंशन से वंचित व्यक्तियों की संख्या	विधवा	2
		वृद्धावस्था पेंशन, महिला	3

		पुरूष	2
12.	कुपोषित बच्चों की संख्या	बालक	3
		बालिकाएं	7
13.	भूमिहीन व्यक्तियों की संख्या	——	13
14.	बेरोजगार व्यक्तियों की संख्या	——	75
15.	प्राइवेट विद्यालयों की संख्या	——	03
16.	ऑगनबाड़ी केन्द्र	——	2
17.	सरकारी अस्पताल की दूरी	——	2कि.मी.
18.	सरकारी हैन्डपम्प	——	14

उद्देश्य- महिला के स्वास्थ्य का प्रभाव उसके पूरे परिवार पर पड़ता है माँ की रूग्णता या मृत्यु का फल वह अकेले नहीं भोगती। उसका असर पूरे परिवार पर पड़ता है। आज महिलाएं घर के भीतर के कामकाज व बच्चों की देखभाल तक ही सीमित नहीं है। वे घर से बाहर आर्थिक गतिविधियों में भी पूरी तरह व्यस्त हैं। फिर चाहे वह उनका पारिवारिक व्यवसाय हो या फिर खेती या उद्योग। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में तो उनका मुख्य योगदान है ही। जाहिर है कि इन महिलाओं का निरोग व स्वस्थ्य होना अपने परिवार के लिए ही नहीं, राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए भी जरूरी है। खराब स्वास्थ्य से वे अपनी पारिवारिक जिम्मदारियॉं ठीक से नहीं निभा पाती और आर्थिक गतिविधियों में भी उतना सक्रिय नहीं रह पातीं। नतीजन परिवार की आय घट जाती है जिसका सीधा असर बच्चों के स्वास्थ्य, पोषण व अन्य बातों पर पड़ता है। इस अध्ययन से यह जाना जा सकेगा।

1. ग्रामीण महिला के स्वास्थ्य व पोषण की अवधारणा,
2. महिलाओं के स्वास्थ्य व पोषक स्थिति के मुख्य सूचक तत्व,
3. उनके कुपोषण व खराब स्वास्थ्य के कारण,
4. ग्रामीण महिला के स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले सामाजिक-सांस्कृतिक कारक, और
5. मातृ स्वास्थ्य के लिए बनाए गए कुछ कार्यक्रम व नीतियां।

गांव का सर्वे करने पर यह ज्ञात हुआ कि ग्राम में 0-5 वर्ष के 36 बालक तथा 47 बालिकाएं नियमित टीकाकरण से वंचित थे उनका माता-पिता से टीकाकरण के बारे में जब पूछा तो उन्हें टीकों के बारे में जानकारी नहीं थी। वे केवल पल्प पोलियों की खुराक को टीका समझ रहे थे इससे यह पता लगा कि माता/पिता को टीकाकरण के महत्व के विषय में कोई जानकारी नहीं है।

अध्ययन के दौरान कुछ बच्चे काली खांसी तथा खसरा से पीड़ित पाये गये। एवं कुछ बच्चों की रतौंधी एवं कुछ बच्चों के पेट में कीड़े एवं कुछ बच्चों में खाज, फुन्सी एवं ऑंख, कान सम्बन्धी बीमारियॉं पाई गई।

कुछ बच्चे कुपोषित भी मिले, कुपोषित बच्चों के माता/पिता से कुपोषित होने कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि बच्चा बीमा रहता है।

1 बालक तथा 2 बालिकाओं की मृत्यु, दस्त, दिमागी, बुखार, पीलिया के कारण हो गई। गर्भवती माता की मृत्यु अप्रशित दाई द्वारा प्रसव कराने के कारण हो गई। गांव में कुछ महिलायें तथा बच्चे मलेरिया से पीड़ित मिले, वे गांव के झोला छाप डॉक्टर से

बिना जांच के साधारण बुखार भी दवाई खा रहे थे, उन्हें ये नहीं मालूम था कि यह मलेरिया बुखार क्या है, मलेरिया बुखार के क्या लक्षण होते है। कुछ महिलाओं को मलेरिया बुखार हुआ था तथा उसके बाद उनको लीवर सम्बन्धी रोग हो गये थे। कुछ महिलाओं में खून की कमी पाई गई एवं कुछ महिलाओं में कैल्शियम की कमी के कारण जोड़ो में दर्द पाया गया।

कुछ महिलायें कुपोषण की शिकार थी तथा कुछ को यौन सम्बन्धी बीमारियां भी थी। एवं कुछ महिलाएं उल्टी दस्त, से पीडित थी।

साक्षात्कार आंकड़ों का वर्गीकरण एवं सारणीयन- मैंने अपने शोध विषय से सम्बन्धित जब सर्वेक्षण किया तो विषय से सम्बन्धित निम्न जानकारियों को इकट्ठा किया। जिसमें मैने साक्षात्कार अनुसूची द्वारा 9831 बच्चों तथा महिलाओं में से 50 बच्चों तथा 50 महिलाओं कुल 100 का आंकड़े से साक्षात्कार लिया जो विभिन्न जाति, धर्म, आयु, से सम्बन्धित है। इनसे साक्षात्कार के दौरान बच्चों तथा महिलाओं के स्वास्थ्य से सम्बन्धित कार्यक्रमों की जानकारी ली गयी, तब शोधार्थी को इनके व इन योजना की वास्तविक स्थिति के बारे में मालूम हुआ कि यह योजना इस शैक्षणिक स्तर पर कितनी कारगर साबित हो रही है। साक्षात्कार के दौरान शोधार्थी ने उत्तरदाताओं का वास्तविक स्थिति का अवलोकन किया है जिनका विवरण विभिन्न सारणियों द्वारा प्रदर्शित किया जा रहा है-

बच्चों का नियमित टीकाकरण व स्वास्थ्य परीक्षण न होने के क्या कारण है?

सारणी क्रमांक-1

क्र.	कारण	प्रतिशत
1.	माता/पिता का जागरूक न होना	36
2.	बच्चों के टीके लगवाने से बीमार होने का भय	23
3.	टीकाकरण के महत्व की जानकारी न होना	11
4.	स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव	30

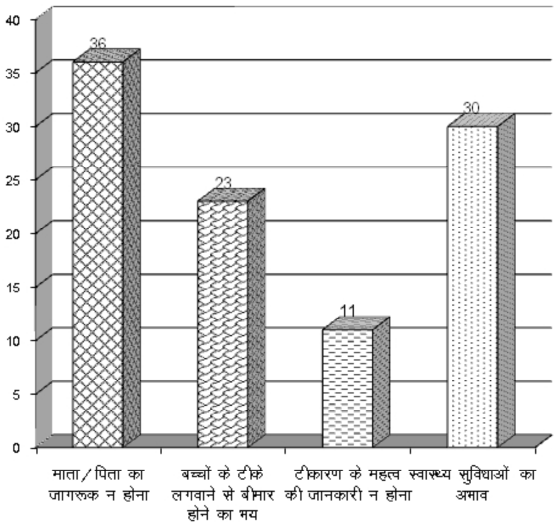

बच्चों को दस्त रोग होने के कारण क्या है?

सारणी क्रमांक-2

क्र.	कारण	प्रतिशत
1.	दूषित पानी	44
2.	अस्वच्छता	32
3.	दूषित भोजन	24
4.	अन्य	0

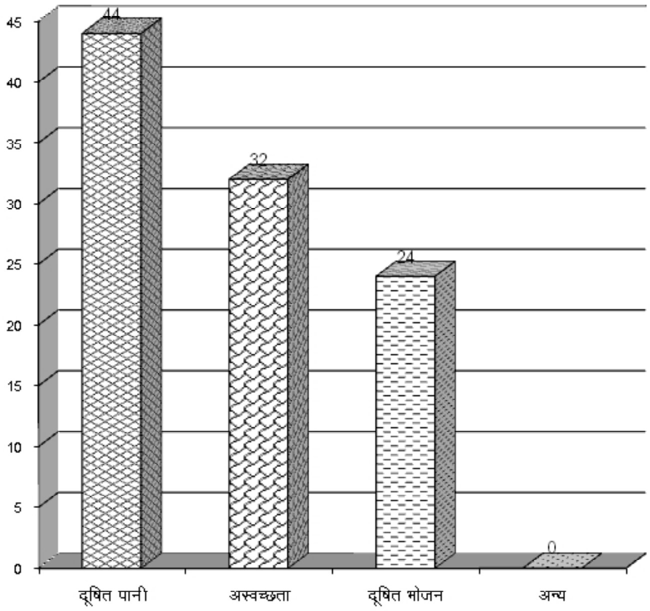

0-5 वर्ष के बच्चों की मृत्यु अधिकतर किस कारण से होती है?

सारणी क्रमांक-3

क्र.	कारण	प्रतिशत
1.	असुरक्षित प्रसव	32
2.	दस्त	30
3.	छः जान लेवा बीमारियो	26
4.	निमोनिया	12

बच्चों तथा महिलाओं में कुपोषण का कारण क्या है?

सारणी क्रमांक-4

क्र.	कारण	प्रतिशत
1.	गरीबी	35
2.	बेरोजगारी	31
3.	लिंग भेद	23
4.	जागरूकता की कमी	11

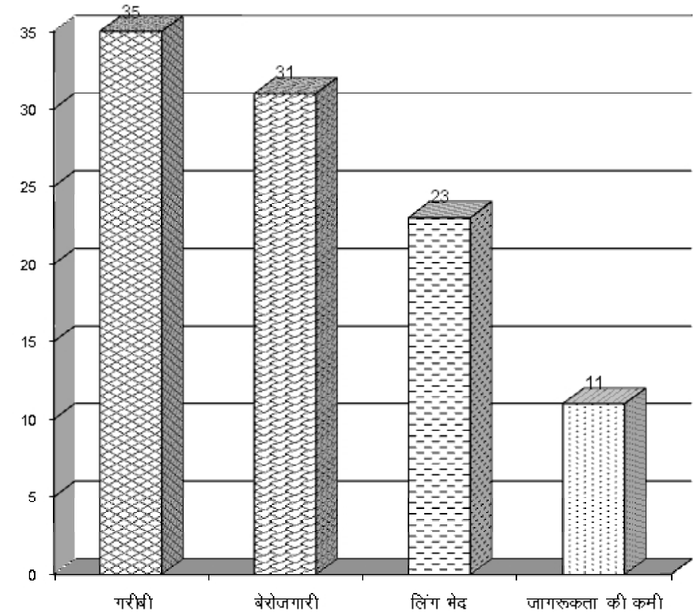

निष्कर्ष– शोध विषय के संदर्भ में अध्ययन करने के उपरांत शोधकर्ता द्वारा यह निष्कर्ष प्राप्त किया गया कि बच्चों एवं महिलाओं के स्वास्थ्य का सबसे बड़ा कारण गरीबी, बेरोजगारी, जागरूकता का अभाव व समाज के लोगों एवं राजनैतिक दलों के शोषण के कारण बच्चों एवं महिलाओं के स्वास्थ्य का स्तर घटता जा रहा है।

क्योंकि शासन द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों के विकास व कल्याण हेतु समय-समय पर विभिन्न योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाता है लेकिन प्रशासनिक तंत्र की लापरवाही व लालच के कारण योजनाओं का समय-समय पर मूल्यांकन (प्रगति मूल्यांकन) नहीं किया जाता व जितनी धन राशि विकास संबंधी कार्यक्रमों हेतु शासन द्वारा आवंटित की जाती है उसे आवश्यकता ग्रसित लोगों तक पहुँचने से पहले ही उसका कुछ प्रतिशत का घोटाला कर दिया जाता है।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. महिला एवं बाल विकास
2. रोजगार समाचार एवं रोजगार निर्माण
3. विश्व स्वास्थ्य संगठन
4. नगर निगम, रीवा
5. स्वास्थ्य मंत्रालय
6. ग्रामीण विकास प्राधिकरण

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

घरेलू कामकाजी महिलाओं की आवासीय समस्याओं का अध्ययन (बलौदाबाजार नगरपालिका के विशेष संदर्भ में)

* डी.एन.शर्मा
** संतोष कुमार देवांगन

सारांश- **मनुष्य के जीवन की आधारभूत आवश्यकताओं में आवास का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। भोजन तथा वस्त्र के बाद आवास का अपना अलग ही महत्व है। मानव जीवन की अस्तित्व को बनाये रखने के लिए आवास एक मूलभूत आवश्यकता है और बेहतर जीवन-यापन का आधार वह घर है जहां अच्छी सुविधाएं मिलती हों। अपना घर होने से व्यक्ति को समाज में पर्याप्त आर्थिक सुरक्षा और सम्मान मिलता है। मकान के स्वामित्व से बी.पी.एल. परिवार का आत्मविश्वास बढ़ता है और उसमें प्रगति करने का इच्छा पैदा होती है जो गरीबी उपसमन के लिए बेहद जरूरी है।**

प्रस्तावना- साम्य जीवन में आवास एक मानवीय जीवन की पहली पसंद है तथा जरूरत है। आवास व्यवस्था का मतलब ''आरामदायक ऐसे वातावरण व ऐसी सेवाओं की व्यवस्था करने से है जो व्यक्ति को वर्ष में हरसमय स्वस्थ एवं खुश रखें।''[1] आवास का व्यक्ति के स्वास्थ्य से भी घनिष्ट संबंध होता है। मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए शुध्द वायु व प्रकाश का मिलना आवश्यक है किन्तु जहां आर्थिक रूप से कमजोर व्यक्ति निवास करते हैं। वहां इनका नितांत अभाव होता है। फलस्वरूप वे आर्थिक रूप से दुर्बल हो जाते हैं और अक्सर बीमार रहते हैं। डॉ. अमर नारायण अग्रवाल ने लिखा है कि-''बम्बई के आस-पास बनी हुई चालें, अहमदाबाद के भूमि के नीचे बने हुए मकान की कतारें, कानपुर, लखनऊ और हावड़ा की आंतरिक बस्तियां, जूट मिल के गांव वाले छप्पर, कोयले की खानों के गंदे धावरे तथा मद्रास के औद्योगिक कस्बे के गंदे छप्पर सभी तपेदिक और दूसरे श्वांस रोगों के घर बन गए हैं।''[2]

मनुष्य जिस प्रकार के वातावरण में निवास करता है उसकी मनोवृत्ति भी वैसे ही हो जाती है। गंदे माहौल में रहने वाले व्यक्तियों की मनोभावना भी गंदी हो जाती है। जैसे-चोरी, शराब, जुआ, वेश्यावृत्ति आदि दुर्गुण उत्पन्न हो जाते हैं। डॉ. मुखर्जी ने बताया कि ''मिदनापुर के बंगाल के जूट मिलों में आयी हुई 300 स्त्रियों ने यह स्वीकार किया कि उनमें से 3 में एक वेश्यावृत्ति करती है और हुगली में 4 में एक वेश्यावृत्ति करती है।''

आवास क्या है?

''आवास केवल चार दीवारों और छत से नहीं बनता है। आवास की अवधारणा में

* निर्देशक एवं अपर संचालक, उच्च शिक्षा संचालनालय, रायपुर (छ.ग.)
** शोध छात्र, अर्थशास्त्र, अध्ययनशाला, पं. रविशंकर शुक्ल वि.वि. रायपुर (छ.ग.)

बुनियादी सुविधाओं की व्यवस्था - पीने के लिए शुद्ध पानी, जल निकासी की उचित व्यवस्था, सामुदायिक केन्द्र, बच्चों के लिए स्कूल, औषधालय आदि सभी चीजें आती हैं जिसमें ऐसी सुविधाएं हैं।''[3]

'आवास' या 'निवास' का अभिप्राय रहने के लिए मकान के व्यवस्था से है जो अच्छी, बुरी, स्वास्थ्यकर एवं अस्वास्थ्यकर, अनुकूल एवं प्रतिकूल भी हो सकती है। आवास ऐसे स्थलों पर हों जो जीवन व्यतीत कर सकें जहां शिक्षा, चिकित्सा, मनोरंजन, क्रीड़ा, स्वच्छ वायु, प्रकाश, शुद्ध पेयजल एवं शौचालय व स्नानागार की उचित सुविधा हों। अर्थात् आवास से आशय ऐसे स्थल से हैं जो आरामदायक हों, लोगों की आवश्यकता के अनुरूप हों, जिनका वातावरण स्वास्थ्यमय हों जहां लोग अपने परिवार के साथ सुखमय एवं आनंदप्रद जीवन व्यतीत कर सकें।

''आवास एक समन्वयात्मक प्रक्रिया है जिससे सामुदायिक जीवन के विवेकपूर्ण विकास, सहायता मिल सके, स्वास्थ्यपूर्ण घरों एवं पूर्ण सामुदायिक जीवन की सुविधाओं का होता है।''[4]

आवास के प्रकार- भारत गांवों का देश है जहां 6 लाख से ज्यादा गांव है, जहां पर विभिन्न प्रकार के लोगों की आर्थिक स्थिति एक दूसरे से भिन्न हैं निवास करते हैं। अतः आवास को चार श्रेणियों में बांट सकते हैं-

(1) प्रथम श्रेणी - इस श्रेणी में पक्के आवास आते हैं। जिनकी दीवारें ईंट तथा पत्थर की होती हैं जिसमें छत पक्की होती हैं। इस प्रकार के मकानों की संख्या अभी भी बहुत कम है।

(2) द्वितीय श्रेणी - इस श्रेणी में अर्द्धपक्के मकान आते हैं जिनकी दीवारें ईंट तथा पत्थर की होती हैं जिसमें छत खपरैल, टाइल्स या सीमेंट चादरों की होती हैं।

(3) तृतीय श्रेणी - इस श्रेणी में कच्चे मकान आते हैं जिनकी दीवारें मिट्टी की होती हैं। जिसमें छत खपरैल या टीन की चादरों की होती हैं।

(4) चतुर्थ श्रेणी - इस श्रेणी में घांस-फुस से बने झोंपड़ियां आती हैं। इस तरह के मकानों में खराब मौसम में कोई सुरक्षा नही रहती है। इन मकानों में रहने वालों को गर्मी, जाड़ा और बरसात तीनों मौसम में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

''आवास राज्य-सूची का विषय है लेकिन सामाजिक आवास योजनाओं और विशेष रूप से समाज के कमजोर वर्गों के लिए आवास सुविधाओं से संबंधित नीतियां बनाने और उनको लागू करने के तौर तरीकों तथा कार्यक्रम तैयार करने की जिम्मेदारी केन्द्र सरकार की है।''[5]

नगरीय जीवन में अच्छी सुविधाजनक और साफ आवास व्यवस्था का महत्व ज्यादा है। अच्छे आवास का मतलब आनंद व स्वास्थ्य से है। बुरे घर गंदगी, नशा, अनैतिकता, अपराध, वेश्यावृत्ति को जन्म देते हैं। भारत में शहरी क्षेत्रों की आवास व्यवस्था अत्यंत सोचनीय है। जनसंख्या तेजी से बढ़ती जा रही है। परन्तु मकानों का निर्माण उस गति से नहीं हो पा रहा है। शहरों में जमीन की कीमत इतनी बढ़ गई है कि मकान पास-पास होते हैं, कमरों में हवा और रोशनी का एक मात्र रास्ता दरवाजा ही होता है। अनेक व्यक्तियों को एक ही कमरे में रहना पड़ता है। लोग जहां रहते हैं वहां सफाई का कोई नाम नहीं होता। इसलिए 1952 में भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री पं.जवाहर लाल नेहरू ने 2 अक्टूबर

को कानपुर के श्रमिकों के निवास स्थान का निरीक्षण करते हुए उन्हें ''नरक कुण्ड'' कहकर संबोधित किया था। आवास की दशा के संबंध में अनेक समितियों ने अपने प्रतिवेदन प्रस्तुत किये हैं। जिसमें श्रम अनुसंधान समिति, 1940 में भारे समिति, 1969 में राष्ट्रीय श्रम आयोग ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि, आवास की दशा अब भी अत्यंत सोचनीय है और इस दिशा में गंभीर प्रयास किये जाने चाहिए। शाही श्रम आयोग ने अपने प्रतिवेदन में प्रस्तुत किया है कि, ''अधिकांश चालों में कोई भी सुधार करने की गुंजाईश नहीं है और उनको नष्ट कर देने की आवश्यकता है।''[6]

नगरीय संस्कृति के उत्तरोत्तर प्रगति के साथ ही आवासीय दशा संबंधी समस्या मानव समूह का चिंतनीय विषय बन गया है। भारतीय आवास समस्या के दो पहलू हैं- प्रथम है मकान की कमी तथा द्वितीय उनका असंतोषजनक स्तर।

छत्तीसगढ़ में सबसे अधिक लोग झुग्गी बस्तियों अथवा झुग्गी जैसी परिस्थितियों में रहते हैं। यह आंकड़ा देश के दूसरे राज्य की तुलना में सबसे अधिक है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण कार्यालय की हाल ही में जारी रिपोर्ट कहती है कि प्रदेश के कुल 8 लाख 46 हजार 262 घरों में से 1 लाख 51 हजार 397 झुग्गियॉ अथवा झुग्गियों जैसे है। झुग्गियों की संख्या कुल घरों का 18 फीसदी है। सर्वेक्षण रिपोर्ट में छत्तीसगढ़ के बाद पड़ोसी ओड़िसा का नंबर है, जहां 17 प्रतिशत घर झुग्गी हैं। इस सूची में 14 प्रतिशत के साथ झारखण्ड तीसरे स्थान पर और 12 प्रतिशत झुग्गियों वाला तमिलनाडु चौथे स्थान पर हैं। बिहार में भी ऐसे घरों की संख्या 11 प्रतिशत है, जबकि मध्यप्रदेश में कुल घरों का केवल 9 प्रतिशत हिस्सा झुग्गी माना गया है। दुनिया के सबसे बड़े स्लम क्षेत्र में शुमार धारावी जैसे बस्तियों वाले महाराष्ट्र में केवल 1 प्रतिशत घर झुग्गी है। जबकि दिल्ली में ऐसे घर केवल 5 प्रतिशत तक है। झुग्गियों में रहती है राजधानी की 51 फीसदी आबादी 2011 की जनगणना के मुताबिक रायपुर की 51 प्रतिशत आबादी झुग्गियों में रहती है। यानि 10 लाख 10 हजार लोगों में से 5 लाख 16 हजार लोग। एक गैर सरकारी रिपोर्ट बताती है, रायपुर में 282 झुग्गी बस्तियां है, जिनमें 87 हजार से अधिक परिवार रहते हैं। एनएसएसओ कहता है कि किसी क्षेत्र में अस्थायी और कच्ची सामग्री से बने कम से कम 20 घरों का समूह जो एक-दूसरे से सटे हुए हों और वहां घरों में शौचालय, पीने का साफ पानी और भूमिगत जल निकासी प्रणाली नहीं हो स्लम है। जनगणना के लिए 60-70 घरों वाले ऐसे ही क्षेत्र को स्लम कहा गया है। छत्तीसगढ़ के अधिकांश घर कच्ची सामग्री, खपरैल और मिट्टी से बने हैं। ऐसे में यहॉ की स्लम आबादी बड़ी दिख रही है।[7]

बलौदाबाजार नगरपालिका में सामान्यतया जनसंख्या में वृद्धि, तीव्र नगरीकरण तथा औद्योगिकीकरण के फलस्वरूप एक ओर जहां मध्यम एवं उच्चवर्गीय लोगों की संख्या में वृद्धि हुई है वहीं दूसरी ओर गरीबी के शिकार लोगों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। इसी के साथ ग्रामीण क्षेत्र से भूमिहीन श्रमिकों का शहरों की ओर पलायन भी बढ़ा है। इस दौरान एकल परिवारों और नौकरी करने वाली महिलाओं की संख्याओं में भी तेजी से वृध्दि हुई है। इन सब कारणों से घरेलू कामकाजी महिलाओं की मांग और पूर्ति में भी वृध्दि हुई है। इन घरेलू कामकाजी महिलाओं का अधिकांश भाग विधवाओं, परित्यक्ताओं और अन्य कई मुसिबतों की शिकार महिलाओं का होता है। इनका सारा जीवन झुग्गी-झोपड़ी में रहते हुए गुजर जाती है। अच्छे एवं उपयुक्त आवास की कल्पना करना भी इनके लिए

बेईमानी है।[8] इन घरेलू कामकाजी महिलाओं को तीन वर्गों में बांटा जा सकता है - प्रथम जो अनेक घरों में कार्य करती हैं, द्वितीय वे जो एक ही घर में सीमित समय के लिए कार्य करती हैं और तृतीय वे जो एक ही घर में पूर्णकालिक कार्य करती हैं। विभिन्न तरह के घरेलू कार्यों को अंजाम देती ये महिलाएं या तो बाहर रहती हुई काम करती हैं या फिर पार्ट टाईम काम करती हैं लेकिन उनका रहना अपने निवास स्थान पर ही होता है।[9]

अनेक घरों में कार्य करने के कारण ये अपने आवास के आस-पास ही कार्य ढूंढती है और चाहती है कि कार्यस्थल एवं निवास के मध्य कम से कम दूरी हों। यही कारण है कि बलौदाबाजार नगरपालिका में मध्यमवर्गीय बस्तियों के आस-पास अवैधानिक रूप से झुग्गी-झोपड़ियां भी बस जाती हैं। अर्थात् इन महिलाओं के पास स्वयं का मकान नहीं होती। चूंकि ये अत्यंत गरीब प्रवासी महिलाएं हैं जिसके कारण शासकीय भूमि या सड़कों के किनारे गंदे जगहों पर बेजाकब्जा कर कच्चे मकान या झुग्गी-झोपड़ी बनाकर रहती हैं। समय-समय पर शहर की सौंदर्यीकरण की प्रक्रिया में इन्हें वहां से हटा दिया जाता है जिससे इनकी समस्यायें और विकराल हो जाती है। इनके मकान में बिजली, स्वच्छ पीने का पानी, स्वच्छ हवा, शौचालय, स्नानघर एवं प्रकाश की कमी बनी रहती है जिससे यहां का सम्पूर्ण वातावरण प्रदूषित हो जाता है और अनेक रोगों को जन्म देता है जिसके कारण इनके घरों का वातावरण अत्यन्त भयावह एवं डरावना होता है और इसी वातावरण में अनेक कुकर्म पनपते रहते हैं। ये वातावरण प्रायः वेश्यावृत्ति को भी जन्म देता है। एक तो इन घरेलू कामकाजी महिलाओं के रहन-सहन घटिया स्तर का है साथ ही ये अत्यंत नाटकीय एवं दुखमय जीवन व्यतीत करती हैं। स्वयं तथा बच्चों के पेट भरने के लिए ये कोई भी अपराध करने से नहीं कतराते और अंधकारमय जीवन इनको इन सब कार्यों को करने में सहायता करता है। ये महिलाएं बहुत ही बदतर जिंदगी जीती हैं। ये इसी माहौल में जीते हैं और मर जाते हैं। इस तरह से घरेलू कामकाजी महिलाओं को विभिन्न आवासीय समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

शोध का उद्देश्य-

1. घरेलू कामकाजी महिलाओं की आवासीय समस्याओं को जानना।
2. घरेलू कामकाजी महिलाओं की आवासीय समस्याओं के निराकरण हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

अध्ययन विधि व क्षेत्र-

प्रस्तुत शोध पत्र घरेलू कामकाजी महिलाओं की आवासीय समस्याओं के अध्ययन हेतु बलौदाबाजार नगरपालिका के 60 घरेलू कामकाजी महिलाओं का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति के आधार पर किया गया है। निदर्शन द्वारा चुने गये उत्तरदाताओं से प्राथमिक सामाग्री के संग्रहण के लिए साक्षात्कार अनुसूची एवं अवलोकन पद्धति का प्रयोग किया गया है तथा संकलित समंको का विश्लेषण कर निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है।

उपकल्पना-

इस अध्ययन की परिकल्पना यह है कि घरेलू कामकाजी महिलाओं की आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय होती है।

अध्ययन का महत्व-

प्रस्तुत शोध के आधार पर घरेलू कामकाजी महिलाओं की जीवन-स्तर को ज्ञात

किया जा सकता है।

अध्ययन की कठिनाई- साक्षात्कार हेतु घरेलू कामकाजी महिलाओं की समय पर उपलब्धता व उनसे समय प्राप्त करने की कठिनाई आयी।

तथ्यों का संकलन, वर्गीकरण एवं विलेषण-

प्रस्तुत शोध-पत्र तैयार करने के लिए साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग करके सूचनादाताओं से मिलकर संबंधित तथ्यों को प्राप्त किया गया है तथा तथ्यों के संकलन हेतु उनसे पूछे गये प्रश्नों को तालिका के रूप में प्रदर्शित किये गये हैं जो निम्न प्रकार से है-

तालिका क्र.-01

मकान का स्वामित्व

क्रमांक	मकान का स्वामित्व	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	08	13.3
2	नहीं	52	86.7
	कुल योग –	**60**	**100**

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण

उरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि अध्ययनगत समूह के 13.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं के स्वयं का मकान है तथा 86.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं के स्वयं का मकान नहीं है।

अतः उपरोक्त तालिका से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि अधिकांश घरेलू कामकाजी महिलाओं के पास स्वयं का मकान नहीं है। इनकी आय इतनी कम होती है कि परिवार का खर्च ही चल पाता है बचत करने की कोई गुंजाईश नहीं होती तथा ये अत्यंत गरीब प्रवासी महिलायें हैं जिसके कारण स्वयं का मकान बनाने के लिए इनके पास साधन सुविधा नहीं होती है। कुछ घरेलू कामकाजी महिलाएं यहीं के मूल निवासी है जिसके कारण इनके पास स्वयं का मकान है।

तालिका क्र.-02

मकान का स्वरूप

क्रमांक	मकान का स्वरूप	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पक्का	01	1.7
2	अर्द्धपक्का	06	10.0
3	कच्चा	15	25.0
4	झुग्गी–झोपड़ी	38	63.3
	कुल योग –	**60**	**100**

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि अध्ययनगत समूह के 1.7 प्रतिशत उत्तरदाता पक्का मकान में, 10 प्रतिशत उत्तरदाता अर्द्धपक्का मकान में 25 प्रतिशत उत्तरदाता कच्चा मकान में तथा 63.3 प्रतिशत उत्तरदाता झुग्गी-झोपड़ी में निवास करते हैं।

अतः उपरोक्त तालिका से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि अधिकांश घरेलू कामकाजी महिलायें अवैधानिक रूप से कच्चे मकान या झुग्गी-झोपड़ी

बनाकर रहने लगती हैं क्योंकि ये महिलाएं ज्यादातर सामाजिक रूप से पिछड़े और वंचित समुदाय से होती हैं। जिसके कारण पक्के मकान बनाकर रहना इनके लिए स्वप्न मात्र रह जाता है।

तालिका क्र.-03, मकान में विद्युत की सुविधा

क्रमांक	विद्युत की सुविधा	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	21	35
2	नहीं	39	65
	कुल योग –	**60**	**100**

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि अध्ययनगत समूह के 35 प्रतिशत उत्तरदाता के मकान में विद्युत की सुविधा है तथा 65 प्रतिशत उत्तरदाता के मकान में विद्युत की सुविधा नहीं है।

अतः उपरोक्त तालिका से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि अधिकांश घरेलू कामकाजी महिलाओं के मकान में विद्युत की व्यवस्था नहीं है क्योंकि इनके लिए बिजली का बिल चुका पाना सम्भव नहीं हो पाता है। रात्रि में प्रकाश के लिए मिट्टी के तेल से जलने वाले चिमनी एवं लालटेन का प्रयोग करते हैं जिसके कारण इनके स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है तथा अंधेरे में अनेक कुकर्म भी पनपते रहते हैं।

तालिका क्र.-04, मकान में पेयजल की सुविधा

क्रमांक	पेयजल की सुविधा	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	01	1.7
2	नहीं	59	98.3
	कुल योग –	**60**	**100**

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि अध्ययनगत समूह के 1.7 प्रतिशत उत्तरदाता के मकान में पेयजल की सुविधा है तथा 98.3 प्रतिशत उत्तरदाता के मकान में पेयजल की सुविधा नहीं है।

अतः उपरोक्त तालिका से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि निम्न आय वर्ग के अधिकांश घरेलू कामकाजी महिलाओं के मकानों में पेयजल की सुविधा नहीं है क्योंकि इनकी आर्थिक स्थिति रोज कमाओ और रोज खाओ जैसी है।

तालिका क्र.-05

मकान में शौचालय एवं स्नानघर की सुविधा

क्रमांक	शौचालय एवं स्नानघर की सुविधा	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	01	1.7
2	नहीं	59	98.3
	कुल योग –	**60**	**100**

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि अध्ययनगत समूह के 1.7 प्रतिशत उत्तरदाता के मकान में शौचालय एवं स्नानघर की सुविधा है तथा 98.3 प्रतिशत उत्तरदाता के मकान में शौचालय एवं स्नानघर की सुविधा नहीं है।

अतः उपरोक्त तालिका से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि अधिकांश घरेलू कामकाजी महिलाओं के मकान में शौचालय एवं स्नानघर की सुविधा नहीं है क्योंकि गरीबी इनके लिए एक अभिशाप है जो चाह कर भी इनके पास न तो साधन-सुविधा होती है और न ही धन-दौलत होता है।

तालिका क्र.-06

मकान में खिड़की या रोशनदान की सुविधा

क्रमांक	खिड़की या रोशनदार की सुविधा	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	04	6.7
2	नहीं	56	93.3
	कुल योग —	**60**	**100**

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि अध्ययनगत समूह के 6.7 प्रतिशत उत्तरदाता के मकान में खिड़की या रोशनदान की सुविधा है जबकि 93.3 प्रतिशत उत्तरदाता के मकान में खिड़की या रोशनदान की सुविधा नहीं है।

अतः उपरोक्त तालिका में प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि अधिकांश घरेलू कामकाजी महिलाओं के मकान में खिड़की या रोशनदान की सुविधा नहीं है क्योंकि इनका जीवन तो कच्चे मकान तथा झोपड़-पट्टी की चार दीवारी के अंदर व्यतीत होता है। इनके मकान में दरवाजा ही रोशनदान होती है।

निष्कर्ष-

प्रस्तुत शोध-पत्र में उत्तरदाताओं से प्राप्त आकड़ों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि घरेलू कामकाजी महिलाओं के पास स्वयं का मकान नहीं है। इनकी आय इतनी कम होती है कि परिवार का खर्च ही चल पाता है बचत करने की कोई गुंजाईश नहीं होती तथा ये अत्यंत गरीब प्रवासी महिलायें हैं जिसके कारण स्वयं का मकान बनाने के लिए इनके पास साधन सुविधा नहीं होती है। फलस्वरूप शासकीय जमीन में अवैधानिक रूप से झुग्गी-झोपड़ी बनाकर रहती हैं। कभी-कभी शहर के सौन्दर्यीकरण होने से इनकी झुग्गी-झोपड़ी को हटा दिया जाता है फिर भी पुनः इनके द्वारा झुग्गी-झोपड़ी निर्मित हो जाती है। इनके मकान में पेयजल, शौचालय एवं स्नानघर की सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाती। जिसके कारण इन्हें अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। मकान में खिड़की या रोशनदान की सुविधा नहीं है। इनके लिए दरवाजा ही रोशनदान होती है। इनके मकान में विद्युत का भी अभाव बना रहता है। अधिकांश घरों में एकलबत्ती कनेक्शन लगा हुआ है जो पर्याप्त नहीं है। किन्तु कुछ घरों में अभी भी प्रकाश के लिए चिमनी व लालटेन का प्रयोग किया जाता है। इन तमाम सुविधाओं के कारण इनके स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है जो इनके निम्न जीवन-स्तर को दर्शाता है।

सुझाव-

1. जो घरेलू कामकाजी महिलाएं लंबे समय से एक ही जगह मकान बनाकर रह रही है उन्हें उस जमीन का पट्टा दिया जाना चाहिए।
2. नगर सौंदर्यीकरण के उद्देश्य से झुग्गी-झोपड़ियों को हटाने से पूर्व शासन-प्रशासन को स्थायी आवास मुहैया करायी जानी चाहिए।
3. शहरी आवास योजना के तहत इन घरेलू कामकाजी महिलाओं के लिए आवास उपलब्ध करायी जानी चाहिए।
4. इन महिलाओं में शिक्षा का प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिए ताकि इन महिलाओं में जागरूकता बढ़े और वे स्वस्थ्य जीवन व्यतीत करने के लिए उत्सुक हों।
5. स्वच्छ भारत अभियान के तहत शौचालय निर्माण हेतु इनके लिए अलग से मास्टर प्लान बनाकर शौचालय निर्माण करानी चाहिए।
6. इन्हें निजी क्षेत्र में काम करने वाले कर्मचारियों की तरह न्यूनतम मजदूरी, काम के घंटों का निर्धारण, साप्ताहिक अवकाश आदि सुविधाएं मिलनी चाहिए।
7. कुछ शहरों में स्वयं-सेवी संस्थाओं द्वारा घरेलू कामकाजी महिलाओं के संगठन बने हैं और कुछ जगह इस तरह के संगठन बनाने की ओर प्रयास किये जा रहे हैं जिसे राष्ट्रव्यापी बनाया जाना चाहिए।
8. मोदी सरकार ने कुछ समय पहले ही घोषणा की है कि वे घरेलू कामगार के लिए एक विधेयक लाने वाले हैं। अगर घरेलू काम करने वालों को कामगार का दर्जा मिल जाये तो उनकी स्थिति बहुत बेहतर हो सकेगी। वे भी गरीमा के साथ सम्मानपूर्ण जीवन जी सकेंगी। यह भी अन्य कामो की तरह एक काम होगा न कि नौकरानी का दर्जा।
9. महाराष्ट्र, केरल और म.प्र. जैसे कुछ राज्यों में घरेलू कामकाजी महिलाओं के लिए कानून बनाने से उनकी स्थिति में कुछ हद तक सुधार हुआ है लेकिन यह देशव्यापी नही हैं। अतः इस कानून को देशव्यापी बनायी जानी चाहिए।
10. 2016 में घोषित सतत् विकास लक्ष्य 2030 को पाने के लिए स्लम को बदलना होगा। लोगों को पर्याप्त सुरक्षित, किफायती रहवास और मूलभूत सुविधाएं देने के लिए निरंतर काम करने वाला तंत्र, नीति और कार्यक्रम बनाना होगा।

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. www.rdprd.gov.in/PDF/IAY.pdf.
2. Dr.A.N.Agrawal, 'Industrial Housing in India.'
3. ग्रामीण आवास- विकासपीडिया.
4. T.N. Bhogliwal, 'Labour In India' , p. 109.
5. Archive.india.gov.in/hindi/sectors/commerce/index.php? id=8.
6. R.K. Mukharjee, 'Indian working class p. 230.
7. दैनिक अखबार, पत्रिका, 29.10.2017, पृष्ठ 1.
8. योजना, अक्टूबर 2014, पृष्ठ 51.
9. गुप्ता, डॉ. रामप्रताप, गरिमा की हकदार : महिला घरेलू कामगार , अप्रैल 2009.

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

महिलाओं के विरूद्ध अपराध-कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न के विशेष संदर्भ में

* सप्तमुनि द्विवेदी

_सारांश_- यह शोध पत्र असीम संभावनाओं वाले विषय का चुनाव करते हुए भी विधिक संरक्षण पर केन्द्रित है। अपितु कुछ विचारकों का विचार है कि नारी के विरूद्ध अपराधों को केवल विधि बनाने से दूर नहीं किया जा सकता, बल्कि इस हेतु सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता है। यह शोध पत्र उन विचारों के प्रति प्रत्युत्तर है कि किस प्रकार ये विधियॉ सामाजिक परिवर्तन का शंखनाद करने में सिद्ध हो सकती है। विधियों का निर्माण इस बात को ध्यान में रखकर किया जाए कि लैंगिक समानता के नाम से बनाए गए अधिनियमों में किसी अन्य लिंग के प्रति असमानता न हो जाए और आवश्यकता है कि महिलाओं को समान अवसर प्रदान करने व व्यक्तित्व का पूर्ण विकास कर स्वयं अपने अधिकारों को पहचाने एवं कर्तव्यों का पालन करें न कि ऐसे अधिनियमों को उन पर थोपा जाए।

1. प्रस्तावना- भारतीय विधि एवं न्याय की संकल्पना वैदिक भारतीय व्यवस्था में सबसे प्राचीनतम वेद 'ऋग्वेद' में व्यक्त की गई है। ऋग्वेद में 'ऋत्' शब्द से तात्पर्य 'प्रत्येक वस्तु में अर्न्तनिहित कार्य विधि एवं व्यवस्था से है।' जो इष्ट से लेकर समष्टि तक, बूँद से लेकर सिन्धु तक, परमाणु से लेकर ब्रम्हाण्ड तक व्याप्त है।

भारतीय ऋषियों के अनुसार ऋत् वह व्यवस्था है, जिसमें समष्टि के समस्त जीव, वस्तु एवं पदार्थ संचालित, नियंत्रित एवं व्यवस्थित होते है।

पौराणिक काल में ऋत् का स्थान 'धर्म' शब्द से लिया गया। ऋषियों ने व्यक्तियों से समाज की अवधारणा का परिवाद किया।

जीवन लक्ष्यों को दो वर्गों में प्रमुखता दी गई है -

1. व्यक्तिगत आदर्श -
   यथा -असतो मा सद् गमया। तमसो मा ज्योर्तिगमया। मृत्योंमा अमृतं गमया।
2. सामाजिक आदर्श -
   यथा- सर्वे भवन्तु सुखिनः। सर्वे सन्तु निरामया।।
   सर्वे भद्राणि पश्यन्तु। काश्चित् मा भाग्य भवेतु।।

भारतीय विधिक व्यवस्था पूरी तरह से 'कर्तव्य' आधारित थी। जबकि वर्तमान व्यवस्था 'अधिकार' आधारित है। यही कारण है कि भारतीय समाज उस गति से परिवर्तित नहीं हो पाया है, जिस गति से अन्य व्यवस्थाओं में परिवर्तन हो रहा है।

* अतिथि विद्वान, विधि विभाग, अ.प्र.सिंह वि.वि., रीवा (म.प्र.)

भारतीय ऋषियों का लक्ष्य मानवीय, मूल्य, मान्यताओं को प्राप्त करते हुए समेकित आदर्शों, मूल्यों, मान्यताओं को कराने में महत्वपूर्ण व्यवस्था करता है और प्रत्येक मान्यताओं को सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक विकास का लक्ष्य अपने में समाकेतित करता है।

भारतीय विधिक व्यवस्था का मूल लक्ष्य-

'सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय' में निहित था जो परिवर्तित होकर 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' में निहित हो गया है। वर्तमान राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक विकास का आधुनिक दस्तावेज भारतीय संविधान, भारत को लोकतंत्रात्मक, सम्प्रभुता, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, राज्य का संकल्प व्यक्त करता है। जिसमें सभी नागरिकों, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय एवं सामाजिक न्याय का लक्ष्य निर्धारित करता है। एतद् परिप्रेक्ष्य में महिला वर्ग के लिए सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक न्याय सुलभ कराना महत्वपूर्ण लक्ष्य है।

2. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि- मानव जाति का इतिहास, पुरूष के द्वारा महिला के प्रति किए जाने वाले उत्पीड़न एवं दुर्व्यवहार के दोहराव का इतिहास हैं विचारकों के अनुसार 'यह एक न खत्म होने वाली श्रृंखला है, जिन्होंने यह माना है कि शासन और सत्ता का पहला सिद्धान्त पुरूष द्वारा नारी का दमन है। एक विचारक का तो यहाँ तक कहना है कि- 'यदि आप किसी स्त्री से मिलने जाते है तो अपना कोड़ा साथ रखना न भूले'।

भारतीय इतिहास का अध्ययन भारतीय पुरूष के दोहरे चरित्र का मान कराता है। 'यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता' कहने वाले ऋषि अपने जीवन के आखिरी दिनों में इस नारी का सम्मान की बात कहने वाले हुए। वैदिक काल की ज्ञान मूर्तियाँ गार्गी एवं लोपमुद्रा के स्वयं का जीवन भी नारी अपमान के इतिहास से अलग नहीं है। धर्मग्रन्थों में ऐसे अनेक उदाहरण है जब ये ज्ञान मूर्तियाँ अपने पतियों के साथ धर्म संवाद में तब तक चुप नही हुआ करती थी जब तक कि इनके पति सिर फोड़ने की धमकी नही दे देते थे। इस दोहरे चरित्र का सिलसिला सभी प्रमुख नीति, धर्मो में आसानी से मिल सकता है। मनुस्मृति नारी के जीवन को बदलते पुरूष संरक्षण के आधार पर बॉटती है। एक ओर नारी को आदि शक्ति, माँ कहने वाले तुलसीदास नारी को ढोल एवं गवाँर की श्रेणी में रखते हैं।

मध्यकाल के भारत में रहने और न रहने वाले बाह्य आक्रमणिकारियों के लिए नारी एक मात्र वस्तु के अतिरिक्त कुछ नही थी और यह युग नारी के विरूद्ध किए जाने वाले अपराध का लौमहर्षक नाटक प्रस्तुत करता हैं।

अंग्रेज 'नारियों को पशु के समान' समझने वाली अवधारणा के साथ आए किन्तु ज्ञान एवं चिंतन ने यह स्पष्ट कर दिया था कि यदि नारी का उत्थान नहीं हुआ तो यह अपने गर्भ से एक सत्ता को बदल देने की झंझावत को उत्पन्न करेगी।

भारतीय नारी की इस शोषित यात्रा का अंत नहीं अपितु पुरूष के अहंकार से कुचली हुई नारी की यौवन अवस्था की जर्जर यात्रा है। इतिहास अपने साथ कुप्रथाओं, पूर्वाग्रहों को बंदरों जैसे मरे बच्चे की तरह लिटाए रखती है और किसी भी प्रकार के सकारात्मक, सही परिवर्तन के लिए तैयार नही होती।

3. वैधानिक उपबंध- ''वर्तमान शासन तंत्र में विधि का शासन है और राज्य

अपने आपको कल्याणकारी राज्य के रूप में स्थापित करना चाहते है, कल्याणकारी राज्य का प्रमुख सिद्धान्त ही यही है कि उनका संरक्षण करो जो अपना संरक्षण नहीं कर सकते। यद्यपि विधि घर के अंदर के मामलों में सामान्यत: हस्तक्षेप नही करती परन्तु यदि जनता का आधा हिस्सा कुचला एवं दबा रहेगा तो ऐसे कल्याणकारी राज्य से क्या प्रयोजन।

भारतीय विधि व्यवस्था में स्वतन्त्रता पूर्व एवं पश्चात् नारी के कल्याण के लिए विविध कानून बनाए गए है। यह कहना कतई अनुचित नही होगा कि- 'बिना लैंगिक न्याय के अन्य किसी भी प्रकार का न्याय मिलना संभव नही होगा। अत: भारतीय संविधान में मात्र अनुच्छेद-14 में समानता का अधिकार दिया गया है। अपितु अनुच्छेद-15 में सकारात्मक विभेद की व्यवस्था की गई है।'

अनुच्छेद-37 तथा अनुच्छेद-39 में आर्थिक समानता देने का प्रयास किया गया है तथा मूलभूत कर्तव्य में स्पष्ट रूप से कहा गया है जो प्रथाएं महिला के सम्मान के विरूद्ध है उनका अभित्यजन श्रेष्ठ है। स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए Child Restraint MarriedA बज बनाया गया। भारतीय दण्ड संहिता में नारी के विरूद्ध किए जाने वाले अपराधों के दण्ड की व्यवस्था की गई। उदाहरण स्वरूप 304-बी,, 498-ए ऐसे ज्वलंत समस्याओं के समाधान के लिए विशेष कानून दहेज प्रतिषेध अधिनियम 1961 भी पास किया गया है और साक्ष्य अधिनियम में 113-ए को जोड़ा गया है। जिसमें महिला लज्जा भंग तथा लोलुप प्रदर्शन को रोकने के लिए भारतीय दण्ड संहिता में धाराएँ 354 एवं 509 रखी गई है तथा मानवता के विरूद्ध अपराध जैसे बलात्कार के लिए 376 के विविध क्रमों में दण्ड की व्यवसथा की गई है। नारी को कुप्रथाओं के कारण पति के साथ जिन्दा जलाने की प्रक्रिया को देखते हुए 1989 में Sati Comission (Prohibition) Act भी पारित किया गया।

4. न्यायिक विनश्चय- टी.के. गोपाल बनाम कर्नाटक राज्य (AIR 2000 S.C. 1669) के वाद में महिलाओं के विरूद्ध हो रहे अपराधों का एक अत्यन्त घृणित एवं भयावह चेहरा सामने आया। इस वाद में पीड़िता एक डेढ़ वर्ष की अबोध बालिका थी और दुख की बात तो यह है कि इस अत्यन्त घृणित और भयावह कृत्य के बावजूद अपराधी को सिर्फ 10 वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड ही भुगतना पड़ा जो इस अपराध के लिए भारतीय दण्ड संहिता में वर्णित न्यूनतम दण्ड है। अत: इस प्रकार अबोध बालिकाएँ भी इनसे परे नही है।

अगर लैंगिक असमानता को ही महिलाओं के विरूद्ध अपराध की जड़ माना जाता है तो, माननीय सुप्रीम न्यायालय ने लैंगिक समानता की तरफ समाज को अग्रसर करने का प्रयास अवश्य किया है।

सी.बी. मुथम्मा बनाम भारत संघ (AIR 1979 S.C. 1829) के वाद में माननीय सुप्रीम कोर्ट ने भारतीय विदेश सेवा के नियम 8(2) को असंवैधानिक घोषित किया। इस नियम के अनुसार कोई भी महिला जो भारतीय विदेश सेवाओं में कार्यरत है, उसे विवाह के पूर्व भारत सरकार से पूर्व अनुमति लेनी होगी और इसके पश्चात् भी अगर भारत सरकार ऐसा मानती की महिला के पारिवारिक दायित्व सेवा में बाधा डाल सकते है तो उस महिला को सेवा से त्यागपत्र देना होगा। जबकि पुरूषों के ऊपर ऐसा कोई नियम लागू नहीं होता था। अत: इस नियम असंवैधानिक घोषित कर माननीय सुप्रीम कोर्ट ने लैंगिक समानता की ओर प्रयत्न किए।

इसी प्रकार माया देवी बनाम महाराष्ट्र सरकार (SCR 1986 (I) 743) के वाद में भी उस नियम को असंवैधानिक घोषित किया जिसके अनुसार एक विवाहित महिला को लोक कर्मचारी हेतु आवेदन के पूर्व अपने पति की सहमति आवश्यक थी। इस नियम को माननीय सुप्रीम कोर्ट संविधान के अनुच्छेदों 14, 15 एवं 16 में वर्णित समानता के अधिकार को अतिक्रमित करते पाया।

विशाखा बनाम राजस्थान राज्य (AIR 1997 S.C. 1997) के वाद में पीड़ित महिला एक सामाजिक कार्यकर्ता थी। राजस्थान के एक गाँव में समाज सेवा में कार्यरत एक महिला के साथ निर्दयता पूर्वक सामूहिक बलात्कार किया। इस वाद में माननीय उच्चतम न्यायालय ने एक कदम और आगे बढ़ाते हुए राज्यों और संस्थानों का कार्यस्थल में होने वाली लैंगिक प्रताड़ना को रोकने और समाप्त करने के संबंध में दिशा निर्देश जारी किए।

सेहत बनाम भारत संघ (AIR 2003 S.C. 3309) के वाद में कन्या भ्रूण हत्या की बढ़ती हुई घटनाओं और घटते हुए लिंगानुपात को देखते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय ने लिंग चयन और कन्या भ्रूण हत्या की घटनाओं को रोकने के लिए सरकारी तथा गैरसरकारी संस्थाओं को दिशा निर्देश जारी किए।

सोरन सिंह बनाम राज्य (MANU/DE/0607/2010) के वाद में पीड़िता ममता को उसके श्वसुर द्वारा लैंगिक प्रताड़ना का शिकार बनाया गया। इसके अलावा पीड़िता के पति एवं श्वसुर निरंतर उसे दहेज के लिए भी प्रताड़ित किया। इन सबसे परेशान होकर पीड़िता ने आत्महत्या कर ली। इस वाद में न्यायालय ने श्वसुर को भारतीय दण्ड संहिता की धारा-304 (बी) के तहत 10 वर्ष एवं धारा 498 (अ) के तहत 3 वर्ष का दण्ड दिया एवं पति को भी भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304 (बी) के तहत 7 वर्ष एवं धारा 498 (अ) के तहत 3 वर्ष का दण्ड सुनाया।

5. निष्कर्ष- इतने विधिक परिवर्तन के बावजूद नारी की स्थिति एक वस्तु के ऊपर नही उठ पाई। अपने फायदे के लिए उसे बेचा एवं खरीदा जाता है और इसको रोकने के लिए Immoral Traffic & Prevention Act भी पास किया गया। नारी की दुर्दशा सही तरीके से समाप्त नही पा रही है, उसको वेश्यावृत्ति, देवदासी के रूप में जीवन व्यतीत करना पड़ता है। आधुनिकता ने नारी को और अधिक उपभोग की वस्तु बना दिया है, उसके अंगों भाव भंगिमाओं को मात्र पुरूष लोलुपता को शांत करने के लिए प्रयोग किया जाने लगा है। इसको रोकने के लिए Indecent Representation of Women Act भी पारित किया गया है। कार्यक्षेत्रों में होने वाले दुर्व्यवहार से बचाने के लिए तरह-तरह के नियम बनाए गए है। यहाँ तक कि घरेलू हिंसा से बचाने के लिए 2005 में घरेलू हिंसा एक्ट भी पारित किया गया, फिर भी नारी के विरूद्ध अपराधों में न तो कोई कमी आई और न ही अधिनियमों को प्रभावी रूप से लागू करने का प्रयास किया गया है। यह शोध पत्र मूलभूत रूप से इसी बात पर संकेन्द्रित है कि महिलाओं के विरूद्ध किए जाने वाले अपराध के लिए जो कानून बनाए गए है, उनका क्षेत्र क्या है? और वे किस प्रकार प्रभावी हो सकते है? एवं निष्प्रभावी होने के क्या कारण है?

6. सुझाव- यह शोध पत्र असीम संभावनाओं वाले विषय का चुनाव करते हुए भी विधिक संरक्षण पर केन्द्रित है। अपितु कुछ विचारकों का विचार है कि नारी के विरूद्ध अपराधों को केवल विधि बनाने से दूर नहीं किया जा सकता, बल्कि इस हेतु सामाजिक

परिवर्तन की आवश्यकता है। यह शोध पत्र उन विचारों के प्रति प्रत्युत्तर है कि किस प्रकार ये विधियाँ सामाजिक परिवर्तन का शंखनाद करने में सिद्ध हो सकती है। विधियों का निर्माण इस बात को ध्यान में रखकर किया जाए कि लैंगिक समानता के नाम से बनाए गए अधिनियमों में किसी अन्य लिंग के प्रति असमानता न हो जाए और आवश्यकता है कि महिलाओं को समान अवसर प्रदान करने व व्यक्तित्व का पूर्ण विकास कर स्वयं अपने अधिकारों को पहचाने एवं कर्तव्यों का पालन करें न कि ऐसे अधिनियमों को उन पर थोपा जाए।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. Ahuja Ram- Crime Against Women, Rawat Pub. 1987.
2. Ashraf Nebah- Crime Against Women, Common Wealth Pub. 1987.
3. Sharma O.C.- Crime Against Women, Ashish Pub. House 1994.
4. Garg A.S.- Bride Burning Crime Against Women, Sandeep Pub. 1990
5. Dutta R.K.-Crime Against Women, Reference Press, 2003.
6. Deas Rebba- Rape-The Crime Against Women.
7. Chaudhary P.N.-Judgement on Crime Against Women, Orient Pub. 2001.
8. Kumar A.- Women & Crime, Anmol Pub. 2004.
9. Atrey J.P.- Crime Against Women, Vikas Pub. House, 1998.
10. Krishan N.- Crime Against Women Bondage and Beyond, 2002.
11. Baruah Arunima- The Soft Target, Kinso 2004.
12. Majumdar Maya- Protecting our Women, Dominant Pub. 2001.
13. Shrivastava V.P.- Handbook on Crime Against Women, Indian Pub. 2000.
14. Jain Shushma- Legal Aspect on Crime Against Women Sunil Law Agency, 1990.
15. Sen Chitra- Crime Against Women and Human Rights Aftab Pub. 2006.
16. Devi Laxmi - Crime Atrocities and Violence Against Women Related Laws and Justice, Anmol Pub. 1988.
17. Tripathy P.C.- Crime Against Women, A.P.H. Pub. 1998.

[B] Act. and Statutes-

1. Sexual Harassment of Women at Work place (Po evention, prohibition and Redressal) Act, 2013).
2. Immoral Traffic (Prevention) Act. 1956.
3. The Dowry Prohibition Act. 1956.
4. C.R.P.C. 1973.
5. The Projection of Women from domestic violence Act. 2005.
6. Constitution of India, 1950.
7. Medical Termination of Pregnancy Act. 1971.
8. Pre natal Diagnosis Techniques Act. 1987.
9. The Indecent Representation of Women (Prohibition) Act. 1986.

[C] Reports

1. भारत में अपराध, राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरों, नई दिल्ली, 2006-07
2. मध्यप्रदेश में अपराध, राज्य अभिलेख ब्यूरों, पी.एच.क्यू. भोपाल

फुटनोट-

1. कनयूशियश
2. निश्चे
3. भृतहरि
4. रामचरित मानस
5. Lord Denning - Changing Law
6. A.S. Anand - Justice for Women
7. D.D. Basu - Sharks Constitution of India, Vol. I-II

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

जनांकिकी समस्या-मध्यप्रदेश के कन्या भ्रूण हत्या के संदर्भ में

* शशिकिरण नायक
** अनुष्का मिश्रा

==

सारांश- डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में संसार में यदि नारी न होती तो जीवन का आनन्द धूल में मिल जाता। नारी सृष्टि की संचालिका हैं और ''किसी भी देश को प्रभावित करता है। इससे विवाह दर एवं बच्चों की जनसंख्या भी प्रभावित होती है तथा प्रतिकूल लिंग अनुपात की स्थिति में जबकि स्त्रियों की संख्या कम होती है भिन्न-भिन्न प्रकार की नैतिक एवं सामाजिक बुराईयॉ पैदा हो जाती है।'' स्त्री पुरुष अनुपात की गणना 1000 के आधार पर की जाती है, इसका अर्थ यह है कि 1000 पुरूषों के पीछे कितनी स्त्रियॉ हैं। 1991 की गणना के अनुसार भारत में प्रति 1000 पुरूषों के पीछे 927 स्त्रियॉ है। प्रदेश में स्त्री पुरूष अनुपात 932 हैं, जो राष्ट्रीय औसत 927 या 929 से अधिक है। हालॉकि मध्यप्रदेश में प्रति जनगणना महिलाओं का अनुपात पुरूषों की तुलना में घटा ही हैं। प्रदेश के अनुसूचित जनजाति क्षेत्रों में लिंगानुपात अधिक है। पिछले दिनों सर्वे करने वाली संस्था इंटरनेशनल इस्ट्टीयूट ऑफ पापुलेशन साइंस के निदेशक डॉ. के राय ने बताया कि वर्तमान समय में समाज में लड़का पाने की चाहत अभी भी है। जिन महिलाओं की दोनों लड़कियॉ हैं, ऐसी 5 में से एक मात्र महिला ऐसी हैं जिसका कहना है कि उसे लड़का नहीं चाहिए''।

==

उद्देश्य- मध्यप्रदेश में स्त्रियों की संख्या कम होने के कारण जानकार उनसे होने वाली समस्याएँ जैसे कि जनांककीय एवं आर्थिक, नैतिक आदि प्रकाश डालकर समस्या की और समाज का ध्यान आकृष्ट करना एवं जागरूकता लाकर इस अनुपात में सुधार लाना है।

परिकल्पना- इस शोधलेख में यह परिकल्पना ली गई है कि स्त्रियो की संख्या पुरूषों में कम होने से विवाह दर एवं बच्चों की संख्या भी प्रभावित होती है जो आगे चलकर एक बडी जनांककीय समस्या बन सकती है। इन कारणो पर प्रकाश डालकर इसके समाधान हेतु समाज को प्रेरित करना एवं लड़कियों को भी जीने का अधिकार देनी सच्ची मानवीयता एवं सामाजिकता है। यह जागरूकता जनांककीय समस्याओं का हल करने में मदद करेगी। इस मान्यता पर यह शोधलेख आधारित हैं। मध्यप्रदेश में इस मामले में जागरूकता आ रही है पर धीमी गति से।

अध्ययन प्रविधि- 110 परिवारों एवं महिलाओं का प्रत्यक्ष सर्वे किया गया है। प्रश्नावली पद्वति एवं सामूहिक चर्चा द्वारा भी अध्ययन किया गया। कुछ द्वितीयक समंक भी

========================

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) सरोजनी नायडू कन्या महाविद्यालय भोपाल (म.प्र.)
** भोपाल (म.प्र.)

लिए गये हैं।

प्रदेश में लिंगानुपात

1901	1911	1921	1931	1941	1951	1961	1971	1981	1991	2001
990	986	974	973	970	967	953	941	941	932	920

''मध्यप्रदेश में यह लिंगानुपात क्रमशः घटता हुआ प्रतीत होता है क्योंकि सन् 1901 में यह अनुपात 990 था जो 1951 में 967 एवं सन् 1991 में 932 रहा, यद्यपि यह अनुपात घटता हुआ नजर आ रहा है। परंतु जिलों में मध्य काफी विषमता है।

रैंक 1991	जिला	लिंगानुपात 1991	लिंगानुपात 2001	रैंक 2001	रैंक 1991	जिला	लिंगानुपात 1991	लिंगानुपात 2001	रैंक 2001
1	बालाघाट	1002	1022	1	7	बैतूल	966	965	7
2	मंडला	990	1022	2	10	रतलाम	948	959	8
3	डिंडोरी	985	944	3	15	शहडोल	940	958	9
4	झाबुआ	977	990	4	11	मंदसौर	947	956	10
5	सिवनी	974	982	5	9	धार	951	954	11
6	बड़वानी	964	973	6	8	छिंदवाडा	953	953	12

रैंक 1991	जिला	लिंगानुपात 1991	लिंगानुपात 2001	रैंक 2001		रैंक 1991	जिला	लिंगानुपात 1991	लिंगानुपात 2001	रैंक 2001
12	नीमच	943	950	13		30	सीहोर	898	908	29
14	प.निमाण	941	948	14		31	पन्ना	897	907	30
13	उमरिया	941	947	15		28	दमोह	905	902	31
16	कटनी	939	941	16		32	होशंगाबाद	982	898	32
19	उज्जैन	929	940	17		33	भोपाल	889	896	33
18	रीवा	932	939	18		35	श्योपुर	880	893	34
17	पूवी.निमाण	938	936	19		39	टीकमगढ़	871	886	35
22	सीधी	922	932	20		37	गुना	875	885	36
20	देवास	924	932	21		34	सागर	881	884	37
21	राजगढ़	913	931	22		36	रायसेन	879	880	38
24	शाजापुर	918	927	23		37	विदिशा	874	876	29
23	सतना	918	926	24		40	छतरपुर	856	869	40
25	हरदा	914	919	25		42	दतिया	847	858	41
27	इंदौर	906	911	26		41	शिवपुरी	849	858	42
28	जबलपुर	903	910	27		43	ग्वालियर	831	847	43
29	नरसिंहपुर	913	909	28		44	भिंड	816	829	44
						45	मुरैना	806	822	45

जनगणना आयुक्त ने इस दुखद तथ्य को पहचाना हैं कि बहुत सारे राज्यों का स्त्री पुरूष अनुपात में गिरावट आई है। इस तथ्य की व्याख्या प्रवास के आधार पर नहीं की जा सकता है। कई राज्यों में 0-6 वर्ष के बच्चों में लड़कियों का अनुपात घट रहा है। कई राज्यों में 0-6 वर्ष के बच्चों में लड़कियो का अनुपात घट रहा है केवल केरल त्रिपुरा तथा मिजोरम ऐसे राज्य हैं जहॉ दोनों उम्र समूहों 0-6 एवं 7 साल से अधिक में लिंग अनुपात में वृद्धि हुई हैं। 0-6 उम्र समूह के लिए लिंग अनुपात में सबसे दुखद कमी पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, चंडीगढ़, गुजरात और दिल्ली में आई हैं। इसके बाद उत्तरांचल गोवा, और महाराष्ट्र आते हैं। प्रारंभिक उम्र समूह में असंतुलन की भरपाई करना असंभव है और

यह काफी समय तक जनसंख्या पर नकारात्मक भूमिका निभा रहा हैं। 2001 की जनगणना में इसकी स्थिति और बिगड़ी ही है।

गणेषणा एवं परिणाम- उपरोक्त विषय पर 110 परिवार का सर्वे किया गया। सर्वे के उपरांत जो ऑकडा एवं प्रतिशत निकलकर आया उसकी व्याख्या एवं मध्यप्रदेश में महिलाओं की संख्या कम होने के निम्न कारण सामने आये:

भ्रूण हत्या- इस बिंदु पर 90 प्रतिशत महिलाओं का विचार हैं कि वे अधिक लड़कियॉ नहीं चाहती हैं। गरीबी, मॅंहगाई एव।दहेज प्रथा के कारण अधिक लड़कियों का होना एक ज्वलंत समस्या हैं। विवाह के बाद लड़की के ससुराल चले जाने से लड़का ही उनका अंतिम सहारा माना जाता है। महिलाओं का एक बड़ा प्रतिशत लगभग 95 प्रतिशत लड़का चाहता है, इसलिए लड़की गर्भ में होने पर वे गर्भपात करवा देती है, केवल 5 प्रतिशत महिलाएॅं अकेली लड़की होने से संतुष्ट मिलीं। परंतु उच्चवर्गीय धनी एवं पढ़ें लिखे लोग ही यह निर्णय ले पाते हैं। निम्नवर्गीय गरीब गर्भपात न करवा पाने की स्थिति में लड़की का जन्म के समय ही मार डालते हैं। मराठी समाज के लोगों ने स्वीकार किया कि उनके समाज में लड़का लड़की बराबर हैं। शिक्षा का प्रतिशत जहॉ ज्यादा हा वहॉ लड़की की भूर्ण हत्या कम होती है। मुस्लिम परिवारों ने स्वीकार किया की वे भी लड़को का होना परिवार में जरूरी समझते है। गर्भपात यद्यपि धार्मिक दृष्टि से प्रतिबंधित है पर लड़कियों के मामले में वे इसे स्वीकार करते हैं। दलित परिवार जो कुछ पढ़े लिखे हैं वे भी हत्या के बारे में जानते समझते है। इसमें सामान्य वर्ग का प्रतिशत 36.36 एवं दलितों का प्रतिशत भी 28.29 हैं।

दहेज प्रथा- इस मामले में गुजराती, मराठी, ब्राहम्ण, राजपूत, बंगाली, कायस्थ एवं ईसाई परिवारों के विचार मिलते जुलते पाये गये। महाराष्ट्रियन परिवारों ने स्वीकार किया कि उनके यहॉ दहेज का प्रचलन नहीं के बराबर है। कई मामलों में दहेज मॉगने पर लड़की विवाह से इंकार भी कर देती है। यद्यपि ग्रामीण पिछडे परिवार इसके अपवाद हो सकते है। ब्राहम्ण सिंधी एवं कायस्थ परिवारों में दहेज प्रथा बहुत ज्यादा है, कई परिवार लड़का लड़कियों का बराबर मानने का दावा करते हुए मिले पर वास्तविक कुछ अलग है। यद्यपि पढे लिखे सामान्य वर्ग के लोगों ने यह समस्या कुछ कम हैं क्योंकि अंतरजातीय विवाह एवं प्रेम विवाह बढ़े हैं पर कुछ मामलों में पढ़े लिखें लड़के के दहेज की निश्चित रकम होने के मामले भी सामने आये हैं। सर्वे के दौरान दलित ग्रामीण अपने अपने स्तरों पर दहेज प्रथा से पीड़ित एवं आशंकित मिलें। सामान्य वर्ग का प्रतिशत 18.19 रहा जबकि दलित वर्ग में यह 35.36 प्रतिशत रहा।

वंश चलाने एवं अंतिम संस्कार की चाह- शासन द्वारा विधेयक पारित होने के कारण एवं शिक्षा का प्रतिशत बढ़ने से यह समस्या अब इतनी ज्यादा जटिल उपरी तौर पर नहीं दिखती। सामान्य वर्ग में इसका प्रतिशत 9.09 और दलित वर्ग में 20 प्रतिशत है यह एक सार्थक परिवर्तन माना जा सकता है। रूढ़िवादी दलितों में भी परिवर्तन की एक छोटी लहर ढूॅंढी जा सकती है।

कुपोषण, कम देखभाल एवं मातृ मृत्युदर अधिक होना- महिलाओं की संख्या कम होने का यह भी एक कारण माना गया। शहरों में जागरूकता, शिक्षा बढ़ने, जीवन स्तर एवं खान पान में सुधार होने से महिलाओं, की मृत्यु दर घटी हैं। चिकित्सा

सुविधाओं की कमी एवं उपरोक्त सभी कारणों से ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी महिलाओं की मृत्युदर कम हो रही है। दलितों मे इसका प्रतिशत 13.33 और सामान्य वर्ग में 5.45 है।

बुढ़ापे में असुरक्षा- सर्वे के दौरान यह ज्ञात हुआ कि वृद्ध अब एक समझौते हेतु तैयार है। बेरोजगारी, बढती हुई प्रतियोगिता, महँगाई, जनसंख्या वृद्धि एवं गरीबी के कारण संयुक्त परिवार अब ग्रामीण अंचलों में ही ज्यादा हैं। बेटा हो या बेटी वे अपने माता पिता से दूर रहकर रोजगार में संलग्न है। वृद्धाश्रम के सर्वे से ज्ञात हुआ कि वहाँ रहने वाले लोगों में वह लोग भी हैं जिनके कई बेटे हैं। सामान्य वर्ग में यह प्रतिशत 5.45 प्रतिशत है और दलित वर्ग में 8.89 प्रतिशत है। ग्रामीण, कम पढ़े लिखे एवं लडके को वृद्घावस्था की लाठी मानने वालों की संख्या अभी भी ज्यादा हैं।

शिक्षा में कमी- मध्यप्रदेश शासन द्वारा प्रौढ़ शिक्षा, महिला पढ़ना बढ़ना एवं लड़कियों की नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था के बाद भी अशिक्षित महिलाएँ ज्यादा हैं। धीरे धीरे शिक्षा का प्रतिशत बढ़ रहा हैं। सामान्य वर्ग में 12.72 प्रतिशत और दलितों में इसका प्रतिशत 8. 89 है।

पारिवारिक दबाव- महिलाओं के बडे प्रतिशत ने स्वीकार किया है उन्हें परिवार एवं समाज का दबाव स्वीकार करना पड़ता है। 90 प्रतिशत लोगों ने स्वीकार किया कि लड़के को पसंद करने की इच्छा उन्हें प्रकृति से मिली हैं। बहुत सी महिलाओं ने स्वीकार किया कि लड़के के पैदा होने से उनके पति की पौरूष की संतुष्टि मिलती है। 50 प्रतिशत महिलाओं ने स्वीकार किया कि वे स्वयं जिम्मेदार हैं, पारिवारिक दबाव में आने के लिए तो 50 प्रतिशत ने स्वीकार किया कि उनका सामाजीकरण, शिक्षा, रहन -सहन एवं सामाजिक मान्यताएँ इसके लिए जिम्मेदार है।

अन्य कारण- कुछ प्रमुख अन्य कारण निम्म है

अ) **सामाजिक कुरीतियाँ एवं परंपराएँ-** मध्यप्रदेश में सामाजिक कुरीतियाँ एवं परंपराएँ मानने वालों का प्रतिशत अभी भी ज्यादा है। जिसके लिये लड़कों को परिवार में ज्यादा महत्व दिया जाता है। जैसे राजस्थान में लड़की का जन्म होते ही उसे मार डाला जाता है।

ब) **लड़की की सुरक्षा की समस्या-** बहुत से परिवारजनों ने माना है कि लड़कियों की ज्यादा सुरक्षा घर एवं समाज में करनी पड़ती है।

मध्यप्रदेश में महिलाओं की संख्या कम होने की विवेचना

कारण		महिलाओं की कुल संख्या		प्रतिशत		दोनों में अंतर (प्रतिशत में)
		सामान्य	दलित	सामान्य	दलित	
1.	भ्रूण हत्या	20	13	36.36	32.63	7.48 %
2.	दहेज प्रथा	10	16	18.19	29.09	17.37 %
3.	वंश चलाने की चाह व अंतिम संस्कार हेतु	5	9	9.09	16.36	10.91 %
4.	पालन पोषण की कमी	3	6	5.45	10.90	7.89 %
5.	बुढ़ापे में असुरक्षा	3	4	5.45	7.27	3.44 %
6.	शिक्षा में कमी	7	4	12.72	7.72	3.89 %
7.	अन्य	7	33	12.72	5.45	6.05 %
	कुल संख्या	55	55	99.98	99.97	57.03 %
		55+55 = 100		100 %	100 %	

अशिक्षा के कारण लड़कियों का कम आयु में विवाह कर दिया जाता है। छोटी-छोटी लड़कियॉ कम आयु में ही मातृत्व के बोझ से दब जाती हैं। इस कारण स्त्रियों की मृत्यु दर ज्यादा होने से उनकी संख्या कम होती जा रहीं है। देश की महिलाओं की प्रसव मृत्यु दर 500 प्रति एक लाख है, जो विश्व में सर्वाधिक है।

दहेज प्रथा के कारण स्त्रियों की मृत्यु दर बढ़ती जा रही है। देश में प्रतिदिन औसतन 17 महिलाएॅ दहेज का शिकार है। वर्ष 1984 -85 में मुबई में नारी की भ्रूण हत्या के 48 हजार गर्भपात के मामले हुए हैं। एक अस्पताल में 8 हजार गर्भपात हुए जिनमें केवल एक हजार पुरूष का मामला था बाकी सब नारी के भ्रूण थे। ग्रामीण परिवेश में कृषि कार्य के लिए स्त्रियों की तुलना में पुरूषों की भागीदारी अधिक मानी जाती हैं। इसके साथ ही स्त्रियों के साथ उपेक्षापूर्ण व्यवहार होता है जिससे उनकी प्रत्याशित आयु कम हो जाती है। कम उम्र में नसबंदी के कारण कई बीमारियों जैसे स्तन का कैसंर एवं अस्थिक्षरण का शिकार महिलाएॅ होती हैं जिससे उनकी मृत्युदर अधिक हैं। घरेलू काम काज एवं अर्थोपार्जन का बोझ भी उन पर होता है जबकि लडकों का इन कामों से मुक्त रखा जाता है। एक अध्ययन के अनुसार तमिलनाडू के माचिस उद्योग में कार्यरत बच्चों में से 70 प्रतिशत लड़के खाली समय में कार्य करते हैं उन्हें स्कूली शिक्षा भी प्राप्त है जबकि लड़कियॉ स्कूल न जा कर घर का काम करती हैं।

समस्याएॅ-

1. स्त्री पुरूष अनुपात बिगड़ने से जनांकीय समस्याएॅ बढ़ रही हैं। साथ ही सामाजिक एवं नैतिक समस्याएॅ भी बढ़ रही है।
2. स्त्रियों की संख्या कम होने से लोग दुल्हन न मिलने से हतास होकर बंदूक उठाकर डकैत बन जाते है।
3. समाज एवं परिवार में बहुपति प्रथा का प्रचलन बढ़ने से बहुत सी सामाजिक समस्याएॅ बढ रही है। इस व्यवस्था में पैदा हुए बच्चों की पहचान मुश्किल होती है।
4. विवाह के इच्छुक युवक जाति बंधन तोड़ने एवं सामाजिक बहिस्कार हेतु तैयार हो जाते है इससे कई जटिल समस्याएॅ पैदा होती है जैसे राजस्थान में सोने का भुर्जा गॉव के चार भाईयों के साथ हादसा हुआ जिनकी उम्र 24 से 40 वर्ष के बीच है। सबसे बडे भाई सुग्रीव गुर्जर ने जाति बंधन तोड़कर 40 साल की कमला मीना से विवाह इस आशा पर किया कि वह उसके समेत चार भाईया के बच्चे पैदा करेगी और घर गृहस्थी चलायेगी पर कुछ समय बाद कमला ने सबसे यौन संबंध बनाने और सब काम करने से मना कर दिया। इससे भाईयों में आपस में फूट पड़ गई और घर परिवार की व्यवस्था छिन्न भिन्न हो गई।
5. विवाह के लिये स्त्रियों की संख्या कम होती जा रही है तो बलात्कार के मामले बढ़ रहे है। जैसे राजस्थान में 30 वर्ष से ज्यादा उम्र के अविवाहित मर्दो ने बच्चियों के कुकर्म किया। यहॉ के प्रजापत समाज के 6 भाईयों में अकेली विवाहित हुई रामपाल की पत्नी सुनीता कहती है कि यदि में इनकार करूॅ तो घर की चहारदिवारी के बाहर किसी के साथ जबरदस्ती करेंगे और मुसीबत में फर जायेंगे सो परिवार की खातिर मुझे राजी होना पड़ता है।
6. सरकारी नौकरी में भी होने पर विवाह नहीं हो पाता, कुछ लोगों को बहुपति प्रथा

पसंद नहीं जिससे यदि बड़े भाईयों का विवाह नहीं होता तो छोटे भाई भी अविवाहित रह जाते हैं।

7. डाकू समस्या को बढावा मिल रहा है जैसे राजस्थान में डांग में किसी मर्द के लिए श्शादी करने का आसान तरीका डाकू बनना है। यहॉ डकैत को सामाजिक स्वीकृति प्राप्त है। आत्मसमपर्ण कर चुके डकैत को डांग में योग्य वर माना जाता है। उनके पैसे और दबदबे से उनका विवाह सरल हो जाता है। कुछ मामलों में आपसी झगड़ों एवं संघर्ष का कारण स्त्रियों की जन संख्या का कम होना हैं। करौला राजस्थान के पुलिस अधीक्षक का मानना है- ''यहॉ औरत के सिवा किसी चीज का महत्व नही है''।

सुझाव-

1. महिला भ्रूण हत्या के पर पूरे प्रतिबंध के साथ ऐसा करने वाले डॉक्टरों को कठोर दंड दिया जाये।
2. स्त्री शिक्षा का प्रतिशत बढ़े आज भी 60 प्रतिशत महिलाएॅ ग्रामीण क्षेत्रों में इसलिए नही पढ़ पातीं क्योंकि हमारे यहॉ कृषि की प्रधानता है। जबकि माता-पिता काम पर चले जाते हैं तो भाई-बहिनों की देखभाल का काम लड़कियॉ ही करती है।
3. बाल विवाह जैसी कुप्रथाओं पर रोक हो।
4. ग्रामीणों में जागरूकता पैदा की जाये कि लड़का-लड़की बराबर होते है।
5. महिलाओं में दृढ़ इच्छाशक्ति एवं आत्मविश्वास पैदा किया किया जाये ताकि वे लड़की-लड़की को बराबर महत्व दें।
6. टेवीवीजन, नुक्कड़-नाटकों, समाचार पत्रों में रोचक ढ़ग से लड़कियों का महत्व बताया जाये।
7. महिलाओं एवं पुरूषों का कुरीतियॉ एवं रूढ़िवादिता छोड़ने हेतु प्रयास करने होंगे।
8. महिलाओं को राजनीति और निर्णय लेने की प्रक्रिया में भागीदार बनाना होगा। उनका दृष्टिकोण विकसित करना चाहिए।
9. स्वास्थ्य सुविधाएॅ महिलाओं के लिए बढ़ाई जायें, गरीबी कम की जाये।
10. समाज में महिलाओं को उचित स्थान एवं पारिवारिक निर्णयों में उनकी उचित भागीदारी स्वीकार की जाये।
11. नारी ही नारी की दुश्मन बन जाती है। कई बार लड़की के जन्म पर मातम छा जाता है। आवश्यक है कि इस विचार धारा में परिवर्तन की। पुत्र प्रेम के बजाय पुत्री प्रेम बढ़े।
12. SAARC द्वारा 1991-2000 के दशक को शिशु -बालिका के रूप में मनाया गया। इस दशक की सार्थकता हेतु लड़कियों को शिक्षा देना जरूरी है।
13. समाज में जागरूकता लाने की जरूरत हैं। सुश्री जयललिता (मुख्यमंत्री) जैसे पालना-घर म.प्र. शासन द्वारा शुरू किया जा सकता है।
14. एक बड़ी विचित्र बात है कि भोपाल जैसे शहर के डॉक्टर भ्रूण हत्या का प्रतिशत शून्य दिखा रहे है जबकि यह बिलकुल असत्य बिंदु है। इसकी सही जानकारी डॉक्टर्स एवं सोनोग्राफी सेंटर से लेनी चाहिए।

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. जनांकिकीय अर्थशास्त्र डॉ. वि. कुमार
2. म.प्र. की जनजातियॉं डॉ शशिवकुमार तिवारी एवं डॉ श्री कमल शशर्मा पृष्ठ -128 म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
3. नव भारत, दैनिक जागरण एवं सांध्य प्रकार भोपाल 9 मार्च 2002.
4. मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास डॉ शशशि नायक पृष्ठ -70 और म.प्र. सामान्य ज्ञान - जैन डॉ. सरेन्द्र सोलंकी, डॉ एम. एस. सिसौदिया पृष्ठ - 192
5. सेसस ऑफ इंडिया म.प्र. जनरल पापुलर टेबुल्स -2001
6. इंडिया टुडे, सितंबर 2001 पृष्ठ - 54 से 57 तक।
7. व्यक्तिगत सर्वेक्षण एवं गवेषण द्वारा।
8. नवभारत, भोपाल. 1 मार्च 2002

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

मिड-डे मील योजना का प्रभाव : एक सर्वेक्षण

* अनुपम सिंह

सारांश- **भारत एक लोक कल्याणकारी राज्य है। निर्धनता, बेरोजगारी व कुपोषण जैसी समस्याये आज भी मौजूद हैं। ग्रामीण क्षेत्र के गरीब व आर्थिक रूप से कमजोर वर्गो के अधिकतर बच्चे आज भी सरकारी विद्यालयों में पढ़नें जाते है। भारत सरकार नें प्राथमिक विद्यालयों में बच्चों का नामांकन बढ़ सके तथा उन्हे पर्याप्त पोषण मिल सकें, इसके लिए 15 अगस्त 1995 को मध्यान्ह भोजन योजना जिसे मिड डे मील के नाम से जाना जाता है, शुरु की। पूरे देश में लागू इस योजना का व्यापक प्रभाव पड़ा। जो क्षेत्र प्राकृतिक आपदाओं (बाढ़, भूकम्प व सूखा) की चपेट में अक्सर आ जाते है वहाँ यह योजना वरदान साबित हुई है।**

भारत सरकार द्वारा 15 अगस्त 1995 को यह योजना लागू की गई थी, जिसके अंतर्गत कक्षा 1 से 5 तक के सभी शासकीय/परिषदीय/सरकार द्वारा सहायता प्राप्त प्राथमिक विद्यालयों में पढ़ने वाले बच्चों को 80 प्रतिशत उपस्थिति पर 03 किलोग्राम गेहूँ या चावल देनें की व्यवस्था की गई थी। किन्तु इस योजना के अन्तर्गत छात्रों को दिये जाने वाले खाद्यान्न का लाभ सीधे तौर पर उनको न मिलकर, उनके परिवार के बीच बँट जाता था, इससे छात्रों को वांछित मात्रा में पोषक तत्व नहीं मिल पाते थे। मा0 सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा दिनांक 28 नवम्बर 2001 को दिये गये निर्देश के क्रम में राज्य सरकार नें 01 सितम्बर 2004 से प्राथमिक विद्यालयों में पका पकाया भोजन देनें की व्यवस्था प्रारंभ कर दी।

तालिका नंबर-01

योजना से आच्छादित कुल विद्यालयों की संख्या

क्र. स.	विद्यालय का प्रकार	योजना से आच्छादित विद्यालय			विद्यालय जहाँ मध्यान्ह भोजन वितरण हो रहा है (अप्रैल से जून 2017 की त्रैमासिक प्रगति के अनुसार)			अवशेष विद्यालय
		प्राथमिक	उच्च प्राथमिक	कुल विद्यालय	प्राथमिक	उच्च प्राथमिक	कुल विद्यालय	
1	सरकारी/राजकीय	27	503	**530**	24	379	403	**127**
2	परिषदीय	113335	45697	**159032**	113246	45661	158907	**125**
3	सहायता प्राप्त	566	7719	**8285**	560	6529	7089	**1196**
4	मकतब/मदरसा	71	475	**546**	64	391	455	**91**
5	बाल श्रमिक विद्यालय	126	0	**126**	126	0	126	**0**
कुल		**114125**	**54394**	**168519**	**1114011**	**53554**	**167565**	**1539**

==========================

* असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र, राजकीय महिला महाविद्यालय, कुरावली, मैनपुरी (उ0प्र.)

तालिका नंबर-02

योजना से लाभान्वित कुल छात्र-छात्राओं की संख्या

क्र. स.	विद्यालय का प्रकार	नामांकन			औसत लाभान्वित छात्रो की संख्या (अप्रैल से जून 2017 की त्रैमासिक प्रगति के अनुसार)			नामांकन के सापेक्ष प्रतिशत
		प्राथमिक	उच्च प्राथमिक	कुल विद्यालय	प्राथमिक	उच्च प्राथमिक	कुल विद्यालय	
1	सरकारी/राजकीय	18760	102717	121477	7122	23482	30604	25
2	परिषदीय	11910802	3543714	15454516	5397603	1621072	7018675	45
3	सहायता प्राप्त	268321	1780760	2049081	93694	490837	584531	29
4	मकतब/मदरसा	153952	66675	220627	72019	30516	102534	46
5	बाल श्रमिक विद्यालय	5383	0	5383	0	3797	3797	71
कुल		**12357218**	**5493866**	**17851084**	**5570438**	**2169704**	**7740142**	**43**

इस योजना के क्रियान्वयन से निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु मध्यान्ह भोजन प्राधिकरण का गठन अक्टूबर 2006 में अग्रलिखित उद्देश्यो को ध्यान में रखकर किया गया :-

1. बच्चों को पौष्टिक भोजन उपलब्ध कराना।
2. पौष्टिक भोजन उपलब्ध कराकर बच्चों में शिक्षा ग्रहण करनें की क्षमता को विकसित करना।
3. विद्यालय में नामांकन बढ़ाना।
4. छात्रों में रुकनें की प्रवत्ति को विकसित करना तथा ड्रोप आउट रेट कम करना।
5. एक साथ बैठकर भोजन करानें से भाईचारे तथा विभिन्न जातियों व धर्मों के बीच सहिष्णुता की भावना विकसित करना।

अध्ययन का उद्देश्य-

1. प्रत्येक शोध अध्ययन का कुछ न कुछ उद्देश्य अवश्य होता है। हमारे अध्ययन का मौलिक उद्देश्य मिड डे मील योजना के क्रियान्वयन से छात्रों की शैक्षिक गुणवत्ता, स्वास्थ, ड्राप आउट रेट तथा नामांकन व छात्र-उपस्थिति पर प्रभाव का मूल्याँकन करना है।
2. चूँकि औरैया जनपद में मिड डे मील योजना का प्रबन्ध प्रधानाध्यापकों द्वारा देखा जा रहा है। क्या इससे उनका शैक्षणिक कार्य प्रभावित हुआ है, इसका भी अध्ययन इस शोध में किया गया है।

इन उत्तरदाताओं के माध्यम से बच्चों पर मिड डे मील योजना का प्रभाव जाननें के लिए निम्न उपकल्पनायें बनाई गई-

1. मिड डे मील योजना से बच्चों के नामांकन की दर में वृद्धि हुई है।
2. मिड डे मील योजना से बच्चों के स्वास्थ के स्तर में सुधार हुआ है।
3. मिड डे मील योजना से बच्चों का ड्राप आउट रेट कम हुआ है।
4. मिड डे मील योजना से बच्चों के विद्यालय में ठहरनें की प्रवत्ति बढ़ी है।
5. मिड डे मील योजना से बच्चों में सहिष्णुता व भाइचारे की भावना विकसित हुई है।
6. मिड डे मील योजना से बच्चों के शैक्षणिक स्तर में सुधार हुआ है।
7. मिड डे मील योजना का प्रबंधन करनें से अध्यापकों का शैक्षणिक कार्य प्रभावित हुआ है।

प्रस्तुत शोध-पत्र में हमनें मिड डे मील योजना के मूल्याँकन के लिए औरैया जनपद

के विकासखण्ड-सहार के 50 विद्यालयों का दैव निदर्शन पद्वति के आधार पर चयन किया। प्रत्येक प्राथमिक विद्यालय से उत्तरदाता के रूप में प्रधानाध्यापक का चयन किया गया। इस प्रकार कुल उत्तरदाताओं की संख्या 50 रखी गई। प्राथमिक तथ्यों के संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची पद्वति का प्रयोग किया गया है।

तालिका नंबर-03

मिड-डे मील योजना का विभिन्न कारकों पर प्रभाव का मूल्याँकन

(कुल उत्तरदाताओं की संख्या-50)

क्र.स.	कारक	अभिमत				योग
		हाँ	नही	उदासीन	अनुतरित	
1	बच्चों के नामांकन की दर में वृद्दि	41	8	1	0	50
2	बच्चों के स्वास्थ के स्तर में सुधार	20	30	0	0	50
3	बच्चों का ड्राप आउट रेट कम	38	11	1	0	50
4	बच्चों के विद्यालय में ठहरनें की प्रवत्ति बढ़ी	26	15	9	0	50
5	बच्चों में सहिष्णुता व भाइचारे की भावना विकसित होना	32	16	1	1	50
6	बच्चों के शैक्षणिक स्तर में सुधार	10	30	8	2	50
7	अध्यापकों के शैक्षणिक कार्यो पर प्रभाव	42	08	0	0	50

तालिका नंबर-04

मिड-डे मील योजना का विभिन्न कारकों पर प्रभाव का मूल्याँकन (प्रतिशत में)

क्र. स.	कारक	अभिमत (प्रतिशत में)				योग (प्रतिशत में)
		हाँ (प्रतिशत में)	नही (प्रतिशत में)	उदासीन (प्रतिशत में)	अनुतरित (प्रतिशत में)	
1	बच्चों के नामांकन की दर में वृद्दि	82 प्रतिशत	16 प्रतिशत	2 प्रतिशत	0 प्रतिशत	100
2	बच्चों के स्वास्थ के स्तर में सुधार	40 प्रतिशत	60 प्रतिशत	0 प्रतिशत	0 प्रतिशत	100
3	बच्चों का ड्राप आउट रेट कम	76 प्रतिशत	22 प्रतिशत	2 प्रतिशत	0 प्रतिशत	100
4	बच्चों के विद्यालय में ठहरनें की प्रवत्ति बढ़ी	52 प्रतिशत	30 प्रतिशत	18 प्रतिशत	0 प्रतिशत	100
5	बच्चों में सहिष्णुता व भाइचारे की भावना विकसित होना	64 प्रतिशत	32 प्रतिशत	2 प्रतिशत	2 प्रतिशत	100
6	बच्चों के शैक्षणिक स्तर में सुधार	20 प्रतिशत	60 प्रतिशत	16 प्रतिशत	4 प्रतिशत	100
7	अध्यापकों के शैक्षणिक कार्यो पर प्रभाव	84 प्रतिशत	16 प्रतिशत	0 प्रतिशत	0 प्रतिशत	100

उपर्युक्त तालिका नंबर-03 और तालिका नंबर-04 के तथ्यों का विश्लेषण इस प्रकार है:-

1. पहले बिन्दु बच्चों के नामांकन दर में वृद्धि पर मिड डे मील योजना का क्या प्रभाव पड़ा है इस प्रश्न पर 41 उत्तरदाताओं (82 प्रतिशत) ने अपना जबाव हां में दिया है, 8 उत्तरदाताओं (16 प्रतिशत) नें कहा कि कोई वृद्धि इससे नहीं हुई तथा 1 उत्तरदाता (02 प्रतिशत) ने उदासीनता प्रकट की।
2. दूसरे बिन्दु बच्चों के स्वास्थ के स्तर में सुधार से संबंधित था। जिसमें 20 उत्तरदाताओं (40 प्रतिशत) ने कहा कि इससे बच्चों के स्वास्थ के स्तर में सुधार हुआ है जबकि 30 उत्तरदाताओं (60 प्रतिशत) नें कहा कि इस योजना से बच्चों के स्वास्थ के स्तर में कोई फर्क नहीं पड़ा है।
3. तीसरे बिन्दु बच्चों के ड्राप आउट रेट से संबंधित था। जिसमें 38 उत्तरदाताओं (76 प्रतिशत) ने कहा कि इससे ड्राप आउट रेट में कमी आई है, 11 उत्तरदाताओं (22 प्रतिशत) नें कहा कमी नहीं आई जबकि 1 उत्तरदाता (02 प्रतिशत) ने जबाव के प्रति

उदासीनता दिखाई।

4. चतुर्थ बिन्दु बच्चों के विद्यालय में ठहराव से संबंधित था। जिसमें 26 उत्तरदाताओं (52 प्रतिशत) ने अपने जबाव में बताया कि इससे बच्चों के विद्यालय में रूकनें की इससे बढ़ी है, 15 उत्तरदाताओं (30 प्रतिशत) ने कहा इससे बच्चों का विद्यालय में ठहराव नही बढ़ा है जबकि 9 उत्तरदाता (18 प्रतिशत) ने इस प्रश्न के जबाव में उदासीनता दिखाई।
5. पंचम बिन्दु बच्चों में सहिष्णुता तथा भाईचारा से संबंधित था। जिसमें 32 उत्तरदाताओं (64 प्रतिशत) नें अपने जबाव में कहा कि मिड डे मील योजना से बच्चों में एक साथ भोजन करनें से उनमें आपस में सहिष्णुता तथा भाईचारे की भावना में वृद्धि हुई है, 16 उत्तरदाताओं (32 प्रतिशत) नें कहा वृद्धि नहीं हुई जबकि 1 उत्तरदाता (02 प्रतिशत) ने उदासीनता तथा 1 उत्तरदाता (02 प्रतिशत) नें कोई जबाव नहीं दिया।
6. षष्ठम बिन्दु बच्चों के शैक्षणिक स्तर के सुधार से संबंधित था। जिसमें सिर्फ 10 उत्तरदाताओं (20 प्रतिशत) ने ही स्वीकार किया की मिड डे मील योजना के क्रियान्वयन के बाद से बच्चों के शैक्षणिक स्तर में सुधार हुआ, 30 उत्तरदाताओं (60 प्रतिशत) ने माना कि इससे शैक्षणिक स्तर में सुधार नही हुआ, 8 उत्तरदाता (16 प्रतिशत) ने उदासीनता दिखाई जबकि 2 उत्तरदाओं (04 प्रतिशत) ने कोई जबाव ही नही दिया।

उपर्युक्त तालिका के निष्कर्षों का विश्लेषण करनें पर 7 उपकल्पनायें जो बनाई गई थी उनमें से उपकल्पना 1, 3, 5 व 7 तो पूर्णतया सार्थक सिद्ध हुई जबकि उपकल्पना नं. 4 आशिंक रूप से सार्थक मानी जा सकती है। उपकल्पना नं. 02 और 06 सार्थक सिद्ध नहीं हो सकीं।

निष्कर्ष एवं सुझाव-

प्रस्तुत शोध का विश्लेषण करनें पर ज्ञात होता है कि मिड डे मील योजना लागू करनें से बच्चों के विद्यालय में नामांकन की दर बढ़ी है, बच्चों का ड्राप आउट रेट भी कम हुआ है तथा बच्चों में सहिष्णुता तथा भाईचारे की भावना बढ़ी है। जबकि बच्चों के विद्यालय में ठहराव की स्थिति में अपेक्षित सुधार नजर नहीं आता है। अभी भी कुछ बच्चें भोजन करनें के उपरान्त विद्यालय से भाग जाते हैं। मिड डे मील योजना से बच्चों के शैक्षणिक स्तर में सुधार तथा उनके स्वास्थ पर सकारात्मक प्रभाव परिलक्षित नहीं प्रतीत होता। अध्यापकों से साक्षात्कार के दौरान यह बात सामनें आयी कि इस क्षेत्र में लोगों की आर्थिक स्थिति उतनी खराब नहीं है जिससे कि वो लोग अपने बच्चों का भरण पोषण न कर सकें। अध्यापकों (उत्तरदाताओं) नें यह जरूर स्वीकार किया कि मिड डे मील योजना की देखरेख व बनवाने की जिम्मेदारी नें उनके अध्यापन कार्यो को बुरी तरह से प्रभावित किया है।

शोध से प्राप्त तथ्यों के आधार पर यह सुझाव सार्थक व उपयोगी साबित हो सकते हैं कि यदि मिड डे मील बनवाने का कार्य किसी दूसरी संस्था या गैर सरकारी संगठन (एन. जी.ओ.) द्वारा यदि करवाया जाये तो इससे अध्यापकों को अध्यापन कार्य के लिए पर्याप्त समय मिलेगा जिससे विद्यालय के शैक्षणिक स्तर में सुधार होगा।

======================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. www.upmdm.in
2. www.mdm.nic.in
3. द्विवेदी घनश्याम, प्राथमिक शिक्षा में मिड डे मील कार्यक्रम की प्रासंगिकता कुरूक्षेत्र, अक्टूबर 2008, ग्रामीण विकास मन्त्रालय, नई दिल्ली।

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

स्वतंत्र भारत में नारी शक्ति-सामाजिक स्थिति एवं अपराध

* अर्चना श्रीवास्तव

सारांश- **महिला सशक्तिकरण की आवश्यकता विगत् दशकों में पूरे विश्व ने महसूस किया। महिला सशक्तिकरण की पहल 1985 में महिला अंतराष्ट्रीय सम्मेलन नरोबी में की गयी। महिला सशक्तिकरण का अभिप्राय महिलाओं को पुरुषों के बराबर वैधानिक राजनीतिक, शारीरिक, मानसिक,सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में उनके परिवार समुदाय समाज एवं राष्ट्र की सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि में निर्णय लेने की स्वायत्तता है।**

इस विषय पर 1955 में बीजिंग सम्मेलन में इस विषय पर चर्चा हुई और इच्छुक राष्ट्रों के लिए दिशा निर्देश तैयार किये गये। भारत ने महिला नीति की घोषणा की।[1] भारत में महिला सशक्तिकरण का प्राथमिक उद्देश्य महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक दशा को सुधारना है। स्वतंत्रता के पश्चात् आज लगभग 70 वर्षो बाद भी महिलाओं के स्वास्थ में सुधार नहीं हुआ है क्योंकि 50 प्रतिशत गर्भवती महिलायें एनीमिया रोग से पीड़ित है। 25 प्रतिशत बच्चों को मातायें कुपोषण के कारण प्रसव अवधि से पूर्व जन्म देती है, वर्ष 2001 महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में मनाया गया। इस दौरान समग्र समाज को महिलाओं की स्थिति और भूमिका के बारे में जागरूक बनाने के प्रयास किये गये किन्तु ये सभी प्रयास महानगरों तथा शहरों तक सीमित रहे।

इसका पहला आयाम महिलाओं में आत्मविश्वास और स्वाभिमान जागृत करना है किन्तु आज 21वीं सदी में जब इन्दौर की संगीता को 300 दर्शकों की उपस्थिति में अपने सतीत्व की सच्चाई साबित करने के लिये 90 मिनट तक सुर्ख गर्म की गई लोहे की सलाख पकड़ने को मजबूर किया जाता है तो क्या हमें अब महिला दिवस अथवा भारतीय महिलाओं के लिये सशक्तिकरणवर्ष मनाने का कोई अधिकार है।[2]

हमारी सामाजिक व्यवस्था प्रारंभ में ऐसी नहीं थी जिसमें महिलाओं का शोषण हो, परन्तु बाद में ऐसी व्यवस्था को जन्म दिया जिसमें महिला और पुरूषों में भेद किया जाने लगा। भेदभाव इतना बढ़ गया कि महिलाओं का शिक्षा के साथ जो दूसरे दर्जे का व्यवहार किया जा रहा है शायद इसके लिये अशिक्षा भी उत्तरदायी है। फलस्वरूप परिवार के बच्चों में भेदभाव किया जाने लगा। लड़का होने पर खुशी मनाई जाती है। बेटी होने पर खुशी नहीं होती। लड़का होने पर माँ को अच्छा भोजन दिया जाता है किन्तु लड़की होने पर नहीं। इस भेदभाव की पराकाष्ठा यह है कि अब तो गर्भ में ही भ्रूण की जांच कर बच्ची की भ्रूण हत्या होने लगी। कहीं-कहीं जन्म लेते ही बच्ची की हत्या की जाने लगी। इसके कारण एक से छ:वर्ष के आयु वर्ग के बच्चों में लड़कियों का औसत और भी कम है। जनांकिकीय

* सह-प्राध्यापक, राजनीति शास्त्र, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या महाविद्यालय भोपाल

वक्ताओं का मानना है कि इस अनुपात के भयानक परिणाम आज से 20 वर्ष बाद सामने आयेंगे।

वर्ष 2001 की जनगणना के आधार पर 14 राज्यों में 122 जिले है जहां छः साल की आयु के 1000 लड़कों के बीच 900 लड़कियां है। कुरूक्षेत्र में मात्र 770/900 लड़कियां है। फतेहपुर साहब (पंजाब) में सबसे कम सिर्फ 754 लड़कियां है सम्पन्न राज्यों में यह स्थिति ज्यादा चिंता जनक है। प्रति हजार पुरूषों पर कन्यायें हैं।[3]

पंजाब	793
हरियाणा	820
चण्डीगढ़	845
दिल्ली	865
गुजरात	878

भारत में लिंगानुपात पुरूषों के पक्ष में रहा है वर्ष 2011 में हजार पुरूषों पर 940 महिलायें है इस संबंध में देश की स्थिति इस प्रकार है।

वर्ष	स्त्रियों की संख्या
1901	972
1911	965
1921	955
1931	950
1941	945
1957	946
1961	941
1971	930
1981	933
1991	927
2001	933
2011	940

उपर्युक्त सारणी से ज्ञात होता है कि सामान्यतः पुरूषों की तुलना में स्त्रियों की संख्या घटती जा रही है। 2001 की तुलना में 2011 में स्त्रियों की संख्या अधिकतम कम हुई है। 2001 की तुलना में 2011 में लिंग अनुपात में हुई गिरावट को रोकने में असफल हो गया परन्तु जब आयु संरचना संबंधी जनगणना के समंकों का विश्लेषण करते हैं तो ज्ञात होता है कि यह वृद्धि स्थाई होने का संकेत नहीं है क्योंकि भविष्य में इस अनुपात में परिवर्तन की दिशा बच्चों की आबादी के अनुपात की प्रवृत्ति से होता है जिसे बाल लिंग अनुपात कहा जाता है। इसकी स्थिति इस प्रकार है।[4]

वर्ष	बालिकाएं
1961	976
1981	962
1991	945
2001	927
2011	014

उपर्युक्त तालिका से ज्ञात होता है कि इस दशक की अपेक्षा पिछले दो दशकों में

गिरावट ज्यादा रही। विश्व आर्थिक फोरम में लिंग संबंधी एक अध्ययन के अनुसार विश्व के 58 देशों में लिंग समानता सूची में भारत 55वें स्थान पर है। पुरूष महिलाओं के अंतर का मापदण्ड आर्थिक अवसर, राजनीतिक सशक्तिकरण शिक्षा तथा जनन संबंधी स्वास्थ सेवाओं तक पहुंच तय किया गया। भविष्य की आशा सृष्टि का आधार कन्याओं के प्रति आज का तथाकथित समाज इतना निष्ठुर एवं निर्गम हो रहा है कि वह जन्म लेने के अधिकार से वंचित कर रहा हैं। लंदन से प्रकाशित अखबार इंडिपेंडेंट का दावा है कि ''हर वर्ष करीब पांच लाख बच्चियां जन्म नहीं ले पाती''।

कार्यालय एवं कारखानों में भी महिलाओं के साथ भेदभाव किया जाता है। अपने अधिकारों का ज्ञान न होने के कारण महिला उसका उचित प्रतिरोध भी नहीं कर पाती है। कहीं-कहीं महिलाओं का पहनावा भी आपत्तिजनक होता है क्योंकि पाश्चात्य शिक्षा का प्रभाव होने के कारण महिलायें ऐसे कपड़े पहनती है जो पुरूषों को महिलाओं के प्रति अपराध करने के लिये प्रेरित करते हैं। ''क्राइम इन इंडिया'' पत्रिका में वर्ष 2002 के आंकड़े दिये गये जिनसे पता चलता है कि हमारे देश में प्रतिदिन बलात्कार के करीब 50 मामले दर्ज होते हैं हर घण्टे देश में बलात्कार की दो घटनाएं होती है।

भारत में बलात्कार के दर्ज मामले[5]

वर्ष	बलात्कार के मामले
1981	8559
1988	9099
1989	9752
1990	10068
1991	10410
1992	11708
1993	12218
1994	13208
1995	13754
1996	14846
1997	15330
1998	15033
1999	15468
2000	14496
2001	15264

इन आंकड़ों को कम करने के लिये जरूरी है कि महिलाओं को उचित शिक्षा दी जानी चाहिये जिससे महिला अत्याचार में सहायक न हो और उसका प्रतिरोध करें।

महिलाओं एवं बच्चों के प्रति हिंसा एक सामाजिक अभिशाप है इससे बचने के लिये महिलाओं को शिक्षित किया जाना अनिवार्य है। अपराध के संदर्भ में कहीं न कहीं महिला खुद भी जिम्मेदार है। क्योंकि जब एक महिला शादी होकर ससुराल आती है तो ससुराल वालों के अत्याचार वह सहन करती और उत्पीड़ित होती है। बहुओं को प्रताड़ित करने में सास की अहम भूमिका होती है।

महिलाओं के विरूद्ध होने वाले अपराधों के अन्वेषण में पुलिस की भूमिका भी

प्रायः निराशाजनक है। अपराध करने वाली यदि धनी व प्रभावशाली व्यक्ति होता है तो धन के द्वारा भयभीत करके गवाहों को प्रभावित करी देता है। कभी-कभी पुलिस वाले सही व्यक्ति के विरूद्ध प्रकरण पंजीबद्ध नहीं करते। महिलाओं पर घटित अपराध के प्रकरणों में न्यायालयों में कभी-कभी अभियोजन जब महिलाओं पर अपराध की सही रिपोर्ट नहीं करवा पाते। महिलाओं पर अपराध भी बयान नहीं करवा पाते, महिलाओं पर अपराध की सही रिपोर्ट न लिखने वाले पुलिसकर्मियों को भी दण्डित किये जाने का प्रावधान किया जाना चाहिए। दण्ड प्रक्रिया एवं साक्ष्य अधिनियम में संशोधन किये जाने चाहिये।

महिलाओं के प्रति बढ़ते अपराध में एक स्थिति तक मीडिया की भूमिका भी नजर आती है। आज मीडिया अपनी भूमिका से बहकता नजर आ रहा है। मीडिया बलात्कार जैसे जघन्य अपराध को सनसनी खेज खबर के रूप में प्रस्तुत करता है।

10 दिसम्बर 2002 को संगठनों की दिल्ली में रैली के बाद एक ज्ञापन उप-प्रधानमंत्री लालकृष्ण आडवाणी को दिया जिससे महिला जगत को जघन्य अपराध से राहत मिल सकेगी।

1. बलाकार संबधी मामलों को जल्दी निपटारा करने के लिये कास्कड्रेम कोर्ट बनाये जाये मामले को रोजाना सुनवाई हो और 60 दिन के अंदर फैसला सुनिश्चित हो।
2. इन अदालतों में विशेष महिला जजों की नियुक्ति हो।
3. घरेलू हिंसा की परिभाष नये सिरे से हो।
4. कानून में बलात्कार शक की परिभाषा नये सिरे से की जाये।
5. अस्पतालों में ट्रामा सेन्दर बनाये जाये।
6. पुलिस, न्यायपालिका और स्वास्थ विभाग के उन सभी कर्मचारियों व अधिकारियों को यौन-शोषण संबंधी मामलों में संवेदनशील व्यवहार का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये।
7. बलात्कार की शिकार महिला/युवती/बच्ची के पुर्नवास की व्यवस्था हो एवं उसे अपनी मर्जी के स्थान पर पढ़ने की सुविधा हो।[6]

इसके अतिरिक्त स्त्री को स्वयं भी अपराधों को रोकने में भूमिका अदा करनी होगी। पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव में गलत तरीके नहीं अपनाना है। सशक्तिकरण का अर्थ यह नहीं कि स्त्री बराबरी की होड़ में अपना अस्तित्व को ही दांव पर लगा दे। कहीं अति महत्वकांक्षा की चाह में अपराध की दुनिया के लिये दरवाजे न खुल जाये। अतः स्त्री को स्वयं अपनी अस्मिता को बनाये रखना है। अपनी शक्ति को पहचान कर उसका सही सदुपयोग करना है।

सबला तू लिख खुद अपनी कहानी। साहस की ममता की जिसकी कोई न हो सानी।

=======================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. 19 नवंबर 2003, दैनिक भास्कर, पृ. 10
2. राष्ट्र महिला, जुलाई 2002 पृ.-1 राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा प्रकाशित।
3. प्रतियोगिता दर्पण, फरवरी 2004। पृ.-1325
4. मध्यप्रदेश संदेश दिसम्बर 2011, जनसंपर्क संचालनालय भोपाल।
5. प्रतियोगिता दर्पण।अप्रैल/2003/पृ.-1625
6. प्रतियोगिता दर्पण/अप्रैल/2003/पृ.-1712

7. प्रज्ञा शर्मा, भारतीय समाज में नारी पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर।
8. संतोष खन्ना, महिला विधि भारती, जुलाई, सितम्बर 1997, विधि भारतीय परिषद दिल्ली।
9. स्वप्निल सारस्वत, महिला विकास एक परिदृश्य, नयन प्रकाशन, नई दिल्ली-110002 संस्करण 2005
4. मध्यप्रदेश संदेश दिसम्बर 2011, जनसंपर्क संचालनालय, भोपाल।

पत्र-पत्रिकायें-

1. प्रतियोगिता दर्पण फरवरी 2004, 2003
2. दैनिक भास्कर समाचार पत्र।
3. राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा प्रकाशित प्रतिवेदन।

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

भारत में नगरीकरण, स्मार्ट सिटी तथा इसकी चुनौतियाँ

* विजय कुमार

सारांश- भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया तेजी से बढ़ रही है। वर्तमान भारत में कस्बा और नगर मिलाकर लगभग कुल 8410 नगर हैं। नगरीकरण की प्रक्रिया से लोगों के विचारों, मूल्यों और सामाजिक-आर्थिक सम्बन्धों में बदलाव आ रहा है। नगरों को नये विचारों का उद्भव स्थल, संस्कृति और सभ्यता का केन्द्र, उत्पादकता का केन्द्र माना जाता है। नगरीय विकास की अपनी कुछ चुनौतियाँ हैं। उन्हीं चुनौतियों से निपटने के लिए सरकार ने देश में कुल स्थापित नगरों में से 100 नगरों को स्मार्ट सिटी के रूप में विकसित करने का लक्ष्य रखा है। इस लक्ष्य के अन्तर्गत संपोषणीय और समावेशी विकास, स्वच्छ ऊर्जा स्रोत का विकास, सबको आवास, शुद्ध वायु, शुद्ध जल, शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा और ई-प्रशासन इत्यादि को शामिल किया गया है। इसके लिए राज्य और केन्द्र सरकारें मिलकर काम कर रही हैं। स्मार्ट सिटी बनने में कुछ बाधक तत्व भी हैं जैसे यौन अपराध, साइबर क्राइम, सीमान्तीकरण, घेटोकरण इत्यादि। देश पहले से ग्रामीण भारत और नगरीय भारत के रूप में विभाजित था, अब 100 नगरों को स्मार्ट बनने से अन्य नगरों में असमानता उत्पन्न होगी। फिर भी नगरों को स्मार्ट सिटी के रूप में विकसित होने से अन्य नगरों में भी प्रतिस्पर्द्धा उत्पन्न होगी और हर नगर अपने को स्मार्ट नगर के रूप में विकसित होने के लिए प्रयास करेगा जिससे नगरीय जीवन में खुशहाली आयेगी।

मुख्य शब्द : नगरीकरण, स्मार्ट सिटी, संपोषणीयता, समावेशी विकास, घेटोकरण।

नगरीकरण, नगरीय जनसंख्या की तीव्रतर तुलनात्मक वृद्धि की एक प्रक्रिया है, एक ऐसी प्रक्रिया, जिसके द्वारा नगरों के क्षेत्र और नगरीय जीवन शैली का विस्तार होता जाता है। नेल्स एण्डरसन ने अपनी पुस्तक "द अरबन कम्यूनिटी" में नगरीकरण को इस प्रकार परिभाषित किया है, "नगरीकरण का अर्थ लोगों का केवल गाँवों से नगरों की ओर प्रवास करना या कृषि को छोड़कर नौकरी या व्यापार ही नहीं है बल्कि यह वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा लोगों के विचारों, व्यवहारों, मनोवृत्तियों और मूल्यों में नगरीय विशेषताओं के अनुसार परिवर्तन होने लगते है।" पॉल मीडोज और मिजरूची के शब्दों में, ''नगरीकरण से उस प्रक्रिया का बोध होता है जिससे 1) नगरीय मूल्यों का विस्तारण होता है, 2) गाँवों से नगरों की ओर लोग आते हैं, 3) व्यवहारों के प्रतिमान परिवर्तित होते हैं और जिनका तादात्मीकरण नगर में रहने वाले समूहों से तालमेल रखता है।"[1]

नगरीकरण की प्रक्रिया को विभिन्न कारकों जैसे-प्रशासनिक, राजनीतिक, वाणिज्यिक,

* एसोसिएट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, बी.एस.एन.वी. पी.जी. कॉलेज, लखनऊ (उ.प्र.)

धार्मिक और शैक्षणिक आधार पर देखा जा सकता है। नगरीकरण के कारण भारतीय संस्थाओं जैसे-जाति व्यवस्था, नातेदारी व्यवस्था, धार्मिक और राजनीतिक संस्थाओं के संरचनात्मक स्तरों पर विशेष प्रभाव पड़ा है। इस आधार पर गाँवों और नगरों के संरचनात्मक निरन्तरताओं और संस्थागत अन्तरों को देखा जा सकता है।[2]

नगरीय जनसंख्या की वृद्धि (या ह्यस) तीन तरह से हो सकती है-

1. प्राकृतिक वृद्धि, जो कुल मृत्यु से जन्मों की अधिकता (या कमी) है;
2. कुल स्थानान्तरण, जो वाह्य स्थानान्तरण के ऊपर अन्तः स्थानान्तरण की अधिकता (या कमी) है;
3. पुनर्वर्गीकरण अर्थात् अनगरीय जनसंख्या या स्थानों को नगरीय के रूप में किसी समय पर वर्गीकृत करना या नगरीय को अनगरीय या ग्रामीण के रूप में किसी समय या परिभाषा के अनुसार मान लेना।

नगरीय वृद्धि अकेले प्राकृतिक वृद्धि से भी होती रह सकती है; जबकि नगरीकरण के लिए स्थानान्तरण प्रायः एक आवश्यक एवं अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व है। लैम्पर्ड ने नगरीकरण की तीन तरह की उपागमों की व्याख्या की है-

1. व्यवहारात्मक।
2. संरचनात्मक।
3. जनांकिकीय।

प्रथम उपागम व्यवहारों या विचारों के उन प्रतिरूपों को 'नगरीय' के रूप में देखती है जिन्हें व्यक्तियों ने समय के दौरान समायोजित करते हुए अनुभव किया। अतः यहाँ नगरीकरण व्यक्तियों के व्यवहारों के समायोजन की प्रक्रिया के रूप में है। संरचनात्मक उपागम के अनुसार नगरीकरण की प्रक्रिया किसी क्षेत्र के भीतर मनुष्यों के 'व्यावसायिक विभिन्नीकरण (differential ordering of occupations) के आधार पर विकसित प्रतिरूपों के बनने की प्रक्रिया है, जिनका प्रतिनिधि रूप है- कृषि पर आश्रित समुदायों या लोगों का अपेक्षाकृत बड़े कृष्येतर समुदायों के रूप में या उनकी ओर आकृष्ट होकर स्थानान्तरित होना। तीसरे उपागम के अनुसार, नगरीकरण किसी क्षेत्र में जनसंख्या के केन्द्रीयकरण की एक प्रक्रिया है तथा नगर इस समाजीय (Societal) प्रक्रिया के सहगामी परिणाम के रूप में जन्में जनसंख्या-केन्द्रीकरण के बिन्दुओं के रूप में है।[3] नगरीय क्षेत्रों को "समावेशी आर्थिक वृद्धि का वाहक" कहा जाता है। एक प्राचीन नगर एक धार्मिक समुदाय था। पैट्रिक गिड्स ने नगरों को सभ्यता का दर्पण कहा है तथा कुछ विचारक नगरों को सभ्यता का प्रतीक कहा है।[4] भारत की जनगणना 2011 के अनुसार, 121 करोड़ भारतीयों में 83. 3 करोड़ ग्रामीण क्षेत्रों तथा 37.7 करोड़ नगरीय क्षेत्रों में रहते हैं। भारत की जनगणना 2011 के अनुसार, नगरीय अधिवास इस प्रकार है-

अ) न्यूनतम जनसंख्या 5000 व्यक्तियों,

ब) कम से कम 75% पुरूष अकृषिय कार्यों में लगे हों तथा

स) जिसकी जनसंख्या घनत्व कम से कम 400 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. हो।

पहले प्रकार के क्षेत्र को कानूनी आधार पर स्थापित कस्बा (Statutory Town), दूसरे प्रकार को जनगणना कस्बा तथा तीसरे प्रकार को नगरीय समुदाय कहते हैं; जिसमें स्थापित कस्बा (Statutory Town) 4041, जनगणना कस्बा (Census Town) 3894 तथा

नगरीय समुदाय (Urban Agglomerations) 475 हैं।[5]

नगर की विशेषतायें- नगर की निम्नलिखित विशेषतायें होती हैं-

1. नगर विचारों के केन्द्र होते हैं (Cities are hub of ideas)।
2. नगर वाणिज्य और वाणिज्यिक गतिविधियों के केन्द्र हैं (Cities are hub of commerce and commercial activities)।
3. नगर संस्कृति और सभ्यता के केन्द्र हैं (Cities are hub of culture and civilisation)।
4. नगर विज्ञान और प्रौद्योगिकी के केन्द्र हैं (Cities are hub of science and technology)।
5. नगर उत्पादकता के केन्द्र हैं (Cities are hub of productivity)।
6. नगर सूचनाओं के संग्रह के केन्द्र हैं (Cities are hub of collection of information)।
7. नगर सामाजिक विकास के केन्द्र हैं (Cities are hub of social development or social progress) इत्यादि।

भारत में नगरीय जनसंख्या में वृद्धि-

भारत की नगरों में जनसंख्या की प्रवृत्ति तीव्रतर वृद्धि की ओर है। आधुनिक नगरों में जनसंख्या को आकर्षित करने वाले कारकों में आर्थिक कारक, औद्योगिक कार्य, सरकारी केन्द्र और आध्यात्मिक कार्य, उच्च शिक्षा, नये-नये व्यापारिक संगठन, नये-नये प्रशासनिक एवं प्रौद्योगिकी कार्य मुख्य हैं जो जनसंख्या को एक ही स्थान पर संकेन्द्रित करते हैं। लर्नर ने बताया है कि नगरीकरण के अभाव में जनसंख्या वृद्धि साक्षरता की दर में वृद्धि नहीं कर पाती। नगरों में जनसंख्या वृद्धि की प्रक्रिया स्वतंत्रता के बाद तेजी से बढ़ने लगी जिनको नीचे की तालिका द्वारा समझा जा सकता है-

सन् 1951 से 2011 के बीच भारत में जनसंख्या वृद्धि[6]

वर्ष	कुल जनसंख्या (करोड़ में)	नगरीय जनसंख्या (करोड़ में)	नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत	दशक में वृद्धि (लाख में)
1951	36.10	6.24	17.30	–
1961	43.92	7.90	18.00	166
1971	54.81	10.91	19.90	301
1981	68.33	15.92	23.30	501
1991	84.63	21.75	25.70	583
2001	102.70	28.55	27.80	680
2011	121.05	37.71	31.20	921

उपर्युक्त तालिका को देखा जाय तो इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भारत में आजादी के बाद से नगरीय जनसंख्या में तेजी से बढ़ोत्तरी हुई है।

भारतीय नगरीय वृद्धि की चुनौतियाँ -

1. संस्थागत चुनौतियाँ
   - अ. नगरीय प्रशासन
   - ब. नगरीय नियोजन
   - स. वित्तीय प्रबन्धन
   - द. नगरीय संचालन

2. बुनियादी चुनौतियाँ
   अ. सबको आवास
   ब. शुद्ध पेयजल
   स. सैनिटेशन
3. स्वास्थ्य की दशाएँ
4. नगरीय यातायात की व्यवस्थाएँ
5. अन्य चुनौतियाँ- आप्रवास रोकना, पर्यावरणीय मुद्दे, नगरीय अपराध, साइबर अपराध, यौनिक अपराध, नगरीय गरीबी, रोजगार की व्यवस्था इत्यादि।

स्मार्ट सिटी-

स्मार्ट सिटी की संकल्पना माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी द्वारा प्रथम बार भारतीय शहरों को स्मार्ट बनाने के सम्बन्ध में 2014 में की थी जिसको 25 जून 2015 को लांच किया गया। इस सम्बन्ध में भारत के 100 नगरों को 2020 तक स्मार्ट सिटी बनाने के विजन का लक्ष्य रखा गया। स्मार्ट सिटी की एक सर्वमान्य परिभाषा नहीं है। स्मार्ट सिटी को अनेक लोगों द्वारा इसकी विशेषताएँ बताई हैं। स्मार्ट सिटी मिशन नगरों में मुख्य बुनियादी संरचनाओं को प्रदान करने एवं नागरिकों को उचित गुणवत्तायुक्त जीवन तथा एक स्वच्छ व संपोषणीय विकास के माध्यम से 'स्मार्ट हल' प्रदान करता है। स्मार्ट सिटी का लक्ष्य 100 नगरों में स्वच्छ और संपोषणीय पर्यावरण प्रदान करना है जिसके माध्यम से नगरीय जीवन की गुणवत्ता में विकास किया जा सके। इस स्मार्ट सिटी में सुरक्षित और अच्छा पर्यावरण, अच्छी सुविधाएँ, अच्छी कनेक्टिविटी और लोगों के रहने की अच्छी दशाएँ उपलब्ध होगीं। स्मार्ट सिटी के अन्तर्गत पर्याप्त जल आपूर्ति, बिजली आपूर्ति को सुनिश्चित करना, स्वास्थ्यकर दशाएँ जैसे-अपशिष्ट पदार्थों का प्रबन्धन, यातायात की व्यवस्थाएँ, रहने योग्य घर विशेषकर गरीबों के लिए 'सबके लिए आवास', जल का पुनः संशोधन एवं उपयोग, प्रभावी नगरीय गतिशीलता, यातायात की व्यवस्था, डिजिटल व्यवस्थायें, ई-कामर्स, ई-प्रशासन, ई-टेन्डरिंग, सुरक्षा एवं संरक्षा (विशेषकर बच्चे, महिलाएँ और वृद्धजनों) शिक्षा एवं स्वास्थ्य, वाई-फाई सुविधाएँ आदि शामिल होना चाहिए।

'ऐन इन्नोवेटिव रीयल एस्टेट डवलेपमेन्ट एण्ड मैनेजमेन्ट कम्पनी' जो 2004 में स्थापित की गयी है जो नगरीय स्मार्ट ग्रोथ के सिद्धान्त पर स्थापित है। इसका लक्ष्य संपोषणीय और सफल समुदायों का सृजन करना जो आगे की ओर अनुकूलित, साइकिल फ्रेन्डली पर्यावरण बनाता हो। ऐसा लक्ष्य जो एक विशेष प्रकार के समुदाय की प्राप्ति से है जिसमें यातायात, रोजगार और आवास का प्रसार तथा प्राकृतिक और सांस्कृतिक संसाधनों को सुरक्षित एवं संवर्धित कर रहा हो।[7] चीन की सरकार संपोषणीय भवनों को बढ़ावा दे रही है। बहुत से भवन निर्माण स्वामी और निर्णय लेने वाले सौंदर्यशास्त्र (ललित कला) वाले भवनों पर केन्द्र बिन्दु बना रहे हैं। "कम्युनिटी कम्पोस्टर" एक स्मार्ट विचार है, के आधार पर यह कहा जा रहा है कि एक नगर स्मार्ट तब होगा जब वह अपने अपशिष्ट पदार्थ को पूर्णगुणशाली रूप में प्रबन्ध करे। यह एक स्मार्टर और बुद्धिमत्ता वाला पहलू है जो अपने अपशिष्ट पदार्थों को बदलकर पोषणयुक्त स्रोत में बदले, यह प्रयास पुरस्कृत करने योग्य है। यह लोगों को उत्साहित करने वाला कदम है जो लोगों को उत्साहित करे कि पड़ोसी लोग भी इस विधि को अपनायें और स्वस्थ्य तथा हरित क्षेत्र को बनायें। इस

प्रयास से हम घर के कूड़े से जैविक और अच्छी खाद बना सकते हैं।

स्मार्ट सिटी की विशेषताएँ-

1. भारत सरकार ने 25 जून, 2015 में स्मार्ट सिटी मिशन को लांच किया।

2. इसका लक्ष्य संपोषणीय और समावेशी नगरों को बढ़ावा देना है। यह नागरिकों को गुणवत्तायुक्त जीवन, एक स्वच्छ तथा संपोषणीय पर्यावरण देने का कार्य करेगा।

3. स्मार्ट सिटी के अन्तर्गत पर्याप्त जल आपूर्ति, बिजली आपूर्ति को सुनिश्चित करना, सैनिटेशन (अपशिष्ट पदार्थों का प्रबन्धन), पूर्ण गुणशाली नगरीय गतिशीलता, यातायात की व्यवस्था, रहने योग्य आवास, अच्छी आई.टी. कनेक्टिविटी और डिजिटेलाइजेशन, ई-प्रशासन, स्वास्थ्य एवं शिक्षा शामिल है।[8]

4. स्मार्ट सिटी के अन्तर्गत जवाबदेही (Accountability), लोगों की सहभागिता (People's participation), कानून का शासन (Rule of Law), पारदर्शिता (Transparency) तथा प्रभाविता एवं कुशलता (Effectiveness and Efficiency) का होना अतिआवश्यक है। सरकारें इन सभी की प्राप्ति हेतु बहुत से प्रयास कर रही हैं, जिससे लोगों का भरोसा सरकारों पर रहे उनमें नागरिक घोषणा पत्र, सूचना प्राप्ति का अधिकार, सूचना एवं संचार तकनीकी का उपयोग, ई-ऑफिस (ई-टेन्डरिंग, ई-बिजनेस, गुड गवर्नेन्स), सार्वजनिक-निजी-लोक भागेदारी इत्यादि।

स्मार्ट सिटी का खाका (Framework of Smart City). स्मार्ट सिटी के खाके को तीन भागों में विभाजित किया गया है-

1. तकनीकी खाका-
   - (क) डिजिटल सिटी- एक ऐसा समुदाय जो ब्राडबैण्ड के माध्यम से बुनियादी रूप से जुड़े होते हैं। इसका मुख्य उद्देश्य नागरिकों में एक ऐसा माहौल तैयार करना जो एक-दूसरे से अन्तःसम्बन्धित हों ओर सरलतापूर्वक नगरों में अपनी सूचनाओं का लेन-देन कर सके।
   - (ख) वर्चुअल सिटी- इस प्रकार के नगरों की कार्यप्रणाली का क्रियान्वयन साइबर स्पेस के माध्यम से किया जाता है। भौतिक दूरी और स्थान पर पहुँच अभी तक आसान नहीं है, इसलिए केबिल, डाटा केन्द्रों और अदला-बदली के माध्यम से भौतिक दूरी को पकड़ा जाता है।
   - (ग) सूचना सिटी- इसके माध्यम से स्थानीय सूचनाओं को एकत्रित किया जाता है और सूचनाओं को पब्लिक पोर्टल पर प्रदान किया जाता है।
   - (घ) इन्टेलीजेन्ट सिटी- अनुसंधान या तकनीकी खोज के प्रकार्य इसके अन्तर्गत सन्निहित होते हैं, जो नये-नये खोज के लिए माध्यम प्रदान करते हैं।
2. मानवीय खाका-
   - (क) सृजनात्मक सिटी- सामाजिक बुनियादी संरचना जैसे बौद्धिक और सामाजिक पूँजी जो नगर को बनाने में अतिआवश्यक है, सृजनात्मक सिटी के अन्तर्गत आता है।
   - (ख) लर्निंग सिटी- इसके अन्तर्गत दक्ष कार्यबल का निर्माण किया जाता है। इसमें वोकेशनल संस्थाओं की विशेष भूमिका होती है।
   - (ग) दयालु सिटी- ऐसा नगर जो शिक्षा को केन्द्र बिन्दु बनाकर उच्च शिक्षा

के केन्द्र का विकास करता है।

(घ) ज्ञानवान सिटी

3. **संस्थागत खाका-** नगरों की जनता आई.टी. क्षेत्र में संलग्न रहती हैं और आई. टी. के माध्यम से दैनिक जीवन की चीजों की गुणवत्ता में वृद्धि करती हैं।

ऊर्जा खाका- इसके अन्तर्गत संपोषणीय सड़कों की लाइटें, स्मार्ट बिल्डिंग, स्मार्ट ऊर्जा के संसाधनों का वितरण (स्वच्छ ऊर्जा) और स्मार्ट यातायात इत्यादि तत्व आते हैं।[9]

संपोषणीय सिटी- इसको इको-सिटी भी कहते हैं। इस नगर की डिजाइन पर्यावरणीय प्रभाव को ध्यान में रखकर बनायी जाती है। नगर के निवासी ऊर्जा का अपव्यय, वायु प्रदूषण, कार्बन-डाई-ऑक्साइड का उत्सर्जन, मीथेन गैस के उत्सर्जन और जल प्रदूषण इत्यादि के प्रति सचेत रहते हैं।

नगर संपोषणीय होने के चयन का प्रतिरूप[10]

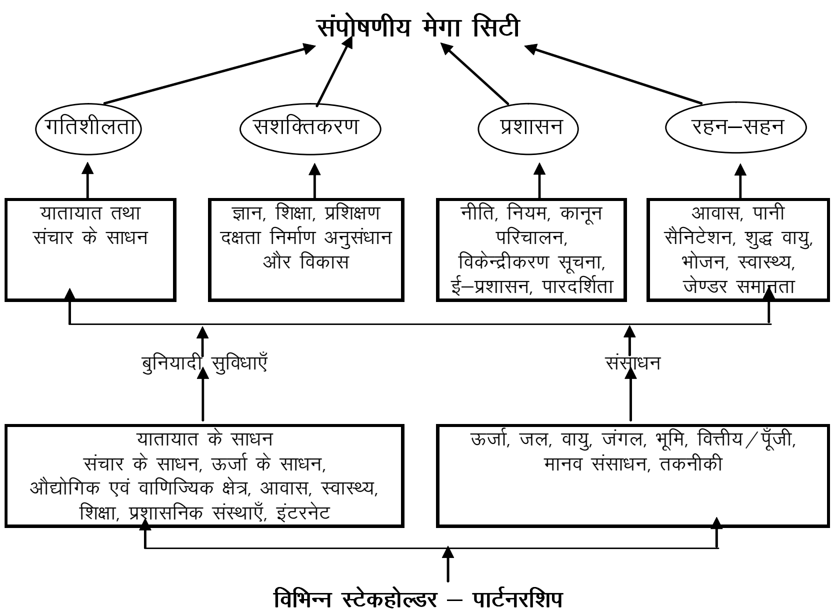

विभिन्न स्टेकहोल्डर- पार्टनरशिप

स्मार्ट सिटी बनने में बाधक तत्व - एक अनुमान के आधार पर नगरीय जनसंख्या में 2014 और 2050 के बीच 40.40 करोड़ जनसंख्या जुड़ जायेगी। सामाजिक-स्थानिक आधार पर देश में नगरों का विस्तार और हो रहा है। आय में असमानता, जरूरी वस्तुओं की पहुँच और अवसर की समानता भी बढ़ गयी है। सीमान्तीकरण और घेटोकरण विशेषज्ञ रूप से प्रथम प्रकार के भारतीय नगरों में व्याकुल करने वाला सामान्य स्थान बन गया है। घेटो की अवधारणा का उपयोग महानगरों अथवा औद्योगिक नगरों के आन्तरिक हिस्से में स्थित एक ऐसी बस्ती के लिए किया जाता है जो निर्धन और शारीरिक श्रम करने वाले

लोगों के समस्यामूलक समुदाय के रूप में विकसित हो जाती है। लुइस विर्थ ने अपने एक चर्चित निबन्ध 'नगरीकरण एक जीवन विधि के रूप में' (Urbanisation as a way of life) में घेटो को नगरों के बीच में स्थित एक ऐसे संजातीय समूह (Ethnic Group) के रूप में स्पष्ट किया जिसे सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा पारिस्थितिकी के दृष्टिकोण से दूसरे समूहों से पृथक किया जा सकता है। यह संजातीय समूह एक विशेष प्रकार का सामाजिक-सांस्कृतिक समूह है। टायनबी ने अपनी पुस्तक 'नगरों के बढ़ते कदम' (Cities on the move) में घेटो के रूप में महानगरीय बस्तियों की प्रकृति को जनसंख्या के घनत्व की प्रवृत्ति के आधार पर भी स्पष्ट किया है। घेटो ऐसी बस्ती है जिसमें दिन की अपेक्षा रात में जनसंख्या का घनत्व अधिक हो जाता है। दिन में अधिकांश पुरूष, स्त्रियाँ, बच्चे उद्योगों में काम करने बाहर चले जाते हैं और रात्रि में भोजन करने और सोने के लिए घर पर आते हैं। अधिकांश देशों के औद्योगिक महानगरों में पायी जाने वाली मलिन बस्तियों (Slums) की प्रकृति घेटो के ही समान है।[11] नगरों में बढ़ती जनसंख्या अनेक प्रकार की समस्याओं को जन्म देती हैं जो 'स्मार्ट सिटी' होने में बाधा उत्पन्न करेगी। 2011 की जनगणना के आधार पर 09 लाख जनसंख्या आवासरहित है। लगभग 6.5 करोड़ जनसंख्या गन्दी बस्तियों में निवास करती है (नगरीय भारत का 17% जनसंख्या)। ताजा सर्वेक्षण के अनुसार, यौन अपराध के मामले में दुनिया के महानगरों में दिल्ली सबसे बदतर जगह है। नगरों में मुम्बई सबसे धनी नगरों में आता है जो अन्य नगरों की तुलना में आर्थिक असमानता को दर्शाता है। अफोर्डेबल आवास एक समावेशी नगर की विशेषता है। सरकार की महत्वाकांक्षी योजना 'सभी को आवास' (housing for all) सभी गरीबों को 2022 तक प्रदान करने का लक्ष्य है। भारत सरकार के आँकड़ों के आधार पर नगरीय भारत में निवास करने वाले आर्थिक रूप से कमजोर और कम आय वर्ग के लोगों के लिए रहने योग्य घरों की 90% कमी है, उसी समय 7.5 लाख मुम्बई मेट्रोपोलियन क्षेत्र के अपार्टमेन्ट नहीं बिक पा रहे हैं। इन सबका कारण आर्थिक असमानता का होना है। पानी की आपूर्ति और सैनिटेशन सुविधाएँ नगरीय जीवन की मुख्य विशेषता है जबकि महानगरों में इसके प्रति घोर दुर्दशा है।[12] साफ-सफाई जीवन का एक भाग है जो एक स्वस्थ और बीमारीमुक्त जीवन प्रदान करता है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय (MHRD) ने साफ-सफाई के लिए उच्च शिक्षण संस्थाओं (HEIs) में एक अध्ययन कराया और इस आधार पर उच्च शिक्षण संस्थाओं में "स्वच्छता" हेतु 2017 का एक रैकिंग सूची तैयार की। इस अध्ययन में यह पाया गया कि उच्च 50 स्थानों में कोई भी सरकारी संस्थान नहीं है। इस आधार पर भारत में यह कहा गया कि सरकारी संस्थान कम जवाबदेह, कम उत्तरदायी, एक 'देख-रेख न करने वाले' मनोवृत्ति के हैं। मानव संसाधान विकास मंत्रालय ने लगभग 3500 उच्च शिक्षण संस्थाओं का सर्वे विभिन्न पैरामीटर जैसे-छात्र/छात्रा- टायलेट अनुपात, किचेन हाइजीन, पानी की उपलब्धता, कैम्पस हरित क्षेत्र, कूड़ा प्रबन्धन इत्यादि के आधार पर किया और उनमें से 174 संस्थाओं को चुना। इसके बाद विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और आल इण्डिया काउन्सिल फार टेक्निकल एजुकेशन ने इन संस्थानों में से 25 संस्थानों का चुनाव किया, जिसमें बहुतायत में प्राइवेट संस्थानों का नाम ऊपर की सूची में था।[13]

इस आधार पर देश ने स्मार्ट सिटी बनाने में लगातार प्रयास कर रही है उस प्रयास में निम्नलिखित व्यवस्थाएँ की गई हैं जैसे -

1. नेशनल अरबन ट्रांसपोर्ट पालिसी - 2006
2. नेशनल अरबन रेनेवल मिशन - 2005
3. मेट्रो ट्रेन का संचालन
4. स्मार्ट सिटी की संकल्पना
5. स्वच्छ भारत मिशन
6. इको-फ्रेडली पर्यावरण बनाना इत्यादि।

======================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. पाण्डेय, डॉ. राम कवल (1985), नगरीय समाजशास्त्र, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ 11
2. राव, एम.एस.ए. (संम्पा.) (1992), अरबन सोशियोलाजी इन इण्डिया, ओरिएन्ट लांगमैन, हैदराबाद, पृष्ठ 112
3. सिंह, डॉ. ओमप्रकाश (1987), नगरीय भूगोल, तारा बुक एजेन्सी, वाराणसी, पृष्ठ 153-154
4. राव, एम.एस.ए. (सम्पा.), Op.cit., पृष्ठ 5
5. www.newgeography.com 17.11.2016
6. अग्रवाल, डॉ. गोपाल कृष्ण, भारत में ग्रामीण एवं नगरीय समाज, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृष्ठ 224
7. https://urbansmantgrowthllc.com 17.10.2017
8. http://moud.gov.in/cms/smart-cities.php. 17.10.2017
9. https://en.wik:pedia.org/wiki/smart-city 19.10.2017
10. इण्डिया डवलेपमेन्ट रिपोर्ट 2015, एस. महेन्द्र देव (सम्पा.) आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, पृष्ठ 298
11. अग्रवाल, डॉ. गोपाल कृष्ण, व्चण्बपजण् पृष्ठ 194-195
12. https://thewire.in/98877/india-urbanisation-smart-cities/ 21.10.2017
13. http://www.epw.in/journal/2017/41/letters/'swachhta'-raking-2017.html

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

आधुनिकीकरण व महिला शिक्षा एवं सशक्तीकरण

* दीप्ति दीक्षित

_सारांश_- नारी आज के बदलते परिवेश में जिस तरह पुरूष वर्ष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर प्रगति की ओर अग्रसर हो रही है, वह समाज के लिए एक गर्व और सराहना की बात है। आज राजनीति, टेक्नालॉजी, सुरक्षा समेत हर क्षेत्र में जहां-जहां महिलाओं ने हांथ आजमाया उसे कामयाबी ही मिली। अब तो ऐसी कोई जगह नहीं है जहां आज की नारी अपनी उपस्थिति दर्ज न करा रही हो और इतना सब होने के बाद भी वह एक गृहलक्ष्मी के रूप में भी अपना स्थान बनाए हुए है, लेकिन सिक्के का दूसरा पहलू भी विचारणीय है जहां आज भी महिलाओं को घर के बाहर न निकलने की हिदायत दी जाती है, रेप या बलात्कार होने पर आत्महत्या पर मजबूर करने वाला समाज, कन्या भ्रूण हत्या जैसे पाप हमारे समाज के विकास में अवरोध पैदा कर रहे हैं।

अगर हम समय से थोड़ा ही पीछे जाए तो मालूम होगा ही हालात कितने बदले है। 1991 से पहले देश में महिलाओं की स्थिति बेहद कमजोर और दयनीय मानी जा सकती थी। जहां एक तरफ समाज में इंदिरा गांधी जैसी महिलाओं ने नारी सशक्तिकरण की तरफ कदम बढाए वहीं दूसरी तरह अपना देश उन देशों में शामिल था जहां पर लिंगानुपात में भारी अंतर था। लिंगानुपात से मतलब होता है प्रति हजार पुरूषों में महिलाओं की संख्या। 1901 में भारत में लिंगानुपात 972 था जो कि गिरते-गिरते 1991 से 927 हो गया। देश के पिछड़े इलाकों में महिलाओं का जीवन बेहद कठिन और पुरूषों के अनुसार चलता था।

लेकिन पहले भी ऐसा नहीं था कि महिलाओं की समाज के आर्थिक क्षेत्र में कोई भागीदारी नहीं थी। पहले भी महिलाएं समाज में आर्थिक क्षेत्र में सहयोग देती थी लेकिन समाज उनके योगदान को मान्यता नहीं देता। सरकारी नौकरियों या प्रायवेट सेक्टर महिलाएं हर जगह कार्यरत थी लेकिन हमारा पुरूष प्रधान समाज उन्हें उनकी सही मान्यता नहीं देता था।

1991 और इसके आने वाले समय के बाद महिलाओं की स्थिति में बेहतरीन बदलाव आए। चारों तरफ शिक्षा क्रांति ने महिलाओं को भी नया जीवन दिया। घर की दहलीज पार करके उन्होने पुरूषों की बराबरी करने के लिए कंधे से कंधा मिलाकर काम करना शुरू किया। उन्होने उन क्षेत्रों में भी अपनी छाप छोड़ी है, जहां पहले सिर्फ पुरूषों का ही वर्चस्व था।

अब पुरूष भी महिलाओं को उनका स्थान और महत्व देने लगे। हाल ही में भारत ने महिला सशक्तिकरण की दिशा में अभूतपूर्व कदम उठाते हुए देश की संसद और राज्य

* जन अभियान परिषद्, समाज कार्य, भोपाल (म.प्र.)

विधानसभाओं में एक तिहाई महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित की। महिला आरक्षण बिल के पास होने से जहां पहले से ही पंचायतों में महिलाओं की हिस्सेदारी 33 प्रतिशत से ज्यादा थी अब उम्मीद है कि देश की सरकार में भी उनकी भागीदारी बढेगी। भ्रूण हत्या के मामलों में भी तेजी से वृद्धि हो रही है।

इन हालात में निश्चित ही महिला आरक्षण विधेयक से महिलाओं का संख्या बल इस नकारात्मक परिदृश्य को बदलने में सहायक सिद्ध होगा। लेकिन जहां महिलाओं को दबाने में पुरूषों की भागीदारी देखी जा रही है वही महिलाओं का व्यवहार भी उनकी प्रगति के रास्ते आ रहा है। अक्सर ऐसा देखने में आ रहा है कि जो स्त्रियां बाहर निकल कर समाज में कार्य करती है वह कामयाबी और आजादी के नशे में अराजक हो जाती है। महिलाओं का बिगड़ता फैशन और कम होती मर्यादाएं इस बात का प्रमाण है। इसके साथ ही ऐसा देखा जाता है कि महिलाएं युवावस्था में कैरियर बनाने में इतनी व्यस्त हो जाती है कि उस समय संतान पैदा करने का अवसर नहीं रहता है बाद में इस कार्य में रूचि नहीं रह जाती है। उदाहरण के लिए पश्चिमी देशों में फैली श्वेत जाति लुप्त होने की ओर अग्रसर है और रूस जैसे देशों को संतानोत्पत्ति के लिए विशेष प्रयास करने पड़ रहे है। बदलते समय में नारी में कोई फूलनदेवी, तो कहीं सेक्स सिंबल की तरह देखता है लेकिन उनकी भी कमी नहीं है जो नारी में कल्पना चावला और सुनीता विलियम्स सरीखी नारियों को देखते है।

आज भारत में भी लिव-इन रिलेशनशिप की जड़े मजबूत हो चुकी है। विवाहोत्तर संबंधों का चलन बढ़ गया है। इसकी वजह से तलाक के मामलों में भी काफी इजाफा हो रहा है। इस प्रकार की कुछ समस्याएं अभी छोटी है लेकिन इनके आकार के बदलते ही हम और बड़े नैतिक पतन की ओर बढ़ जायेंगे। अब अगर हम इसके लिए पाश्चात्य संस्कृति को दोष दें तो गलत होगा, क्योंकि खुद हम जिम्मेदार है।

इस पतन के लिए कुल मिलाकर यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि जब तक हम अपनी मानसिकता नहीं बदलेंगे तब तक समाज में महिलाओं को अपनी जगह नहीं मिल सकती। अगर हम भारत के संदर्भ में बात करें तो पाएंगे कि अब भी हमारे देश को महिलाओं की स्थिति सुधारने की जरूरत है। शिक्षा को निचले स्तर तक पहुंचाकर हम नारियों को सशक्त करने का प्रयास कर सकते हैं। इसके साथ ही महिलाओं को भी अपने अधिकार के साथ समाज की मर्यादा का भी ध्यान रखना चाहिए। एक सही दिशा में ही चलकर महिलाओं का सही विकास संभव है।

आधुनिक विकास में महिला शिक्षा का महत्व -

किसी भी समाज की तरक्की तब तक संभव नहीं है जब तक उसमें वृहद् रूप से एकता और संगठनात्मक रूप से मजबूती नहीं हो जाती शिक्षा का परिवार के सामाजिक और आर्थिक स्तर से करीबी रिश्ता है साथ और सत्तर के दशक में मध्यवर्ग की लड़कियों के लिए शिक्षा रोजगार का एक माध्यम बन गई है। यद्यपि स्त्री शिक्षा की प्रगति स्थानीयता, जाति के आधार पर भिन्न-भिन्न थी।

स्त्री शिक्षा के परिणामों को सत्तर के दशक में चलाये गये परिवार कल्याण कार्यक्रम की समीक्षा में देखा गया सकारात्मक परिणाम शिक्षित महिलाओं में देखे गये जबकि ग्रामीण और निर्धन वर्ग की महिलाओं में शिक्षा की प्रगति नहीं हुई। अतः इनमें परिवर्तन कम आंका गया। वर्तमान संदर्भ में जबकि लैंगिक भेद मिटाना प्रत्येक क्षेत्र में

सरकार का प्रमुख एजेंडा है यह तथ्य सामने आते है कि लड़कियां बीच में पढ़ाई इसलिए छोड़ती है क्योंकि स्कूल की दूरी, घर के कामकाज, महिला शिक्षिका का ना होना, शौचालय न होना, इसलिए पढ़ाई के व्यय को अनावश्यक समझना आदि वर्तमान समय में समाज नव उदारवादी आर्थिक नीतियों के परिणाम स्वरूप शिक्षा एवं आत्मनिर्भरता के प्रति सभी क्षेत्रों की महिलाओं में जागरूकता आ रही है। प्रस्तुत अध्ययन में महिलाओं की शिक्षा व शिक्षा के प्रति परिवार में उनकी अभिरूचि में किस तरह का परिवर्तन आया है? क्या उन्होने कोई प्रशिक्षण लिया है या नहीं? परिवार में लड़कियों की शिक्षा के प्रति क्या दृष्टिकोण है इत्यादि? के संदर्भ में छतरपुर नगर की महिलाओं से शिक्षा के संबंध में जानकारी प्राप्त की प्रस्तुत निदर्श में 450 महिला उत्तरदाताओं का चयन किया गया एवं उनसे जानकारी प्राप्त की गई।

उपयुक्त तालिका में उत्तरदाताओं की शैक्षणिक स्थिति स्पष्ट की गई है-

क्रमांक	प्राथमिक	हाईस्कूल	हायरसेकेण्डरी	स्नातक	स्नातकोत्तर	योग
संख्या	24	48	70	134	174	450
प्रतिशत	5.3%	10.6%	15.5%	29.7%	38.66%	100%
उक्त तालिका से स्पष्ट है कि निदर्श में 5.3% उत्तरदाता प्राथमिक, 10.6% हाईस्कूल, 15.5% हायरसेकेण्डरी, 29.7% स्नातक तथा शेष 38.66% उत्तरदाता स्नातकोत्तर है।						

भारतीय परिपेक्ष्य में यदि देखा जाए तो इसमें तेजी आजादी के बाद ही आई। सरकार ने औरतों की शिक्षा के लिए कई नीतियां तैयार की, जिसके कारण महिला साक्षरता में जबरदस्त उछाल आया। आजादी के केवल तीन दशक बाद इसमें पुरूषों की साक्षरता दर की अपेक्षा तेजी से वृद्धि हुई। सन् 1971 में जहां केवल 22 फीसदी महिलाएं साक्षर थी वही सन् 2001 तक यह 54.16 फीसदी हो गया। इस दौरान महिला साक्षरता दर में 14.87 फीसदी की वृद्धि हुई और वहीं पुरूष साक्षरता दर में वृद्धि 11.72 फीसदी ही रही। वही 2011 की जनगणना के आधार पर देखा जाए तो भारत में 75.06% साक्षरता दर है जहां पुरूष साक्षरता दर 82.14% और महिला साक्षरता दर 65.46% है। वहीं छतरपुर जिले की औसत साक्षरता को देखा जाए तो 64.9% है, जिसमें पुरूष साक्षरता 74.2% और महिला साक्षरता 54.2% है, जहां ग्रामीण साक्षरता का प्रतिशत 60.4 व नगरी साक्षरता 79.7% है।

निष्कर्ष-

हम कह सकते हैं कि शिक्षा परिवार के सामाजिक और आर्थिक स्तर से करीबी रिश्ता है। साठ और सत्तर के दशक में मध्यवर्ग की लड़कियों के लिए शिक्षा रोजगार का एक माध्यम बन गई। यद्यपि स्त्री शिक्षा की प्रगति स्थानीयता, जाति के आधार पर भिन्न-भिन्न थी। स्त्री शिक्षा के परिणामों को सत्तर के दशक में चलाये गये परिवार कल्याण कार्यक्रम की समीक्षा में देखा गया। सकारात्मक परिणाम शिक्षित महिलाओं में भी देखा गया।

शिक्षा वयस्क जीवन के प्रति स्त्रियों के विकास के लिए एक आधार के रूप में विशेष रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षा अन्य अधिकारों को सुरक्षित करने के लिए लड़कियों और महिलाओं को सक्षम करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, अगर महिलाएं शिक्षित है तो वे अपने घरों की सभी समस्याओं का समाधान कर सकती है। स्त्री

शिक्षा राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय विकास में मदद करता है। आर्थिक विकास और एक राष्ट्र के सकल घरेलू उत्पादन की वृद्धि में मदद करता है। अत: महिला शिक्षा एक अच्छे समाज के निर्माण में मदद करती है। समाज में स्त्री शिक्षा गरीबी पर काबू पाने के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. स्वर्णलता- ई.वी. 247 एक्यूप्रेशर एण्ड आक्यूपेशनल एक्सप्रेशन्स, डिस्कवरी पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली-1993
2. जे.सी अग्रवाल- भारत में नारी शिक्षा-प्रभात प्रकाशन
3. योगेन्द्र सिंह- भारतीय परम्परा का आधुनिकीकरण
4. अग्रवाल सुशीला- स्टेटस ऑफ जयपुर पब्लिकेशन-1988
5. डॉ. जे.पी.सिंह- आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

अनुशासित जीवन के लिए योग-दर्शन का महत्व

* विमलेश

सारांश- **अनुशासन से व्यक्ति के व्यक्तित्व में परिपक्वता आती है, विचारों में गहराई आती है तथा सामाजिक जीवन के संगठन की नींव मजबूत होती है। अनुशासन आचरण की दृष्टि से व्यक्ति को सरल बनाता है। अनुशासित व्यक्ति से यह आशा की जाती है वह जीवन में आदर्शो और मूल्यों के आधार पर जीये, उसके चरित्र में कोई दुर्बलता न हो, वह अपने कर्तव्यों का पालन अपनी रूचि तथा इच्छा से करें। वास्तव में योग-दर्शन के अनुसार चित, वृतियों का निषेध ही सच्चा अनुशासन है। अष्टांग योग का पालन करने से व्यक्ति स्व अनुशासन अर्थात आत्म अनुशासन की ओर अग्रसर होता है। इस प्रकार से हम कह सकते है कि योग दर्शन के द्वारा अनुशासन की समस्या को दूर किया जा सकता है। विशेष रूप से विद्यार्थियों के लिये योग दर्शन की शिक्षा की नितांत आवश्यकता है।**

अनुशासन को अंग्रेजी में Disciplne कहते है। Disciplne शब्द की उत्पत्ति Disciple शब्द से हुई जिसका अर्थ है। 'छात्र' शिष्य, शिक्षक का अनुयायी, आज्ञा पालन करना। अनुशासन शब्द का प्रयोग नियमों का, कर्तव्यों का, मार्यादाओं का पालन करने के लिए किया जाता है। जब व्यक्ति अपने संवेगों पर पर नियन्त्रण रखकर सामाजिक नियमों का पालन करता है तथा व्यवस्थाओं को बनाये रखने में अपना योदान देता है, तब हम उसे अनुशासित जीवन व्यक्ति की संज्ञा देते है।

अनुशासन से व्यक्ति के व्यक्तित्व में परिपक्वता आती है, विचारों में गहराई आती है तथा सामाजिक जीवन के संगठन की नींव मजबूत होती है। अनुशासन आचरण की दृष्टि से व्यक्ति को सरल बनाता है। अनुशासित व्यक्ति से यह आशा की जाती है वह जीवन में आदर्शो और मूल्यों के आधार पर जीये, उसके चरित्र में कोई दुर्बलता न हो, वह अपने कर्तव्यों का पालन अपनी रूचि तथा इच्छा से करें।

अनुशासन किसी संगठित राष्ट्र की आत्मा है। अनुशासन के अभाव में किसी भी समाज व राष्ट्र की उन्नति सम्भव नही है। वर्तमान समय की बढ़ती हुई अनुशासनहीनता की स्थिति के विषय में हिमायूँ कबीर ने कहा है कि '' यदि इस समय अनुशासनहीनता को रोकने हेतु हम उचित कदम उठाने में असफल रहे तो यह समस्या इतनी भंयकर हो जायेगी कि हमारे राष्ट्रीय जीवन की नींव हिला देगी''।

आधुनिकता के कारण हमारा समाज भौतिकवाद की ओर अग्रसर हो रहा है। इस भौतिकवादी समाज में भौतिक सुख सुविधाएं, धन-सम्पत्ति आदि को महत्व दिया जाता है तथा नैतिकता अध्यात्मिकता आदि को अधिक महत्व नहीं दिया जाता। ऐसी स्थिति में

* असिस्टेंट प्रोफेसर (बी.एड. विभाग) सेठ.पी.सी. बागला (पी.जी.) कॉलेज, हाथरस

समाज में अनैतिकता तथा अनुशासनहीनता देखने को मिलती है। बड़े जैसा करते हैं बच्चे भी उसी का अनुसरण करते है। इसी कारण अनुशासनहीनता की यह स्थिति विद्यालयों में भी बढ़ती जा रही है। आधुनिकता के दिखावे के कारण तथा बुरी संगत के कारण आज का विद्यार्थी गलत रास्ते की और जा रहा है तथा धूम्रपान, शराब, लड़ाई-झगड़ा आदि करता है।

व्यक्ति जितने भी नैतिक, अनैतिक कार्य करता है उन सबका कारण मन ही है। मन मनुष्य का सबसे चंचल भाग है। मन को नियंत्रित करना अत्यन्त आवश्यक है। आजकल मनुष्य में विशेषकर युवाओं ने जो अनुशासनहीनता देखने को मिलती है उन सबका कारण मन ही है। क्रोधित होना, अत्यधिक भावुक होना, उत्तेजित होना आदि सब मन के कारण ही होता है। अनुशासित जीवन व्यतीत करने के लिए व्यक्ति में मुख्य रूप तीन प्रकार के अनुशासन की आवश्यकता है। 1. शारीरिक अनुशासन, 2. मानसिक अनुशासन, 3. वैचारिक अनुशासन। शारीरिक अनुशासन के लिए व्यक्ति का शरीर स्वस्थ हो, मानसिक अनुशासन में व्यक्ति का मन नियंत्रित हो और वैचारिक अनुशासन के लिए व्यक्ति के विचार अच्छे होने चाहिए।

उपर्युक्त इन तीनों प्रकार के अनुशासन के लिए हमें योग की शरण में जाना होगा अर्थात योग दर्शन विद्यार्थियों में अनुशासित जीवन के लिए हमारी सहायता करता है।

भारतीय दर्शन में योग दर्शन का महत्वपर्णू स्थान है वेद, उपनिषद, श्रीमद भागवत गीता आदि ग्रन्थों में योग प्रक्रिया का विशेष वर्णन देखने को मिलता है वौद्ध और जैन साहित्य में भी योग पर विचार किया गया है। परन्तु योग को एक स्वतन्त्र. दर्शन के रूप में प्रतिष्ठित करने का श्रेय महर्षि पतंजलि को जाता है। उनके द्वारा प्रतिपादित 'योग सूत्र' योग दर्शन का सर्वप्रथम प्रमाणित ग्रन्थ है।

महर्षि, पतंजलि के अनुसार योग का अर्थ है- चित्त वृत्तियोंका निरोध है। चित्त से तात्पर्य मनुष्य के अन्तकरण (मन, बुद्धि, अंहकार) से है। मन मनुष्य का सबसे चंचल भाग है। मनुष्य जितने भी नैतिक, अनैतिक कार्य करता है उन सबका कारण चित्त अर्थात मन ही है। चित को नियंत्रित करना अत्यन्त आवश्यक है।

पतंजलि के अनुसार चितवृत्तियों का निरोध ही योग है। वृत्तियों का निरोध अभ्यास से होता है। योग के अनुसार चित्त की पाँच अवस्थाएं होती है- मूढ़, क्षिप्त, बिक्षिप्त, एकाग्र और निरूद्ध। मूढ़ अवस्था में चित्त तमोगुण से प्रभावित रहता है अर्थात मन इन्द्रियों के भोग में लीन रहता है इस कारण प्राणी आलस्य और निद्रा से घिरा रहता है। क्षिप्त चित्त में रजोगुण, की प्रधानता रहती है इस अवस्था में चित्त अधिक चंचल रहता है किन्तु व्यक्ति अच्छे व बुरे परिणामों की ओर सोच नहीं पाता।

विक्षिप्त अवस्था में रजोगुण, तमोगुण दोनों की प्रधानता रहती है इस कारण वह अपने कर्मों के परिणामों की ओर ध्यान देता है। एकाग्र चित्त में सतोगुण की प्रधानता रहती जिस कारण इस अवस्था में व्यक्ति में ज्ञान का प्रकाश देखने को मिलता है। निरूद्रावस्था व्यक्ति की पाँचवी अवस्था है इसमें वृतियों का सम्पूर्ण निरोध हो जाता है और उसमें स्थिरता आ जाती है।

आत्म साधना एवं आत्म अनुशासन के लिए योग दर्शन में अष्टांग योग का प्रतिपादन किया गया है। आत्म अनुशासन के लिए चित्त वृतियों का होना आवश्यक है। चित्त वृतियों

के निरोध के लिए कायिक, वाचिक एवं मानसिक संयम एवं अनुशासन आवश्यक है। यह संयम और आत्म अनुशासन अष्टांग योग के अभ्यास द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

अष्टांग योग के आठ अंग निम्नलिखित है जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए और विशेष रूप से विद्यार्थियों में आत्म-अनुशासन के लिए बहुत महत्वपूर्ण एवं सहायक है- 1. यम, 2. नियम, 3, आसन, 4. प्राणायाम, 5. प्रात्याहार, 6. धारणा, 7. ध्यान, 8.समाधि।

1. यम- कायिक, वाचिक और मानसिक संयम को यम कहते है। यम पाँच प्रकार के होते है- 1. सत्य, 2 अंहिसा, 3. अस्तेय, 4. अपरिग्रह, 5. ब्रह्मचर्य।

सत्य से तात्पर्य मन और वचन में यथार्थ का होना अर्थात जैसे देखा जाय, अनुमान किया जाय उसी प्रकार मन और वचन को बनाये रखना। सत्य का पालन करने वचन सिद्धि प्राप्त होती है अर्थात उस व्यक्ति पर सभी विश्वास करते है।

अंहिसा- मन, वचन और कर्म से किसी भी प्राणी को कष्ट न देना ही अंहिसा है। हिंसा को अनुशासनहीनता और सभी बुराईयों का आधार माना गया है हिंसा के कारण ही दुश्मनी, वैरभाव आदि उत्पन्न होते है। जो मनुष्य अपने जीवन में अंहिसा को धारण कर लेता है उसका कोई दुश्मन नहीं होता उसके समीप अन्य प्राणी भी वैर-भाव भूल जाते है।

अस्तेय- किसी दूसरे के धन का अपहरण न करना और न ही उसकी इच्छा करना अस्तेय है लालच करना बेईमानी करना भी एक प्रकार से अनुशासहीनता की श्रेणी में आता है। अतः अस्तेय हमें यह सिखाता है कि स्वयं के प्रयास द्वारा हमें जो भी प्राप्त हो उसमें हमें संतोष करना चाहिए। अधिकांश अपराध अधिक इच्छाओं की पूर्ति न होने से तथा लालच करने से ही होते है।

अपरिग्रह- अपने स्वार्थ के लिए आवश्यकता से अधिक धन, सम्पत्ति और भोग सामग्री को संचय न करना अपरिग्रह है। अपनी आवश्यकता से अधिक धन एकत्रित न करना अपरिग्रह है। व्यक्ति की आवश्कताऐं अनन्त है जिनकी पूर्ति के लिए वह धन कमाने के पीछे लगा हुआ है यह आवश्यकताएं अनिवार्य न होकर विलासिता से सम्बन्धित भी होती है जिनकी पूर्ति न भी हो तो भी व्यक्ति का जीवन आराम से चल सकता है। अपरिग्रह से हम यह शिक्षा मिलती है कि व्यक्ति को अनावश्यक रूप से धन के पीछे नहीं भागना चाहिए।

ब्रह्मचर्य- विद्यार्थी जीवन के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करना अत्यन्त

आवश्यक है। ब्रह्मचर्य से तात्पर्य अपनी कामवासनाओं पर नियंत्रण रखने से है। ब्रह्मचर्य का पालन करने से शक्ति की प्राप्ति होती है।

2. नियम- योग दर्शन में पाँच प्रकार के नियम बताये है जिनका पालन करने से व्यक्ति को अनुशासित जीवन के लिए प्रेरित किया जा सकता है। ये नियम इस प्रकार से है:-

1. शौच, 2. संतोष, 3. तप, 4. स्वाध्याय, 5. ईश्वर प्राणिधान

शौच- शारीरिक और मानसिक शुद्धि ही शौच है। स्नान साफ-सफाई से बाहरी शुद्धि होती है और प्रेम, दया, करूणा, मित्रता आदि से मानसिक शुद्धता मानी जाती है।

संतोष- उचित प्रयासों के द्वारा जिसकी प्राप्ति हो जाय उसी से संतुष्ट रहना संतोष कहलाता है। संतोष के अभाव मे व्यक्ति अनेक प्रकार के नैतिक-अनैतिक कार्य करता है। तनाव, चिन्ता, ईर्ष्या आदि असंतोष के कारण ही पैदा होते है जिसके कारण व्यक्ति अपने

आपको कभी सुखी महसूस नहीं करता। योग हमें में संतोष की शिक्षा देकर सुखी जीवन जीने के लिए प्रेरित करता है।

तप- गर्मी, सर्दी आदि को सहने की शक्ति ही तप है अर्थात शारीरिक कठिनाईयों को झेलने का अभ्यास ही तप के अन्तर्गत आता है। आज का व्यक्ति विलासिता की वस्तुऐं जैसे ए0सी0 आदि का इतना आदी हो गया है कि जरा भी परेशानी सहन नहीं कर पाता। विद्यार्थी को तप करने का अभ्यास करना चाहिए। तप हमें किसी भी परिस्थिति में समायोजन करना सिखाता है।

स्वाध्याय- नियम पूर्वक धर्मग्रन्थों का अध्ययन करना ही स्वाध्याय है। विद्यार्थी के लिए उसकी पुस्तकें ही धर्म ग्रन्थ है, जब तक वह स्वाध्याय की आदत नहीं डालेगा तब तक वह ज्ञान की प्राप्ति नहीं कर सकता। शिक्षा जगत में सफलता प्राप्त करने के लिए स्वाध्याय करना अत्यन्त आवश्यक है।

ईश्वर प्राणिधान- मन वचन तथा कर्म से ईश्वर की भक्ति करना ही ईश्वर प्राणिधान के अन्तर्गत आता है। ईश्वर-प्राणिधान से मन में पवित्रता आती है। ईश्वर पर आस्था रखने वाला व्यक्ति कभी भी गलत कार्य नहीं करता।

3. आसन- आसन के अर्न्तगत शरीर को एक विशेष मुद्रा में रखना होता है। आसन में एक निश्चित समय तक शरीर को स्थिर रखा जाता है। इस स्थिति में शरीर का हिलना, तथा मन की चंचलता पर नियंत्रण किया जाता है। सभी आसन व्यक्ति के शरीर को स्वस्थ तथा अनुशासित रखते है।

योग में अनेक प्रकार के आसन है जैसे- पद्मासन, वीरासन, मयूरासन, कमलासन आदि।

4. प्राणायम- प्राण का आयाम अर्थात श्वांस प्रक्रिया को नियंत्रित करके उसमें एक क्रम लाना प्राणायाम कहलाता है। प्राणायाम शारीरिक और मानसिक दृढ़ता प्रदान करना है तथा चित्त को एकाग्र रखता हैं इसके तीन अंक है। पूरक- श्वांस अन्दर की ओर खींचना 2. कुम्भक- श्वांस के भीतर रोकना 3. रेचन- श्वांस को धीरे-धीरे बाहर निकालना।

5. प्रत्याहार- इसके अन्तर्गत इन्द्रियों को बाहरी विषयों से हटाकर अर्न्तमुखी बनाने का प्रयास किया जाता है। इस अवस्था में व्यक्ति सांसारिक विषयों में रहते हुए भी उससे प्रभावित नहीं होता।

6. धारणा- चित्त को किसी एक स्थान में स्थिर कर देना या लगाना ही 'धारणा' है।

7. ध्यान- ध्यान के अर्न्तगत अपने चित्त को उसी विषय लगातार लगाये रखना होता है। ध्यान लगाना विद्यार्थी जीवन में आवश्यक है क्योंकि ध्यान लगाने से ही लक्ष्य की प्राप्ति सम्भव है। ध्यान से विषय की गहराई में जाकर विषय का असली रूप प्रकट होता है।

प्रत्याहार में चित्त को बाहरी विषयों से हटाने का प्रयास किया जाता है। धारणा में किसी एक स्थान या विषय पर चित्त को लगाना होता और हमारा चित्त कितनी देर तक विषय पर लगा रहा यह ध्यान के अन्तर्गत आता है। ध्यान लगाने से विषय का असली रूप प्रकट होता है।

8. समाधि- योग साधना की अन्तिम सीढ़ी समाधि है। ध्यान तक की अवस्था में ध्याता को पता रहता है कि वह अपनी मानसिक अवस्था में है। यहाँ आकर ध्याता और ध्येय एक हो जाते हैं। अर्थात् स्वयं को भूलकर विषय में लीन हो जाना ही समाधि है। यहाँ

आकर व्यक्ति विषय में इतना लीन हो जाता है कि उसके आस-पास क्या हो रहा है उसे पता नहीं रहता अर्थात इसमें व्यक्ति को स्वयं का अपना कुछ भी ज्ञान नहीं रहता। इस स्थिति पर आ जाने से चित्त वृत्तियों का निरोध हो जाता है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि योग दर्शन में अनुशासित जीवन के लिए अष्टांग योग की उपयोगिता को वर्तमान समय में सभी स्वीकार करते है। अष्टांग का यम में सत्य बोलना, हिंसा न करना, लालच न करना तथा ब्रह्मचर्य की शिक्षा मिलती है, जिससे व्यक्ति चरित्रवान बनता है। नियमों का पालन स्वच्छता, संतोष करना, स्वाध्याय, तप तथा ईश्वर भक्ति सिखाता है, जो तन और मन की पवित्रता के लिए आवश्यक है। विभिन्न प्रकार के आसनों से शरीर स्वस्थ व सुन्दर बनता है। प्राणायाम से शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार की शक्ति मिलती है। प्रत्याहार हमें अर्न्तमुखी व इन्द्रियों को वश में करने का प्रशिक्षण देता है। धारणा से मन की चंचलता को कम किया जा सकता है। ध्यान लगाने से ही लक्ष्य की प्राप्ति सम्भव है क्योंकि ध्यान से ही विषय की गहराई में जाते है और विषय का असली रूप प्राप्त होता है। समाधि में ध्याता और ध्येय एक हो जाते है यहाँ पर व्यक्ति चित की सी वृत्तियों पर विजय प्राप्त कर लेता है।

वास्तव में योग-दर्शन के अनुसार चित, वृतियों का निषेध ही सच्चा अनुशासन है। अष्टांग योग का पालन करने से व्यक्ति स्व अनुशासन अर्थात आत्म अनुशासन की ओर अग्रसर होता है। इस प्रकार से हम कह सकते है कि योग दर्शन के द्वारा अनुशासन की समस्या को दूर किया जा सकता है। विशेष रूप से विद्यार्थियों के लिये योग दर्शन की शिक्षा की नितांत आवश्यकता है।

======================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. रमन बिहारी लाल : शिक्षा के दार्शनिक और समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ
2. सस्मिता कर : शिक्षा के दार्शनिक तथा समाजशास्त्रीय आधार आगरा पब्लिकेशन, आगरा
3. डॉ0 रामसिंह शर्मा: शिक्षा के दार्शनिक तथा समाजशास्त्रीय आधार संजय पब्लिकेशन्स, आगरा
4. सरोज सक्सेना: शिक्षा के सिद्धान्त, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
5. स्वामी रामदेव: योग साधना व योग चिकित्सा रहस्य दिव्य प्रकाशन, हरिद्वार

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

महिलाओं के प्रति यौन एवं अन्य प्रकार के उत्पीड़न का विश्लेषणात्मक अध्ययन

* रुपाली एस. कणसे

सारांश- **भारत की आजादी को 70 वर्ष से अधिक समय व्यतीत हो चुका है, संविधान मे समान अवसर तथा हिफाजत का आश्वासन भी दिया है, कानूनी अधिकारो मे भी सुधार किया गया है। व्यापक स्तर पर अक्षर ज्ञान देने के लिए राष्ट्रीय नीति बनाई है। इन सबके बावजूद हमारे समाज मे स्त्रियो का मूल्य एवं स्थान उस स्तर तक नही उठ पाया जितना उठना चाहिए था। आज स्त्रियॉ कुछ जगृत हो गई है, किंतु उनमे निराशा व्याप्त है। विश्व के समग्र व यथेष्ट विकास के लिए महिलाओं का विकास की मुख्य धारा से जुडा होना परम आवश्यक है। नारी की स्थिती समाज में जितनी महत्व पूर्ण सुदृढ सम्मानजनक व सकिय होगी उतना ही समाज उन्नत समृध्द व मजबूर होगा लेकिन फिलहाल हमारे पास ऐसी कोई ताकत नही है। ताकत पैदा करने के लिए ठोस स्पष्ट कल्पना होनी चाहिए कि किस तरह के समाज की रचना करनी चाहिए वैसे तो आज लगता है कि स्त्री - पुरुष मे बराबरी स्थापित होगई है परंतु यह छलावा मात्र है। पुरुष प्रधान समाज मे औरत का स्थान गुलाम जैसा है, वैवाहिक जीवन मे पुरुष ही फैसला करता है और औरत उस पर अमल करती है। यह सब समाप्त होना चाहिए। स्त्रियॉ भी चाहे तो अपने ऑचल के दुध व ऑखो के पानी को इस लायक बना सकती है कि जागरुकता का सतत प्रवाह बन सके। परंतु सफलता के लिए स्वाभिमान को जगाने की आवश्यकता है। यदि स्वाभिमान व आत्मस्वतंत्रता जागृत नही होगी तो नाही समानता की कल्पना हमेशा सपना बनकर रह जाएगी। स्त्रिया की अभी भी बहुत बडी संख्या ऐसी है जो मुश्किल से पेट पालने की स्थिति में है, गरीब है, नरूपाय सी है, रीति-रिवाजों को जालों मे उलझी हुई है। इन्हे गौरव पूर्ण जीवन सुलभ होसके इसके लिए प्रयत्न करना स्त्रियों की जिम्मेदारी है।**

प्रस्तावना-

नारी जीवन। हाय तुम्हारी यही कहानी।
आंचल मे है दुध और ऑखो मे पानी।।

महिलाओ के प्रति हिंसा एवं अपराध आज के युग की ही घटना नही है प्राचिन भारत मे भी इसके अनेक उदाहरण मिलते है। महाभारत काल मे युधीष्ठिर ने अपनी पत्नी द्रौपदी को जुए मे दांव पर लगा दिया था और दुर्योधन ने भरी सभा में उसका चीर हरन कर अपमानित किया था। रामायण काल मे रावन ने सीता का अपहरन किया था। विधवाओं

* सहायक प्राध्यापक, जिजामाता कला महाविद्यालय दारव्हा जि. यवतमाल

को भारत मे अनेक अधिकारों से वंचित किया जाता रहा तथा विभिन्न प्रकार के कष्ट दिए जाते रहे। दहेज को लेकर नारी को जला देने या हत्या कर देना आज के युग की सब से बडी त्रासदी है। सतीत्व के नाम पर महिलाओ को इसी देश मे जिन्दा जलाया जाता रहा है। हम आए दिन पत्र पत्रिकाओ मे बलात्कार की घटनाएँ पढते है।

इस प्रकार से महिलाओं का उत्पीड़न एवं शोषन उनके बलात्कार, उन्हे बहला फुसला कर भगा ले जाना एवं वेश्यावृत्ती के लिए बेच देना, उनके साथ मारपीट एवं गाली गलौज करना, उन्हे जला देना या हत्या कर देना आदि महिला अपराध के कुछ प्रमुख उदाहरण है।

अनुसन्धान के उद्देश्य -

प्रस्तुत अनुसन्धान के निम्नलिखित उद्देश्य है-

1) महिलाओ के हिंसा एवं उत्पीड़न का अर्थ समझना।

2) महिलाओ के प्रति हिंसा के कारणोंका अध्ययन करना।

3) महिलाओ के प्रति हिंसा रोकने के सुझावों का अध्ययन करना।

अनुसन्धान की प्रविधि-

इस शोध कार्य को वैधानिक दृष्टिकोण से पुरा करने के लिए अन्वेषनात्मक एवं वर्णनात्मक शोध डिजाईन का चयन करके महिलाओ के प्रति यौन एवं अन्य प्रकार के उत्पीड़न का अध्ययन किया गया है तथा माहिती पत्रक अखबार मासिक शोधपत्रिका इस व्दितीय सामुग्री के माध्यम से तथ्य को इकठ्ठा करके शोध कार्य को पुरा किया गया है।

महिलाओ के प्रति हिंसा, अर्थ, परिभाषा एवं प्रकार-

महिलाओ के प्रति हिंसा से तात्पर्य है महिलाओ के निकट रिश्तेदारो जैसे माता, पिता, भाई, बहन, सास, ससुर, देवर, नंनद, भाभी या परिवार के किसी भी सदस्य अथवा अन्य व्यक्तियो व्दारा किया जाने वाला हिंसात्मक व्यवहार एवं उत्पीड़न जो नारी को शारीरिक, मानसिक आघात पहुँचाता है।

अपराधिक हिंसा- जैसे बलात्कार एवं अपहरण आदि. घरेलु हिंसा जैसे दहेज सम्बधी मृत्यु, पत्नी को पिटना लैंगिक दुर्व्यहार आदि.।

सामाजिक हिंसा- जैसे पत्नी एवं पुत्र वधु को मादा भ्रुण की हत्या के लिए बाध्य करना। महिलाओ से छेड़छाड़ विधवा को सती होने के लिए बाध्य करना, दहेज के लिए तंग करना एवं स्त्री को संपत्ति मे हिस्सा न देना आदि।

भारत मे महिलाओ का उत्पीड़न प्राचीन काल से ही होता रहा है जिसका उल्लेख हमे प्राचीन धर्म ग्रन्थो एवं पुस्तको मे मिलता है। समाज मे प्रचलित रिती रिवाजो मे एवं विचारधाराओ का भी महिला उत्पीड़न मे योगदान रहा है। आजादी के बाद महिलाओ के कल्याण के लिए कई वैधानिक प्रयत्न किए गए उनमे शिक्षा का प्रसार हुआ है। वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हुई है इनके बावजुद भी उनके प्रति किए जाने वाले अत्याचारो एवं अपराधो मे कोई उल्लेखनीय कमी नही आयी है। बलात्कार, दहेज प्रथा, महिलाओ को जला देना, भगा ले जाना, अपहरण करके उन्हे मारने पिटने की घटनाए आज भी अखबारो की सुर्खियो मे रहती है।

महिलाओ के साथ किये जाने वाले अपराधो मे से भारत के इन पॉच राज्यो में सबसे जादा होते है। मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र तथा राजस्थान मे होते है। महिलाओ के बारे मे प्रदर्षित किए गए ये आंकडे अपुर्ण है क्योंकी उनके प्रति किए गए

सभी अपराधों को पुलिस मे दर्ज नही कराया जाता है तथा नारी के प्रतिहार मे ही किए जानेवाले अपराधो को घरेलु मामला समझ कर पुलिस उनमे हस्तक्षेप नही करती और स्त्रिया भी उन्हे बाहर उजागर करना उचित नही मानती।

नारी उत्पीड़न का एक प्रमुख रूप यौन उत्पीड़न है। स्त्रिया जहाँ काम करती है, वहाँ उनके मालिको व्दारा कभी कभी कुछ स्त्रियों का यौन शोषण भी किया जाता है। उन्हे ऐसा करने के लिऐ आर्थिक एवं अन्य प्रकार के प्रलोभन भी दिए जाते है और समर्पन करने की स्थिती में उनके साथ दुर्व्यवहार किया जाता है। उन्हे परेशान किया जाता है, उन पर झुठा आरोप लगाकर उन्हे फसाया जाता है। जिनसे तंग आकर या तो वे नौकरी छोड़ देती है, या अपना समर्पण कर देती है। ऐसी स्थिती मे स्त्री मे हीनता की भावना पैदा हो जाती है। सामान्यतः स्त्रियो से यह अपेक्षा की जाती है कि, यदि उनके साथ कोई यौन सम्बन्धी भलेही मजाक या छेड़छाड़ करता है, तो उन्हे बर्दाश्त कर लेना चाहिए। होटलो मे काम करने वाली महिलाओ से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने कामुक हावभाव एव मुद्राओ से ग्राहको को आकर्षित करे पुरुष ऐसी स्थिती में यदि गन्दे प्रस्ताव रखता है तो स्त्री को चतुराई से उन्हे टाल देना चाहिए।

महिलाओ के प्रति यौन एवं अन्य प्रकार के उत्पीड़न -

1) भगा ले जाना व अपहरण करना
2) नारी हत्या तथा भ्रुण हत्या
3) बलात्कार
4) नारी के प्रति अत्याचार एवं मानवाधिकार का हनन
5) दहेज हत्याएँ
6) वैश्यावृत्ति
7) विधवाओं के प्रति हिंसा
8) छेड़छाड़
9) पत्नी को पिटना गृह हिंसा

महिलाओ के विरुद्ध हिंसा के कारण -

1) भारत मे ही नही विश्व के सभी समाजो मे पुरुषो की प्रधानता पायी जाती है।
2) भारत मे स्त्रियो की पुरुषो पर आर्थिक निर्भरता पायी जाती है।
3) अशिक्षा के कारण महिलाए अपने अधिकारो प्रति जागरुक नही है।
4) भारत मे बालविवाह, परदा प्रथा, दहेज, विधवा पुनर्विवाह, जैसी कुप्रथाए प्रचलित है महिला जिनका शिकार बन जाती है।
5) पारिवारिक तणाव होने कारण पुरुष अपना तनाव पत्नी पर थोपने का प्रयास करता है।
6) वे पुरुष जो नशा करते है शराब पिते है वो नशे के दौरान पत्नी पर अत्याचार करते है।
7) परिस्थिती वश प्रेरणा - कई बार परिस्थितीयाँ ऐसी हो जाती है कि व्यक्ति अपराध कर बैठता है।
8) कई बार महिला अपराध को बर्दाश्त करती है और वे पुलिस या न्यायालय की शरण मे जाने अन्य लोगो से मदत लेने का प्रयत्न नही करती।

9) गरीबी और दारिद्रय

महिलाओ के प्रति हिंसा को रोकने के सुझाव-

1) आश्रय की व्यवस्था- सरकार और स्वयंसेवी संगठनो को ऐसी महिलाओ के लिए आवास की व्यवस्था करनी चाहिए जो पति और ससुराल वालों की व्यवस्था से तंग आकर घर छोडना चाहती है।

2) रोजगार की व्यवस्था- स्त्रियों व्दारा उनके पती की जाने वाली हिंसा को बर्दाश्त करने का एक कारण आर्थिक है, वे अपने व अपने बच्चो के भरण पोषण के लिऐ पति एवं ससुराल पक्ष के लोगो पर निर्भर होती है। आत्मनिर्भर बनने का प्रयास करना चाहिए।

3) शिक्षा की सुविधा प्रदान की जाए- स्त्री पर अत्याचार का एक कारण स्त्रियों का अशिक्षित होना भी है इसे एक कारण स्त्रियो का अशिक्षित होना भी है। इसे रोकने के लिए स्त्री शिक्षा का प्रसार किया जाए।

4) दण्ड की व्यवस्था- जो लोग अपनी पत्नीयो को परेशान करते है उनकी सामाजिक निन्दा की जाए और उन्हे सार्वजनिक रूप से दण्डित किया जाए जिससे कि अन्य लोगो को भी सबक मिले और वे ऐसा करने के लिए प्रेरित न हो।

5) महिला न्यायालयो की स्थापना- महिलाओ के प्रति किए गए अपराधो एवं हिंसा की सुनवायी के लिए पृथक से महिला न्यायालयो की स्थापना की जाए, जिसमे अनुभवी महिला न्यायाधीश हो। इससे सामान्य न्यायालयों मे जाने का महिलाओ मे जो भय होता है, वह समाप्त होगा और वे अपनी बात को इन न्यायालयों की सुनवायी एवं कार्यवाही सार्वजनिक रूप से न हो। इन में केवल पिड़ित महिला की मद्‌द करनेवाले लोंगों एवं आरोपियो को ही आने की इजाजत हो।

6) महिला संगठनो का निर्माण- नैतिक सम्बल देने एवं उनमे आत्मविश्वास जगाने के लिए अधिकाधिक महिला संगठनो की स्थापना की जाएँ।

7) वैचारिक परिवर्तन- महिलाओ के विरुद्ध हिंसा एवं अपराध को रोकने के लिए लडकियो के माता पिता के विचारो मे भी परिवर्तन लाना होगा। वे लड़कियो का बचपन से ही इस प्रकार का सामाजिकरण करते है, जिसमे उन्हे पति परमेश्वर की धारणा सिखायी जाती है। उन्हे कहॉं जाता है पति के घर डोली जाती है और अर्थी भी वही उठती है।

निष्कर्ष- घर मे ये महिलाएँ घर वालो की उपेक्षाओ का शिकार बनती हैं, तो दफ्तर मे अपने साथियो व उच्चाधिकारियो की उनके द्वारा शारीरिक, मानसिक रूप से शोषित भी होती है। घर की भॉंती ही दप्तर की जिम्मेदारी को निभाना अपने अधिकारी को खुश रखना योग्यता पुर्वक काम करना सहकर्मियो के सुख-दुःख मे भागीदारी करना आदि उसके कर्तव्य हो जाते है। फिर कही भी गलती हो जाए तो हर तरफ से उसे ताने और अवांछित बाते भी सुननी पड़ती है। मामूली छेड़छाड़ से महिलाओ की जिंदगी मे घटित होते है। अनेक समस्याओ से जुझते हुए जहॉं वे साहसी व निडर हो जाती है, वही दुसरी और हताष, निराष व गिरते मनोबल से भी धिर जाती है।

महिलाओ को सशक्तिकृत करने की दिशा मे उनको आर्थिक स्वतंत्रता प्रदान का लगभग आधा हिस्सा होने के कारण किसी भी देश की आर्थिक संरचना को वे प्रभावित

करती है। महिलाओ की क्षमताओ को राष्ट्रीय विकास तब तक अपुर्ण है, जब तक उसमे महिलाओ का विकास, आर्थिक स्थिति और विश्व-अर्थव्यवस्था मे उनका स्थान, महिला के प्रति भेदभाव को और बढावा देती है।

आदर्श जीवन समाज को अधार शिला कहलाती है, जो वास्तविकता के नैतिक व्यवस्था पर आधारित है। जो वास्तविकता के धरातले पर मानवहित की सम्यक व्यवस्था होनी चाहिए। इस आदर्श व्यवस्था को नैतिक संधिवान के कारण जो सामाजिक व्यवस्था बनी उसके अनुसार जीवन जीना चाहिए था।

महिलाओ के संन्दर्भ मे भारतीय समाज मे दो प्रकार के दृष्टिकोण पाए जाते है। एक दृष्टिकोण समाज मे स्त्री को पुरुषो के समकक्ष सम्मान एवं प्रस्थिती दिलाने पक्ष मे है तो दुसरा दृष्टिकोण उन्हे उनके अधिकारो का मानता है अत: उन्हे उनके अधिकारो से वंचित करने के पक्ष मे है।

इसके लिए सबसे जरुरी यह है कि आज का समाज स्त्रियो के महत्व को समझे, उनके योगदान को सराहे और उनके साथ सहानुभूति पुर्व रवैया अपनाये। उनकी समस्याओ मे हिस्सेदारी करे और उनका मानसिक, शारीरिक शोषण करने वालों के खिलाफ सख्त रवैया अपनाए।

======================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. सुन्दरिया राजेन्द्र प्रसाद- महिला एवं घरेलू हिंसा, सागर पब्लिशर्स जयपुर 2013
2. श्री मती युवराज- स्त्री अभ्यासाच्या दिशा, अथर्व पब्लिकेशन्स्, 10 जनवरी 2012
3. दुब मुक्तो- महिला आरक्षण- चुनौतियॉ और सम्भावनाएँ, बी.के. तनेजा क्लासिकल पब्लिशिंग कं. नई दिल्ली, 2013
4. डॉ. भुसारी नीलकंठ, डॉ. पोच्छी वनीता, डॉ. निकम मिना- प्रतिबिंब- महिला समस्यांचा आत्मबोध, अथर्व पब्लिकेशन्स्, 3 जाने 2013
5. ब्राऊन लुईज यौंन- दासियॉ एशिया का सेक्स बाजार, वाणी प्रकाशन, 21-ए दरियागंज, नई दिल्ली 2005
6. लेख- गृहशोभिका अल्पवयीन मुलीचं लैंगिक शोषण- अगस्त - 2015
7. डॉ. महाजन रघुनाथ, डॉ. देसाई संभाजी, पाटील रंगराव- कौटुंबिक हिंसाचार आणि महिला, प्रशांत पब्लिकेशन्स जलगाव 3 जाने 2016

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

ई-शासन का समाज वैज्ञानिक विश्लेषण

* नीरज कुमार राय

==

सारांश- **पिछले एक दशक में सूचना और संचार के माध्यम (राय:2008, 2011, भटनागर:2003) जब आधुनिक एवं तकनीक सम्पन्न हुए हैं ऐसे में शासकीय कार्यप्रणाली में ई-गवर्नेंस का महत्व बढ़ गया है। अब सूचनाओं को प्राप्त करने अथवा उपलब्ध कराने के लिए तकनीक का उपयोग कारगर साबित हो रहा है। दस वर्ष पहले 18 मई 2006 को इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी विभाग, प्रशासनिक सुधार एवं लोक शिकायत विभाग द्वारा राष्ट्रीय ई-शासन योजना शुरू की गई। इसके तहत कुल 27 मिशन मोड परियोजनाओं को रखा गया। हालांकि, आज एक दशक बाद वर्तमान की केंद्र सरकार ने डिजिटल इंडिया को प्राथमिकता देते हुए शासकीय कार्यो को भी ई-गवर्नस के तहत संचालित करने की दिशा में बड़ा काम किया है। सरकार के लगभग सभी मंत्रालय ऑनलाइन सूचनाएं उपलब्ध कराने की दिशा में काफी हद तक आगे बढ़ चुके है।**

==

ई-शासन में पारदर्शिता (विट्टल:2001) स्थापित होने की संभावना इसलिए अत्यधिक होती है क्योंकि यह सर्व-सुलभ है। ई-शासन के तहत पारदर्शी ढ़ग से काम कर रहे केंद्र सरकार के कुछ मंत्रालयों द्वारा किए गए कार्यों को उदाहरण के तौर पर देखा जा सकता है। वर्तमान सरकार ने तमाम वेब-पोर्टल्स एवं एप्स के माध्यम से अपनी योजनाओं एवं कार्यो को सार्वजनिक करने की दिशा में बड़ा प्रयास किया है। केंद्रीय ऊर्जा मंत्रालय द्वारा विद्युतीकरण के कार्यों को पारदर्शी बनाने के लिए एक वेब पोर्टल (http://garv.gov.in) एवं गर्व नाम से एक मोबाइल एप जारी किया गया है। इस वेब-पोर्टल अथवा मोबाइल एप से कोई भी व्यक्ति राज्यवार, जिलेवार, पंचायतवार सहजता से यह विवरण प्राप्त कर सकता है कि किसी क्षेत्र-विशेष विद्युतीकरण का कार्य कितना हुआ है अथवा कितना शेष बचा है। इस वेब पोर्टल के माध्यम से न सिर्फ कार्य का ब्यौरा प्राप्त किया जा सकता है बल्कि कार्य-प्रगति संबंधी समस्त जानकारी भी हासिल की जा सकती है। इस माध्यम में कार्य की प्रगति से जुड़े अधिकारी से संबंधित संपर्क जानकारी भी सार्वजनिक की गई है। सार्वजनिक स्तर पर विद्युतीकरण से जुड़ी योजनाओं के सार्वजनिक होने की वजह से लापरवाही आदि की संभावना बहुत कम रहती है और कार्य से जुड़े पड़ताल की जानकारी हासिल करना बेहद आसान होता है। अगर कहीं से कोई गलत जानकारी सरकार को किसी निचले स्तर के अधिकारी द्वारा दी जाती है तो उस जानकारी को क्रॉस-चेक करना किसी के लिए भी बेहद आसान हो गया है। ई-शासन के तहत विद्युतीकरण से जुड़े कार्यों में

=========================

* सहायक प्रोफेसर (समाजशास्त्र) राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बिन्दकी, फतेहपुर

अलग-अलग स्तर पर अलग वेब-पोर्टल्स उपलब्ध हैं, जहां से संबंधित जानकारियों को सहजता से हासिल किया जा सकता है। (द्विवेदी:2016 मेहता:2016)

राष्ट्रीय ई-शासन के तहत अन्य क्षेत्रों में भी व्यापक स्तर पर काम पारदर्शी ढंग से चल रहा हैं ई-टेंडर एवं ई-आक्शन को एक बेहतरीन उदाहरण माना जा सकता है। नीलामी की प्रक्रिया को पारदर्शी बनाने के लिए केंद्र सरकार द्वारा ई-आक्शन एवं ई-टेंडर को बढ़ावा दिया जा रहा है। नीलामी की प्रक्रिया को पूर्णतया ऑनलाइन एवं पारदर्शी बनाने के लिए eduction.gov.in/eAuction/app वेब पोर्टल कार्य कर रहा है। सरकार का प्रयास लोगों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करना है कि वे ऑफलाइन नीलामी की बजाय ऑनलाइन नीलामी की प्रक्रिया को बढावा दें। ई-आक्शन का सबसे बड़ा फायदा यह है कि इसमें सब कुछ वेबपोर्टल पर पारदर्शी ढंग से सार्वजनिक होता है और आवेदन से लगाए नीलामी की पूरी प्रक्रिया ऑनलाइन होती है। कुछ इसी प्रकार सरकार द्वारा कोयला ब्लाक आवंटन के लिए ई-आक्शन की नीति केंद्र सरकार द्वारा अपनाई गई है, जो काफी पारदर्शी ढंग से काम करती नजर आ रही है। ई-आक्शन की तरह ही ई-टेंडर एवं ई-खरीद की प्रक्रिया को प्राथमिकता के साथ शुरू कर दिया गया है। केंद्रीय सड़क एवं परिवहन मंत्रालय द्वारा ई-टेंडर प्रक्रिया को बेहद कारगार ढंग से लागू किया जा रहा है। भारत सरकार द्वारा सड़क परिवहन एवं राष्ट्रीय राजमार्ग मंत्रालय से संबंधी सभी कार्यो को ई-टेंडर के तहत किया जा रहा है और इसके लिए एक वेबपोर्टल (https://morth.eproc.in/ProductMORTH/publicDash) समर्पित किया गया है। इस वेबपोर्टल पर सभी नए टेंडर्स, चल रहे टेंडर्स एवं पूरा हो चुके टेंडर की जानकारी उपलब्ध है। वर्तमान आंकड़ों के अनुसार सरकार द्वारा प्रतिदिन 18 किमी0 सड़क बनानें का लक्ष्य हासिल किया जा चुका है, जिसे 30 किमी0 प्रतिदिन तक हासिल करनें का लक्ष्य रखा गया है। इसमें कोई शक नही है कि ई-शासन प्रणाली मजबूत होने की वजह से शासकीय कार्यो में तेजी तो आई है, साथ में पारदर्शी ढंग से कार्य भी हो रहा है।

लोक और तंत्र के बीच संवाद का सुगम होना लोकतंत्र को मजबूत बनाने में बड़ा कारक है। प्रधानमंत्री ने डिजिटल इंडिया कार्यक्रम के तहत राइट टू पीएम विकल्प के जरिए जनसंवाद का एक अभूतपूर्व मंच उपलब्ध कराया हैं। भारत जैसे एक विशाल लोकतांत्रिक देश के लिए यह प्रधानमंत्री से संवाद का यह ऑनलाइन विकल्प इस लिहाज से भी कहा जा सकता है क्योंकि भारत के आमजन की अवधारणा में यह कल्पना की भी बात नहीं थी कि वे प्रधानमंत्री को सीधा पत्र लिखेंगे और उस पर त्वरित कार्रवाई होगी। इसके लिए बाकायदे एक वेब माध्यम (http://pmindia.gov.in/en/interact-with-honble-pm/) तैयार किया गया है। इस वेब माध्यम से कोई भी आम अथवा खास व्यक्ति प्रधानमंत्री को समस्या, शिकायत अथवा सुझाव से जुड़े पत्र लिख सकता है। इस पत्र को लिखते ही प्रेषक को एक पंजीकरण नंबर प्रधानमंत्री कार्यालय से ऑनलाइन प्राप्त होता है। उस पंजीकरण नंबर के माध्यम से पत्र लिखने वाले व्यक्ति द्वारा (http://pgportal.gov.in/viewstatus.aspx) पर जाकर अपने शिकायत, सुझाव अथवा समस्या पर हुई कार्रवाई अथवा प्रगति की सटीक एवं आधिकारिक जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इस माध्यम की सबसे अच्छी बात यह है कि यह सीधे प्रधानमंत्री कार्यालय से संबद्ध है एवं वहीं से पत्र के विषय से जुडे विभागों एवं मत्रांलयों को हस्तांतरित की जाती है। पत्र प्रेषक को उक्त

अधिकारी का संपर्क सूत्र भी उपलब्ध कराया जाता है जिसके अधीन उसका मामला हैं कहीं न कहीं प्रधानमंत्री से संवाद का यह विकल्प उस अवधारणा को खंडित करने में मदद कर रहा है, जिसमें आम लोग अक्सर यह मान लेते थे कि उनकी सुनवाई प्रधानमंत्री तक संभव ही नहीं है। इस ऑनलाइन माध्यम की गंभीरता और सफलता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि अनेक बार खुद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पत्रों का जिक्र किया है जो उन्हें इस ऑनलाइन माध्यम से लिखे गए हैं। आधुनिक तकनीक के माध्यम से स्थापित नवोन्मेषी प्रणाली ने कहीं कहीं पारदर्शिता के साथ शासकीय व्यवस्था में जनसवांद की संभावना को मजबूत करने का काम किया है। हालांकि इसके अतिरिक्त नरेंद्र मोदी मोबाइल एप के माध्यम से भी प्रधानमंत्री जनता से संवाद को प्राथमिकता देते हैं। (द्विवेदी:2006)

डिजिटल इंडिया को सफल बनाने एवं निचले स्तर तक सरकार के ई-शासन की पहुंच को सुलभ करने में जो सबसे बड़ी चुनौती सरकार के सामने है वो ग्रामीण अंचल के लोगो को अत्याधुनिक डिजिटल उपकरणों एवं एप आदि के लिहाज से साक्षर बनाना है। (प्रणवदेव:2015) जब तक देश का हर आम व्यक्ति ई-शासन की तकनीकी प्रक्रिया को समझने मे सक्षम नहीं होगा तबतक इन ई-शासन से जुड़े तमाम प्रयासों का पूरा लाभ मिलना संभव नहीं है। इस दिशा में सरकार राष्ट्रीय डिजिटल साक्षरता मिशन के तहत एक परिवार से एक व्यक्ति को प्रशिक्षण देने की योजना पर काम कर रही है। इसके तहत 10 लाख लोगों को डिजिटल साक्षरता प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया है। इस प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे लोगों को मोबाइल एप एवं वेब-पोर्टल्स आदि से जुडी जानकारियां दी जाएंगी एवं उसके उपयोग के लिहाज से उन्हें प्रोत्साहित भी किया जाएगा। सरकार ई-शासन में कृषि क्षेत्र को भी जोड़ने की दिशा में तमाम कार्य कर रही है। लिहाजा ग्रामीण अंचल को ई-शासन से जोड़ने के लिए यह साक्षरता मिशन बेहद अनिवार्य है। कृषि के क्षेत्र को भी ई-शासन के माध्यम से मजबूत करने का कार्य केंद्र सरकार द्वारा तेजी से किया जा रहा है। यह बेशक एक चुनौतीपूर्ण लक्ष्य है सरकार ने (http://mkisan.gov.in/hindi) वेबसाइट के माध्यम से किसानों के हितों से जुड़ी तमाम जानकारियों को बिना इंटरनेट के भी उनके मोबाइल पर उपलब्ध कराने की दिशा में काम किया है। इस पोर्टल का लक्ष्य एसएमएस पोर्टल की अवधारणा पर केंद्रित है जो मोबाइल टेलीफोनी की शक्ति का इस्तेमाल करते हुए किसानों के बीच उचित समय पर, विशिष्ट एवं समग्र जानकारी पहुंचाने की दिशा में काम कर रहा है। गांवों में किसानों के पास अभी इंटरनेट की न तो उपलब्धता है और न ही व्यापक स्तर पर समझ ही बन पाई है, लिहाजा किसानों के हितों से जुड़े इस वेब पोर्टल को मोबाइल संदेश एवं मोबाइल कॉल आधारित बनाया गया है। हालांकि http://agricoop.nic.in एवं http://soilhealth.dac.gov.in/ आदि के माध्यम से कृषि क्षेत्र को भी ई-सेवा से जोड़ने का पूरा प्रयास किया गया है। कहीं न कहीं जब शासकीय तंत्र में जनसंवाद की प्रक्रिया सुगम होगी तो पारदर्शिता में बढ़ोत्तरी होना स्वाभाविक ही है। वर्तमान केंद्र सरकार द्वारा डिजिटल इंडिया के माध्यम से डिजिटाईजेशन की प्रक्रिया को बहुत तेज रफ्तार से विस्तार दिया जा रहा है। इसमें कोई शक नहीं कि जब शासकीय कार्यों में जनसंवाद को बढ़ावा मिलता है तो स्वाभाविक रूप से पारदर्शिता स्थापित होती है एवं शासन सुगमता से संचालित होता है। राष्ट्रीय ई-शासन के माध्यम से पारदर्शिता जनसंवाद

एवं सुगमता तीनों ही लक्ष्यों को आसानी से और कम समय में हासिल किया जा सकता है। प्राथमिक स्तर पर इसके लक्षण खुलकर सामने आ चुके हैं। भविष्य में इसके और सुदृढ़ होने की उम्मीद है। (द्विवेदी:2016)

इस प्रकार अवलोकित होता है कि सूचना प्रोद्यौगिकी और इंटरनेट तकनीक की परिपक्वता से भारत सर्वोच्च महाशक्ति के साथ सामाजिक आधार पर मजबूती के साथ डिजिटलीकरण की प्रक्रिया को आगें बढा जा रहा है। सकरारी शासन व प्रशासन के तीव्र रूप से मोबाइल और इंटरनेट प्रोद्यौगिकी से लैस होने के साथ समाज व सरकार का एक बेहतर अन्तःक्रियात्मक संबंध प्रदर्शित हो रहा है। (राय:2011,2008) हांलाकि बहुत सी सरकारी वेबसाइटें त्वरित भी नहीं है तथा सूचनाओं की प्रवाहशीलता भी कुशल नहीं है। लेकिन इसका निस्तारण प्रक्रिया अगर सुधर जाय तो यह जनसमाज हेतु महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। ई-शासन की उच्चतर सुविधाओं से न केवल समाज व उधोग तथा व्यवसायिक क्रियाओं को लाभ होता है बल्कि इससे विश्व का सामाजिक नजरिया भी हम सबके लिये सकारात्मक होता हैं। इससे सरकार के कार्यो में जहा पारदर्शिता बढ़ती है, भष्ट्राचार कम होता है, आय का जनसमूह सही उपयोग करता है तथा भारतीय ग्रामीण समूह आधारभूत स्तर पर लाभान्ववित होता है। ई-शासन और आनलाइन सामाजिक सहभागिता की मजबूती में सूचना प्रोद्यौगिकी और इसके नवीन उपकरणों की गहन भूमिका है। भारतीय ई-शासन प्रणाली और सामाजिक संरचना का नवीन रूप सूचना प्रोद्यौगिकी के बढ़ते प्रयोग व सुधार का ही परिणाम है और यह प्रक्रिया भविष्य में अधिक सशक्त होगी।

======================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. राय, नीरज कुमार (2011) : सूचना प्रोद्यौगिकी और सामाजिक संरचना ज्ञान पब्लिलिशंग हाऊस, दरियागंज, नई दिल्ली।
2. भटनागर, एस (2003) : डी यूचर आफ ई-गर्वनमेंट, आई0टी0पी0 एरिया, अगस्त 2003, पेज 40-41।
3. विह्लल और अन्य (2001) : इनफारमेशन टेक्नोलाजी, मानस पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
4. मेहता रंजीत (2016) : अधिकतम शासन : ई-शासन के माध्यम् से जनपहुँच, जून 2016 पेज 17-20।
5. द्विवेदी शिवानंद (2016) : ई-शासन : पारदर्शिता, सुगमता और जनसंवाद, जून 2016 पेज 29-32।
6. प्रणवदेव (2015) : ई-गवर्नेस : ग्रामीण समाज के लिये वरदान जनवरी 2015 पेज 22-25।
7. राय, नीरज कुमार (2008) : भारत में सूचना प्रोद्यौगिकी का सामाजिक प्रभाव, समाज वैज्ञानिकी अंकः 12 मार्च 2008।

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

दक्षिण एशिया में बाजपेयी शासन काल की विदेश नीति के समक्ष प्रमुख चुनौतियॉ एवं उनके समाधान के लिए उठाये गये कदम

* विजय सेन यादव
**अमरजीत सिंह

==

सारांश- दक्षिण एशिया के समस्त देश भारत के समीपवर्ती देश हैं। भारत की राजनैतिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का प्रभाव परोक्ष अपरोक्ष रूप से भारत की सार्वभौमिकता एवं संपन्नता पर सदैव पड़ता रहता है जिसके फलस्वरूप पड़ोसी देशों की राजनैतिक स्थिरता अस्थिरता भारत के प्रति उनके मैत्री दृष्टिकोण आदि का प्रभाव समग्र राष्ट्रीय विकास एवं राष्ट्रीय शाश्वतता के लिये अपरिहार्य होते हैं। पाकिस्तान, बंगलादेश, श्रीलंका जो भारतीय सांस्कृतिक के साझेदार भी हैं परन्तु कतिपय राजनीतिक महात्वाकांक्षाओं को पूरा करने एवं अन्य अतिरिक्त कारणों से भारत के संबंध इन देशों से सदैव अच्छे नहीं हो पाने के कारण राष्ट्रीय समग्र विकास को किसी न किसी मोर्चे पर प्रभावित करते रहते हैं। अटल विहारी वाजपेयी जैसे शिखर पुरुष के प्रगतिशील नेतृत्व क्षमता ने इन पड़ोसी देशों से अच्छे संबंध स्थापित कर विकास के नये आयामों के सृजन में महती भूमिका का सूत्रपात किए। प्रस्तुत शोध में इन्हीं आयामों की शोधार्थी द्वारा विवेचना की गई है।

==

प्रस्तावना- उत्तर प्रदेश में आगरा जनपद के प्राचीन स्थान बटेश्वर के मूल निवासी पण्डित कृष्ण बिहारी वाजपेयी मध्य प्रदेश की ग्वालियर रियासत में अध्यापक थे। वहीं शिन्दे की छावनी में 25 दिसम्बर, 1924 को ब्रम्हमुहूर्त में उनकी सहधर्मिणी कृष्णा वाजपेयी की कोख से अटल जी का जन्म हुआ। पिता कृष्ण विहारी वाजपेयी ग्वालियर में अध्यापन कार्य तो करते ही थे इसके अतिरिक्त वे हिन्दी व ब्रज भाषा में सिद्धहस्त कवि भी थे। पुत्र में काव्य के गुण वंशानुगत परिपाटी से प्राप्त हुए। महात्मा रामचन्द्र वीर द्वारा रचित अमर कृषि 'विजय पताका' पढकर अटल जी के जीवन की दिशा ही बदल गयी। अटल जी की बी.ए. की शिक्षा ग्वालियर के विक्टोरिया कालेज (वर्तमान में लक्ष्मीबाई कालेज) में हुई। छात्र जीवन से ही वे राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के स्वयं सेवक बने और तभी से राष्ट्रीय स्तर की वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में भाग लेते रहे। कानपुर उत्तर प्रदेश के डी.ए.बी. कालेज से राजनीतिशास्त्र में एम.ए. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। उसके बाद उन्होंने अपने पिता जी के साथ साथ कानपुर में ही एल.एल.बी. की पढ़ाई भी प्रारम्भ की लेकिन उसे बीच में ही विराम देकर पूरी निष्ठा से संघ के कार्य में जुट गये। डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी और पण्डित दीनदयाल उपाध्याय के निर्देशन में राजनीति का पाठ तो पढ़ा ही साथ साथ

========================

* शोध छात्र, महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट-सतना (म0प्र0)
** एसोसिएट प्रोफेसर, महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट-सतना (म0प्र0)

पांचजन्य, राष्ट्रधर्म, दैनिक स्वदेश और वीर अर्जुन जैसे पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादन का कार्य भी कुशलता पूर्वक करते रहे। सर्वतोमुखी विकास के लिये किये गये योगदान तथा असाधारण कार्यों के लिए दिसम्बर 2014 में उन्हें भारत रत्न से सम्मानित किया गया।

आरम्भिक जीवन- वह भारतीय जनसंघ की स्थापना करने वालों में से एक हैं और सन् 1968 से 1973 तक वह उसके राष्ट्रीय अध्यक्ष भी रह चुके हैं। सन् 1955 में उन्होंने लखनऊ से पहली बार लोकसभा चुनाव लड़ा, परन्तु सफलता नहीं मिली। लेकिन उन्होंने हिम्मत नहीं हारी और सन् 1957 में बलरामपुर (जिला गोण्डा, उत्तर प्रदेश) से जनसंघ के प्रत्याशी के रूप में विजयी होकर लोकसभा में पहुंचे। सन् 1957 से 1977 तक जनता पार्टी की स्थापना तक वे बीस वर्ष तक लगातार जनसंघ के संसदीय दल के नेता रहे। मोरारजी देसाई की सरकार में सन् 1977 से 1979 तक विदेश मंत्री रहे और विदेशों में भारत की छवि बनायी। 1980 में जनता पार्टी से असन्तुष्ट होकर उन्होंने जनता पार्टी छोड़ दी और भारतीय जनता पार्टी की स्थापना में मदद की।[6] अप्रैल 1980 में बनी भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष पद का दायित्व भी वाजपेयी को सौंपा गया। वे दो बार राज्यसभा के लिये भी निर्वाचित हुए। लोकतन्त्र के सजग प्रहरी अटल बिहारी वाजपेयी मार्च 1997 से जुलाई 1979 तक भारत के विदेश मंत्री रहे। जिसके बाद मई 1996 में प्रथम बार देश की बागडोर संभाली और पुनः अप्रैल, 1997 में देश के प्रधानमंत्री बने। उनके नेतृत्व में बनी 13 दलों की गठबन्धन सरकार ने पॉच वर्षो में देश के अन्दर एवं बाहर प्रगति के अनेक आयाम छुए।

सन् 2004 में कार्यकाल पूरा होने से पहले भयंकर गर्मी में सम्पन्न कराये गये लोकसभा चुनावों में वाजपेयी के नेतृत्व वाले राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबन्धन (एन.डी.ए.) ने भारत उदय (इण्डिया शाइनिंग) के नारे के साथ चुनाव लड़ा। दुर्भाग्य से इस चुनाव में किसी भी पार्टी को पूर्ण बहुमत नहीं मिला। ऐसी स्थिति में वामपंथी दलों के समर्थन से कांग्रेस के नेतृत्व में केन्द्र में सरकार बनी और वाजपेयी के नेतृत्व वाले राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबन्धन को विपक्ष में बैठने पर मजबूर होना पड़ा। सम्प्रति अब वे राजनीति से सन्यास ले चुके हैं और नई दिल्ली में 6-ए कृष्णामेनन मार्ग स्थित सरकारी आवास में रहते हैं।

आज के सन्दर्भो में दक्षिण एशियाई देशों के साथ भारत के विदेश नीति के ऑकलन एवं तदनुसार आवश्यक ठोस पहल के माध्यम से राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा करना एक अति आवश्यक आयाम है। स्वतंत्रता के पश्चात अद्यतन पूर्ववर्ती सरकारों द्वारा विदेश नीतियों के माध्यम से राष्ट्रीय सुरक्षा सम्पन्नता हेतु ठोस कदम उठाये गये। परन्तु दक्षिण एशियाई देश जो भार के भौगोलिक सीमाओं के आसपास हैं के साथ कदाचित ऐसे प्रयास नहीं किये गये जिससे कि राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा और व्यापार जैसे प्रमुख नीतिगत मसलों पर स्थाई समाधान प्राप्त किया जा सके। श्री अटल बिहारी बाजपेयी बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति ही नहीं थे बल्कि स्वयं में एक संस्थान थे जिनकी दूरदृष्टिता भारत को सम्पन्न राष्ट्र बनाने हेतु उनके द्वारा उठाये गये कदम वर्तमान परिदृश्य में राष्ट्रीय सार्वभौमिकता, अक्षुण्णता एवं सम्पन्नता के लिए समीचीन हैं। जैसा कि वर्तमान परिदृश्य में चीन द्वारा भारत को निरन्तर प्रतिद्वंदिता का सामना करना पड़ रहा है। इस हेतु वर्तमान सरकार द्वारा श्री वाजपेयी जी के शासनकाल में दक्षिण एशियाई देशों को दृष्टिगत रखते हुये मैत्री सापेक्ष सिद्धान्तों को अंगीकृत करना आवश्यक है, जिससे कि दक्षिण एशियाई देशों में

भारत की साख एवं विश्वसनीयता के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, सूचना एवं प्रौद्योगिकी के आपसी समझौते के माध्यम से राष्ट्र को पूर्ण विकसित बनाने में सफलता प्राप्त हो सके। साथ ही प्रतिस्पर्धी देशों को भारत की नेतृत्व क्षमता से साक्षात करवाया भी जा सके।

शोध के उद्देश्य- दक्षिण एशिया में बाजपेयी शासन काल की विदेश नीति के समक्ष प्रमुख चुनौतियाँ एवं उनके समाधान के लिए उठाये गये कदम।

परिणाम- दक्षिण एशिया के सभी देशों को मानव जाति या विजातीय सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इसका सीधा कारण है कि इस क्षेत्र में विभिन्न जातियां, धर्म, अनेक भाषायें तथा भौगोलिक पहचान की विविधता अनेकों रूपों एवं स्वरूपों में व्याप्त है। इस प्रकार जातिगत, धार्मिक एवं एक समूह द्वारा अपने वंश, भाषा एवं क्षेत्र को दूसरों से श्रेष्ठतर मानना एक खास प्रकार के मतभेद एवं घृणा को जन्म देता है जो तनाव में परिवर्तित होते-होते कभी भी खूनी संघर्ष में तब्दील होकर नरसंहार पर उघत हो जाता है। आज जातीय संघर्ष दिन-प्रतिदिन बढ़ते जा रहे हैं चाहे भारत में कश्मीर एवं पंजाब में पाकिस्तानियों का प्रश्न हो या बाबरी मस्जिद विवाद, श्रीलंका में तमिलों, पाकिस्तान में सिंधी पंजाबी या मुहाजिरों की बात हो, नेपाल में भूटिया या भूटान में नेपालिया एवं हिन्दुस्तानियों का प्रश्न हो सभी इससे ग्रसित हैं। अतः संक्षिप्त में यहाँ इस प्रकार के वर्गीय, जातीय या धार्मिक समूह रहते हैं, विशेष रूप से सीमावर्ती क्षेत्रों में वहां निम्न प्रकार की समस्यायें एवं तनाव उत्पन्न होते हैं जो अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को प्रभावित करने में सहायक हैं।

* जब कोई राष्ट्र जातिगत संघर्ष में उलझ जाता है और क्रमशः राजनीतिक संकट पैदा कर लेता है तो आमतौर पर उनका आरोप दूसरे देशों पर लगा देता है। यह एक प्रकार की चाल-बाजी है, जैसे श्रीलंका तमिल समस्या के लिए भारत को उत्तरदायी मानता है।
* एक राज्य के शासक द्वारा कभी-कभी अपने देशवासियों की राजनीतिक या सांस्कृतिक दृष्टि से अपना प्रभाव स्थापित करने के लिए दूसरे राज्य में जातीय समस्या को उकसाते हैं, नेपालियों को समर्थन देकर सिक्किम का विलय भारत में होना आदि।
* एक राज्य द्वारा अपने विरोधी पड़ोसी राज्य के पृथकतावादी आन्दोलन के नैतिक या सामग्री सम्बन्धी सहयोग एवं सहायता देना, जिससे पड़ोसी देश कमजोर होकर प्रतिद्वन्दी की स्थिति में न रहे। जैसे-भारत द्वारा पाकिस्तान के विभाजन में बांग्लादेश की सहायता करना या पाकिस्तान द्वारा काश्मीर एवं पंजाब में पृथकतावादियों (उग्रवादियों) को नैतिक एवं सैन्य सामग्री उपलब्ध कराकर उकसाना। उपरोक्त कारण दक्षिण एशिया में पूर्णतः पाये जाते हैं। "यही कारण है कि जाति आधारित राजनीतिक समस्याओं का स्वरूप इस क्षेत्र में बड़ा ही जटिल है जिनकी वजह से अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध प्रभावित हुए बिना नहीं रहते हैं।" इस क्षेत्र के समस्त देशों की सीमाएं भारत के साथ जुड़ती हैं जिसके कारण जातीय आधारित राजनीतिक समस्याएं द्विपक्षीय बहुपक्षीय के साथ-साथ बहु आयामी हो गयी है। मुहाजिर पाकिस्तान में रह रहे हैं, जिनसे असंतोष बढ़ रहा है। यही स्थिति नेपाल, भूटान के संदर्भ में भी है। वस्तुतः जातीय संघर्ष में कई तत्व प्रभावी भूमिका निभाते हैं जिनके कारण समस्याएं जटिलतम हो जाती हैं। कुछ प्रमुख तत्व निम्न प्रकार हैं-

(अ) **भाषाई तत्व-** पाकिस्तान के सिंध प्रान्त के सिंधी भारत के बम्बई में रह रहे

सिंधियों के साथ उनका जातीय आधार पर काफी तनाव है। पंजाब में रह रहे सभी मुसलमान पाकिस्तान का प्रमुखतम आधार स्तंभ हैं। भारतीय पंजाब में कुल जनसंख्या का 52% सिक्ख तथा 48% हिन्दू हैं, लेकिन उनकी पंजाबी साझा भाषा है। इसलिए उनमें अपनत्व की भावना आपस में पाई जाती है तथा इस आधार पर उनमें आपसी सम्बन्ध विकसित होते हैं। भाषाई आधार पर स्थानीय भाषा पंजाबी बोलने की क्षमता के कारण पंजाब के सिक्ख पाक अधिकृत कश्मीर में घुसपैंठ कर खालिस्तान आन्दोलन चला रहे हैं। अधिकांश उग्रवादियों ने पाक अधिकृत कश्मीर में शरण भी ले रखी है। सन् 1971 में भारतीय सेना भारतीय-बंगाली भाषाविदों के कारण पाकिस्तान के विरूद्ध भारत ने पूर्वी पाकिस्तान (बांग्लादेश) का साथ दिया था। भाषा के आधार पर बृहत्तर तमिल ईलम की बात की जा सकती है। अतः भाषाई भूमिका जातीय राजनीतिक समस्या के परिप्रेक्ष्य में अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

(ब) बहुसंख्यात्मक तत्व- दक्षिण एशिया के सभी देशो के साथ भारत भौगोलिक एवं सांस्कृतिक रूपों से जुड़ा हुआ है। भारत एवं पाकिस्तान के हिन्दू-मुसलमान आन्दोलन को खत्म हुए काफी समय हो गया लेकिन इनके जख्म अभी भी भरे नहीं है। किसी भी प्रकार का जातीय आधार पर राजनीतिक असंतोष आदि पाकिस्तान में होता है तो भारत के कान खड़े होते हैं तथा वह अपनी चिंता जताता है, जबकि अयोध्या जन्मभूमि-बाबरी मस्जिद पाकिस्तान का ध्यान आकर्षित करता है तथा सहानुभूति अर्जित करता है। भारत की नेपाल के साथ दो समस्याएं हैं - तराई प्रदेश दक्षिण (नेपाल) में हिन्दी बोंलने वाले लोगों का आन्दोलन बिहार तथा उत्तर प्रदेश में अपना प्रभाव दिखाते हैं। भूटान के (भूटिया तथा लेपचाज) जातीय विभाजन नेपालियों के साथ भिन्नता रखते तथा अनावश्यक तनाव पैदा कर रहे हैं। ऐसा भूटान का मानना है कि मारवाड़ी अल्पसंख्यकों को शंका की दृष्टि से देखा जाता है।

"भारत में जातीय आधार के राजनीतिक मतभेद बांग्लादेश के साथ 1950-1960 के दशक में अपने चरमोत्कर्ष पर थे।" जो बांग्लादेश के अस्तित्व में आने के बाद भी जारी रहे। बंग्लादेशियों से लाखों लोग भारत आ गये जबकि भारत से बंगालियों को वापस भेजने की मांग भी की जा रही है। यद्यपि तनाव को कम करने सम्बन्धी एक करार पर हस्ताक्षर भी किये जा चुके हैं तब भी स्थिति ठीक नहीं है।

संक्षेप में सभी देश पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, श्रीलंका तथा बांग्लादेश इस प्रकार की विजातीय समस्या से ग्रसित हैं जिनसे राजनीतिक उलझने बढ़ती हैं तथा वे नये संदर्भो में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में कटुता पैदा करती है।

(स) घरेलू तत्व- विश्व के अन्य देशों की तरह दक्षिण एशिया के देशों में भी घरेलू जातीय राजनीतिक संकट एवं मुसीबतें अक्सर पैदा होती हैं। जो अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में तनाव पैदा करती हैं। भारत-विभाजन कीशल्यक्रिया जो 1947 में जातीय आधार पर की गयी थी जिसके परिणाम स्वरूप पाकिस्तान का जन्म हुआ था, तथा आतंकवादी गतिविधियों को पाक-प्रोत्साहन के रूप में आज पंजाब तथा कश्मीर में भुगत रहे हैं। उसी प्रकार पाकिस्तान को पंजाबी, बंगाली, मुसलमानों की सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक असमानता के कारण अपने पूर्वी भाग (पूर्वी पाकिस्तान) से हाथ धोना पड़ा। "श्रीलंका में तमिल तथा सिंघली संघर्ष में श्री राजीव गांधी के जीवन को खोना पड़ा। वस्तुतः इस प्रकार

के धरेलू झगड़ों में भाषा, संस्कृति तथा धर्म एवं क्षेत्रीय तत्वों का ताना-बाना इस प्रकार बुन जाये कि पृथकनीय हो जाते जिनका आगे चलकर समूह ध्रुवीकरण हो जाता है।" भारत में विभिन्न वर्ग क्षेत्रीय आधार पर पृथक-पृथक प्रभुसत्ता स्थापित किये हुए हैं। इनमें भी जाति, उपजाति, वर्ग-उपवर्ग तथा क्षेत्रीय एवं उपक्षेत्रीय समूह हैं। इस प्रकार की पृथकता खूनी संघर्ष को जन्म देती है जिसके लिए प्रत्येक देश अपनी स्थिति अनियंत्रित होने पर अपने पड़ोसी पर आरोप प्रत्यारोप लगाता है, जिनसे तनाव पैदा होते हैं।

क्षेत्रीय सम्बन्धों पर प्रभाव

सामाजिक चुनौतियाँ- जाति, वर्ग, धर्म, भाषा तथा क्षेत्रीय आधार पर बहुआयामी वर्ग-समूह दक्षिण एशिया के प्रायः समस्त देशों में विद्यमान है तथा अपनी प्रकृति एवं प्रवृत्ति के अनुसार क्षेत्रीय सम्बन्धों पर प्रतिकूल एवं निर्णायक असर डालते हैं। "दक्षिण एशिया के समस्त देशों की घरेलू राजनीति की यह एक विशिष्टता है। यह विशिष्टता कभी-कभी संबद्ध देश की राज्य संरचना के लिए एक ओर घातक बनती तो दूसरी ओर निश्चय ही राष्ट्रीय एकीकरण में ऑक्सीजन का काम करती होती प्रतीत होती है।" बांग्लादेश तथा मालद्वीव को तुलनात्मक दृष्टि से यदि विश्लेषण करें तो पाकिस्तान, नेपाल, श्रीलंका, भारत एवं भूटान सभी इस समस्या से पीड़ित हैं। पाकिस्तान के पूर्वी भाग के अलग हो जाने से यहां अब अल्पसंख्यक वर्ग को समान अधिकार, अवसर या अन्य समान साधन नैतिक एवं कानूनी रूप से उपलब्ध हैं। इस विघटन के लिए भारत को पाकिस्तान आज तक दोषी मानता है। भारत की एकता के लिए सांप्रदायिक कट्टरता तथा विभाजन से खतरा है, जिसमें वह पाक सहित चीन का हाथ होने के संदेह व्यक्त करता है। भारत "पंजाब, कश्मीर, आसाम में विदेशी हस्ताक्षेप एवं सहयोग से पोषित है। हांलाकि इन्हें जनहित एवं राष्ट्रीय हित में सार्वजनिक नहीं किया जा सकता है।" फलस्वरूप भारत के पड़ोसियों के साथ जो सम्बन्धों की प्रगाढ़ता होनी चाहिए, उनका अभाव दृष्टिगोचर होता है। यही कारण है कि सीमावर्ती इलाकों में हमेशा तोड़-फोड़ तथा बन्दूकें आग उगलती रहती हैं।

आर्थिक चुनौतियाँ- अन्य विकासशील देशों की तरह दक्षिण एशियाई देशों में घरेलू झगड़ों एवं समस्याओं का कारण उपयुक्त आर्थिक विकास का अभाव है जिसके कारण आगे चलकर सामाजिक न्याय से नागरिक वंचित हो जाते हैं, परिणाम पारस्परिक मतभेदों का जन्म न केवल घरेलू विकास प्रक्रिया को अवरूद्ध करते वरन् पास-पड़ोस के देशों के सम्बन्धों पर गहरा असर डालते हैं। अतः यदि आर्थिक विकास दशक में सामान्यतः विकास दर काफी कम थी विशेष रूप से पाकिस्तान तथा श्रीलंका की यह विकास दर की स्थिति 1970 में काफी कम हो गयी। वैसे तो सारे विकासशील राष्ट्रों में असमानता की खाई चौड़ी होती जा रही है, विशेषकर दक्षिण एशिया के सभी देशों में असमानता और ज्यादा व्याप्त है। आय की वृद्धि उत्पादन के विभिन्न साधनों पर निर्भर करती है जिनका समान वितरण आय वृद्धि तथा आर्थिक समानता में बाधक है। उदाहणार्थ भूमि, उत्पादन का सबसे महत्वपूर्ण साधन है जिसका वितरण नितांत असंतुलित है। जहां तक गरीबी की रेखा का प्रश्न है भारत में अभी भी 26% लोग गरीबी की रेखा से नीचे का जीवन यापन कर रहे हैं। पाक में यह दर भारत तथा बांग्लादेश से भी अधिक है।

गरीबी के कारण एक ओर जहां कुपोषण गंदगी तथा औसत उम्र कम हो जाती है

वहीं दूसरी ओर बेरोजगारी को जन्म देती है जिससे आर्थिक विकास में अंतर आता है। "भारत में सन् 1977-78 के दौरान शिक्षा प्रसार के बावजूद 46.33% लोग गरीबी रेखा के नीचे थे जिनकी 1981 में औसत उम्र 53 वर्ष थी। इसका सीधा आशय है कि जो वर्तमान सदी में पैदा हुए तथा आज जिंदा हैं वे सभी और गरीब हो गये है।" भारत विभाजन से पूर्व मुसलमान भाई भारत में हिन्दुओं की अपेक्षा काफी गरीब थे। 1947 के बाद चूँकि बहुत ज्यादा मुस्लिम समुदाय का स्थानान्तरण न होने से वे गरीब ही बने रहे। पाकिस्तान बनने से उनकी माली हालत में कोई सुधार नहीं हुआ हॉ प्रबुद्ध वर्ग को जरूर विभाजन का फायदा हुआ। इसलिए पाकिस्तान में भी मुसलमान और गरीब होते गये। ऐसे लगता है कि पाकिस्तान में उद्योगपतियों, नौकरशाहों तथा जमीदारों की कोई 'त्रिधुरी' के अधीन उनका उत्तरोत्तर शोषण हो रहा है। समूचे उद्योग जगत का मानों निजी व्यापारीकरण कर दिया गया हो, जिसमें लाभ एक मात्र उनका लक्ष्य रहता है। यह इसलिए प्रमाणित होता है कि पाकिस्तान में स्वातंत्रयोत्तर काल में लगभग 43 बड़े उद्योगों, प्रतिष्ठानों को निजी कंपनियों में परिवर्तित कर दिये गया गया तथा शेष 19 को निजी प्रबंध के अधीन कर दिया गया।

पाकिस्तान अपनी पूंजीगत संसाधनों की कमी को वह विदेशी सहायता अनुदान से आपूर्ति करता तथा सहायता के साथ उसकी आर्थिक नीति भी पूंजीपतियों एवं उद्योगपतियों के अनुकूल हो जाती है जिसका सीधा असर विदेशी नीति पर पड़ता है। पाकिस्तान आज विदेशी सहायता (अमेरिका) पर निर्भर है तथा पाक की आर्थिक स्थिति पूर्णतः विनाश के कगार पर पहुंच गयी है। श्रीलंका की अर्थव्यवस्था का भी निरन्तर ह्रास होता जा रहा है। स्वतंत्रता के पहले श्रीलंका व्यापारोन्मुखी था तथा मध्यमवर्गीय व्यापरियों को प्रोत्साहन देता था। सिंघलियों की अपेक्षा तमिलों को अंग्रेजो द्वारा काफी प्रोत्साहन दिया जाता था जिससे उनकी आर्थिक स्थिति काफी अच्छी हो गयी, लेकिन 1948 के बाद इस नीति में एकदम बदलाव आ गया। अब बहुसंख्यक वर्ग जिसका राजनीतिक वर्चस्व था को लाभ देने की गरज से संसाधनों का दुरूपयोग होने लगा तथा अल्पसंख्यक (तमिल) वर्ग की अनदेखी की जाने लगी जिससे आर्थिक जटिलताओं ने जन्म लिया। 1977 के बाद अर्थव्यवस्था चरमरा सी गयी। अतः अब 'स्वतंत्र बाजार विकास निर्यात' पर जोर दिया जाने लगा। व्यापार वृद्धि, विदेशी पूंजी निवेश, प्रोत्साहन एवं विदेशी सहायता की निर्भरता पर जोर दिया गया। मुद्रा अवमूल्यन, उदार आयात, मूल्य नियंत्रण आदि कदम भी उठाये गये। आर्थिक पतन के कारण कई प्रकार की समस्याओं ने सिर उठाना प्रारम्भ कर दिया जिसके कारण दक्षिण में तनाव ने जन्म लिया, क्योंकि उनका सामाजिक एवं आर्थिक सम्बन्धों पर असर पड़ता है।

"संपूर्ण क्षेत्र गरीबी, सतत सामग्री का अभाव, प्रतिकूल व्यापारिक परिस्थितियां, नैसर्गिक संसाधनों का उचित दोहन न हो पाना तथा कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्रों में उत्पादन की कमी आदि के कारण बहुराष्ट्रीय नियमों की संदिग्ध हरकतें एवं अन्तर्क्षेत्रीय व्यापार में निरन्तर कमी आदि आर्थिक जटिलताओं में वृद्धि ही करती प्रतीत होती है। इसके अलावा चाय, जूट, कपास, चावल आदि प्रमुख फसलों हेतु साझा बाजार का न होना तथा क्षेत्रीय आधार पर व्यापारिक क्रय-विक्रय में परस्पर सहभागिता न होना भी आर्थिक समस्याएं खड़ी करना है।

"इस संदर्भ में एक और समस्या खास उत्पादन क्षेत्रों में दक्षिण एशियाई देशों के मध्य प्रतिद्वन्दिता का होना, जैस-चाय (श्रीलंका-भारत) जूट (बांग्लादेश-भारत) सूती कपड़े

(भारत-पाकिस्तान) कीमती पत्थर (भारत-श्रीलंका) और चावल (भारत-पाकिस्तान) नारियल (श्रीलंका-मालद्वीव) इससे आर्थिक हितों की सुरक्षा सम्बन्धी द्वेष बढ़ता है तथा एक देश दूसरे के प्रति पूर्वाग्रह से ओत-प्रोत हो जाता है तथा सम्बन्धित देश की जिन्सों में आयाती सीमाएं लागू कर देता है।" भूटान, नेपाल एवं मालद्वीव कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्रों में उत्पादकता के अभाव के कारण आर्थिक स्थिति अत्यन्त कमजोर है।

तैयार माल तथा कच्ची सामग्री दक्षिण एशियाई देशों में उतनी उच्च कोटि की नहीं कि वह उपभोक्ताओं को विश्व बाजार में अपनी ओर आकर्षित कर सके क्योंकि तकनीकी आधारों की इन देशों में कमी है। "बहुराष्ट्रीय निगमों ने इन समस्याओं को और बढ़ा दिया क्योंकि उनकी एक नियोजित निश्चित नीति है कि वे विकासशील देशों के उत्पादन को हमेशा हतोत्साहित करते हैं जिससे उन्हें आर्थिक क्षेत्र में एकाधिकार की समस्या न हो।" इस प्रकार के उस क्षेत्र के देशों की कीमत पर एक बाजार विकसित करते हैं।

"उक्त आर्थिक विवशता एवं पिछड़ेपन का प्रभाव अन्तराष्ट्रीय सम्बन्धों पर पड़ता है। इस क्षेत्र के समस्त देश, विदेशी ऋणभार, तकनीकी विषेषज्ञता, साझा-बाजार, आयात-निर्यात में असंतुलन के कारण पश्चिमोन्मुखी आर्थिक नीति अपनाने को विवश हैं तथा इस दृष्टि से इस क्षेत्र में हम क्षेत्र से बाहर की शक्तियों को हस्ताक्षेप का अवसर प्रदान करते हैं तथा अपने हितों को दृष्टिगत रखते हुए प्रायद्वपीय कर्ता-धर्ता तथा प्रबंधक दोनो बन जाते हैं तथा आगे चलकर राजनीतिक हस्ताक्षेप करने की स्थिति में हो जाते हैं।"

मैत्री चुनौतियाँ एवं समाधान-

दक्षिण एशिया के देशों पर इन समस्याओं ने बहुआयामी प्रभाव डाला है जिसके कारण क्षेत्रीय देशों में परस्पर तनाव, द्वेषपूर्ण प्रतिस्पर्धा द्विपक्षीय मतभेदों तथा संकुचित स्वार्थो के प्रति प्रतिबद्धता आदि को जन्म दिया है तथा इन सभी निर्णायक तत्वों का अर्न्राज्यीय सम्बन्धों पर राजनीतिक, आर्थिक तथा विजातीय प्रभाव डाला है। अतः इस दृष्टि से हमें समस्याओं की जड़ में जाकर किसी समाधान की तरफ अग्रसर होना चाहिए तथा ऐसे तमाम उपाय या समाधान हो सकते हैं जिनके कारण अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में पुनः तेजी लाकर उन्हें बहाल किया जा सकता है। इसके लिए संभवतः सामूहिक प्रयास सहमति के आधार पर किये जा सकते हैं।

दक्षिण एशिया की समस्याओं के समाधान हेतु सबसे पहले परस्पर विश्वास का वातावरण बनाया जाना चाहिए। जब तक प्रत्येक का प्रत्येक को आपसी सौहार्द एवं विश्वास अर्जित नहीं हो जाता तथा उसका किसी भी तरह लोगों के दिल जीतने के लिए व्यवहारिक प्रदर्शन नहीं किया जाता, किसी चमत्कार की आशा नहीं की जा सकती। इस दृष्टि से दक्षिण एशिया में सार्क का जन्म 1980 के दशक में सबसे अधिक सकारात्मक कदम है। भारत की अपने पड़ोसी देशों के साथ कितनी ही राजनीतिक, विजातीय, आर्थिक समस्याएं हों तथा वे कितनी भी गंभीर क्यों न हों, यह बात बड़ी स्पष्ट है कि भारत के साथ इन समस्याओं के समाधान को लेकर कोई भी इस क्षेत्र का देश युद्ध नहीं करेगा। क्यों भारत का सैनिक दृष्टि से विश्व में चौथा स्थान है। छोट-छोटे पड़ोसी देश शस्त्र दौड़ में शामिल हो या सैनिक सहयोग की अपेक्षा किसी बाहरी शक्ति से करें विशेष रूप से अमरीका तथा ब्रिटेन से भारत की अनदेखी करके यदि शस्त्र आपूर्ति में इस क्षेत्र के देश सैनिक मदद लेते तो यह अमैत्री कार्य माना जायेगा। ऐसा भारत एकाधिकार स्पष्ट भी कर

चुका है।" यदि भारत के चीन सहित अमेरिका के साथ सम्बन्धों के विकास का सिलसिला स्थायी रूप से विकसित होता है तो भारत के सम्बन्ध दक्षिण एशिया के सभी देशों के साथ भी उत्तरोत्तर विकसित होंगे, यहां तक कि पाकिस्तान से भी सम्बन्ध सामान्य होने में मदद मिलेगी। इस परिप्रेक्ष्य में भारत के सकारात्मक रूख को उसके पड़ोसी देशों द्वारा समर्थन किया जाना चाहिए।

भारत एवं पाकिस्तान- ''भारत और पाकिस्तान 15 अगस्त 1947 को दो राष्ट्रों के रूप में अलग-अलग अस्तित्व में आए। उस समय आशा की गयी थी कि देश के विभाजन के बाद शान्ति स्थापित हो जायेगी, परंतु पाकिस्तान की विदेश नीति का आधार ही भारत के प्रति घृणा बन गया। इसका एकमात्र कारण यह था कि पाकिस्तान का तो जन्म ही साम्प्रदायिक घृणा के आधार पर हुआ था। दूसरे कुछ ऐसी समस्याएँ भारत एवं पाकिस्तान के बीच उत्पन्न हो गयी, जिन्होंने इन दोनो देशो के बीच मैत्री की आशा को धूमिल बना दिया, जैसे दोनो के मध्य कश्मीर विवाद, हैदराबाद विवाद जूनागढ़ विवाद, ऋण की अदायगी का प्रश्न, शरणार्थियों की समस्या, नदी पानी विवाद आदि।'' विगत 60 वर्षो में भारत पाकिस्तान सम्बन्धों में अनेक उतार-चढ़ाव दृष्टिगत होते रहे हैं। ये सम्बन्ध इतने तनाव पूर्ण भी रहे जिसकी परिणति चार युद्धों में हो चुकी है। दोनों देशों के सम्बन्धों में सबसे प्रमुख मुद्दा कश्मीर समस्या है जो एक नासूर की तरह है जो किसी भी भारतीय सरकार के लिए एक चुनौती है। "इसी परिप्रेक्ष्य में प्रधानमंत्री अटल विहारी वाजपेयी ने अपने 6 वर्षो के कार्यकाल में सम्बन्धों को सुधारने के लिए अनेक सकारात्मक पहल करने की कोशिश की है। दोनो देशों के मध्य सम्बन्ध कई दशकों के दौरान तनावों, उत्तेजक वयानों, वाह्य हस्तक्षेपों, पारस्परिक सार्वजनिक भर्त्सना तथा अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर अपनी इज्जत घटा देने वाले कार्यो से भरपूर रहे हैं।" के.आर. पिल्लै लिखते है- 'निश्चित ही भारत के पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध हमारी विदेश नीति का सबसे अधिक देखने योग्य मुख्य भाग रहा है। नारमन डी पामर ने कहा है - भारत के पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों ने भारत की समस्त विदेश नीति के प्रायः सभी पक्षों तथा इसके सारे अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोंण को प्रभावित कर रहा है।'' भारत पाकिस्तान के साथ अच्छे पड़ोसियों वाले सम्बन्ध स्थापित करने के लिए तैयार था, तथापि पाकिस्तान के साथ कुछ समस्याओं तथा झगड़ों की विद्यमानता के कारण पाकिस्तान के नकारात्मक दृष्टिकोण को वांछित परिणाम प्राप्त करने मे भारत ने कभी भी सफल नहीं होने दिया।

1998 से 2001 के कार्यकाल मे भारत पाक सम्बन्धों में कई प्रकार के उतार-चढ़ाव आये। "परमाणु परीक्षण, बस कूटनीति लाहौर घोषणा कारगिल युद्ध मे पाकिस्तान की असफलता पाकिस्तान में सैनिक शासन की स्थापना भारत में लोकतान्त्रिक गठबंधन की नई साझी सरकार की स्थापना क्लिंटन की भारत यात्रा से उत्पन्न स्थिति आदि प्रमुख घटनाओं ने भारत पाक सम्बन्धो का निर्धारण किया और दुर्भाग्यवश यह निर्धारण नकारात्मक दिशा में ही हुआ। आज भी यह वातावरण नकारात्मक बना हुआ है।

गुटनिरपेक्ष सिद्धान्त- वाजपेयी ने भारत की विदेश निति को गुटनिरपेक्षता पंचशील पर आधारित द्विपक्षीयवाद विकास के लिए क्षेत्रीय सहयोग भारत की सुरक्षा के लिए आर्थिक प्रयास वाली नीति तथा परमाणु विकल्प अपनाने के सिद्धांतों पर आधारित तथा पाकिस्तान के साथ अच्छे सम्बन्धों को बढ़ाने वाली नीति पर अमल किया। "11 मई, 1998

को 3 परमाणु परीक्षण किये तथा 13 मई, 1998 को 2 और परीक्षण करके प्रधानमंत्री वाजपेयी ने भारत को परमाणु शस्त्र क्लब में शामिल किया।" "इसका उद्देश्य यह दिखलाना था कि उसके प्रारुपों से सम्बन्धित सुधरे हुए कंप्यूटरी प्रदर्शन द्वारा अतिरिक्त ऑकड़े प्राप्त करना और अगर आवश्यक समझा जाय तो कुछ सूक्ष्म प्रयोगों की क्षमता को लागू करने की योग्यता को प्राप्त करना था।" वाजपेयी ने कहा कि हम एक बड़े बम की क्षमता वाले बन गये हैं। इसके लिए आवश्यक निर्देश और नियंत्रण प्रणाली भी हासिल कर ली गयी है। प्रधानमंत्री ने कहा कि भारत अब नाभिकीय अस्त्र संपन्न देश हो गया है, लेकिन इसे समग्र रूप से देखना होगा। प्रधानमंत्री वाजपेयी ने कहा कि सी0टी0बी0टी0 भेद-भाव मूलक है क्योंकि यह नाभिकीय हथियारों से सम्पन्न देशों को उन्नत प्रोद्योगिकी की क्षमता के साथ अपना नाभिकीय अस्त्र शस्त्र कार्यक्रम जारी रखने की अनुमति देता है। "भारत को किसी भी तरह दंडात्मक कदमों और धमकियों से नहीं डरना चाहिए क्योंकि भारत के पास अपना अतीत का गौरव और भविष्य की दृष्टि हर क्षेत्र में सशक्त बनने की क्षमता मौजूद है।" 'प्रधानमंत्री वाजपेयी ने कहा कि भारत अपनी नाभिकीय क्षमता का उपयोग अगर बहुत ही आवश्यक हुआ तो आत्मरक्षा के लिए करेगा।'

"पाकिस्तान का छिपा हुआ परमाणु कार्यक्रम अब खुला हो गया तथा इसने अब खुले रूप में अपने कार्यक्रमों को भारत का मुकाबला करने के लिए आवश्यक प्रोग्राम के रूप में उचित ठहरना आरम्भ कर दिया।" प्रधानमंत्री वाजपेयी ने कहा कि भारत पहले कभी भी परमाणु शास्त्रों का प्रयोग नहीं करेगा। इससे पाकिस्तान द्वारा कश्मीर के मुद्दे को दक्षिण-एशिया की सुरक्षा से जोड़ने के प्रयास को निरस्त किया तथा भारत-पाकिस्तान द्विपक्षीय मुद्दों, विवादों तथा सम्बन्धों में किसी तीसरे देश की भूमिका की संभावना को पूर्ण रूप से नकार दिया। पाकिस्तान के साथ द्विपक्षीय वार्तालााप की आवश्यकता की बात को भारत ने फिर दोहराया। ऐसी बातचीत के लिए पहला अवसर उस समय पैदा हुआ जब जुलाई 1998 में कोलम्बो सार्क शिखर सम्मेलन में भारत तथा पाकिस्तान के प्रधानमंत्रियों ने एक बैठक की परंतु परिणाम शून्य रहा। पाकिस्तान के प्रधानमंत्री नवाज शरीफ, ने इसे शून्य बैठक कहा तथा कश्मीर को भड़काने के लिए तैयार चिंगारी कहकर कश्मीर मुद्दे के अंतर्राष्ट्रीयकरण का प्रयास किया। यहॉ तक कि पाकिस्तान ने भारत के साथ परमाणु युद्ध छिड़ने की संभावना की बात भी कर दी। "सार्क के माध्यम से पाक का इस तरह का बयान दोनों देशों के सम्बन्धों को तनावपूर्ण बनाए रखा।" "पाकिस्तान विद्यमान परमाणु ताकतों की लगातार सहानुभूति तथा समर्थन प्राप्त करता रहा। बदले में पाकिस्तान यह आश्वासन देता रहा है कि वह पक्षपातपूर्ण अप्रसार संधि, कारनामों आदि का किसी शर्त के बिना पालन करता रहेगा। अगर भारत को ऐसा करना पड़ा (भारत ऐसा कभी नहीं कर सकता) तो पाकिस्तान की घोषित परमाणु अस्त्र हैसियत भारत की विदेश नीति के सम्मुख नई तथा जटिल चुनौतियॉ उत्पन्न हो जायेंगी।" नाम शिखर सम्मेलन (सितम्बर, 1998) में खराब आंतरिक परिस्थितियों के कारण पाकिस्तान के प्रधानमंत्री शामिल नहीं हो सके। इसके बाद वाजपेयी का नवाज शरीफ की मुलाकात का एक अवसर तब बना जब सितम्बर, 1998 में दोनों नेता संयुक्त राष्ट्र महासभा के अधिवेशन में भाग लेने के लिए न्यूयार्क गये। प्रधानमंत्री नवाज शरीफ ने अपने भाषण में कश्मीर मुद्दे को उठाया और यह कहा कि द्विपक्षीय वार्तालाप को पुनः आरम्भ किया जाय तथा यह वार्तालाप 26 के फार्मुले

अर्थात कश्मीर तथा शांति एवं सुरक्षा के मुदद्दे को दो प्रमुख मुद्दे मानकर 6 अन्य मुद्दों पर वार्तालाप के आधार पर हो। भारत पाकिस्तान के वार्तालाप के दो दौरे हुए किन्तु कोई ठोस परिणाम सामने नहीं आया।

20 फरवरी, 1999 को प्रधानमंत्री वाजपेयी ने बस द्वारा लाहौर की यात्रा की तथा पाकिस्तान के प्रधानमंत्री नवाज शरीफ से भेंट की। यह एक ऐसा कदम था जिससे अशांत सीमा के दोनो ओर रहने वाले लोगों के हृदयों को प्रसन्नता प्राप्त हुई। 'प्रधानमंत्री वाजपेयी की यह आशा थी कि नवाज शरीफ भी जवाबी यात्रा करेंगे, परंतु ऐसा कुछ नहीं हुआ। 'एक अच्छे वातावरण मे वार्तालापों तथा बैठकों के बाद दोनों देशों द्वारा तीन महत्वपूर्ण दस्तावेजों- लाहौर घोषणा पत्र, संयुक्त वक्तव्य तथा आपसी समझ पत्र पर हस्ताक्षर किये गये तथा दोनों देशों के नेताओं ने आपसी सम्बन्धों, शांति तथा सुरक्षा के मुद्दें, परमाणु मुद्दे पर सम्बन्धित विषयों पर बातचीत की तथा यह सहमति बनाई गयी कि क्षेत्र में शस्त्र दौड़ न चलाई जाय। परमाणु और परंपरागत क्षेत्रों मे विश्वास उत्पन्न करने वाले विस्तृत उपायों को अपनाना तथा दोनों देशों ने शिमला समझौता के प्रावधानों तथा भावना को लागू करने के निश्चय को पूर्ण सार्वभौमिक परमाणु निःशस्त्रीकरण तथा परमाणु अप्रसार के उद्देश्यों की ओर प्रतिबद्धता को एवं सार्क के उद्देश्यों तथा लक्ष्यों के प्रति बचनबद्धता को दोहराया। 'आतंकवाद की आलोचना की गयी एवं इस बुराई की समाप्ति के लिए संघर्ष करने के निश्चय को प्रकट किया गया।" प्रधानमंत्री वाजपेयी की पाकिस्तान यात्रा के बाद जो संयुक्त वक्तव्य जारी किया गया उसमें कहा गया है कि समय-समय पर दोनों देशों के विदेश मंत्री बैठक किया करेगें तथा आपसी सम्बन्धों के सभी मुद्दों, परमाणु मुद्दों, डब्लू0टी0ओ0 से सम्बन्धित मुद्दों वीजा तथा यात्रा व्यवस्थाओं को उदार बनाने पर विचार -विमर्श किया जायेगा, सूचना तकनीक तथा मंत्रीस्तर पर एक दो सदस्यीय समिति को नियुक्त किया जायेगा ताकि हिरासत में लिए गये नागरिकों तथा गुमशुदा युद्ध बंदियों से सम्बन्धित मानवतावादी मुद्दों का परीक्षण किया जा सके। इस यात्रा के दौरान भारत तथा पाकिस्तान के विदेश सचिवों द्वारा जिस समझ के स्मरण पत्र पर हस्ताक्षर किये, उसकी निम्न विशेषताएं थी-

* परमाणु तथा परम्परागत क्षेत्रों में विश्वास निर्माण के लिए उपायों को विकसित किया जाय तथा विरोध से दूर रहा जाय।
* दोनों देश मिसाइल परीक्षण की पूर्व सूचना एक दूसरे को देंगे।

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. दैनिक जागरण, नई दिल्ली, 20 दिसम्बर, 1996 'देशवासी महान क्रांन्तिकारियों को भूल रहे हैं।''
2. Bhagwat S. Goyal Values, Vision & Verses of Vajpayee: India's Man of Destiny page iii
3. SAARC Secretariat". SAARC. अधिगमन तिथि May 17, 2013.
4. राष्ट्रीय पोर्टल विषयवस्तु प्रबंधन दल, द्वारा समीक्षित : 21.04.2011
5. http://www.essaysinhindi.com/asia/ दक्षिण एशिया में बदलते समीकरण पर निबन्ध
6. ए0सी0 छागला : भारत की विदेश नीति(अटल बिहारी वाजपेयी, नई दिल्ली- 1997, पृ0-39.
7. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा : कवि राजनेता अटल बिहारी वाजपेयी, किताब घर नई दिल्ली, 1997, पृ0-197.
8. अमृत-अटल (डॉ0 पूनमचन्द्र तिवारी), पृ0 193-195

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

राज्य, मानव अधिकार एवं पुलिस

* सन्ध्या शुक्ल
** नीरज मिश्रा

सारांश- **प्रशासन का प्रतीक पुलिस संगठन राष्ट्र के प्रत्येक कोने में व्याप्त है। एक समान वर्दी धारण किए हुए ये पुलिस के जवान रात-दिन अपने कर्तव्य का पालन करते रहते हैं। देश का ऐसा कोई अंचल नहीं जहां के निवासी अपने क्षेत्र की पुलिस व्यवस्था को न जानते हों। पुलिस प्रशासन के अधिकारी एवं कर्मिक जहां एक ओर समाज से आपराधिक तत्वों का निवारण करने में एकनिष्ठ हो, कार्य करते हैं। वहीं दूसरी ओर जाति, भाषा, धर्म एवं संस्कृति की विविधताओं से ऊपर उठकर अपने कर्तव्य का पालन करते हैं एवं मानवता की सेवा करते हैं। आज के युग में मानव के व्यवहार में आमूल-चूल परिवर्तन आ गया है। पहले लोग न केवल पुलिस अधिकारियों से डरते थे बल्कि सरकार के अन्य अधिकारियों से चाहे उनका स्तर एवं उनका स्थान कितना ही निम्न हो, चाहे वे किसी भी विभाग में कार्यरत हों, भय खाते थे एवं उनके मन में एक विशेष प्रकार का आतंक भी समाहित था कि ऐसी कोई गलती या अपराध अनजाने में न हो जाए जिसका परिणाम उन्हें भोगना पड़े। जबकि आज परिस्थितियां इसके विपरीत हैं न केवल जनता में अधिकारियों के प्रति भय एवं सम्मान की मात्रा में कमी आई है बल्कि जनता में राजनीतिक चेतना के प्रसार के परिणामस्वरूप तीव्र गति से जागरूकता भी आई है एवं अधिकारों के प्रति चेतना उत्पन्न हुई है। आज आम नागरिक यह जानना चाहता है कि किसी भी अपराध में यदि उसे दंडित किया गया है तो उसे क्यों दंडित किया गया एवं पुलिस द्वारा कौन से कानून की कौन सी धारा के तरह उसे गिरतार किया गया है अथवा उसे दोषी माना गया है। अगर पुलिस हिरासत में किसी की मृत्यु हो जाती है तो उसके परिणामस्वरूप जनता की जो उग्र प्रतिक्रिया सामने आती है, वह इस बात का परिचायक है कि जनता अब किसी भी प्रशासनिक तंत्र अथवा विभाग की लापरवाही अथवा यूं कहें कि तानाशाही पूर्ण प्रवृत्ति को सहन नहीं करेगी।**

समाज चाहे मानवीय हो या मानवेत्तर-प्रत्येक समाज में प्रेम, स्नेह, कलह, विभिन्न विरोधी प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। मानवीय समाज में जहाँ आपसी मेल-मिलाप, प्रेम, मित्रता एवं स्नेह जैसी उदात्त भावनाओं का संचार पाया जाता है, वहीं इसमें पाशविक वृत्तियां भी मिलती हैं। ईर्ष्या, राग, द्वेष, लोभ, मोह, शत्रुता, घृणा जैसी प्रवृत्तियों के कारण

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
** अतिथि विद्वान, राजनीति विज्ञान, शासकीय महाविद्यालय बदेरा, जिला-सतना (म.प्र.)

इस समाज में मानव के साथ अमानवीय व्यवहार करने लगता है, फलतः समाज में कटुता और विषमताएं पनपती हैं। चूंकि मानवीय समाज अन्य समाजों से सभ्य एवं सुसंस् त माना गया है, पर अभावों से त्रस्त मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अथवा अपने लोभ, मोह एवं स्वार्थ के वशीभूत होकर वैध-अवैध मार्ग पर चलकर अपने ही समाज में अव्यवस्था उत्पन्न कर डालता है।[1] समाज में इस अव्यवस्था की स्थिति को समाप्त करने और समाज के उच्छृंखल एवं उदण्ड स्वभाव के सदस्यों को प्रताड़ित करके समाज को व्यवस्थित करने के लिए विभिन्न शासन व्यवस्थाएं देश, काल एवं परिस्थितिजन्य कानूनों का निर्माण कर तदनुसार समाज के पद्दलित और उत्पीड़ित सदस्यों को न्याय दिलाने का प्रयास करती है। रूसो आदि विद्वानों के अनुसार इन्हीं परिस्थितियों के कारण राज्य की उत्पत्ति हुई। शनैः-शनैः इस राज्य रूपी शक्ति ने अनेक कानून नियम एवं संहिताओं का निश्चिय किया जिसके द्वारा मनुष्यों के जीवन के लिए आवश्यक आधारभूत अधिकारों की सुरक्षा, शान्ति और सद्भाव की प्राप्ति हो सके। मूल रूप में प्राचीन काल में यह राजा का कर्तव्य था परन्तु बाद में सामाजिक नियमों से संबंधित संहिताओं को लागू करने का दायित्व राजा ने अपने विश्वासपात्र एवं साथी व्यक्तियों को सौंप दिया, कालान्तर में इन नियमों ने कानून का रूप धारण कर लिया जबकि इनके लिए ''दंड'' की व्यवस्था सुनिश्चित की जाने लगी।[2] सभ्यता के विकास के साथ ही साथ मनुष्य के जीवन में परिवर्तन और प्रगति दृष्टिगोचर होने लगी, किन्तु हिंसा, बलपूर्वक दूसरों की जान और सम्पत्ति छीन लेने की इच्छा और मानवीय अधिकारों की अतिक्रमणता में कमी नहीं आई। ग्राम, नगर, प्रदेश, देश एवं विदेशों में प्रतिदिन मानव के मूलभूत प्रा तिक तथा नैसर्गिक अधिकारों के उल्लंघन एवं अतिक्रमण की घटनाओं में वृद्धि हो रही है। उपरोक्त विवेचन से एक बात निष्पक्ष रूप से उभरकर सामने आती है कि समाज के विभिन्न सदस्यों को उनके दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु न्याय दिलाने और इस न्याय की सम्पूर्ति हेतु उनके मानवाधिकारों की रक्षा का विचार उद्भूत हुआ। अतः स्पष्ट है कि मानवाधिकारों का विचार 'राज्य की अवधारणा' से ही उत्पन्न हुआ।

जब मानव व्यवस्थित जीवन व्यतीत करता है और उसका एक निश्चित प्रदेश पर निवास होता है, और वह अपने को उन नियमों की अधीनता में रखता है। जो उसके व्यवहार को नियंत्रित करते हैं तो वह राज्य का निर्माण करता है। राज्य का उद्देश्य केवल यही है कि उसके समाज का कल्याण हो। अंतर्राष्ट्रीय अधिकार-पत्र के निर्माण के समय अमरीका के प्रतिनिधियों ने संयुक्त राष्ट्र आयोग के सामने जो शब्द कहे थे उनसे राज्य के उद्देश्य की बहुत अच्छी तरह व्याख्या होती है, ''जनता राज्य का निर्माण अपने कल्याण की अभिवृद्धि और अपने पारस्परिक अधिकारों की रक्षा करने के लिए करती है''। प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है कि उसे अपनी मौलिक, आर्थिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक उन्नति करने का उचित एवं समान अवसर प्राप्त हो तथा वह सभ्यता के लाभ उठा सके। राज्य का यह कर्तव्य है कि वह अपने संसाधनों को अधिकतम उपयोग द्वारा जनता की स्वतंत्रताओं की रक्षा करते हुए विधान या अन्य उचित साधनों द्वारा इस उद्देश्य को प्राप्त करे। उत्तम सामाजिक व्यवस्था वही होती है जिसमें सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की समस्त संस्थाओं से प्रकट हो। राज्य अपने नागरिकों को सामाजिक न्याय प्रदत्त कराने एवं मानवाधिकारों की सुरक्षा में समर्थ हो। राज्य की यह समर्थता

व्यवस्थापिका अथवा अन्य किसी संस्था द्वारा अपने नागरिकों के जीवन यापन के उचित साधनों की रक्षा करने के संबंध में समुदाय की सामग्री स्रोतों का निष्ठापूर्वक एवं उचित वितरण करने से सम्बद्ध है। इसके लिए राज्य द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को वैधानिक एवं सार्वजनिक अवसरों की समानता, स्वास्थ्य और श्रम शक्ति का दुरूपयोग न होने देना, बालकों, महिलाओं और युवाओं के उत्पीड़न को रोकना और सबसे अधिक व्यक्ति की गरिमा सुनिश्चित करना वांछित है।[3]

जब से सभ्य समाज का जन्म हुआ है, पुलिस की भूमिका तभी से महत्वपूर्ण रही है। मानव सभ्यता के प्रारंभ से ही पुलिस समाज का अभिन्न अंग रही है यद्यपि इसका स्वरूप, कर्तव्य और अधिकार इत्यादि देशकाल और परिस्थितियों के अनुरूप बदलते रहे हैं।[4] प्रत्येक युग में चाहे वह सतयुग ही क्यों न रहा हो, जनता की सुरक्षा का उत्तरदायित्व पुलिस पर रहा है। पुलिस नाम की संस्था को हटाकर समाज का रूप देखने की कल्पना करते ही एक ऐसा परिदृश्य उत्पन्न हो जाता है, जहां अराजकता स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। पुलिस की उपस्थिति एक ऐतिहासिक तथ्य ही नहीं वरन् एक सामाजिक आवश्यकता भी है।[5] प्राचीन काल से ही पुलिस की आवश्यकता एवं विद्यमानता रही है। वर्तमान समय में उसकी आवश्यकता और भी अधिक बढ़ गई है। आज के संदर्भ में यह कहा जाए कि बिना पुलिस के समाज का अस्तित्व ही संकट में पड़ जाएगा, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं लगती।[6]

प्रत्येक युग में पुलिस की भूमिका परिवर्तित होती रही है लेकिन यह भी सच है कि उसकी निष्ठा प्रत्येक युग में 'राज्य' के प्रति रही है। शांति एवं व्यवस्था स्थापित करना पुलिस का वैधानिक दायित्व है। पुलिस को शांति एवं व्यवस्था स्थापित करनी है, और जनता के बीच करनी है। इस प्रकार बिना दोनों के सहयोग से शांति एवं व्यवस्था स्थापित करना संभव नहीं है।[7] वस्तुतः सभी समाजों में सभ्यता के उद्भव के समय से ही जनता की सुरक्षा एवं उनकी स्वतंत्रता को बनाए रखने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार के संगठन स्थापित किए जाते रहे हैं। पुलिस भी एक ऐसा संगठन है।[8] मानव स्वभावतः एक शांतिप्रिय प्राणी है। यही कारण है कि सभ्यता के प्रारम्भ से ही शांति एवं व्यवस्था बनाए रखने वाली पुलिस जैसी संस्था का आविर्भाव किसी न किसी रूप में हो गया होगा। समाजशास्त्री, मनोवैज्ञानिक एवं इतिहासकार निरंतर इस तथ्य को अन्वेषण करने में लगे हुए हैं कि पुलिस का जन्म कब हुआ था और सर्वप्रथम इसकी आवश्यकता कब महसूस की गई।[9] अभी तक इसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। यह माना जा सकता है कि ज्यों-ज्यों सभ्यता का विकास होता गया त्यों-त्यों पुलिस का महत्व भी बढ़ता गया। यह अवश्य कहा जा सकता है कि प्राचीन समय में उसका रूप वह नहीं था जो आज की पुलिस व्यवस्था का है।[10] आधुनिक समय में पुलिस संगठन वह समूह है जिसका प्रमुख कार्य शान्ति और व्यवस्था स्थापित करना, अपराधों की रोकथाम करना तथा कानूनों को लागू करना है।[11] प्राचीन काल का मानवीय इतिहास मानव सभ्यता के क्रमिक विकास की ओर संकेत करता है लेकिन यहां यह तथ्य स्मरणीय है कि सामाजिक परिवर्तन की यह प्रक्रिया विश्व के हर कोने में लगभग एक ही रूप में घटित हो रही थी, हां इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इसके समय एवं परिवर्तन की प्रक्रिया में अवश्य अंतर रहा होगा। परिवर्तन प्रकृति का नियम है और चूंकि समाज भी उसी प्रकृति का एक अंग है।[12] अतः किसी भी ऐसे समाज की

परिकल्पना नहीं की जा सकती, जो पूर्णतया स्थिर हो। परिवर्तन तो होगा ही, अपरिवर्तनशील समाज का अस्तित्व वास्तव में हो ही नहीं सकता।[13] इसलिए मानव सभ्यता के इतिहास का अध्ययन किया जाता है तो यह स्पष्ट होता है कि जब समाज अपने विकास के प्रारम्भिक चरणों में था तो उस समय जटिलताएं अतनी अधिक नहीं थी।मनुष्य स्वयं अपने विवेक द्वारा उन नियमों का निर्माण करने लगा जो समाज को बनाए रखने के लिए जरूरी थे। अब मनुष्य अपना प्रहरी स्वयं बना और उसने स्वयं में एक ऐसा पुलिस जन विकसित कर लिया जो इस बात का निर्धारण करता था कि कौन सा कार्य समाज के लिए हितकर है और कौन सा अहितकर। इस प्रकार उसने अपने अंदर सामाजिक विवेक या नैतिक चेतना का विकास किया।[14] अतएव मनुष्य में पुलिस जन के जन्म का पता उस आदिकाल से लगता है, जब से उसने वन्य पशुत्व से ऊपर उठकर अपने तर्क एवं विचार-शक्ति की सहायता से अपने आत्म विश्वास की तथा कुटुंब एवं सामूहिक जीवन के लाभ की आवश्यकता का अनुभव किया। मनुष्य के अंतर के पुलिसजन ने ही सहस्त्राब्दियों से जीवन के उतार चढ़ावों एवं दुःख दर्दों के बीच उसका पथ-निर्देश किया तथा उसे व्यक्तिगत रूप से तथा समाज के एक घटक के रूप से उन्नत होने सहायता दी।[15] रामराज्य की परिकल्पना भी एक ऐसे ही सभ्य एवं सुसंस् त समाज के रूप से पालन होता है तथा समाज भौतिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से पूर्ण रूप से उन्नत है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी एक ऐसे विश्व का सपना देखते थे जिसमें युद्ध न हो, वे ऐसा समाज बनाना चाहते थे जिसमें जाति या वर्ग का भेदभाव न हो।[16] गांधी जी की यह भी मान्यता थी कि हिंसा एवं शोषण से मुक्त ऐसी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना होनी चाहिए जिसमें सभी शांतिपूर्वक रहें।[17] एक ऐसे समाज की स्थापना किसी एक व्यक्ति, अधिकारी या संगठन के बूते पर नहीं की जा सकती इसके लिए तो संपूर्ण समाज को आगे आना होगा एवं प्रयास करने होंगे। प्रत्येक समाज जो कि विश्व के अलग-अलग भागों में विकसित हुए हैं, अपराधों से जुड़े हुए रहे हैं। ऐसी कोई सभ्यता नहीं है, जो अपराधों से पूर्णरूपेण मुक्त रही हो। इसलिए अपराधों की रोकथाम के लिए मानव जाति द्वारा प्रयास किये जाते रहे हैं। प्राचीन समय में समाज को नियंत्रित एवं अनुशासित करने के लिए किसी प्रकार के कोई नियम अथवा कानून प्रचलन में नहीं थे तो चारो ओर 'मत्स्य न्याय' की स्थिति प्रचलन में थी, ऐसी ही स्थिति को कौटिल्य ने स्पष्ट करते हुए अर्थशास्त्र में लिखा है कि पूर्व काल में मानव जीवन पूर्णतया अराजकमय था तथा मत्स्य न्याय का प्रचलन होने से व्याकुल होकर जनता ने एक राजा की कल्पना की[18] तथा उसे नियमानुसार कर देने के साथ-साथ यह भी आश्वासन लिया कि वे प्रजा की सुरक्षा का दायित्व वहन करेंगे।[19] इस प्रकार अराजकता की स्थिति से बचने के लिए राजा एवं राज्य की उत्पत्ति हुई। यह कहा जा सकता है कि राज्य का उदय केवल मानसिक अनुभूति के लिए ही नहीं हुआ बल्कि राज्य में जीवन की प्रासंगिकता निहित हैं।[20] इसके निर्माण के लिए सात प्रकृतियों का होना आवश्यक माना गया। जिनमें राजा, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, दण्ड एवं मित्र इन सात प्रकृतियों की कल्पना की गई। इन सात प्रकृतियों में दण्ड को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाना इस तथ्य की पुष्टि करता है कि कानून एवं व्यवस्था बनाए रखना तथा समाज में अपराधों की रोकथाम करना राजा का प्रमुख दायित्व है। यहां यह भी ज्ञातव्य है कि समाज में अपराधों की रोकथाम के लिए एक सशक्त संगठन की आवश्कता महसूस की गई, जो कि राज्य की अधिकार शक्ति से युक्त

हो और बलपूर्वक अपराधों को रोक सके। यह संगठन पुलिस संगठन के नाम से जाना गया, जो समाज में अपराधी एवं विरोधी तत्वों को कुचलकर समाज में शांति एवं व्यवस्था बनाए रखती है तथा कानून का उल्लंघन करने वाले व्यक्ति को दंड देती है।

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. अक्षेन्द्रनाथ सारस्वत, 'सामाजिक न्याय, मानवाधिकार और पुलिस', राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, सन् 1998
2. के.पी.सिंह, 'पुलिस की जन हितैषी छवि और आम आदमी', पुलिस विज्ञान, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, नईदिल्ली, वर्ष-17, अप्रैल-जून, 2000
3. डॉ. ब्रजमोहन शर्मा, 'भारतीय पुलिस', पंचशील प्रकाशन, जयपुर, सन् 1996
4. के.पी.त्रिपाठी, 'पुलिस जनता का पारस्परिक सहयोग, एक अपरिहार्य आवश्यकता', उत्तर प्रदेश पुलिस पत्रिका, वर्ष-30, अंक-6, सितम्बर, 1999
5. शिशिर कुमार सिंह, 'भारतीय पुलिस और जनता', झारीसन प्रेस एण्ड पब्लिकेशन्स, नईदिल्ली, सन् 1999
6. सुभाषिणी कपूर, 'पुलिस एवं महिलाएं', पंकज प्रकाशन दिल्ली, सन् 1996
7. रिपोर्ट ऑफ दी रॉयल कमीशन ऑन पुलिस पॉवर्स एण्ड प्रोसीजर, 1929 (3297)
8. डॉ. जे.पी. सिंह, 'सामाजिक परिवर्तन' : स्वरूप एवं सिद्धान्त', प्रेंटिस हॉल ऑफ इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, सन् 1999
9. डॉ. रविन्द्रनाथ मुकर्जी,भारत में सामाजिक परिवर्तन, विवेक प्रकाशन,दिल्ली,सन् 1991-92
10. भोलानाथ मल्लिक,'पुलिस:एक दार्शनिक विवेचन ', प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, सन्1991
11. टी.वी. परमेश्वर,'आधुनिक सभ्यता और महात्मागांधी', रोजगार समाचार, नई दिल्ली, 27 सितम्बर, 3 अक्टूबर, 1997
12. मुल्कराज आनन्द (संपादक),महात्मा गांधी के अमर विचार', राष्ट्रशैक्षिक एवं अनुसाधान परिषद, नई दिल्ली, सन् 1989
13. एस.एल. वर्मा एवं बी.एम. शर्मा,'भारतीय राजनैतिक विचारक', पंचशील प्रकाशन,जयपुर,सन्1997
14. फातिमा बीबी (राज्यपाल-तमिलनाडू), 'कैसा होना चाहिए इक्कीसवीं सदी में भारतीय पुलिस का स्वरूप', 30वी अखिल भारतीय पुलिस साइंस कांग्रेस का अखिल भारतीय सम्मेलन, तमिलनाडु पुलिस तत्वावधान में आयोजित ,मद्रास,7-9 अक्टूबर 1998 की रिपोर्ट
15. डा.बसन्ती लाल बाबेल,'पुलिस संगठन',(सिद्वांत एवं व्यवहार),यूनिक ट्रेडर्स,जयपुर , सन् 1996
16. जनार्दन दत्त शुक्ल,'स्वतंत्र भारत में सामाजिक क्रान्तिः इतिहास के परिपेक्ष्य में भारतीय जन जीवन चिंतन के दर्पण में प्रकाशन विभाग,सूचना और प्रसारण मंत्रलाय, भारत सरकार जनवरी, 1995
17. शंकर सरोलिया,'भारतीय पुलिस :सन्दर्भ एवं परिप्रेक्ष्य,' गौरव पब्लिशर्स,जयपुर,सन्1989
18. डा. प्रभुदत्त शर्मा, 'पाश्चात्य राजनीतिक विचारों का इतिहास', (प्लेटो से मार्क्स), कॉलेज बुकडिपो, जयपुर 2002
19. राम आहूजा, 'समाजिक समस्याएं', रावत पब्लिकेशंस, नई दिल्ली, सन 1997
20. आनन्द स्वरूप गुप्त, 'पुलिस रिफॉर्म इन रेट्रास्पेक्ट', पुलिस एडमिनिस्ट्रेशन, आई.आई.पी.ए. नई दिल्ली, सन 1982

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

सावरकर का हिंदू-राष्ट्रवाद की अवधरणा

* राजन कुमार

==

सारांश- **सावरकर ने आर्थिक समस्याओं के सम्बन्ध में जो विचार व्यक्त किये हैं वे किसी परम्परागत मान्यता से मेल नहीं खातो हैं। वे समाजवाद के घिसे-पिटे नारे में विश्वास नहीं रखते और न इतिहास की आर्थिक व्याख्या को अंतिम मानते हैं। उनके अनुसार व्यक्ति केवल खाने के लिए नहीं जीता है। उसकी और भी कई आकांक्षाएं होती हैं। केवल आर्थिक कार्यक्रम से देश की सभी समस्याओं का हल नहीं निकाला जा सकता। वे राष्ट्रवादी अर्थव्यवस्था के समर्थक हैं और वर्ग संघर्ष के स्थान पर राष्ट्रीय सहयोग के पक्षपाती हैं। वे विभिन्न हितों को सामुदायिक एकता में बद्ध करना चाहते हैं ताकि आर्थिक हितों में टकराहट न हो तथा शोषण से भी बचा जा सके।**

==

विनायक दामोदर सावरकर हिंदू-राष्ट्रवाद तथा हिन्दू पुनरूत्थान के अद्वितीय विचारक थे। वे हिंदुओं की सांस्कृतिक महत्ता को स्वीकार करते हुए राष्ट्र को पूर्ण एकता का प्रतीक मानते थे। उनके विचारों में हिंदुओं को विभाजित करनेवाले धार्मिक आंदोलनों के स्थान पर उनके राजनीतिक एवं सामाजिक एकीकरण की अधिक आवश्यकता थी। उन्होंने हिंदुओं के समान हितों पर बल देते हुए उनको संगठित होने के लिए आह्वान किया। उनका यह परम विश्वास था कि एक राष्ट्र की दृष्टि से हिंदुओं में भाषा, इतिहास, संस्कृति, देश, धर्म आदि समस्त तत्वों की समानता विद्यमान थी। इस आधार पर हिंदुओं को राष्ट्र के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।[1]

हिंदूवाद जिसका अनेक भारतीय विचारकों ने समर्थन एवं प्रतिपादन किया है केवल संकीर्ण विचार ही प्रस्तुत करता है। इसमें केवल हिंदुओं के धर्म, विद्या, धार्मिक अनुष्ठान, रीति रिवाज तथा क्रियाकलाप आदि सम्मिलित किए जाते हैं। किन्तु हिन्दुत्व शब्द हिंदुओं की राजनीतिक, सामाजिक, नैतिक, आर्थिक, आध्यात्मिक आदि समस्त विशेषताओं को लिए हुए है। इतना होने पर भी हिंदुत्व की धारणा मानवतावाद तथा सार्वभौमवाद के प्रतिकूल नहीं है। सावरकर ने इसे एक बौद्धिक तथा वैज्ञानिक धरातल पर प्रस्तुत किया है ताकि उसमें संकीर्णता का प्रवेश न होने पाए।[2]

सावरकर अपने विचार दर्शन में अन्याय का प्रतिकार किया तथा हिन्दू-धर्म की सहृदयता, दयालुता तथा सहिष्णुता को पूरा-पूरा परिचय दिया। उनके विचारों का विरोध मुसलमानों व अंग्रेजों के द्वारा इसलिए नहीं हुआ कि वे हिंदुत्व प्रचारक थे अपितु इस कारण अधिक हुआ कि वे एक विदेशी सत्ता के उग्रतम विरोधी थे।[3]

==========================

* शोध छात्र, राजनीति विज्ञान, जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार)

सावरकर का चिन्तन-

सावरकर ने अपने राष्ट्रवादी विचारों को मानवतावादी दृष्टिकोण के प्ररिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है। वे एक सर्वमानव राज्य के पक्ष में हैं न कि संकीर्ण राष्ट्रवाद के उन्नायक। उनका अंतिम लक्ष्य विश्व राज्य की कल्पना को साकार करने का है। किन्तु मानव राज्य की कल्पना को वे हिन्दू राष्ट्रवाद के नाम से प्राप्त करना चाहते हैं। जब तक हिन्दू एक राष्ट्र के रूप में संगठित होकर अपने आपको सशक्त नहीं बना लेते हैं तब तक विश्व संगठन की कल्पना साकार नहीं हो सकती। उनके अनुसार राजनीति विज्ञान तथा कला दोनों का आदर्श मानवीय राज्य की स्थापना ही है। पृथ्वी हमारी मातृभूमि है और समस्त विश्व मानवता हमारा राष्ट्र और अधिकार तथा कर्त्तव्यों की समानता पर आधरित एक मानवीय सरकार हमारा अंतिम लक्ष्य है। सावरकर ने हिन्दुओं को हिन्दुत्व से परिचित कराते हुए कहा कि विकासवाद का सिद्धान्त यह मानता है कि दुर्बल तथा डरपोक हमेशा से शक्तिशाली एवं शौर्यवानों के शिकार रहे हैं। उनके अनुसार जब तक विश्व में राष्ट्रीय एवं प्रजातीय अंतर विद्यमान है तब तक भारतीयों को भी अपनी राष्ट्रीय एवं प्रजातीय एकता को बनाये रखने के लिए प्रयत्नशील रहना होगा। उन्होंने हिन्दुओं को सार्वभौमवाद एवं अहिंसा से सजग रहने का सुझाव दिया है ताकि वे अपरिपक्व विश्व एकता के बने रहते अपने शत्रुओं के शिकार न बन जायें। हमें अपने शत्रुओं का सामना करने में समर्थ बनना होगा और अन्याय का प्रतिकार करने के लिए विरोध के अधिकार से युक्त होना होगा। उन्होंने इस संदर्भ में बौद्ध धर्म की असपफलता का उल्लेख किया है और कहा है कि एक विश्व व्यापी धर्म होकर भी बौद्धधर्म असत्य एवं अन्याय की मार नहीं सह सका। इस प्रकार सावरकर ने राष्ट्रवाद, मानवतावाद तथा सार्वभौमवाद को दृष्टि में रखकर यह व्यक्त किया है कि हिन्दुओं को हिन्दू राष्ट्रीयता को बलवती बनाना है। हमें गैर हिन्दुओं के प्रति आक्रामक रवैया नहीं अपनाना है। किन्तु अपनी आत्मरक्षार्थ हमें हर पल तैयार रहना है ताकि किसी भी आकस्मिक आक्रमण का साहसपूर्ण सामना कर सकें।[4]

सावरकर ने हिन्दुओं को शांतिपूर्ण समृद्धि की ओर बढ़ने का दर्शन प्रदान किया है। उन्होंने सापेक्ष अहिंसा को स्वीकार किया है किन्तु पूर्ण अहिंसा को पापपूर्ण माना है। उनका विश्वास है कि हिन्दू प्राणी मात्रा में आमवत समानता के दर्शन करते हैं किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि हम पूर्ण अहिंसा को स्वीकार कर अपनी कायरता का परिचय दें। उनके अनुसार हम अहिंसा का इसीलिये त्याग नहीं करते कि हम कम साधुवृत्ति के हैं बल्कि इसलिए करते हैं कि हम अधिक बुद्धिमान हैं। उनके अनुसार अहिंसा के उपदेश देने वालों ने भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् हैदराबाद, कश्मीर तथा अन्य प्रदेशों में जो कुछ किया है वह उनके उपदेशों से मेल नहीं खाता। अतः बुद्धिमत्ता इसी में है कि पूर्ण अहिंसा के स्थान पर सापेक्ष अहिंसा को ही व्यावहारिक जीवन में स्वीकार किया जाय। सावरकर शक्ति तथा पौरुष के प्रतीक रहे हैं। वे आवश्यकता पड़ने पर हिंसक उपाय अपनाने के विरोधाी नहीं हैं। उनके अनुसार दुष्ट व्यक्ति की दुष्टता का अंत करने में बुराई नहीं है। यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति की स्वतंत्रता का हनन करने पर उतारू है तो उसे ऐसे आततायी के प्रति कदापि दया नहीं करनी चाहिए।[5]

सावरकर ने क्रांति के संबंध में अपने स्वतंत्र विचार प्रस्तुत किये हैं। वे क्रांति को छलांगें मारने वाला विकासवाद मानते हैं। क्रांतियां निश्चत नियमों के आधार पर नहीं

होतीं। क्रांति में निश्चितता के लिए कोई स्थान नहीं है। शत्रु को किसी भी प्रकार का समय तथा अवसर देना क्रांति के लिए घातक होता है। जिस क्रांति के द्वारा अन्याय तथा दमन को नष्ट किया जाता है वह पवित्र होती है। किन्तु जब क्रांति एक प्रकार के अन्याय तथा दमन को दबाकर दूसरी प्रकार का अन्याय तथा दमन प्रारम्भ कर देती है तो वह अपने आप में अपने विनाश के बीज लिए हुए ही होती है। विदेशी शासन से क्रांति द्वारा मुक्ति प्राप्त करने के पश्चात् जनता के बहुमत द्वारा निर्मित संविधन तत्काल लागू कर सभी को उसके प्रति आदर भाव दिखलाना चाहिए। इस प्रकार सावरकर ने बाहर क्रांति तथा घर में संविधान, बाहर अशांति तथा घर में शांति, बाहर शक्ति का प्रदर्शन तो घर में कानून की मान्यता के सिद्धांत को स्वीकार किया है।[6]

सावरकार का भावी स्वप्न-

सावरकर ने जिस भावी भारत का आदर्श स्वरूप चित्रित किया है वह आधुनिक समय के भारत की अनेक समस्याओं पर प्रकाश डालने तथा समस्याओं का निवारण करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। सावरकर का भावी स्वप्न इस प्रकार से है-

1. सावरकर के भारत में जाति, धर्म, नस्ल अथवा विश्वास के भेदभाव के बिना उन सभी नागरिकों के समान अधिकार एवं कर्त्तव्य होंगे जो भारत के प्रति पूर्णतः राजभक्त होंगे।
2. सभी अल्पसंख्यकों को उनकी भाषा, धर्म, संस्कृति आदि की सुरक्षा का अधिकार दिया जाएगा। किन्तु किसी को भी एक राज्य के अंतर्गत नवीन राज्य का निर्माण करने अथवा बहुमत के वैधानिक अधिकारों का हनन करने का अधिकार नहीं दिया जाएगा।
3. भाषण, विश्वास, अर्चना, संगठन आदि की स्वतंत्रता से संबंधित मौलिक अधिकार सभी नागरिकों को समान रूप से प्राप्त होंगे, सार्वजनिक शान्ति एवं व्यवस्था के हित में अथवा राष्ट्रीय आपातकाल के समय उन पर जो कुछ प्रतिबंध लगाये जायेंगे वे किसी धार्मिक अथवा प्रजातीय उद्देश्य से प्रेरित न होकर समान राष्ट्रीय कारणों पर आधरित होंगे।
4. जाति, विश्वास, प्रजाति अथवा धर्म के भेदभाव के बिना प्रति व्यक्ति एक मत सामान्य नियम होगा।
5. संयुक्त प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की जाएगी।
6. प्रारम्भिक शिक्षा निःशुल्क एवं अनिवार्य होगी।
7. सेवाओं में केवल योग्यता के आधार पर नियुक्तियां की जाऐंगी।
8. भाषाई अल्पसंख्यकों को अपने बालकों को अपनी भाषा के माध्यम से शिक्षा देने के लिए पृथक विद्यालयों की स्थापना का अधिकार होगा, उनकी धार्मिक तथा सांस्कृतिक संस्थायें इस कार्य के लिए सरकार द्वारा सहायत प्राप्त करेंगे किन्तु यह सहायता उनके द्वारा शासन को दिए गए कर के अनुपात में होगी।
9. अवशिष्ट शक्तियां केन्द्रीय सरकार में निहित होंगी।
10. नागरी लिपि राष्ट्रीय लिपि होगी, राष्ट्रभाषा हिन्दी होगी तथा संस्कृत भारत की देवभाषा होगी।[7]

आर्थिक विचार-

उपर्युक्त सुझावों के अतिरिक्त सावरकर ने भावी भारत की कल्पना करते हुए उसके आर्थिक पक्ष पर भी विचार व्यक्त किया है। उनके अनुसार भारत की जनता मशीन युग का स्वागत करेगी। हस्तशिल्प तथा हाथ करघा को भी बढ़ावा दिया जायेगा किन्तु राष्ट्रीय उत्पादन मशीनों द्वारा भारी मात्रा में किया जाएगा। किसान तथा श्रमिक राष्ट्र की सम्पदा, स्वास्थ्य एवं शांति के प्रमुख स्रोत होंगे अतः उनके विकास के सभी प्रयत्न किये जायेंगे और ग्रामीण क्षेत्र का पूर्ण विकास किया जाएगा। किसानों तथा श्रमिकों को पूंजी के वितरण का उतना साझा प्राप्त होगा जिसके कारण वे निर्धनता की निम्नतम सीमा में न रहकर आरामदायक जीवन के सामान्य स्तर को प्राप्त कर सकें। उन्हें राष्ट्र का अविभाज्य अंग मानते हुए सभी प्रकार के कर्त्तव्यों एवं दायित्वों से युक्त किया जाएगा ताकि राष्ट्रीय उद्योगों, सम्पत्ति के सामान्य विकास एवं सुरक्षा के अनुपात में उन्हें अपना लाभ प्राप्त हो। राष्ट्रीय पूंजी व्यक्तिगत प्रकृति की होने के कारण राष्ट्रीय उद्योगों के विकास में अनवरत रूप से उसी प्रकार लगी रहे इसके लिए पूंजी के व्यक्तिगत स्वामित्व को प्रोत्साहन एवं संरक्षण प्राप्त होगा। पूंजी तथा श्रम दोनों के हित राष्ट्र की आवश्यकताओं के अधीन रहेंगे। यदि कोई उद्योग अत्यधिक मुनाफा कमा रहा हो तो उस लाभ को अनुपात से श्रमिकों में बांट दिया जाएगा किन्तु उसके विपरीत स्थिति होने में पूंजीपति तथा श्रमिक दोनों को घाटे की स्थिति समान रूप से झेलने के लिए तत्पर रहना होगा ताकि राष्ट्रीय उद्योग पूंजीपति अथवा श्रमिकों के निहित स्वार्थों द्वारा हानि न उठायें। राज्य द्वारा ऐसे कदम उठाये जायेंगे जिससे राष्ट्रीय उद्योगों को विदेशी प्रतिस्पर्द्धा से सुरक्षा प्रदान की जा सके। यदि राष्ट्रीय सरकार चाहे तो वह सभी प्रमुख उद्योगों अथवा उत्पादनों को राष्ट्रीयकृत कर सकेगी और उन्हें निजी उद्योगों से भी अधिक दक्षता से चला सकेगी। यही सिद्धांत कृषि के क्षेत्र में भी प्रयुक्त होगा। सरकार के द्वारा भूमि अधिकृत की जाकर स्वयं खेती की जा सकेगी। इससे किसानों को बड़ी मशीनों के प्रयोग में प्रशिक्षित किया जायेगा और अधिक व्यापक एवं वैज्ञानिक स्तर पर उत्पादान किया जा सकेगा। सभी उद्योगों में हड़ताल तथा तालाबंदी के मामले जो कि उद्योगों को विफल करने तथा आर्थिक विकास को रोकने वाले होंगे वे सब पूर्णतः राजकीय पंच फैसले को सौंपे जाएंगे तथा तय किये जाएंगे। गम्भीर मामलों को कठोरता से निपटाया जाएगा। निजी सम्पत्ति सामान्य रूप से अनाक्रान्त होगी। राज्य द्वारा समुचित मुआवजे की रकम दिये बिना किसी भी सम्पत्ति को हस्तांतरित कदापि नहीं किया जाएगा।[8]

इस प्रकार सावरकर ने आर्थिक समस्याओं के सम्बन्ध में जो विचार व्यक्त किये हैं वे किसी परम्परागत मान्यता से मेल नहीं खाते हैं। वे समाजवाद के घिसे-पिटे नारे में विश्वास नहीं रखते और न इतिहास की आर्थिक व्याख्या को अंतिम मानते हैं। उनके अनुसार व्यक्ति केवल खाने के लिए नहीं जीता है। उसकी और भी कई आकांक्षाएं होती हैं। केवल आर्थिक कार्यक्रम से देश की सभी समस्याओं का हल नहीं निकाला जा सकता। वे राष्ट्रवादी अर्थव्यवस्था के समर्थक हैं और वर्ग संघर्ष के स्थान पर राष्ट्रीय सहयोग के पक्षपाती हैं। वे विभिन्न हितों को सामुदायिक एकता में बद्ध करना चाहते हैं ताकि आर्थिक हितों में टकराहट न हो तथा शोषण से भी बचा जा सके।[9]

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. सावरकर, विनायक दामोदर (1942) हिन्दुत्व, द्वितीय संस्करण, पूना, पृ॰ 111
2. सावरकर, विनायक दामोदर (1967) हिस्टोरिकल स्टेटमेंट्स, बम्बई : पोपुलर प्रकाशन, पृ॰ 214-217
3. सावरकर, वी॰ वी॰ (1955-56) भारतीय इतिहास के छः स्वर्णिम पृष्ठ, 3 भाग, लखनऊ : राष्ट्रधर्म पुस्तक प्रकाशन
4. कीर, ध्नंजय (1966) वीर सावरकर, बंबई : पोपुलर प्रकाशन, पृ॰ 265-268
5. वही, पृ॰ 271-279
6. वही, पृ॰ 279-280
7. वही, पृ॰ 281-285
8. वही, पृ॰ 286
9. वही, पृ॰ 280-281

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

साझा सरकार के सैद्धांतिक पक्ष का विवेचनात्मक अध्ययन

* संध्या कुमारी

==

सारांश- भारत में 1996 में साझा सरकारों का गठन तकनीकी रूप से पहली बार हुआ और उसे अस्थिर सरकार के रूप में प्रचारित और प्रसारित किया गया। भारत में इसके पश्चात् 1998, 1999 तथा 2004 में और इसके पश्चात 2009 में साझा सरकारों का गठन हुआ। वर्तमान में भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में साझा सरकारों की संस्कृति को आत्मसात् कर लिया गया है और अब भारत में साझा सरकारें अल्पमत सरकारें नहीं हैं बल्कि वह स्थिर शासन प्रदान करने में सक्षम है। भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में यह परिवर्तन लगभग एक दशक पूर्व आया जब एकदलीय सरकारों की अपेक्षा बहुदलीय सरकारों का गठन अनिवार्य हो गया और भारत में राष्ट्रीय स्तर के दल अपने दम पर सरकार बनाने की स्थिति में नहीं रहे। भारत में बहुदलीय शासन व्यवस्था का उदय एक दलीय शासन व्यवस्था के पतन का संकेत था और अब भारत के पड़ोसी राज्यों में भी साझा सरकारें ही कार्य कर रही है। अब यह माना जाने लगा है कि विविधता वाले देशों में जहाँ जाति, धर्म, क्षेत्रीयता आदि के आधार पर मतदान होता है एक दल को सदैव ही बहुमत मिल जाये यह आवश्यक नहीं। अतः ऐसे देशों में धीरे-धीरे इस प्रकार का असंतोष उत्पन्न होता है जो दलों के विकास को बढ़ाता है। क्षेत्रीय आवश्यकताएँ व जन अपेक्षाऐं जब एक दल पूरा नहीं कर पाता है तो विकल्प के रूप में मतदाता अन्य दलों को वोट देता है। इससे बहुदलीय व्यवस्था का विकास होता है और इस प्रकार की बहुदलीय व्यवस्था साझा सरकारों के लिए आवश्यक होती है।

==

साझा सरकारों की प्रक्रिया व गठन के सैद्धांतिक पक्ष को संवैधानिक, संस्थागत तथा राजनीतिक आधारों पर विवेचित किया जा सकता है। सामान्य रूप से वे कारक व बिन्दु जो साझा सरकार के निर्माण में सहायक व बाधक हैं, निम्न प्रकार विश्लेषित किये जा सकते हैं-

संवैधानिक तत्व- संसदीय व्यवस्था में संवैधानिक स्तर पर बहुमत प्राप्त दल ही सत्तारूढ़ स्थिति को प्राप्त करता है, साझा स्थिति में विभिन्न दलों में वैचारिक विभिन्नता के बावजूद एकता स्थापित करना एक कठिन प्रक्रिया होती है। संसदीय शासन में दलीय गठबंधन में सदैव असहज एकता स्थापित होती है। चूँकि प्रत्येक दल अपनी स्थिति बदलने के प्रयास में रहता है व कोशिश करता है कि वह अन्य शक्तिशाली दलों की महत्वपूर्ण स्थिति को प्राप्त कर ले व अधिक शक्तिशाली बन जाये। अतः इसके परिणामस्वरूप दलों के मध्य ऐसी स्थिति बन जाती है कि कुछ दल अधिक शक्तिशाली हो जाते हैं व अन्य दल

=========================

* शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग, जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार)

कम महत्वपूर्ण स्थिति में होते हैं। अतः सत्ता में एक या दो दल ही केन्द्रीय भूमिका में रहते हैं व अन्य दल केवल अपने हित पूर्ति के लिये कार्य करते हैं, वास्तव में उनका कोई विशिष्ट योगदान नहीं होता है।

शक्ति के इस प्रकार के वर्गीकरण से साझा सरकारों में इसी प्रकार की स्थिति देखी जा सकती है जो द्विदलीय व्यवस्था में देखी जाती है। जिस प्रकार की द्विदलीय व्यवस्था में बहुमत प्राप्त दल को सरकार को बनाने के लिये आमंत्रित किया जाता है, उसी प्रकार साझा सरकार में संख्या में अधिक बड़ा दल प्रभावी होता है, तथा निश्चित कार्यक्रमों के आधार पर सरकार का संचालन करता है, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार बहुमत प्राप्त दल के अन्तर्गत मतभेद होने के बावजूद भी उसकी निर्णायक स्थिति होती है। शक्ति के आधार पर दलीय व्यवस्था के संचालन का कार्यभार बड़े दलों के हाथ में ही रहता है।

संवैधानिक स्तर पर उन्हीं दलों को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त होता है जो व्यवस्थापिका में प्रमुख भूमिका में होते हैं तथा इस प्रकार का प्रभाव रखते हैं कि वे सरकार में प्रभावी भूमिका निभा सकते हैं। साथ ही संसदीय व्यवस्था के द्विदलीय व्यवस्था में व्यवस्थापिका पर सरकार को महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त होती है, वह अपने अनुकूल विधेयकों को पारित करवा सकती हैं, क्योंकि उनका सदन में बहुमत होता है जो उन्हें सहायता प्रदान करता है। अतः इस प्रकार की कार्यवाही की विवेकशील लोगों के द्वारा आलोचना की जाती है। तथा सम्पूर्ण विपक्ष एक हो जाता है, व सरकार की आलोचना करता है लेकिन विपक्ष सरकार को पराजित नहीं कर सकता क्योंकि वह बहुमत से नहीं होता है। इस प्रकार बहुमत प्राप्त दल सदन में प्रभावी भूमिका में होता है।

साझा सरकारों में वास्तविक संवाद का केन्द्र व्यवस्थापिका होती है, क्योंकि साझा सरकार में सदैव संभावना होती है कि सरकार को घटक दलों के द्वारा कभी भी ऐसी चेतावनी दी जा सकती है, जो कि सरकार के अस्तित्व को खतरा पहुँचा सकती है। वास्तव में सदन में अविश्वास का एक मात्र वोट भी सरकार को गिरा सकता है व साझा सरकार के अस्तित्व को समाप्त कर सकता है। इस प्रकार व्यवस्थापिका यथार्थ भूमिका का निर्वाह करती है, और कार्यपालिका को नियंत्रित करती है। परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि साझा सरकार सदन में पूर्ण रूप से शक्तिहीन होती है। सरकार सदैव व्यवस्थापिका को भंग करने की स्थिति में होती है, वह इस प्रकार की धमकी भी देती है। इस प्रकार से संसद में आंतरिक तत्वों में शक्ति संतुलन की स्थिति बन जाती है व व्यवस्थापिका एवं वास्तविक कार्यपालिका (सरकार) में आन्तरिक सूझबूझ का जन्म होता है। अतः व्यवस्थापिका व सरकार के संबंध महत्वपूर्ण बन जाते हैं।

साझा सरकारों में जहाँ दलीय एकता सरकार के लिए घातक है वहीं द्विदलीय व्यवस्था में यह तत्व सरकार को मजबूत बनाता है। साझा सरकारों में दलीय एकता सरकार के कार्यो में बाधा उत्पन्न करती है, क्योंकि प्रत्येक दल साझा सरकार मे राजनीतिक अवसरवादिता की पूर्ति में रहता है। वह सरकार पर अनावश्यक दबाव डालता है। साथ ही साझा सरकार में वह अपनी भूमिका मजबूत करने में लगा रहता है। इस प्रकार की गतिविधियाँ सदैव साझा सरकारों में दिखाई देती है। यद्यपि न्यूनतम साझा कार्यक्रम सभी घटक दलों की सहमति से बनाया जाता है तथापि वह साझा सरकार के कार्यो में बाधक होता है।

सरकार के न्यूनतम साझा कार्यक्रम को लागू करने के संबंध में घटक दलों में मतभेद उत्पन्न हो जाते हैं, तथा स्पष्टता का अभाव होने से कार्यों में अनावश्यक विलम्ब होता है। विभिन्न दलों की विचारधाराओं, कार्यक्रमों व सिद्धान्तों में वैचारिक एकता का अभाव होता है। परिणामस्वरूप संसदीय शासन में राजनीतिक दलों का परिवर्तित स्वरूप होने के कारण साझा सरकार का स्वरूप परिवर्तित होता रहता है, तथा यह घटक दलों की सहमति व साझा सरकार में शामिल दलों के समन्वय पर निर्भर होता है कि साझा सरकार कितनी फलीभूत होगी। अतः संसदीय शासन में हितों की राजनीति साझा सरकार के भविष्य को निर्धारित करती है। दूसरी ओर अध्यक्षात्मक शासन में साझा दल शक्तिशाली व अधिक प्रभावपूर्ण सरकार प्रदान करते हैं तथा सरकार अधिक स्थिर होती है, व सरकार की शक्तियों में अत्यधिक विस्तार होता है। इस प्रकार अध्यक्षात्मक शासन में साझा सरकारों के द्वारा राजनीतिक दलों के भविष्य को नियंत्रित किया जाता है। इस प्रकार विषम दलीय सरकार भी अधिक स्थायी होती है।

इस प्रकार अध्यक्षात्मक शासन में साझा सरकारों का भविष्य अध्यक्ष के व्यक्तित्व व उसके निर्वाचन से तय किया जाता है। इस प्रकार अध्यक्ष एक मात्र व्यक्ति होता है जो साझा सरकार की स्थिति बदल सकता है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि राष्ट्रपति जो चाहे वो कर सकता है। वास्तव में वह किसी एक पार्टी के सहयोग पर नहीं बल्कि बहुत से दलों के सहयोग से सरकार का संचालन करता है। इस प्रकार से व्यवस्थापिका का बहुदलीय होना राष्ट्रपति की शक्तियों में वृद्धि करता है, राष्ट्रपति का स्वयं का व्यक्तित्व भी साझा सरकारों को प्रभावशाली व स्थिर बनाता है।

संस्थागत तत्व- साझा सरकारों में कुछ महत्वपूर्ण संस्थागत तत्व भी प्रभावपूर्ण भूमिका अदा करते हैं ये निम्न हैः-

निर्वाचन व्यवस्था- साझा सरकारों का निर्माण सामान्यतः निर्वाचन व्यवस्था से जुड़ा हुआ है। सामान्य बहुमत व एकल मतदान द्विदलीय व्यवस्था को बढ़ावा देता है वहीं बहुदलीय व्यवस्था के लिये द्वितीय मतदान व्यवस्था और आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली अधिक कारगर होती है।

इस प्रकार की व्यवस्था जर्मनी में तथा फ्रांस के तृतीय गणतंत्र के संविधान में देखी जा सकती थी। हॉलैण्ड में शताब्दी के प्रथम दो दशकों में (1894 में बेल्जीयम को छोड़कर) द्वितीय मतदान व्यवस्था ने बहुदलीय व्यवस्था को जन्म दिया। बेल्जीयम अपवाद था क्योंकि उस समय में राजनीतिक दलों का आंतरिक गठन इस प्रकार का था कि वहाँ इस व्यवस्था का प्रभाव नहीं पड़ा, बहुत से देशों में द्वितीय मतपत्र व्यवस्था के स्थान पर आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली को स्वीकार किया गया। परन्तु दोनों ही व्यवस्था ने बहुदलीय व्यवस्था का बढ़ावा दिया। पुनः बेल्जीयम अपवाद दिखाई दिया जब कि वहाँ केवल तीन दलीय व्यवस्था का प्रभाव रहा। यद्यपि प्रो. डहल यह स्वीकारते हैं कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व बहुदलीय प्रणाली के लिये आवश्यक है। इस प्रकार आनुपातिक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था बहुदलीय व्यवस्था को बढ़ावा देती है, या एक ध्रुवीय व्यवस्था को जिसमें अधिकांश दल एक दल के साथ हों परन्तु यह कभी भी द्विदलीय व्यवस्था के उदय में सहायक नहीं है।[1]

इस प्रकार की व्यवस्था जर्मनी में अपनायी गई जहाँ विभिन्न स्तरों पर दोनों को लागू

किया गया। परन्तु इन देशों में जहाँ सिंगल वोट व्यवस्था है आनुपातिक प्रतिनिधित्व व्यवस्था को भी लागू किया गया है जिसे विभिन्न दलों पर सिद्ध किया जा चुका है।

प्रतिनिधित्व प्रणाली में बहुदलीय व्यवस्था सुदृढ़ हो जाती है। दलीय खण्डन व विखण्डन की प्रक्रिया सशक्त हो जाती है। चूँकि जब निर्वाचन क्षेत्रों का निर्माण जनसंख्या के अनुपात के आधार पर होता है तो दलीय सक्रियता व ध्रुवीकरण प्रजातांत्रिक देशों में एक सहज प्रक्रिया बन जाती है। इस प्रकार आनुपातिक प्रतिनिधित्व व्यवस्था दलों की संख्या में गुणात्मक वृद्धि करती है। इस प्रकार बहुदलीय व्यवस्था में इस प्रकार की व्यवस्था के प्रति रूचि दिखाई देती है क्योंकि वह अधिक समूहों का प्रतिनिधित्व करती है। लेकिन सदैव नई पार्टियों का उदय व उनकी उपस्थिति को इस व्यवस्था में नकारा जाता है। इस प्रकार की व्यवस्था को हॉलैण्ड में सफलता से लागू किया गया है।

राजनैतिक दलों का चरित्र व प्रकृति-

साझा सरकारों के स्वरूप व उनकी स्थिति को राजनीतिक दलों का चरित्र भी प्रभावित करता है। एप्सटीन ने कहा है कि बहुदलीय व्यवस्था में साझा सरकारों के अलावा कोई विकल्प नहीं है। यदि एक या बहुत से दलों के बीच में शक्तियों का विभाजन है तब भी साझा सरकार ही एक मात्र विकल्प है। इस प्रकार की व्यवस्था में यदि नवीन निर्वाचन में सत्ता परिवर्तन होता है तब ही साझा सरकार का विकल्प बदल पाता है। साझा सरकार के दलों में या सत्ता में परिवर्तन आने पर सरकार का स्वरूप साझा सरकार का ही होता है। इस प्रकार की व्यवस्था में पुरानी साझा सरकारें कुछ परिवर्तन के साथ पुनः सत्ता हासिल कर लेती है। इस प्रकार के उदाहरण इजराइल व हॉलैण्ड के सरकारों के दिये जा सकते हैं।[2]

फ्रांस में राजनैतिक दलों का स्वरूप दबाव ग्रस्त स्थिति में है। फ्रांस में राजनीतिक दल दबाव समूह पर आश्रित होते हैं, अतः ये एक दूसरे पर निर्भर होते हैं। राजनीतिक दल और दबाव समूह अलग प्रकार के सिद्धान्तों पर गठित व आधारित नहीं होते हैं, इस प्रकार की विचारधारा फ्रांस में राजनीतिक दलों व दबाव समूहों की अन्तर्निर्भरता को स्पष्ट करती है। राजनीतिक दलों की संयुक्त कार्यवाही दबाव समूहों के द्वारा की जाती है तथा कहा जाता है कि फ्रांस में राजनीतिक दलों का बहुमत नहीं बल्कि दबाव समूहों का बहुमत होता है। इस प्रकार निर्वाचन व्यवस्था और व्यवस्थापिका इस व्यवस्था को परिवर्तित करने में असफल रही है।

आमण्ड ग्रेबाइल ने फ्रांस व ब्रिटेन के राजनीतिक दलों की व्यवस्था के संदर्भ में टिप्पणी करते हुए कहा कि ब्रिटेन और फ्रांस की व्यवस्था एक प्रकार के दबाव समूहों की नीति पर आधारित थी। कुछ दल सामान्य हितों पर आधारित है जो कि व्यक्तिगत हितों की अपेक्षा अधिक व्यापक होते हैं। वह केवल दबाव समूहों के प्रवक्ता मात्र बनकर नहीं रह जाते हैं। इस प्रकार से फ्रांस की बहुदलीय व्यवस्था व ब्रिटेन की द्विदलीय व्यवस्था में अधिक अन्तर स्पष्ट रूप से परिलक्षित नहीं होता है।

फ्रांस के तृतीय और चतुर्थ गणतंत्र के संविधान को छोड़कर राजनीतिक दल बहुदलीय व्यवस्था में मिश्रित प्रतीत होते हैं। इसमें वे सभी गुण मिश्रित हैं जो बहुदलीय व्यवस्था के होते हैं। बेल्जीयम और नीदरलैण्ड दोनों ही देशों में इस प्रकार की व्यवस्था के उदाहरण देखे जा सकते हैं, जहाँ संसदीय शासन और बहुदलीय व्यवस्था स्थापित है।

जर्मनी में भी इसी प्रकार की व्यवस्था है जहाँ कोई भी अकेला दल सरकार बनाने की स्थिति में नहीं है। अतः साझा सरकार का निर्माण आवश्यक हो जाता है। इसी प्रकार की व्यवस्था फ्रांस की सरकार व संस्कृति में परिलक्षित होती है जहाँ विभिन्न दल सरकार में शामिल होते हैं।

राजनीतिक दल-

साझा सरकार के निर्माण में साझा सरकारों का स्वरूप राजनीतिक दलों से प्रभावित होता है। साझा सरकार में सरकार की स्थिति तरल पदार्थ की तरह होती है। न्यूनतम साझा कार्यक्रम में होने के बावजूद भी सदैव विघटन की संभावना बनी रहती है। मंत्रिमण्डल में विभिन्न दलों की स्थिति भी तरल होती है जो बदलती रहती है। इस प्रकार घटक दलों से सदैव यह खतरा होता है कि वे महत्वपूर्ण विधेयक के विरोध व विपक्षी दल के समर्थन में मतदान न करे। अतः साझा सरकार में, सरकार के विपक्षीदल यदि आपस में एक नहीं है तो सरकार की स्थिति पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है, यदि वे एकमत हो जाते हैं तो सरकार के लिये कड़ी चुनौती उत्पन्न होती है।

साझा सरकारों में विघटन की स्थिति में सरकार को खतरा उत्पन्न होता है। अगल-अलग दल सदैव सरकार को धमकी देते रहते हैं। इसलिये सरकार के निर्णय या तो सहमति पर आधारित होते हैं या संशोधित होते रहते हैं। साझा सरकार का चरित्र सरकार में शामिल दलों की विचारधारा से बनता है। वे यदि सरकार में शामिल नीतियों व विचारधारा के विरोधी हैं तो वे सरकार के लिये सदैव अवरोध उत्पन्न करते हैं। यह भी संभव है कि वह दल विपक्षी दल का समर्थक बन जाये। दलों का दृष्टिकोण ही साझा सरकार के नेतृत्व व स्थायित्व प्रदान करता है।

फ्रांस के संदर्भ में विपक्ष की स्थिति को स्पष्ट करते हुए अल्प्रफेड ग्रोसर ने कहा है ''नथिंग बट अपोजिसन''। तृतीय और चतुर्थ गणतंत्र के संविधान के संदर्भ में उन्होंने कहा था कि सरकार के लिये एक स्थायी और सामूहिक विपक्ष होना चाहिए, क्योंकि फ्रांस में प्रत्येक राजनीतिक दल सदैव विपक्षी दल की भाषा बोलता है, चाहे वह राष्ट्र हित में हो या नहीं। बेल्जीयम में लगभग आठ दशक से दलीय स्थिरता है। विपक्ष केवल औपचारिक भूमिका निभाता है तथा केवल बजट को छोड़कर वह अन्य मुद्दों पर अपनी उपस्थिति भी दर्ज नहीं कराता है। इसका कारण समयाभाव, प्रतियोगिता (प्रतिस्पर्धा) तथा निराशा की भावना है जो विपक्ष को सही स्थान प्रदान नहीं करती जिससे कि वह सरकार के कार्यो पर निगरानी रख सके। उसी प्रकार स्वीडन में भी यह आम धरणा है कि विपक्ष अत्यधिक कमजोर है। इसलिये कहा जा सकता है कि वहाँ केवल निर्वाचन ही एक माध्यम है जिससे सुदृढ़ सरकार का चुनाव किया जा सकता है।

इस प्रकार सावधानी से एक अच्छे विपक्ष की स्थापना की जा सकती है। वर्तमान समय की दलीय व्यवस्था बड़ी कठिन है। फिर भी विपक्ष वह नियामक है जो सरकार की अवांछित गतिविधियों पर नियंत्रण रखता है।

राजनीतिक अस्थिरता के संदर्भ में फ्रांस के तृतीय एवं चतुर्थ गणतंत्र का उदाहरण दिया जाता है कि साझा सरकारें सदैव राजनीतिक अस्थिरता उत्पन्न करती है। जब सरकार में नवीन परिवर्तन आते हैं और नये चुनाव होते हैं और कोई नया विकल्प नहीं उभरता है तो ऐसी स्थिति में राजनीतिक अस्थिरता उत्पन्न होती है। यह स्थिति बहुदलीय व्यवस्था में

सर्वाधिक पायी जाती है। इस प्रकार की व्यवस्था फ्रांस, जर्मनी व इटली में मुसोलनी के बाद की स्थिति इस व्यवस्था का प्रतीक थी जिसमें राजनीति अस्थिरता उत्पन्न हुई।

राजनीतिक स्थिरता के संदर्भ में डच गणराज्य (हॉलैण्ड) तथा इजराइल का उदाहरण दिया जाता है जहाँ पर बहुदलीय व्यवस्था होने के बावजूद भी राजनीतिक स्थिरता आज भी कायम है, तथा साझा सरकारें राजनीतिक स्थिरता के साथ कार्य कर रही है। इसके अतिरिक्त स्केन्डेनेवियन देशों में भी बहुदलीय व्यवस्था के बावजूद राजनीतिक स्थिरता कायम है।[3] अतः स्वीडन में एक मात्र बड़े दल के रूप में सोशल डेमोक्रेट्स तथा इसी प्रकार नार्वे में लेबर पार्टी की सरकार भी राजनीतिक स्थिरता प्रदान किये हुये है। अतः यह कहना उचित नहीं है कि बहुदलीय व्यवस्था सदैव राजनीतिक अस्थिरता उत्पन्न करती है। विश्व के बहुत से ऐसे राष्ट्र हैं जहाँ आज भी बहुदलीय व्यवस्था युक्त साझा सरकारें सक्रिय है। आवश्यक नहीं कि सदैव फ्रांस की राजनीतिक व्यवस्था की भाति अन्य राष्ट्रों की व्यवस्था अस्थिर हो जाये। लेकिन आज भी विश्व के अधिकांश राष्ट्र इस प्रकार की अस्थिरता का सामना कर रहे हैं।[4]

फ्रांस में सरकारों के अस्थिर होने का मुख्य कारण केन्द्र द्वारा क्षेत्रीय समस्याओं को अनदेखा करना रहा है। फ्रांस की साझा सरकारों का अध्ययन इस बात को इंगित करता है कि वहाँ हमेशा केन्द्रीय दलों के द्वारा घरेलू मुद्दों के प्रति असहमति व्यक्त की गई। इस प्रकार नीति परिवर्तन ने सत्ता में परिवर्तन की पहल की जो अस्थिरता का कारण बना। इस प्रकार केन्द्रीय दलों द्वारा जब व्यक्तिगत स्वार्थों के आधार पर सरकार का निर्माण किया गया तो वह राजनीतिक अस्थिरता का महत्वपूर्ण कारण बना।

साझा सरकारों का निर्माण जब विभिन्न दलों के द्वारा न्यूनतम साझा कार्यक्रम के तहत किया जाता है तब सभी घटक दल इस न्यूनतम साझा कार्यक्रम के अनुसार सरकार चलाने की शपथ लेते हैं, सरकार के समर्थन की बात करते हैं। यह औपचारिक शपथ राजनीतिक दलों के द्वारा सरकार संचालन के लिये ली जाती है। लेकिन यही राजनीतिक दल जब सरकार से अपने हितों की पूर्ति के लिये दबाव डालते हैं तो सरकार में केन्द्रीय दल की स्थिति कमजोर हो जाती है। चूँकि इसमें घटक दलों के हितों, जो कि उनके निहित स्वार्थ से प्रेरित होते हैं, के स्थान पर केन्द्रीय दल राष्ट्रीय महत्व को वरीयता देने लगते हैं तो ये दल टकराव की स्थिति ग्रहण कर लेते हैं। दोहरे चरित्र वाली पार्टियाँ भी राजनीतिक संकट की स्थिति उत्पन्न करती है तथा सरकार को मजबूर करती है कि वह उनकी बात माने व उनके हितों के अनुकूल नीति का निर्धारण करे। ये दल केन्द्रीय दल के साथ इस प्रकार की सौदेबाजी करते हैं जिससे राजनीतिक संकट उत्पन्न हो जाता है।

साझा सरकार के अन्तर्गत घटक दल जितने संयमशील और अनुशासित होंगे सरकार उतनी ही स्थिर होगी। किन्तु व्यवहार में इसका अनुसरण नहीं किया जाता है जिससे सौदेबाजी व अस्थिरता की स्थिति उत्पन्न होती है।

यूरोप के बहुदलीय शासन व्यवस्था वाले देशों में इस प्रकार की समस्यायें साझा सरकार में आम तौर पर देखने को मिलती है। फ्रांस के तृतीय व चतुर्थ गणतंत्र की साझा सरकारों का अनुभव इसको इंगित करता है। फ्रांस में राजनैतिक दलों की कमजोर ढाँचागत नीति, अनुशासन का अभाव तथा विभिन्न वैचारिक आधार, राजनैतिक अस्थिरता के लिये जिम्मेदार रहे हैं। इसके अतिरिक्त फ्रांस के राजनीतिक दलों के अध्ययन के संदर्भ में कुछ

अन्य तत्व हैं जो फ्रांस की राजनैतिक अस्थिरता का स्पष्ट करती है- जैसे राजनैतिक दलों के द्वारा स्थानीय स्तर पर लोगों के बीच अपनी नीतियों का क्रियान्वयन न कर पाना, राजनैतिक दलों में सहज ढाँचागत स्वरूप का न होना, नेतृत्व के प्रति अविश्वास का भाव या संदेहास्पद नेतृत्व का होना।

जब फ्रांस में राजनीतिक दलों के द्वारा अस्थिर शासन प्रदान किया गया तो वहाँ पर बहुदलीय व्यवस्था को स्थापित करने के अलावा कोई विकल्प ही नहीं बचा था। स्केन्डेनेवियन देशों के अनुभव से फ्रांस में साझा सरकारों को स्थिरता प्रदान करने के तत्व मिले। अन्य देशों के राजनीतिक अनुभवों ने फ्रांस को स्थायी शासन प्रदान करने के लिये सहायक तत्व प्रदान किये जिसे फ्रांस ने अपने अनुसार कुछ परिवर्तन कर अपनाया और साझा सरकारों को स्थिरता प्रदान की। इन तत्वों में विशेष रूप से दलों का राजनीतिक स्वरूप तथा संविधान की व्यवस्था, स्थिर मंत्रिमण्डलीय व्यवस्था, निर्वाचन पद्धति, व्यवस्थापिका की प्रक्रिया, राष्ट्रीय आपात एव सरकार में केन्द्रीय दलों की भूमिका, दलीय अनुशासन का प्रभावपूर्ण होना, आम सहमति का समन्वय पर आधारित व्यवस्था आदि कुछ ऐसे तत्व थे जिन्हें फ्रांस ने इन राष्ट्रों के अनुभवों के आधार पर सीखा तथा इनमें सामयिक परिवर्तन करके स्थिरता की तरफ कदम बढ़ाया।

बेल्जीयम में राजनीतिक स्थिरता त्रिदलीय शासन व्यवस्था के संदर्भ में देखी जा सकती। 19वीं शताब्दी के अन्त से बेल्जीयम में इस प्रकार की राजनीतिक स्थिरता को देखा जा सकता है। बेल्जीयम में साझा सरकारों में स्थिायित्व का प्रमुख कारण त्रिादलीय शासन व्यवस्था रही।

बेल्जीयम की इस द्विदलीय या त्रिदलीय शासन व्यवस्था ने राजनीतिक स्थिरता प्रदान करने में महती भूमिका निभाई, विभिन्न जातियों भाषाई मतभेद होने के बावजूद वहाँ की राजनीतिक व्यवस्था में इन सब को व्यवस्थित करके बेल्जीयम में साझा सरकारों में राजनीतिक स्थिरता उत्पन्न नहीं होने दी।[5]

इसी प्रकार हॉलैण्ड का उदाहरण लिया जा सकता है जहाँ कभी भी फ्रांस की भाँति राजनीतिक अस्थिरता उत्पन्न नहीं हुई। साझा सरकारों में स्थिरता के लिये विभिन्न राष्ट्रों में अनेक अनुकूल व्यवस्था का होना आवश्यक है। अतः साझा सरकार राजनीतिक रूप से सपफल देशों का अनुसरण कर तथा अपने में परिवर्तन कर स्थिरता एक राष्ट्र में विभिन्न तत्वों पर निर्भर करती है जैसे ऐतिहासिक परिस्थितियाँ या केन्द्रीय तत्व व एक देश की आवश्यकताएँ व अपेक्षायें, राजनीतिक दलों की उत्पति, उनका स्वरूप, विकास ऐसे तत्व हैं।

राजनीतिक दलों का स्वरूप वास्तव में किसी भी राष्ट्र में साझा सरकारों के भविष्य को निर्धारित करता है, तथा उसके साथ ही आर्थिक व सामाजिक तत्व भी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। सामान्यतः बहुदलीय व्यवस्था वाले देशों में साझा सरकारों का अस्तित्व होता है। बहुदलीय व्यवस्था में राजनीतिक अनुशासन व दलीय व्यवस्था में प्रतिबद्धता होती है। नये चुनावों में विकल्पों का अभाव ही साझा सरकारों के लिये खतरा उत्पन्न करता है। अतः साझा सरकारों के सपफल संचालन के लिये यह आवश्यक है कि विभिन्न राजनीतिक दलों के द्वारा न्यूनतम कार्यक्रमों पर आमसहमति का विकास किया जाये। विश्व के अनेक देशों में इस आधार पर साझा सरकारें सपफल रही है तथा अन्य

देश उन राष्ट्रों का अनुसरण कर साझा सरकारों का सपफल संचालन कर रहे हैं।

भारत में 1996 में साझा सरकारों का गठन तकनीकी रूप से पहली बार हुआ और उसे अस्थिर सरकार के रूप में प्रचारित और प्रसारित किया गया। भारत में इसके पश्चात् 1998, 1999 तथा 2004 में और इसके पश्चात 2009 में साझा सरकारों का गठन हुआ। वर्तमान में भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में साझा सरकारों की संस्कृति को आत्मसात् कर दिया गया है और अब भारत में साझा सरकारें अल्पमत सरकारें नहीं हैं बल्कि वह स्थिर शासन प्रदान करने में सक्षम है। भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में यह परिवर्तन लगभग एक दशक पूर्व आया जब एकदलीय सरकारों की अपेक्षा बहुदलीय सरकारों का गठन अनिवार्य हो गया और भारत में राष्ट्रीय स्तर के दल अपने दम पर सरकार बनाने की स्थिति में नहीं रहे। भारत में बहुदलीय शासन व्यवस्था का उदय एक दलीय शासन व्यवस्था के पतन का संकेत था और अब भारत के पड़ोसी राज्यों में भी साझा सरकारें ही कार्य कर रही है। अब यह माना जाने लगा है कि विविधता वाले देशों में जहाँ जाति, धर्म, क्षेत्रीयता आदि के आधार पर मतदान होता है एक दल को सदैव ही बहुमत मिल जाये यह आवश्यक नहीं। अतः ऐसे देशों में धीरे-धीरे इस प्रकार का असंतोष उत्पन्न होता है जो दलों के विकास को बढ़ाता है। क्षेत्रीय आवश्यकताएँ व जन अपेक्षाऐं जब एक दल पूरा नहीं कर पाता है तो विकल्प के रूप में मतदाता अन्य दलों को वोट देता है। इससे बहुदलीय व्यवस्था का विकास होता है और इस प्रकार की बहुदलीय व्यवस्था साझा सरकारों के लिए आवश्यक होती है।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. ड्वर्गर, एम. (1959) पोलिटिकल पार्टीज, लंदन, न्युआर्क, पुनर्संस्करण, पृ. 334-336
2. सर्टोरी , जियोवानी (1966), 'यूरोपियन पॉलिटिकल पार्टीजः दी केस ऑपफ पोलराइज्ड प्लुरालिज्म', जॉसेपफ ला पॉलम्बरा, विरेन (सम्पा.) पालिटिकल पार्टीज एण्ड पॉलिटिकल डेवलपमेंट, न्सू जर्सीः प्रिंसटन, पृ. 138.
3. आमण्ड, गेब्रियल ए. (1960) 'ए पफंक्शनल अप्रोच टू कम्परेटिव पॉलिटिक्स', गेब्रियल ए. आमण्ड एंड जेम्स एस. कोलमैन (सम्पा.) दी पॉलिटिक्स आपफ दी डेवलपिंग एरिया, न्यूजर्सीः प्रिंसटन, पृ. 33-45.
4. रूस्टो, डेन्कवार्ट ए. (1956) 'स्केनडिनावियाः वर्किंग मल्टी पार्टी सिस्टम्स' न्यूमैन, ए. (सम्पा.) मॉडर्न पॉलिटिकल पार्टीज, अप्रोचेज टू कम्परेटिव पॉलिटिक्स, शिकागोः यूनिवर्सिटी ऑपफ शिकागो प्रेस, पृ. 155-168.
5. पूर्वोक्त, पृ. 69-70

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

लोकतांत्रिक सरकार की अलोकतांत्रिक पुलिस

* मनीष कुमार

सारांश- **20वीं शताब्दी आते-आते राज्य की प्रकृति में काफी परिवर्तन आया। अब राज्य का स्वरूप पुलिस राज्य से बदल कर लोक कल्याणकारी राज्य के रूप में परिवतत हुआ। राज्य के कल्याणकारी स्वरूप के उदय होने के कारण सरकारी अधिकारियों तथा निकायों की कार्य शक्तियों एवं महत्ता में काफी वृद्धि हुई जिसके कारण सामाजिक चिन्तन की धारा बदल गई। पुलिस राज्य में यह धारणा थी कि राज्य का कार्य सिर्फ सुरक्षा एवं विधि-व्यवस्था कायम करना था, किन्तु लोक कल्याणकारी राज्य में राज्य से सारे कार्य सिर्फ लोगों (नागरिकों) के कल्याण एवं उसके हित के लिए ही किया जाए।**

जॉन लॉस्की का मत है कि "राज्य का अस्तित्व, प्रजाजनों के नैसूगक (प्राकृतिक) अधिकारों का संरक्षण के लिए है न कि मनमाने ढंग से उस पर निरंकुश शासन सौंपने के लिए।" जॉन जेक्स रूसो का कथन है कि "राज्य तथा विधि दोनों का उद्गम जनता की सामान्य इच्छा है अतः राज्य से यह अपेक्षा की जाती है कि वह नागरिकों के सिविल एवं विधिक अधिकारी का संरक्षण करें।"

लोकतांत्रिक का अर्थ है, जनता का, जनता के लिए, जनता द्वारा शासन। अर्थात् लोकतांत्रिक शासन पद्धति वाले देश में सरकार का गठन जनता द्वारा निर्वाचन के माध्यम से होता है अर्थात् जनता अपनी "सामान्य इच्छा" मतदान द्वारा प्रकट करती है, जिसके आधार पर सरकार का गठन होता है यानि की सरकार अपनी शासकीय शक्ति जनता से प्राप्त करती है अतएव लोकतंत्र में सरकार जनता के प्रतिउत्तरदायी होता है। इसलिए लोकतांत्रिक सरकार का अर्थ है लोक कल्याणकारी एवं लोक हितैषी सरकार। लोकतंत्र में शासन का वास्तविक मालिक जनता होता है और सरकार एवं उसके अधीनस्थ अधिकारी व कर्मचारी जनता की सेवा के लिए नियुक्त किये जाते हैं यही कारण है कि वे लोक सेवक कहलाते हैं, तथा भारतीय दंड संहिता-1860 की धारा-21 के अधीन आते हैं।

पुलिस भी धारा-21 के अधीन आते हैं अतः पुलिस भी लोक सेवक है इसलिए उसका विधिक दायित्व है कि वह निष्पक्ष रूप से जनता की सेवा अपने विधिक कर्त्तव्य के निर्वहन के रूप में करें। इसके अलावे पुलिस को वेतन भत्ते भी इसी कार्य (जनसेवा) के लिए ही मिलता है, न कि राजनीतिज्ञों, अमीरों और क्रिमिनलों की चापलूसी करने के लिए? उनको मिलने वाला वेतन-भत्ते जनता के टैक्स (कर) के पैसों से ही आता है। इस मायने से भी वह जनता का सेवक है। अतः उन्हें जनहित एवं जन कल्याण हेतु अपनी सेवाएँ देने के लिए सदैव निष्पक्ष रूप से कार्यरत एवं प्रयासरत रहना चाहिए। भारत में पुलिस

* रिसर्च स्कॉलर (पीएच.डी.) मगध विश्वविद्यालय, बोध गया।

किया गया था। इस अधिनियम में इस बात का कहीं भी जिक्र नहीं किया गया था कि पुलिस का कार्य लोक सेवा है। प्रथम राष्ट्रीय पुलिस आयोग (1978-1981) ने अपने रिपोर्ट में कहा कि-"पुलिस का कर्त्तव्य जनता की सेवा है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि

प्रशासन के अन्तर्गत वे सभी कार्य आ जाते हैं, जिसका उद्देश्य लोक नीति/सार्वजनिक नीति को पूरा करना या क्रियान्वित करना होता है।"[1] लूथर गुलिक का कथन है कि-"उत्‍ ष्ट तरीके से शासकीय कार्यों का प्रबंधन ही लोक प्रशासन है।" प्रशासनिक विधि का कार्य सरकारी अधिकारियों से विधिसंगत नियमों के अनुसार कार्य करवाना है तथा उसको मनमानी करने से रोकना है जिससे जनता के अधिकारों में अवांछित हस्तक्षेप न किया जाए।[2]

पुलिस सरकार का एक अधीनस्थ प्रशासनिक अंग है जिसका मुख्य कार्य व्यक्ति के जीवन एवं सम्पत्ति की रक्षा करना तथा समाज (सोसाइटी) में विधि-व्यवस्था (लॉ एण्ड ऑडर) तथा शांति एवं सुरक्षा (पीस एण्ड सिक्यूरिटी) को कायम रखना है। चूँकि लोकतांत्रिक शासन पद्धति में सरकार जनता के प्रति उत्तरदायी होता है क्योंकि उसे जनता के मतदान (सामान्य इच्छा) के कारण ही शासन शक्ति प्राप्त होता है इसलिए पुलिस जो कि सरकार का अधीनस्थ अंग है, सरकार और जनता के प्रति अपने प्रत्येक कार्य के लिए उत्तरदायी है। कहने का तात्पर्य यह है कि लोकतांत्रिक सरकार की अधीनस्थ पुलिस भी लोकतांत्रिक ही होती है उन्हें भी लोकतांत्रिक मर्यादाओं के अधीन रहना होता है।

किन्तु पुलिस के संदर्भ में ये सभी बातें सिर्फ किताबों के लिखी हुई ही अच्छी लगती है, वास्तविकता इससे कोसो दूर है वर्त्तमान भारतीय पुलिस प्रशासन उपरोक्त अवधारणाओं के ठीक विपरीत कार्य करती है, "वह अपने आपको, जनता का सेवक न मानकर खुद को जनता का मालिक और रहनुमा के रूप में प्रस्तुत करता है।

पुलिस अपने भय और आतंक से आम लोगों के मन में इतना आशंका एवं डर भर दिया है कि आम लोक पुलिस का नाम सुनते ही उसके पास जाने से भी कतराते हैं, उसका यह मत होता है कि पुलिस के पास जाने का मतलब है बेवजह प्रताड़ित होना अथवा जलील होना। अपने दमनकारी अराजकतापूर्ण रवैये के कारण पुलिस "विधि शासन" के स्थान पर "पुलिस का आतंक" एवं तानाशाह पुलिस का शासन कायम करते हैं।" इस कार्य में उसे रसूखदार एवं सफैदपोशधारी लोगों का खूब सहयोग मिलता है क्योंकि वे पुलिस को अपनी रखैल की तरह इस्तेमाल करती है और पुलिस भी इसके एवज में मोटी रकम रिश्वत में तो पाते ही हैं साथ ही साथ बहुत जल्दी-जल्दी पदोन्नति भी पाते हैं, अर्थात् "एक हाथ दो काज।"

हमारी सरकार और पुलिस यही मानती है कि आम लोग कुत्ता-बिल्ली (जानवर) की तरह पैदा होते हैं और उसी की तरह (जानवर की तरह) राजनीतिज्ञों एवं नौकरशाहों की जी हजूरी करते मर जाते हैं, वे आम व्यक्ति को मानव (ह्यूमन) मानते ही नहीं हैं तो उसके साथ "मानवीय गरिमा" के पेश आने का कोई औचित्य ही नहीं है, यह तो गनीमत कहिए हमारे संविधान निर्माताओं का, कि उन्होंने नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए उच्च

प्रदान किया है। अन्यथा सरकार और उसके अधीनस्थ पुलिस आम जनता को सिर्फ जानवर मानते ही नहीं, बल्कि उसके साथ वही व्यवहार करते जो व्यवहार आज जानवरों के साथ

जबलपुर बनाम् शिव कांत शुक्ला[3] के बाद में सरकार ने यह दावा किया कि जब

प्रवर्त्तन हेतु न्यायालय में जाने का अधिकार नहीं है। सरकार किसी को भी कैद कर सकती है और जेल में डाल सकती है। यहाँ तक कि किसी का प्राण (जीवन) भी ले सकती है।" उपरोक्त तर्क से सरकार और उसके अधीनस्थ पुलिस की मंशा साफ-साफ जाहिर होती है कि सरकार एवं सफेदपोशधारी (राजनीतिज्ञ) पुलिस का उपयोग अपने विरुद्ध आंदोलन को दबाने और अपने स्वार्थ सिद्धि या हित साधने के लिए एक सशस्त्र हथियार यंत्र के रूप में करते हैं।

यही कारण है कि आजादी की लड़ाई के तमाम बड़े नेता अपने निजी अनुभव से यह जानते थे कि ब्रिटेन, अमरीका और अन्य पश्चिमी लोकतांत्रिक देशों की लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में पुलिस और दतरशाही (नौकरशाही) की भूमिका कैसी होती है वे यह भी बखूबी जानते थे कि किसी लोकतांत्रिक व्यवस्था में पुलिस का कामकाज कैसा होता है। खासकर यह कि वह कानून के मुताबिक चलने वाले नागरिकों के साथ कैसे पेश आती है। साम्राजी हुकूमत के दौरान पुलिस के दमनात्मक चरित्र के कड़वे अनुभव उन्होंने खुद झेले हुए थे उन्हें पता (मालूम) था कि आम लोगों के दिल पर थाने का कैसा खौफ छाया रहता है फिर भी उन्होंने पुलिस अधिनियम 1861 को बरकरार रखा? यह कानून ऐसा पुलिस बल तैयार करने के लिए बनाया गया था जो जनता को खौफ और दासता में जकड़े रहे।[4]

पुलिस के तानाशाही, मनमानेपन एवं दमनात्मक रवैये के पीछे कारण यह है कि आज भी पुलिस, भारतीय पुलिस अधिनियम 1861 के उपबंधों के अधीन संचालित होता है। इसमें पुलिस को तानाशाह बनाने एवं दमनात्मक रवैया अपनाने हेतु पर्याप्त अधिकार एवं शक्तियों प्रदान की गई है। इस अधिनियम को ब्रिटिश हुकूमत द्वारा, प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857 के बाद आजादी के लिए संघर्ष पर अंकुश लगाने और सख्त से सख्त कानून बनाकर हुकूमत से असंतुष्ट और विद्रोह कर रही जनता की गुलाम बना कर रखना था, ताकि वह ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ आवाज न उठा सके। इस अधिनियम के तहत एक अत्याचारी एवं दमनात्मक पुलिस बल की स्थापना की गई। इसी क्रम में दंड प्रक्रिया संहिता

लोगों पर शासन की पकड़ मजबूत करने के लिए बनायी थी। विदेशी शासक की नजर में प्रजा (गुलाम प्रजा) के जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रताओं की कोई अहमियत नहीं होती है। इसलिए पुलिस को किसी सीमा तक अधिकार देने में कोई हिचक नहीं होती है। यही

का अधिकार है।[5] शक के आधार पर गिरफ्तारी का अधिकार है।[6] अपनी इच्छानुसार (जमानतीय) मामले में थाने से जमानत देने का अधिकार[8] किसी भी व्यक्ति को किसी 24 घंटे तक हिरासत में रखने का अधिकार आदि। भारतीय पुलिस की संरचना मिलिट्री पैटर्न पर की गयी थी जिसका उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्य की बुनियाद को मजबूत करना था।

आजादी के 66 वर्ष बीत जाने पर भी भारतीय पुलिस की बुनियादी संरचना और कार्यप्रणाली में कोई ज्यादा अन्तर दिखाई नहीं देता है वास्तव में पुलिस तंत्र जमींदारी प्रथा की उपज है और सामन्तवादी प्रणाली की जरूरतों को पूरा करने में सक्षम है।[9] बिहार में

किया गया। अधिकतर मामलों में पुलिस जमींदारी के साथ षड्यन्त्र में शामिल थी। यह स्पष्ट रूप से कहा गया था कि "पुलिस 'वेतन' सरकार से प्राप्त करती है और 'भत्ता' जमींदारी से।"[10] भारत में पुलिस अब भी वैसा ही व्यवहार करती है जैसा कि गुलामी के दिनों अंग्रेजी हुकूमत वाली पुलिस किया करती थी।[11] उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश बिहार के गरीब निरही आदिवासी, क्षेत्रीय राजनीतिज्ञों और जमींदारों के एजेन्ट अथवा हथियार के रूप में काम करने वाली पुलिस के घातक भय में जीते हैं जो लोग उनके विरुद्ध आवाज उठाते हैं उन पर गोलियाँ चलाई जाती है, उनकी झोंपड़ियाँ लूटी और जलाई जाती है, उनकी महिलाओं की अस्मत (इज्जत) लूटी जाती है तथा उसका सब कुछ छीन लिया जाता है।[12] जिन्दगी के अन्तिम दिनों जब भगत सिंह लाहौर जेल में बन्द थे तो बहुत सारे पत्रकार उनसे मिलने जाया करते थे और भगत सिंह से पूछा कि उनकी कोई आखिरी इच्छा है और देश के युवाओं के लिए कोई संदेश है।

शहीद-ए-आजम भगत सिंह ने कहा कि मैं देश के नौजवानों से उम्मीद करता हूँ कि जिस इंडियन पुलिस एक्ट के कारण लाल जी (लाला लाजपत राय) की जान गई और जिस इंडियन पुलिस एक्ट के आधार पर मैं फांसी चढ़ रहा हूँ, मैं आशा करता हूँ कि देश के नौजवान आजादी मिलने से, पहले पहले, इस इंडियन पुलिस एक्ट को खत्म करवा देंगे। ये मेरी भावना है यही मेरे दिल की इच्छा है।[13] लेकिन ये बहुत शर्म की बात है कि आजादी मिलने के बाद जिन लोगों ने देश की सत्ता संभाली, उन्होंने अंग्रजों का भारत को बर्बाद करने के लिए बनाये गये कानूनों में से एक भी कानून नहीं बदला। बहुत शर्म की बात है कि आजादी के 64 साल बाद आज भी इस कानून को हम खत्म नहीं करवा पायें।[14] आज भी आप देखो इंडियन पुलिस एक्ट के आधार पर पुलिस देशवासियों पर कितना जुल्म करती है। कभी आन्दोलन करनेवाले किसानों को डंडे से मारती है, कभी औरतों को डंडे से मारती है। सरकार के खिलाफ किसी भी तरह का आन्दोलन किया जा रहा है तो पुलिस आकर निर्दोष लोगों को डंडे से मारना शुरू कर देती है।[15] आजादी के 64 साल बाद भी ये पुलिस सरकार में बैठे काले अंग्रेजी की रक्षा करती है। और सरकार के विरुद्ध आन्दोलन करने वालों को वैसे ही पीटती है जैसे अंग्रेजों की पुलिस पीटा करती थी।[16] तो कैसे कहे कि हम आजाद हैं।[17] पुलिस अधिनियम तथा दंड प्रक्रिया संहिता द्वारा जो शक्ति पुलिस को प्रदान की गई है वह अत्यन्त व्यापक है और विवेकीय है ये शक्तियाँ पुलिस को जनता का सेवक नहीं बनने देती है बल्कि उसे जनता का तानाशाह शासक बनती है। लार्ड जॉन डाल्बर्ग एक्टन का कथन था कि-"शक्ति भ्रष्ट होती है और असीमित शक्ति पूरी तरह से भ्रष्ट होता है।" यह बात पुलिस के बारे में ठीक-ठीक व्याख्या करता है कि पुलिस अपने शक्तियों का दुरूपयोग किस प्रकार पूर्ण रूपेण भ्रष्ट होकर करता है? पुलिस का चरित्र वही है जिसका अनुभव हम सब को है.......... पुलिस बिना रिश्वत या सिफारिश के कभी ठीक से जाँच नहीं करती है, बेहिचक लोगों पर अत्याचार करती है............ किसी को भी झूठे मामले (फर्जी मुकदमे) में फंसाने में कोई हिचक महसूस नहीं करती है।[18] अपराधों के

अन्वेषण में अधूरी सूचना या अनुमान के आधार पर निर्दोष लोगों को अपाधापी (जल्दी-जल्दी) में पकड़े जाते हैं और उनके साथ क्रूर व्यवहार किया जाता है। हिरासत में मौत के बारे में अखबारों में प्रकाशित होती है नकली (फर्जी) मुठभेड़ दिखाकर निर्दोश व्यक्तियों की हत्यायें की जाती है। महिलाओं, बच्चों, कमजोर लोगों के प्रति दुर्व्यवहार की घटनायें बराबर समाचार पत्रों की सुखियों में छाये रहते हैं।[19] आजादी मिलने के 60 वर्षों के बाद की पुलिस अधिकारी अपने अधिकारी के दुरूपयोग से अपने को अलग नहीं कर पा रहे हैं। 'आप' के बदले 'तुम' शब्द का प्रयोग करना, कुर्सी या बेंच पर बैठने नहीं देकर जमीन पर बैठाना या खड़ा करना, दुर्व्यवहार करना, पूरी बात को नहीं सुनना, फटकार लगाना, बार-बार बुलाना और बात नहीं करना, फिर बाद में आने के लिए कहना। यह सभी आम बात है गिरफ्तारी, जप्ति या तलाशी में दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों की उपेक्षा करना, अनावश्यक हथकड़ी, रस्सा लगाना, हथकड़ी, रस्सा लगाकर सड़कों पर घुमाना पुलिस के लिए आम बात है। पूछताछ में थर्ड डिग्री का प्रयोग करना, पुलिस हवालात (लॉकअप) में असुविधाजनक स्थिति में जानवरों जैसा रखना[20], कोई नयी बात नहीं है। पुलिस और भ्रष्टाचार का "चोली और दामन" का रिश्ता है। अर्थात् दोनों एक दूसरे के पूरक है भारत का कोई भी 'पुसिल' अपने नाक तक गंगा जी के पानी में खड़ा होकर और अपने "बाप कसम" खा कर भी यह कहे कि-"वह अपने ड्यूअी के दौरान न तो कभी घूस लिया है और न ही कभी अपने पद का दुरूपयोग किया है, सदा जन कल्याण, जनहित एवं संविधान व कानून के दायरे में रह कर अपने संवैधानिक एवं विधिक कर्त्तव्यों (ड्यूटीज) का निर्वाहन सत्य, निष्ठा एवं निष्पक्ष रूप से किया है? तो कोई भी सामान्य व्यक्ति इसे मानने को तैयार नहीं होगा? क्योंकि वर्त्तमान पुलिस कर्मियों का आचरण में काफी गिराकर आई है। प्रतिदिन उनके कार्यों में आचरणहीनता के चलते जनता में क्षोभ की वृत्ति उत्पन्न हो गई है। 'पुलिस' शब्द के नाम से आम जनता में घृणा उत्पन्न हो गयी है।[21] इसके पीछे नैसूगक (प्राकृतिक न्याय) का एक सिद्धांत है-"न्याय सिर्फ किया जाना ही नहीं चाहिए बल्कि दिखना भी चाहिए।" पुलिस का आचरण कितना न्यायी है यह बात जग-जाहिर है? किसी से पूछने की जरूरत नहीं?

अरस्तु का मत है कि-"व्यक्ति के उचित एवं विधिपूर्ण आचरण में ही न्याय वास करता है। सामण्ड का कथन है कि-राजनीतिक समुदाय में राज्य की भौतिक शक्ति द्वारा अधिकारों तथा न्याय का संरक्षण ही न्याय प्रशासन है, जाहिर सी बात है। राज्य की भौतिक शक्ति 'पुलिस बल' है अर्थात् पुलिस का कार्य अधिकारों एवं न्याय का संरक्षण करना है। क्योंकि अपराधिक न्याय प्रणाली में पुलिस की भूमिका अहम होती है उसी के द्वारा समाज में विधि-व्यवस्था एवं शांति व सुरक्षा स्थपित किया जा सकता है। पुलिस का मुख्य कार्य सामान्य परिस्थिति में कानून व्यवस्था बनाये रखते हुए अपराधों की रोकथाम एवं अन्वेषण है।[22] डायसी, न्याय को ही विधि का शासन मानते हैं। विधि के शासन का अर्थ है मनमानेपन का अभाव एवं उत्तरदायी प्रशासन औचित्यपूर्ण कानून अर्थात्, ऋजु, उचित एवं तर्कसंगत कानून एवं प्रक्रिया और कानून के द्वारा शासन न कि व्यक्ति द्वारा, अर्थात् कानूनी उपबंधों के अधीन रहकर ही प्रशासनिक (शासकीय) कार्यों का संचालन एवं प्रवर्तन, मौलिक अधिकारों एवं मानवाधिकारों का संरक्षण तथा नैर्गिक (प्राकृतिक न्याय) के सिद्धान्तों का अनुपालन आदि। इन सभी कसौटी पर पुलिस खड़ा नहीं उतरती है।

अतएव यह स्पष्ट रूप से आइने की भांति साफ- साफ झलकता है कि विश्व के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश की पुलिस आजादी मिलने के 70 वर्षों के बाद आज भी अलोकतांत्रिक है। एक तरफ सरकार यह कहती है कि लोगों के कानूनों का पालन करना चाहिए, उसे अपने हाथ में नहीं लेना चाहिए, तो दूसरी तरफ सरकार के अधीनस्थ पुलिस सरेआम कानूनों को तोड़ते हैं, उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों के दिशा-निर्देशों का पालन नहीं करते हैं, दंड प्रक्रिया संहिता एवं अन्य अपराधिक कानूनों में उपबंधित प्रावधानों का सरेआम उल्लंघन करती है और सरकार उसे 'स्पीड ट्रायल' चलाकर दंडित करने के बजाय, विभागीय कार्यवाही के नाम पर निलंबित या स्थानान्तरण अथवा पुलिस लाइन हाजिर करके अपना पलड़ा झाड़ लेती है, फलस्वरूप विभागीय कार्यवाही में अधिकांश पुलिस कर्मी निर्दोष साबित हो जाते हैं। इसके पीछे कारण यह है कि जिसके खिलाफ आरोप होता है, और जो उसकी जांच करता है, दोनों ही 'पुलिस' ही होता है-अतएव आपसी-तालमेल में आरोप को झूठा साबित कर देते हैं और आरोपी पुलिस कर्मी आरोप की जाँच करने वाले पुलिस कर्मी की जेब गरम करते हैं, फिर नये थाने में उसकी पोस्टिंग हो जाती है। इस संदर्भ में एक प्रचलित कहावत है कि-"टोपी वाला, टोपी वाला का ही होता है।" अर्थात् खाकी वाला (पुलिस) खाकी वाला का ही होगा, न की आम जनता का।" पुलिस में भ्रष्टाचार कोई नयी नहीं है। असक्षम एवं भ्रष्ट पुलिस अधिकारियों के हाथों में पुलिस थाने का कमान रहने के कारण पुलिस हिरासत में मौत की वारदात होना, पूछताछ में थर्ड मेथड अपनाना, पुलिस द्वारा नकली मुठभेड़ दिखाकर की जाने वाली मौतों द्वारा अपराध नियंत्रण करने का सेहरा लेने का प्रयास अधिक होता है।[23] प्रायः पुलिस शिकायतों पर कार्रवाई करने में आनाकानी करता है जिससे शिकायत कर्त्ता के शिकायत पर कार्रवाई करने में विलम्ब होती है। मामला को तोड़-मरोड़ कर रफा-दफा करने, संज्ञेय को असंज्ञेय बनाने,

को जलील कर प्राथमिकी दर्ज कराने में हतोत्साहित की जाती है, एक बार जो अपनी शिकायत लेकर पुलिस के सामने पहुँच गया फिर कभी पुलिस के पास जाने का साहस नहीं कर पाता है।[24] क्योंकि उसके मन में पुलिस का भय (डर) और आतंक बैठ जाता है उसे ऐसा आभास होने लगता है कि पुलिस उसके साथ गाली-गलौज या मार-पीट करेगी अथवा झूठे मुकदमें में फंसा कर जेल भेज देगी। पुलिस के सन्दर्भ में एक कहावत प्रचालित है-"विदेशों में कहा जाता है, यदि आप कष्ट में हैं, तो पुलिस के पास जाइए, भारत में इसके ठीक विपरीत धारणा है-यदि आप कष्ट चाहते हैं तो पुलिस के पास जाइए।"[25]

इसी प्रकार गाँवों में प्रचलित कहावत है-'थाना खाना' और कचहरी 'झूठ बोलने का कारखाना' अर्थात् थाना में बिना घूस (पैसा) खिलाये आपका काम नहीं होने वाला है और पैसे के बल पर कचहरी में बड़ा से बड़ा झूठ बोल कर निर्दोषों को फंसाया जाता है एवं अपराधियों को अपराध मुक्त अर्थात् (बाइज्जत) निर्दोष बरी करवाया जाता है। यह ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार मध्यकाल में, यूरोप में पोप द्वारा पैसे लेकर पाप मुक्ति प्रमाण पत्र बाँटा जाता था। दारोगा के सन्दर्भ में एक प्रसिद्ध लोक उक्ति है-दारोगा का अर्थ है, दो, रो कर या गा कर। अर्थात् दारोगा से कोई विधिक कार्य जो उसका विधिक दायित्व (लीगल ड्यूटी) है तो भी बिना कुछ माल-पानी (रुपया-पैसा) दिये, अपना काम नहीं होगा।

अंग्रेजों के चले जाने के 70 वर्ष बाद आज भी हमारी पुलिस, लोकतांत्रिक पुलिस

कहलाने लायक नहीं बन पायी है, आजादी मिलने के बाद भले ही अंग्रेज यहाँ से चले गये किन्तु छाप अभी तक हमारी राजनीतिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था पर बनी हुई है। व्यक्ति भले ही बदल गये, अंग्रेज की जगह पर भारतीय आ गये किन्तु प्रशासन में बैठे भारतीय, अंग्रेजी हुकूमत की आनुवंशिक मनोवृत्तियों को पूर्णतः परित्याग नहीं कर पाया है। यही कारण है कि आम जनता आजाद देश के आजाद नागरिक होने के बावजूद गुलामों (दासों) की तरह जीवन जीने के लिए मजबूर हो जाते हैं। उन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि संविधान में अभिलिखित अधिकार स्वतंत्रता एवं न्याय सिर्फ कपोल कल्पना मात्र है, वे कल भी गुलाम (दास) थे और आज भी गुलाम है, "कल वे अंग्रेजों के गुलाम थे और आज राजनेताओं और नौकरशाहों के।" परिणाम स्वरूप आम जनता दासता की इस बेड़ी को तोड़ नहीं पाता है और न्याय पाने से वंचित रह जाता है और जो कोई इसके विरोध में आवाज उठाता है उसे फर्जी मुकदमे में फंसा कर या विभिन्न प्रकार से यातना देकर प्रताड़ित किया जाता है।

हमारी लोकतांत्रिक सरकार यह चाहती ही नहीं है कि आम जनता के मन से पुलिसिया कहर व आतंक का भय खत्म हो। पुलिस[26] और लोक व्यवस्था[27] राज्य सूची का विषय है। अतः राज्य सरकार भी औपनिवेशिक पुलिस प्रणाली को संशोधित करके लोकतांत्रिक पुलिस या लोक पुलिस बना सकती है, किन्तु केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार दोनों में बैठे लोगों की मंशा लोकतांत्रिक या लोक पुलिस बनाने की है ही नहीं, क्योंकि उसे पुलिस से कोई भय नहीं है और वह अपने स्वार्थ सिद्धि हेतु पुलिस का दुरूपयोग करते हैं। सुनीता गोस्वामी बनाम् उत्तर प्रदेश राज्य[28] के वाद में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने पुलिस की कार्यप्रणाली की भर्त्सना (निंदा) करते हुए फटकार लगाई कि-"पुलिस को इस देश में बदल जाना चाहिए और अपने को जनता का सेवक मानना चाहिए और उसे अपना पुराना रवैया छोड़ देना चाहिए।"

प्रायः पुलिस के सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक कार्यों में काफी अन्तर पाया जाता है। अक्सर पुलिस अपने संवैधानिक एवं विधिक दायित्वों को भूल कर जनता के मन में भय एवं आतंक का दहशत स्थापित कर देते हैं। पुलिस द्वारा समय-समय पर निरीह जनता पर लाठी चार्ज करना, फायरिंग करना, बर्बरतापूर्ण व्यवहार करना, भारत जैसे लोकतांत्रिक देश के लिए बड़े ही दुर्भाग्य की बात है। पुलिस सरकार का महत्वपूर्ण अंग है जिसे मानवाधिकार के संरक्षण के लिए बनाया गया है यह सबसे ज्यादा दृष्टिगोचर और शक्तिशाली अंग है। पुलिस को जो शक्ति प्रदान की गई है उसका मकसद आम व्यक्तियों को संरक्षण प्रदान करना है, लेकिन दुःख की बात है कि हमारी पुलिस का ढांचा औपनिवेशिक बुनियाद पर ही टिका हुआ है यह एक लोक कल्याणकारी राज्य और इसके नागरिकों के जरूरतों के अनुसार नहीं है।[29] अतः आज की सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि औपनिवेशिक कालीन पुलिस तंत्र को पूर्णतः पूर्णरूपेण खत्म (समाप्त) करके लोक कल्याणकारी राज्य के प्रतिमानों को ध्यान में रखते हुए सीमित सरकार एवं खुली सरकार (लिमिटेड गवर्नमेंट एण्ड ओपेन गवर्नमेंट) के सिद्धांत का अनुपालन करते हुए नवीन लोकतांत्रिक, पुलिस तंत्र की स्थापना की जाए, जो राजनीतिक दबाव से मुक्त होकर, स्वतंत्र एवं निष्पक्ष तथा पारदर्शी रूप से अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन कर सकें। साथ ही साथ पुलिस का जनता के प्रति उत्तरदायी बनाया जाए तथा प्रत्येक पुलिस कर्मी की जवाबदेही तय की जाए तथा गैर-जिम्मेदार पाये जाने पर "स्पीडी ट्रायल" चलाकर दंडित किया जाए।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के अनुसार कुल 3024 व्यक्तियों की मृत्यु पुलिस हिरासत में हुई है।[30]

वर्ष	पुलिस हिरासत में मौत की संख्या	वर्ष	पुलिस हिरासत में मौत की संख्या
1994—1995	111	2004—2005	136
1995—1996	136	2005—2006	139
1996—1997	188	2006—2007	119
1997—1998	193	2007—2008	187
1998—1999	183	2008—2009	127
1999—2000	177	2009—2010	124
2000—2001	127	2010—2011	146
2001—2002	165	2011—2012	129
2002—2003	183	2012—2013	146
2003—2004	162	2013—2014	147
		कुल—	**3,024**

ये सिर्फ पंजीकृत मामले के सरकारी रिकार्ड है। वास्तविक आंकड़े इससे काफी अधिक है। क्योंकि बहुत सारे मामले विभिन्न वजहों के कारण पंजीकृत नहीं हो पाते हैं।

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1.

2.

3.

4.

5.

6. दण्ड प्रक्रिया संहिता-1973 की धारा-109
7. वही (Ibid), धारा-56
8. वही (Ibid), धारा-57
9.

10. एट्रोसिटीज एण्ड फायरिंग-द इलस्ट्रेटेड विकली, अगस्त, अंक-38, 1980
11.

12.

13. http://www.eisarahi.com/indian-police-act-1861-in-hindi/ visited on 26/11/2017 at 5:42 P.M
14. वही (Ibid)
15. वही (Ibid)
16. वही (Ibid)
17. वही (Ibid)
18.

19.
20. वही (Ibid
21. वही (Ibid
22. उपर्युक्त टिप्पणी (Supera note) at 9
23. उपर्युक्त टिप्पणी (Supera note) at
24. वही (Ibid
25. वही (Ibid),
26. भारत का संविधान, सातवीं अनुसूची प्रविष्टि-2
27. वही (Ibid), प्रविष्टि-1
28.
29. उपर्युक्त टिप्पणी (Supera note) at 9
30. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, वार्षिक रिपोर्ट, वर्ष-1994-1995 से वर्ष 2013-2014 तक

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

भारत में नक्सलवाद का बढ़ता स्वरूप

* महेन्द्र कुमार बिसेन

==

सारांश- **नक्सलवाद आज किसी राज्य विशेष की समस्या नहीं है। आज पूरे भारत में धीरे-धीरे बड़ी समस्या बनती जा रही है। राज्य एवं केन्द्र सरकार द्वारा इस समस्या से निपटने के लिए कई योजनाएँ एवं नीतियाँ लागू की गई हैं। परंतु इन योजनाओं तथा नीतियों के बावजूद नक्सलवाद पर नियंत्रण नहीं हो पा रहा है। सरकार के लिए इन उपायों के अलावा इस बात को समझना आवश्यक है कि नक्सलवाद का मूल कारण क्या है? ये क्यों दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है? नक्सलवाद के मुख्य कारण गरीबी, अज्ञानता तथा बेरोज़गारी हैं, जब तक इन समस्याओं को नहीं सुलझाया जायेगा, तब तक नक्सलवाद बढ़ता ही जायेगा, समाप्त नहीं होगा।**

==

प्रस्तावना- नक्सल आंदोलन 18 मई, 1967 में पश्चिम बंगाल के नक्सवाड़ी से शुरू हुआ था। नक्सल आंदोलन, जो 1967 में किसानों के अधिकारों तथा उनके शोषण के विरूद्ध था, आज अपनी दिशा भटक चुका है। आज 49 साल बाद इसका कुछ अलग ही रूप नज़र आ रहा है। जो आंदोलन शोषण एवं अन्याय के खिलाफ लड़ा गया था, आज उसी आंदोलन का स्वरूप निर्मम हत्याओं, षड़यंत्र रचना एवं असंतोष फैलाने वाला हो गया है।

नक्सलवाद कोई राजनीतिक समस्या नहीं है, और ना ही कोई दीर्घकालिक आर्थिक समस्या है। यह एक सामाजिक, आर्थिक समस्या है, जो मूलतः आदिवासी एवं पिछड़े क्षेत्रों में ही है। और इन क्षेत्रों में मूलभूत सुविधाओं का अभाव है। यहाँ बेरोज़गारी, शिक्षा का अभाव, स्वास्थ्य सुविधाओं का ना होना एक बड़ी समस्या है। सरकार द्वारा चलाई जाने वाली विभिन्न योजनाओं का लाभ इन क्षेत्रों में ''ना'' के बराबर है। ऐसे में इन इलाकों के लोगों में सरकार के प्रति असंतोष एवं रोष की भावना उत्पन्न हो रही है।

उचित संसाधनों एवं आय के साधन के अभाव के कारण इन क्षेत्रों के लोग नक्सलवादी विचारधारा की ओर अग्रसर हो रहे हैं। नक्सलवाद का एक मुख्य कारण यह भी है कि आज़ादी के 70 साल बाद भी आदिवासी क्षेत्रों में रहने वाले लोग निरंतर उपेक्षा एवं अनदेखी का शिकार हो रहे हैं।

सन् 2008 में हमारे पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने अपने एक भाषण में कहा था, कि ''नक्सलवाद एक भयंकर समस्या है, जो हमारी आंतरिक सुरक्षा को निरंतर कमज़ोर करती जा रही है एवं इस समस्या का श्रेय हमारी निर्बल सरकार को ही जाता है, जो 49 साल बाद भी नक्सलवाद के कारण एवं स्थिति का उचित हल नहीं निकाल पाई है जिसके

=========================

* वरिष्ठ अध्यापक, शासकीय उच्च. माध्यम विद्यालय मुर्गहाई, जिला-सिवनी (म.प्र.)

कारण नक्सलवाद निरंतर फलता-फूलता जा रहा है और आज देश के राज्यों में नक्सलवाद बढ़ने की वजह यह भी है कि अभी तक हम नक्सलवाद के मूल कारण को नहीं समझ पाये हैं।''

सन् 1967 में जब नक्सवाड़ी में यह आंदोलन प्रारंभ हुआ था, तब सरकार ने यह एक सामाजिक आंदोलन समझकर अनदेखा कर दिया था एवं सोचा था कि थोड़े ही समय में यह खत्म हो जायेगा। उस समय सैन्य एवं कानूनी तौर पर उस आंदोलन को बंद कर दिया गया था, परंतु सरकार नक्सलवाद विचारधारा को समाप्त नहीं कर पाई एवं आज यही विचारधारा नक्सलवाद की आधारशिला है।

सरकार के अथक प्रयास एवं नक्सलवाद को कुचलने के लिए कानून तथा सैन्य ताकत जैसे प्रयासों के बावजूद आज नक्सलवादी विचारधारा ग्रामीण तथा पिछड़े आदिवासी क्षेत्रों के लोगों में अपनी जड़ें मज़बूत कर चुकी है। सभी क्षेत्र, जहाँ नक्सलवादी गतिविधियाँ हो रही हैं, वहाँ गरीबी एवं बेरोज़गारी की समस्या चरम सीमा पर है। ऐसे में यहाँ के लोगों में नक्सलवादी विचारधारा का आसानी से समावेश हो जाता है। अज्ञानता एवं गरीबी के कारण ये लोग गलत रास्ते एवं तरीकों को अपना रहे हैं।

स्वतंत्रता के बाद सरकार ने नई कृषि नीतियों एवं औद्योगिक योजनाओं पर ज़ोर दिया। इसके तहत सरकार ने भूमि अधिग्रहण नियम, वन्य संसाधनों का उपयोग जैसी नीतियाँ अपनाईं। परंतु सरकार की इन नीतियों से ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के सामाजिक - आर्थिक जीवन पर क्या प्रभाव पड़ रहा है, इसका विचार नहीं किया। कृषि क्रांति एवं औद्योगिकरण से देश का विकास तो हुआ, परंतु समाज का कुछ वर्ग और भी पिछड़ता गया। गरीब लोग और गरीब होते गये और अमीर लोग और अमीर बनते गये। समाज का यह गरीब एवं असहाय वर्ग स्वयं को उपेक्षित महसूस करने लगा। ऐसे में इन लोगों के मन में शासन के प्रति असंतोष तथा रोष की भावना जन्म लेने लगी तथा स्वयं के अधिकारों एवं संसाधनों की रक्षा के लिए समाज का यह उपेक्षित वर्ग आंदोलनकारी एवं कम्युनिस्ट विचारधारा को अपनाने लगा तथा इस तरह से नक्सलवाद बढ़ने लगा।

इस उपेक्षित पीड़ित वर्ग में सिर्फ आदिवासी तथा भूमिहीन मज़दूर वर्ग ही नहीं है, अपितु मध्यम वर्ग के युवा वर्ग भी सम्मिलित है, जो बेरोज़गारी एवं शोषण का शिकार है। सरकार एवं शासन के प्रति असंतोष की भावना के कारण यह लोग नक्सलवादी विचारधारा की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

यह एक बहुत ही गंभीर समस्या है। सरकार को इस ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। नक्सलवाद को कुचलने एवं खत्म करने के साथ-साथ नक्सलवाद को बढ़ावा देने के कारणों को भी खत्म करना आवश्यक है, अन्यथा इस समस्या को कभी नहीं समाप्त किया जा सकेगा।

सरकार द्वारा किये गये प्रयास

सैन्य बल का आधुनिकीकरण- सरकार ने नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में विशेष पोलिस आधुनिकीकरण योजना का प्रारंभ किया है, जिसमें इन क्षेत्रों के पोलिस अधिकारियों को उन्नत तकनीकी के शस्त्र एवं हथियार प्रदान करना, सुरक्षा सम्पन्न युक्त वाहन एवं आधुनिक पोलिस स्टेशनों का निर्माण करना है, जिससे इन क्षेत्रों में नक्सल गतिविधियों का

प्रभावी ढंग से नियंत्रण किया जा सके। सेंट्रल पेरा मिलिट्री फोर्स केन्द्र सरकार द्वारा नक्सल प्रभावित राज्यों को दी गई है। इनके अलावा केन्द्र सरकार, आर्थिक सहायता द्वारा भी राज्य सरकार की मदद कर रही है। केन्द्र सरकार ने विशेष सैन्य प्रशिक्षित कोबरा फोर्स का भी निर्माण किया है, जो विशेष रूप से नक्सल प्रभावित क्षेत्रों के लिए प्रशिक्षित की गई है।

विगत कुछ वर्षों में सरकार द्वारा विभिन्न योजनाएँ प्रारंभ की गई हैं, जिससे ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों के लोगों को रोज़गार एवं आधारभूत सुविधाएँ प्राप्त हो सके। जो निम्न प्रकार हैं-

1. **राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना-** इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार उपलब्ध कराना है।
2. **भारत निर्माण-** इस योजना द्वारा विभिन्न स्तर पर ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों का बहुआयामी विकास करना है।
3. **राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन-** इस योजना के अंतर्गत सुदूर एवं ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को स्वास्थ्य उपलब्ध कराया जा रहा है।

सामाजिक आर्थिक विकास- केन्द्र सरकार ने नक्सल प्रभावित क्षेत्रों के विकास के लिए Backward Regions Grant Fund (BRGF) के तहत आर्थिक सहायता की घोषणा की है, जिससे इन क्षेत्रों में नक्सलवाद की समस्या से प्रभावी ढंग से निपटा जा सके।

राज्य सरकारें भी नक्सल प्रभावित क्षेत्रों को आर्थिक सहायता प्रदान कर उन क्षेत्रों के बहुआयामी विकास पर ज़ोर दे रही है। कुछ राज्य जैसे झारखण्ड एवं उड़ीसा की सरकारों ने आत्मसमर्पण करने वाले ऐसे नक्सलवादियों को पुरस्कार स्वरूप आवास, खेती के लिए भूमि एवं उनके परिवारों को उचित शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध कराने की घोषणा की है।

क्या यह प्रयास प्रभावी है?

नक्सलवाद को प्रभावी ढंग से खत्म करने के लिए सामाजिक एकीकरण की आवश्यकता है। सरकार द्वारा कई योजनाएँ एवं नीतियाँ लागू करने के बावजूद नक्सलवाद पर नियंत्रण नहीं लगाया जा सका है। इसके दो कारण हो सकते हैं, पहला या तो इन योजनाओं का लाभ प्रभावित क्षेत्रों तक नहीं पहुँच पा रहा है या दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि इन योजनाओं का उचित क्रियान्वयन नहीं हो रहा है। कारण कोई भी हो, यह (नक्सलवाद) बहुत गंभीर समस्या है, क्योंकि यह समस्या हमारी आंतरिक सुरक्षा एवं अर्थव्यवस्था के लिए घातक साबित हो रही है। इस समस्या पर जल्द से जल्द नियंत्रण के लिए और अधिक प्रभावी कदम उठाने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष- केन्द्र एवं राज्य सरकार नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में रहने वाले पिछड़े वर्ग एवं आदिवासी लोगों के विकास एवं उत्थान के लिए कई स्तर पर प्रयास कर रहे हैं, परंतु इन प्रयासों के बावजूद ना ही इनकी समस्याओं को सुलझाया जा सका है और ना ही नक्सलवाद की समस्या पर लगाम लगाया जा सका है। आज इन नक्सलवाद प्रभावित क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के मन में शासन के प्रति असंतोष एवं अतिशय क्रोध की भावना उत्पन्न हो रही है। वह स्वयं को उपेक्षित एवं शोषित महसूस करते हैं।

सरकार को नक्सल प्रभावित क्षेत्रों की समस्याओं को सुलझाने के लिए एक अलग

मंत्री परिषद या समिति बनाने की ज़रूरत है, जो सरकार द्वारा चलाई जाने वाली योजनाओं का उचित क्रियान्वयन कर सके एवं उसका समय-समय पर मूल्यांकन भी करे।

यह शोधपत्र विभिन्न नक्सल प्रभावित क्षेत्रों की समस्याओं का विश्लेषण करके बनाया गया है। अतः हम यह समझ सकते हैं कि नक्सलवाद उन क्षेत्रों में ज़्यादा सक्रिय है, जहाँ आधारभूत सुविधाओं का अभाव है। अतः सरकार को इसके लिए प्रभावशाली एवं उचित कदम उठाने की आवश्यकता है।

======================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. वार्षिक रिपोर्ट 2000-2001, भारत सरकार, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, पृ. 3.
2. रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन पंचायत राज इंस्टीट्यूशन्स, 1978.
3. रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन एडमिनिस्ट्रेटिव एडजेस्टमेंट फॉर रूरल डेवलपमेंट एंड पॉवर्टी एलिविएशन चेयरमेन जी. वी. के. राव, ग्रामीण विकास विभाग, नई दिल्ली, 1985.
4. रिग्स, ऑस्कर, ग्रुप डायनामिक्स इन नॉर्थ इंडिया विलेजेज़. ए स्टडी ऑफ फेक्शन्स, प्रोग्राम इवोल्यूशन ऑर्गेनाईज़ेशन योजना आयोग, 1958.
5. बंसोड़कर, वरूणराव : मध्यप्रदेश में नक्सलवाद आंदोलन के विस्तार के कारण एवं प्रभावित क्षेत्र के जनजीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, 2003.

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

लोकतंत्र, सुशासन एवं नागरिक समाज : एक अन्तः क्रियात्मक अध्ययन

* धर्मेन्द्र कुमार

==

_सारांश_- भारत में लोकतंत्र केवल एक शासन पद्धति ही नहीं बल्कि जीवन पद्धति है, जीने का सलीका है। लोकतंत्र आज एक युगधर्म बन चुका है। चाहे कोई शासन व्यवस्था, विचारवाद या राजनेता ही क्यों न हो, सभी अपने आपको लोकतांत्रिक एवं प्रजाप्रेमी बताते हैं। वर्तमान समय में यह केवल विचारवाद न रहकर मानवधर्म बन गया है। मानव सभ्यता के प्रारंभ से ही शासन के नित नए तरीके खोजे जाते रहे हैं परंतु लोकतंत्र से अच्छा विकल्प आज भी कोई प्रतीत नहीं होता है। अमेरिकी प्रशासन में 'गोरे प्रतिवेदन' (1992) में तो सुशासन के उपर लोकतंत्र को तरजीह देने की बात कही गई है अर्थात् सुशासन हो या न हो, पहले प्रजातंत्र का होना आवश्यक माना गया है और यह सैद्धांतिक और व्यवहारिक दोनों दृष्टियों से उचित प्रतीत होता है क्योंकि दोनों के लक्ष्यों में काफी समानता है तथा लोकतंत्र में ही सुशासन के लक्ष्य को हासिल करना आसान होगा, किसी और शासन पद्धति में नहीं। वस्तुतः सुशासन प्राप्त करने के लिए यदि कोई व्यवस्था सर्वाधिक उपयुक्त हो सकती है तो वह प्रजातंत्र ही है क्योंकि इसी में सुशासन स्थापित करने हेतु जरूरी तत्व उपलब्ध हो सकते हैं। आज का लोकतंत्र लोक-कल्याणकारी राज्य बन गया है लेकिन लोक-कल्याण का रथ सुशासन के पथ पर ही अग्रसर हो सकता है।

==

अब सवाल उठता है कि सुशासन क्या है? सुशासन की आवश्यक शर्तें, तत्व एवं विशेषताएँ क्या हैं तथा भारत जैसे लोकतांत्रिक व्यवस्था में सुशासन स्थापित करने में सिविल सोसाइटी की क्या भूमिका एवं प्रासंगिकता हो सकती है? आम आदमी की नजर में सुशासन बेहतर शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, भोजन, वस्त्र, आवास, पानी, बिजली आदि समस्या का समाधान करने का विकल्प है। ऐसा शासन, जिससे उसकी सुविधाएँ बढ़ सके, उसके जीवन स्तर पर सुधार हो सके, उसे विकास के पथ पर आगे बढ़ने के समान अवसर एवं उचित परिवेश प्राप्त हो सके, भयमुक्त, भेदभावरहित मानवीय मूल्यों से युक्त समाज की रचना हो सके, सुशासन कहलाएगा।

सुशासन को प्रजातांत्रिक साँचे में दक्ष एवं प्रभावी प्रशासन से जोड़ा जाता है। यह उद्देश्यपरक तथा विकासोन्मुख प्रशासन के समान है जो जनसामान्य के जीवन की गुणवत्ता में बढ़ोतरी हेतु कटिबद्ध है। सुशासन व्यवस्था की साख, उसकी वैधानिकता तथा उच्चतम दक्षता को स्थापित करने हेतु शासन के नवीन मूल्यों को आत्मसात करने की ओर इंगित करता है। ओ. पी. मिनोचा विश्व बैंक के दिशा-निर्देश का हवाला देते हुए राजनीतिक

=========================

* शोध छात्र, राजनीति विज्ञान, जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार)

उत्तरदायित्व, स्वतंत्रता की उपलब्धता, कानूनी बाध्यता, जबावदेही नौकरशाही, सूचना उपलब्धता, पारदर्शिता, दक्षता एवं प्रभाविकता के साथ समाज व सरकार के मध्य सहयोग के रूप में सुशासन का क्रियात्मक दृष्टिकोण परिभाषित करते हैं। यहाँ यह काबिलेगौर है कि सुशासन का विचार या दर्शन सदियों पुराना है। महाभारत का शांतिपर्व, कौटिल्य का अर्थशास्त्र, प्लेटो के रिपब्लिक में हम सुशासन के सूत्र खोज सकते हैं। आधुनिक समय में 'गुड गवर्नेस शब्द का अंग्रेजी भाषा में सर्वप्रथम 1628 ई0 में इस्तेमाल हुआ तथा 1701 ई0 में एक लोकोक्ति या अवलोकन कथन के रूप में परिलक्षित हुआ- 'Wise princess ought not to be admired for their government but governance' अर्थात बुद्धिमान युवराज्ञी को केवल उसकी सरकार की वजह से नहीं वरन शासन की वजह से प्रशंसित होना चाहिए। सुशासन का महत्व तो सदा से रहा है लेकिन 1990 के दशक के बाद इसका महत्व और बढ़ गया जबकि अंतर्राष्ट्रीय सहायता निकायों और अन्य अंतर्राष्ट्रीय विकास अभिकरणों, संयुक्त राष्ट्रसंघ आदि ने इस तत्व को पहचाना कि इसकी अनुपस्थिति में विकासशील देशों का विकास बेहतर आर्थिक नियोजन और आर्थिक सहायता के बावजूद नहीं हो पा रहा है। इन असफलताओं को खोजने के क्रम में ही सुशासन के तत्वों की अनायास ही पहचान होती गई। जहाँ तक सुशासन के महत्वपूर्ण तत्वों का सवाल है तो उत्तरदायित्व, पारदर्शिता, जनभागीदारी, वचनबद्धता, विश्वसनीयता, कानून का शासन, संवेदनशीलता, दक्षता, प्रभावशीलता आदि सुशासन के महत्त्वपूर्ण तत्व माने जाते हैं। सुशासन में उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए सरकारी तंत्र या संस्थाओं के अलावा नागरिक समाज या सभ्य समाज की संस्थाओं के प्रयोग पर बल दिया जाता है। वस्तुतः सुशासन की स्थापना एवं लोकतंत्र की सफलता व्यवस्था में नागरिक समाज (सिविल सोसाइटी) की भूमिका के स्तर पर निर्भर करता है। विगत कुछ दशकों से नागरिक समाज की अवधारणा राजनीतिक, सामाजिक, प्रशासनिक एवं आर्थिक संदर्भो में काफी लोकप्रिय हो गई है। नागरिक समाज या सभ्य समाज ऐसे व्यक्तियों का समूह या संस्थाएँ हैं जो सामूहिक व लोकप्रिय हो गई है। नागरिक समाज या सभ्य समाज ऐसे व्यक्तियों का समूह या संस्थाएँ हैं जो सामूहिक व लोकहित में कार्य करती हैं परंतु राज्य द्वारा सीधे नियंत्रित नहीं होती है जैसे स्वयंसेवी संगठन, गैर-सरकारी संगठन (NGO) हित समूह, दबाव समूह आदि। काबिलेगौर है कि सिविल सोसाइटी शब्द का आविर्भाव प्राचीन ग्रीक चिन्तकों तथा अन्य रोमन विचारकों के कार्यो में देखा जा सकता है जिन्होंने इसे शास्त्रीय रूप से राज्य के समकक्ष मानकर पर्याप्त चिन्तन प्रस्तुत किया है। माना जाता है कि हीगेल प्रथम चिन्तक था जिसने राज्य और सभ्य समाज के बीच विभाजन रेखा खींचकर दोनों को अलग-अगल ढंग से विश्लेषित किया। कालांतर में कार्ल मार्क्स, एंजिल्स, टाकबिले एवं एंटोनियों गाम्शी ने इस विचार को आगे बढ़ाया। शीतयुद्ध के दिनों में लोकतंत्र के प्रति उत्पन्न हुई चेतना के परिप्रेक्ष्य में 'सिविल सोसाइटी' की अवधारणा काफी मजबूत हुई जिसे उदारीकरण तथा वैश्वीकरण की प्रवृत्तियों ने भी बढ़ावा दिया है। वस्तुतः 'सिविल सोसाइटी' की अवधारणा शीतयुद्धोत्तर काल का युगधर्म (Zeitgeist) बन गया है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में जन भागीदारी एवं नागरिक सशक्तीकरण की धुरी के रूप में सिविल सोसाइटी की भूमिका काबिलेतारीफ है। नागरिक समाज एक सामाजिक स्थान या क्षेत्र है जहाँ तर्क एवं ज्ञान के आधार पर निर्णय लिए जाते हैं व विकल्प बनाए जाते हैं। यह समाज के सदस्यों को किसी भेद-भाव, धर्म, जाति, लिंग आदि

के बिना उन्मुक्त रूप से जोड़ता है तथा यह राज्य या बलाधारिता सत्ता से परे स्थान है जो स्वयं उस ज्ञान को संचित करता है जो विभिन्न संस्कृतियों में भी मान्य है। इसलिए कहा जा सकता है कि सभ्य समाज वह है जिसका मुख्य संघटक खुली एवं धर्मनिरपेक्ष संस्थाएँ हैं जो प्रजातांत्रिक समाज में नागरिकों व राज्य के बीच मध्यस्थता करती हैं। भारत में यह राजनीतिक संस्थाओं के साथ कंधे से कंधा मिलाने वाला सामाजिक अंग है। भारत में मशहूर समाज विज्ञानियों सुनील खिलनानी पार्थ चटर्जी, सुदीप्त कविराज आदि ने इस बात पर जोर दिया है कि सभ्य समाज एक खुला मंच / स्थान है जिसे मजबूत बनाने के लिए बोलने की आजादी आवश्यक है। सिविल सोसाइटी को तृतीय क्षेत्र (third Sector) के नाम से भी संबोधित किया जाता है क्योंकि प्रथम क्षेत्र अर्थात् सरकार तथा द्वितीय क्षेत्र अर्थात् बाजार के प्रभावी संचालन हेतु लोगों के ऐसे संगठित समूहों की जरूरत है जो लोकतांत्रिक ढंग से स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करते हुए इन दोनों पर नियंत्रण एवं संतुलन (Check and balance) बनाए रखने का कार्य करे। सिविल सोसाइटी के बारे में प्रचलित सकारात्मक विचारों का सारांश प्रस्तुत करते हुए ब्रिटेन के सिद्धांतकार जॉन केन कहते हैं कि इस बात पर पैदा हो रही यह आम सहमति कि सिविल सोसाइटी स्वतंत्रता का क्षेत्र है, वास्तव में जनतंत्र की शर्त के रूप में इसके आधारभूत मूल्य पर बल देता है। जहाँ सिविल सोसाइटी नहीं वहाँ एक राजनीतिक-वैधानिक ढ़ाँचे के भीतर नागरिक अपनी पहचान, अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों को चुनने की क्षमता नहीं रख सकते हैं। सिविल सोसाइटी की उपुर्यक्त विवेचन-विश्लेषण से इसकी निम्नलिखित विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं -

1. यह राज्य-इतर संस्थाओं को इंगित करता है।
2. इसमें समाज का विशाल क्षेत्र आता है।
3. यह संगठित समाज को इंगित करता है।
4. ये स्वतंत्र एवं उत्तरदायी संगठन होते हैं।
5. यह संगठन की स्वतंत्रता, विचारों की आजादी तथा अन्य नागरिक एवं आर्थिक अधिकारों के अस्तित्व को सूचित करता है।
6. समाज में नैतिकता, सभ्यता तथा सांस्कृतिक मूल्यों सहित सहयोग की भावना विकसित करना सभ्य समाज के लक्षण है।
7. इसका लक्ष्य र्सावजनिक भलाई है।
8. यह सत्तावाद एवं निरंकुशता का विरोध करता है।
9. यह राजनीतिक-प्रशासनिक मामलों में नागरिकों की भागीदारी का रास्ता खोलता है।
10. राज्य के आधिपत्य को कम करने के लिए यह बहुलतावाद की वकालत करता है।
11. यह राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय महत्त्व के मुद्दे पर जनमत का निर्माण करता है।
12. यह सरकारी तंत्र पर निगरानी रखता है तथा शासन एवं नागरिकों के बीच मध्यस्थता करने में केन्द्रीय भूमिका निभाता है।

वस्तुतः 'नागरिक समाज' एक व्यापक अवधारणा है जो बहुत सारे मानवीय संगठनों के उन प्रयासों का नाम है जो राज्य, बाजार, शासन-प्रशासन तथा अन्य सामाजिक तत्वों पर नियंत्रण का कार्य करते हैं। यह अवधारणा एक ऐसे उत्तरदायी एवं संवेदनशील समाज की कल्पना करता है जो स्वभाव से सहयोगी, परिपक्व एवं प्रतिबद्ध हो। सवाल उठता है। कि किसी लोकतंत्र में 'सिविल सोसाइटी' की क्या भूमिका है या उसके क्या कार्य हैं?

सिविल सोसाइटी से अपेक्षित भूमिका को इस प्रकार से सूत्रबद्ध किया जा सकता है -

1. समाज में राजनीतिक, सामाजिक, प्रशासनिक एवं आर्थिक चेतना उत्पन्न करना।
2. सामाजिक और आर्थिक विकास हेतु लोगों को संगठित एवं गतिशील करना।
3. प्रशासनिक नीतियों, कानूनों तथा योजनाओं में लोगों की सहभागिता बढ़ाना।
4. प्रशासनिक तंत्र का उत्तरदायी, संवेदनशील तथा पारदर्शी बनाने में दबाव समूह का कार्य करना।
5. राज्य तथा बाजार के निरंकुश व्यवहार पर नियंत्रण रखना।
6. नागरिकों में मौलिक अधिकारों के प्रति चेतना उत्पन्न करना।
7. संगठित तथा स्वैच्छिक प्रयासों से राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावना पैदा करना।
8. नीति-निर्माण एवं नीति कार्यान्वयन में जन-भागीदारी को सुनिश्चित करना।
9. सत्ता के राजनीतिक, प्रशासनिक तथा वित्तीय विकेन्द्रीकरण के लिए प्रयासरत रहना जिससे असली सत्ता जनता के हाथ में सुनिश्चित रहे।
10. समाज के दबे-कुचले-पिछड़े लोगों के कल्याण के लिए योजनाओं के निर्माण में सहयोग करना।

ये सूची और भी लंबी हो सकती है। वस्तुतः वर्त्तमान समय में 'सिविल सोसाइटी' राज्य के कार्यों पर निगरानी रखकर उसे पारदर्शी एवं उत्तरदायी बनाने का प्रयास कर सत्ता को नियंत्रित एवं संतुलित करने वाले कारक के रूप में तेजी से विकसित हो रहा है। सिविल सोसाइटी का उद्देश्य राज्य के क्षेत्राधिकार के बाहर भी स्थान निर्मित करना है। सभ्य समाज को मजबूत बनाकर हम स्थानीय शक्ति को बढ़ाते हैं तथा विकास की नई परिभाषा गढ़ते हैं कि राज्य को उनके प्रति भी उत्तरदायी बनाया जाए। सभ्य समाज का पहला और अंतिम उद्देश्य यही है कि सभी विकास कार्यों में आम आदमी की सीधी भागीदारी एवं भूमिका सुनिश्चित की जाए। आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी स्वयंसेवी संगठनों व सभ्य समाज की भूमिका बढ़ी है। ग्रीन पीस जैसे संगठनों ने पर्यावरण की रक्षा हेतु पूरी दुनिया में एक अनुकरणीय आंदोलन छेड़ रखा है। इसी तरह 'ट्रांसपरेंसी इंटरनेशनल' के कार्य से हर कोई वाकिफ है। दुनिया भर के लोगों को उसकी भ्रष्टाचार को सामने लाने वाली रिपोर्ट का इंतजार रहता है। यह भी सभ्य समाज का ही एक अंग है।

जहाँ तक भारत में सिविल सोसाइटी के क्रिया-कलापों एवं भूमिका का सवाल है तो हाल के वर्षों में इसकी भूमिका सरकारी एवं गैर-सरकारी दोनों स्तरों पर बढ़ी है। भारत में सिविल सोसाइटी की हजारों सस्थाएँ अपने-अपने क्षेत्रों में बढ़िया काम कर रही है। इसीलिए भारत में दसवीं पंचवर्षीय योजना में सभ्य समाज के संगठनों की भूमिका को बढ़ाने पर विशेष बल दिया गया है। उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखंड में स्वजल कार्यक्रम लाया गया जिसमें राज्य एवं सभ्य समाज की संस्थाओं की मदद से जलापूर्त्ति एवं सैनिटेशन (मल निस्तारण) की स्थिति में सुधार के प्रयास किए गए। महाराष्ट्र में प्राथमिक शिक्षा में सुधार हेतु सिविल सोसाइटी के संगठनों के साथ सामुदायिक भागीदारी करके 'आमचीशाला' कार्यक्रम चलाया गया जिसके फलस्वरूप प्राथमिक शिक्षा का प्रसार भी बढ़ा तथा गुणवत्ता में भी सुधार हुआ। इसी क्रम में सभ्य समाज की संस्था सुलभ इंटरनेशनल ने राष्ट्रीय स्तर से उठकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपने कार्यों से सिविल सोसाइटी की एक अलग पहचान बनाई है तथा यह सिद्ध किया है कि विकासशील व पिछड़े क्षेत्रों के सभ्य समाज की

संस्थाएँ भी किस प्रकार विश्व के प्रतिमानों का निर्माण करा सकती हैं। तमिलनाडु के महालिर थिट्टम (Mahaler Thittam) नामक कार्यक्रम द्वारा विकास कार्यक्रमों में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाया गया है। फलतः इस कार्यक्रम की महिलाओं में स्वीकार्यता भी बढ़ रही है तथा विकास कार्यक्रम भी प्रभावी सिद्ध हो रहे हैं। केन्द्र द्वारा प्रायोजित स्वयं शक्ति, स्वयं सिद्ध व अन्य स्वावलंबन वाली परियोजनाएँ सभ्य समाज स्वसमूहों (Self help groups) के आधार पर ही पर्याप्त सफलताएँ अर्जित कर रही है। केरल में नियोजन प्रक्रिया में सिविल सोसाइटी को भागीदार बनाते हुए नीचे से प्रक्रिया प्रारंभ की गई, जिसमें ग्रामसभा को भी बाँटकर समस्याओं व नियोजन को स्थानीय स्तर से उपर की ओर बढ़ाया गया। इस प्रक्रिया का परिणाम काफी उत्साहवर्द्धक रहा। जम्मू-कश्मीर में सभ्य समाज एवं शासन का प्रयोग तो और भी अनूठा है। वहाँ आतंकवाद प्रभावित इलाकों में ग्रामसभा समितियों के माध्यम से सभ्य समाज व सेना के बीच सहयोग ने सभ्य समाज व सरकार के संबंधों को नई दिशा है। वस्तुतः 'सिविल सोसाइटी' सुशासन के सर्वाधिक आवश्यक तत्व उत्तरदायित्व को सुनिश्चित करने के सारे प्रयास कर रहा है। उदाहरणार्थ राजनीति में मजदूर-किसान शक्ति संस्थान (MKSS) आंदोलन ने एक विशिष्ट प्रणाली को जन्म दिया। इस आंदोलन ने जन-सुनवाई की प्रणाली अपनाई और नौकरशाही के साथ स्थानीय राजनेताओं के अनैतिक गठजोड़ को उजागर किया। इससे जनता अपने अधिकारों को लेकर जागरूक भी हुई तथा विकास के नए रास्ते भी खुले। जन-सुनवाई के माध्यम से इसने सरकारी कार्यों की खुली पंचायत में समीक्षा की तथा आम जनता की गवाही से उनके दावों की कलई भी खोली। इससे सरकारी रिकार्ड तथा जमीनी सच्चाईयों के बीच बड़े अंतराल का अनुमान लग सका। इसी संगठन की अगुवाई में भारत में सूचना प्राप्त करने का पहला आंदोलन राजस्थान के ब्यावर शहर में शुरू हुआ और बाद में यह एक बड़े आंदोलन में बदल गया और एच0 डी0 शौरी की संस्था 'कॉमन कॉज एवं राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् (NAC) ने सूचना के अधिकार के लिए बड़ी मुहिम चलाई। केन्द्र सरकार उनके विचारों एवं प्रस्तावों से सहमत होकर 2005 में 'सूचना का अधिकार कानून' पास करवाया। इससे निर्णय लेने की प्रक्रिया में पारदर्शिता सुनिश्चित हुई है। ऐसे अनेक प्रकरण है जहाँ इस अधिकार का उपयोग लोगों को बेहतर नागरिक सुविधाएँ प्रदान करने के लिए किया गया है। लालफीताशाही, निर्णय लेने में देरी और भ्रष्ट व्यक्तियों को डंडित करने में यह कानून उपयोगी साबित हुआ है। इसी तरह सिविल सोसाइटी की संस्थाओं के प्रयास से ही राज्य सरकारें 'लोक सेवा का चार्टर' लेकर आई हैं जिससे सरकारी विभागों के लिए विभिन्न कार्यों की समय-सीमा निश्चित की गई है। इससे सरकारी कार्यों के निष्पादन में तेजी आई है और भ्रष्टाचार पर भी लगाम लगा है। पुनः खाद्य सुरक्षा कानून (Food Security Bill) भी सिविल सोसाइटी की एक संस्था राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् (NAC) के प्रयासों का प्रतिफल है। इस कानून के तहत ग्रामीण आबादी का 84 प्रतिशत तथा शहरी आबादी का 74 प्रतिशत हिस्सा खाद्य सुरक्षा के दायरे में आ गया है। अभी तक बिहार सहित 11 राज्यों में यह कानून लागू हो चुका है। मनरेगा (MNREGA) में सामाजिक अंकेक्षण की शुरूआत भी राजस्थान की एक गैर सरकारी संस्था (NGO) ने किया जिसे धीरे-धीरे अन्य राज्यों में भी आजमाया जा रहा है। इसी तरह पीपुल्य यूनियन फॉर सिविल लिबरटीज (PUCL) ने जनहित याचिका (PIL) के माध्यम से नागरिक

अधिकारों, दलितों-आदिवासियों के कल्याण हेतु कई मुकदमे लड़े और इस क्षेत्र में मानदण्ड स्थापित किए। पुनः अन्ना हजारे और अरविन्द केजरीवाल के नेतृत्व में चला भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन (India against corruption) तथा लोकपाल-लोकायुक्त कानून बनाने के लिए चले जनांदोलन ने समाज और सरकार को झकझोर दिया। इसी तरह मेधा पाटेकर द्वारा चलाए जा रहे नर्मदा बचाओ आंदोलन तथा राजेन्द्र सिंह द्वारा चलाए जा रहे 'तरूण भारत संघ' या बाबा रामदेव का 'राष्ट्रीय स्वाभिमान मंच' जैसी संस्थाएँ सुशासन प्राप्ति की दिशा में सभ्य समाज की भूमिका को बड़ी बारीकी से रेखांकित करते हैं। नर्मदा बचाओं आंदोलन ने संपूर्ण शोषणवादी राजनीतिक व्यवस्था के खिलाफ गंभीर शक एवं संदेह जाहिर किया है। यह भूमि किसी है? ये नदियाँ किसकी हैं? ये जंगल, मछलियाँ? इन बड़े-बड़े प्रश्नों को राज्य को गंभीरता से लेनी चाहिए। इसी तरह राजेन्द्र सिंह प्रश्न करते हैं - ''हमारा संघर्ष विकास की प्रक्रिया में समुदाय को कहने के अधिकार को लेकर राज्य के विरूद्ध है, प्रशासनिक व्यवस्थाएँ, समुदाय पर विकास कार्यक्रम में अपने नजरिए को थोपती हैं वगैर यह जाने कि लोगों की जरूरतें क्या हैं?

वस्तुतः इन आंदोलनों का उद्देश्य स्थानीयता एवं राष्ट्रीयता से भी उपर मानवता तथा सामुदायिक लाभ की दिशा में विकास को पुनः परिभाषित करने की बहस को बढ़ावा देना है और यही राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संरचनाओं की सत्ता को बेहतर जबाब भी दे सकते हैं। ये सभ्य समाज के अंग राज्य तथा समाज के अन्य संगठनों के साथ तालमेल बैठाकर आंदोलनों द्वारा वैश्विक स्तर पर सुशासन के लिए प्रयासरत हैं। गौरतलब है कि सुशासन के लिए चलने वाले कामयाब आंदोलन हमें बताते हैं कि सभ्य समाज के माध्यम से सेवाधर्मी राज्य के लक्ष्य तक आसानी और शीघ्रता से पहुँचा जा सकता है। सभ्य समाज के अनेक संगठन विकास कार्यों के लिए निरंतर कोशिश कर रहे हैं जिनका सिद्धांत सुशासन पर ही आधारित है। सूचना क्रांति ने इससे महती भूमिका निभाई है। आज दिल्ली के जंतर-मंतर पर अक्सर होने वाले छोटे-मोटे आंदोलन भी जिस तरीके से गाँव-गाँव तक पहुंच पा रहे हैं, इसके लिए इंटरनेट समेत सोशल मीडिया की नई तकनीकें भी जिम्मेदार हैं। यह सूचना क्रांति का ही कमाल है कि जनता को सुशासन से संबंधित किसी लोकहित के मुद्दे पर लामबंद करना और जागरूकता फैलाना अपेक्षाकृत आसान हो गया है। भारत में सभ्य समाज राज्य के कार्यक्षेत्र में प्रवेश करके सुशासन से जुड़े अपने कर्तव्यों को निभाने की कोशिशें कर रहा है।

कुछ लोग सिविल सोसाइटी को शासन के विरूद्ध देखते हैं। वास्तव में ऐसा ,सतही और सरलीकृत नजरिया गलत है। सभ्य समाज तो शासन-प्रशासन और राज्य की गलतियाँ सुधारने का उपकरण है। आज जरूरत इस नजरिए की है कि किस प्रकार राज्य तथा सभ्य समाज एक-दूसरे के पूरक और हितैषी के रूप में कार्य करें। बढ़ती प्रशासनिक जटिलता वाले आधुनिक समय की माँग यही है कि सभ्य समाज और स्थानीय सरकारों के बीच पूरकता हो तथा स्थानीय सरकारों में सभ्य समाज की भागीदारी अधिकाधिक बढ़े। हुआ यह है कि सरकार विचारों की स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति की आजादी को लेकर लोगों के दिलों में स्थान प्राप्त करने में असफल रही है और बाजार भी समुदाय तथा आम लोगों के संचार संबंध बनाने में कमोवेश असफल रहा है। सभ्य समाज की संस्थाएँ ही एक जरिया है जो संचार, पारदर्शिता और उत्तरदायित्व द्वारा जनता और सरकार को जोड़ने का कार्य

कर रही है। नोम चोम्सकी कहते हैं, ''इतिहास के इस चरण में एक-दो चीजें ही संभव हैं। या तो आम जनता अपने भाग्य को स्वयं अपने हाथ में लेगी और लोक-कल्याण, संवेदनशीलता, सेवामूल्यों से निर्देशित होकर अपने को समुदायहित के संबंद्ध करेगी या फिर दूसरे विकल्प में किसी का कोई भविष्य या भाग्य नहीं होगा, जिसे नियंत्रित किया जाए। यदि हमें अपना भविष्य बनाना है तो हमें अपनी विकास रणनीति में स्थानीय व वैश्विक दोनों निर्णय-निर्माण प्रक्रिया पर नियंत्रण रखना होगा, जिनका संबंध हमारी जिन्दगी से है। स्पष्ट है कि हमें यदि शासन और उनकी सेवाओं में सुधार लाना है एवं उत्तरदायित्व बढ़ाना है तो सभ्य समाज के संगठन सर्वाधिक उपयोगी साबित होते हैं क्योंकि ये समाज में भी कार्यक्षमता बढ़ाते है और सरकार में भी। सरकार में दक्षता बढ़ने से सेवाओं का स्तर, गुणवत्ता पहुँच सभी कुछ सुधरता है एवं सरकार अच्छी सेवा दे पाती है तो वहीं समाज का स्तर भी सुधरता है और वह उन सेवाओं को भलीभाँति ग्रहण कर पाता है। दुर्भाग्य से भारत में सिविल सोसाइटी अभी शैशवावस्था में है तो मूलतः मध्यम वर्गीय एवं शहरी संस्कारों वाला है जबकि भारत गाँवों का देश है। सिविल सोसाइटी की संस्थाएँ जब तक ग्रामीण क्षेत्र को अपनी कर्मस्थली नहीं बनाएगी तब तक उसकी भूमिका सर्वसमावेशी एवं परिवर्तनकारी नहीं होगी। दूसरे भारत में शिक्षा का स्तर निम्न होने की वजह से आम लोगों में नागरिक संस्कारों का अभाव पाया जाता है जो सभ्य समाज एवं सुशासन के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है। तीसरे, भारत में सिविल सोसाइटी की कई संस्थाएँ (NGOs) फर्जी एवं कागजी हैं जिनका एकमात्र उद्देश्य सरकारी अनुदान का बंदरबाट करना है। कई संस्थाएँ भ्रष्टाचार में लिप्त पायी गई हैं। सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है कि भारत में गैर-सरकारी संस्थाओं और नौकरशाही के बीच नापाक गठबंधन हो गया है। बहुतेरे प्रशासनिक पदाधिकारियों की पत्नियाँ एन.जी.ओ. खोलकर बैठ गई हैं और उनका एकमात्र उद्देश्य प्रशासनिक रसूख के बल पर देशी-विदेशी अनुदान हासिल करना है। चौथे, कई गैर सरकारी संस्थाएँ संकीर्ण हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा अनाप-शनाप कार्य करके मीडिया में सुर्खिया बटोरना चाहते हैं। ऐसे ही एक मामले में गैर-सरकारी संस्था चलाने वाली तीस्ता सीतलबाड़ को सुप्रीम कोर्ट से फटकार खानी पड़ी। पाँचवें, कुछ NGOs विदेशी ताकतों के हाथ में खेलने का काम करती हैं, कभी पर्यावरण सुरक्षा के नाम पर तो कभी विस्थापन के नाम पर ये विकास एवं राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए एक खतरा बन जाते हैं। स्पष्ट है कि भारत मे लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रचार-प्रसार में सभ्य समाज की भूमिका बढ़ी है लेकिन ये संस्थाएँ बहुत सारी कमियों एवं समस्याओं से भी जुझ रही हैं। भारत जैसे देश में आज भी नीति-नियोजन में सभ्य समाज की पर्याप्त भागीदारी में कमी है। हम नीति शीर्ष पर बनाते हैं तथा लागू करने में भागीदारी की बात करते हैं जबकि नीति निर्माण में भी भागीदारी शीर्ष स्तर पर की जानी चाहिए तथा नीति जमीनी हकीकत को ध्यान में रखकर निचले स्तर पर तैयार किया जाना चाहिए तभी वास्तविक लोकतंत्र अर्थात सुशासन का सपना साकार हो सकेगा। ब्राजील में स्थानीय सरकारों में बजटीय प्रक्रिया व वित्तीय क्षेत्र में भागीदारी बढ़ाने का प्रयास हुए है, जहाँ सिविल सोसाइटी के साथ मिलकर स्थानीय सरकारें अपने बजटीय प्रस्तावों को अंतिम रूप दे रही हैं। यकीनन यह सुशासन और स्वशासन तथा अंतिम रूप से प्रजातंत्र की दिशा में बढ़ाया गया विलक्षण कदम है। भारत में भी एन.जी.ओ. को अंकेक्षण के साथ जोड़कर स्थानीय

कार्यों का ऑडिट कराया जाना चाहिए। इससे कार्यों में विशेषज्ञता के साथ स्थानीय विकास का निष्पादन स्तर सुधरेगा। जस्टिस जे0 एस0 वर्मा समिति ने नागरिक कर्त्तव्यों को लागू करने की बात कही है जो सक्रिय नागरिक निर्माण में काफी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इसी प्रकार राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को भी पर्याप्त शक्तियाँ पहले ही दी गई हैं। उन्हें भी स्थानीय स्तर तक सभ्य समाज के संगठनों से जोड़ा जाए तो शासन पर उत्तरदायित्व एवं पारदर्शिता के लिए दबाव बढ़ेगा तथा सुशासन की दिशा में हम और आगे बढ़ सकेंगे। इस प्रकार सभ्य समाज को राज्य के परिपूरक न कि प्रतिद्वन्द्वी के रूप में विकसित करने की दरकार है। वैश्वीकरण एवं निजीकरण के दौर में हम सिविल सोसाइटी के माध्यम से ही बाजार पर अपेक्षित नियंत्रण प्राप्त कर सकते हैं लेकिन इसके लिए सिविल सोसाइटी का संगठित, मजबूत एवं सक्रिय होना परम आवश्यक है। जिन देशों में सिविल सोसाइटी अनुपस्थित है, कमजोर है या सक्रिय, सकारात्मक एवं सार्थक भूमिका निभाने में असमर्थ है, वहाँ लोकतंत्र हमेशा संकटग्रस्त रहता है। पाकिस्तान या अफ्रीका महादेश के बहुत से देशों की दशा से इसे बखूबी समझा जा सकता है। हाल के वर्षों में भारत में सिविल सोसाइटी की भूमिका का काफी विस्तार हुआ है और शासन-प्रशासन में इसकी हनक और धमक सुनाई पड़ने लगी है। समाज के कई क्षेत्रों में इसने जबरदस्त काम भी किया है फिर भी पश्चिमी देशों की तुलना अभी इसे मीलों चलना है तथा उस स्तर तक पहुँचने के लिए भगीरथ प्रयास की दरकार है। फिर भी इतना तय है कि भारत में भी अब सरकार सिविल सोसाइटी की भूमिका को नजरंदाज करने की जोखिम उठाने की स्थिति में नहीं है क्योंकि वर्त्तमान समय में जनमत निर्माण के उपादान के रूप में सिविल सोसाइटी मीडिया के सहयोग से काफी ताकतवर एवं निर्णायक स्थिति प्राप्त करने की ओर अग्रसर है। वस्तुतः नागरिक समाज लोकतंत्र की सबसे योग्य संतान साबित होती जा रही है और आज के समय की जरूरत है कि सुशासन के हित में संतान की परवरिश दोषरहित वातावरण में संपन्न कराने की व्यवस्था की जानी चाहिए। सिविल सोसाइटी एवं सरकार दोनों का फर्ज बनता है कि वे समाज में दबे-कुचले, शोषित, पीड़ित आवाम को समाज की मुख्यधारा में शामिल करने, उनके हक-हकूक को सुरक्षित करने, नीति-निर्माण एवं नीति-क्रियान्वयन में उनको सहभागी बनाने हेत कंधे से कंधा मिलाकर काम करें तभी हमारा लोकतंत्र अजर-अमर बन सकता है। वस्तुतः लोकतंत्र को चिरंजीवी बनाने में सिविल सोसाइटी की भूमिका संजीवनी की तरह है।

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. मिनोवचा, ओ0 पी0, गुड गवर्नेस : न्यू पब्लिक मैनेजमेंट पर्सपेक्टिव, आइ.जे.पी.ए., जुलाई-सितम्बर, 1997, पृ. 30.
2. तिवारी, आर. एस., गुड गवर्नेस : पापुलिस्टडेमोक्रेसी टू क्वालिटी डेमोक्रेसी, आइ.जे.पी.ए., अक्टूबर-दिसम्बर, 2004, पृ. 584.
3. सबरवाल, सतीश, सोशियोलॉजिकल बुलेटिन, खंड-2, वर्श 2000.
4. बेंते, आन्द्रे, सिटिजनशिप, स्टेट एंड सिविलसोसाइटी, इकोनोमिक एवं पॉलिटिकल वीकली, सितम्बर, 1999.
5. गुप्ता एवं सिंह, सुशासन, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 2001, पृ. 81.
6. तथैव, पृ. 80.

7. जेनेकिंस, रॉब एंड मैरी एनी (2000), हिनन डेवेलपमेंट रिपोर्ट, चैप्टर -3 (1999), कंसन्ट्रेट्स इन सिविल सोसाइटी, केपेसिटी टू कर्व, करप्शन, आई.डी.एस. बुलेटिन
8. दैनिक जागरण, पटना संस्करण, 8 जुलाई, 2010.
9. हरिवंश, प्रभात खबर, 5 दिसम्बर, 2012, पटना संस्करण
10. फ्रंट लाइन, चेन्नै, 17 दिसंबर 2012
11. घर, प्रांजल, सभ्य समाज, सुशासन और नई तकनीकें, योजना, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, जनवरी, 2013, पृ. 32
12. दैनिक हिन्दुस्तान, पटना, 21 जुलाई 2014
13. दैनिक हिन्दुस्तान, पटना, 30 मार्च, 2012
14. राय, अरूंधती, ग्रेटर कामन गुड, इंडिया बुक डिस्ट्रिब्यूटर, मुंबई, 1999, पृ. 11.
15. सिंह, राजेनद्र, आइ वाज काल्ड डेकाइट : टेरोनस्ट एंड फॉड, हिन्दुस्तान टाइम्स (एडिट पेज), 12 अगस्त, 2001
16. चोम्सकी, नॉम, ह्वाट अंकल सैम रियली वान्ट्स, 1994, पृ. 88
17. रिजवी वासिफ, अनस्मोकिंग फ्री मार्केट डेमोक्रेसी, विमुक्त शिक्षा बुलेटिन, अक्टूबर, 1999.

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

भारतीय राष्ट्रवाद- एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

* सुधा गुप्ता

सारांश- **राष्ट्रवाद भले ही एक राजनीतिक शब्द हो लेकिन भारतीय मनीषियों की दृष्टि में राष्ट्र की आत्मा का वास सांस्कृतिक मान्यताओं में छिपा रहता है। भारतीय चिंतन में राष्ट्र एवं राज्य दोनों अलग-अलग संकल्पनाएँ हैं। भारत का राष्ट्रवाद मूलतः सांस्कृतिक राष्ट्रवाद है। भारत जिस सांस्कृतिक राष्ट्रवाद पर विश्वास करता है, उसका लक्ष्य सर्वहित, सर्वकल्याण है। राष्ट्रवाद और देशभक्ति इन दो शब्दों को लेकर लोगों में भ्रम है। वास्तव में ये दोनों शब्द अलग-अलग हैं। एक देश भक्त अपने देश, वहाँ की जीवन पद्धति, उसकी परिस्थितियों, उसके इतिहास तथा संस्कृति से प्यार करता है, परंतु वह अपने विचार एवं अपने मत किसी पर थोपता नहीं है। एक राष्ट्रवादी का मन भी अपने देश से प्यार करता है किंतु वह शक्ति एवं प्रतिष्ठा की अहंता से परिचालित होता है और अपने विचारों तथा मत को दूसरों पर थोपता चाहता है। परन्तु भारत की मानसिकता और भारत की संस्कृति ऐसे सकुंचित राष्ट्रवाद के खिलाफ है। भारत का संदेश सदैव से ज्ञान एवं प्रेम का रहा है और यह 'वसधैवकुटुम्बकम्' के सिद्धांत को मानता है।**

राष्ट्रवाद के संदर्भ में पाश्चात्य विचारक किसी भी प्रतीक को महत्व नहीं देते वे केवल राजनीति तथा सत्ता की दृष्टि से ही अपनी खोज में लगे हुए हैं। अतः उनकी खोज से जो राष्ट्रवाद उत्पन्न होता है, वह भारतीय राष्ट्रवाद नहीं है। भारतीय मनीषा की दृष्टि में सत्ता एवं राजनीति कभी भी राष्ट्र की आत्मा का स्थान नहीं ले सकती। उसकी दृष्टि में राष्ट्र की आत्मा का वास सांस्कृतिक मान्यताओं में छिपा रहता है। यह सांस्कृतिक वैशिष्ट्य ही राष्ट्रभाव को स्थायित्व तथा शाश्वतता प्रदान करता है और उसकी दृढ़ भूमि पर ही भारत के राष्ट्रवाद का भवन निमित्त हुआ है।

'राष्ट्रवाद' भले ही आज एक राजनीतिक शब्द हो, परन्तु भारत में राष्ट्र की जो संकल्पना स्थापित की गयी उसमें 'राजनीति' विशेष रूप से दलगत राजनीति को भी लोक-कल्याण में जोड़ा गया। इसके अतिरिक्त राजनीति का व्याख्याता राजा अर्थात् सत्ता को नहीं माना गया, वरन् उस ऋषि को माना गया जो नगर से दूर गुरूकुलों में रहकर केवल मनन, चिंतन तथा निधिध्यासन में निमग्न रहकर लोकहित की चिंता करता था। यह ऋषि राजाओं के अधीन नहीं था। उसका प्रयास यही था कि सभी सुखी कैसे हों। इस प्रकार भारतीय राष्ट्रवाद के लिए राष्ट्र एवं राजा कभी भी पर्यायवाची एवं पूरक नहीं रहे जबकि पश्चिम के भौतिकवादी चिंतन में राष्ट्र को राजा का पर्यायवाची माना गया।''[1]

* सह प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र), महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय उत्कृष्ट महाविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.)

पश्चिम में राष्ट्रवाद की संकल्पना को राजनीति का अंग इसलिए माना गया क्योंकि उनकी जीवन शैली पूरी तरह से बर्हिमुखी है। उनका समस्त चिंतन एवं जीवन दर्शन व्यक्ति केन्द्रित है समष्टि केन्द्रित नहीं। इसके विपरीत भारतीय चिंतन में राष्ट्र एवं राज्य दोनों अलग-अलग संकल्पनाएं हैं। 'राज्य' के साथ राजनीति का होना अपरिहार्य है। राज्य और उसके संचालन का प्रभुत्व अंग राजनीति है, परंतु राष्ट्र के लिए राजनीति का होना जरूरी नहीं है। राष्ट्र की संकल्पना न तो किसी के विरोध पर निर्भर है और न किसी के बाह्य तत्व के समर्थन पर। एक बार यदि राष्ट्रवाद किसी मानव समूह के अंतस में प्रस्फुटित हो जाये तो ऐसे समूह का सारा व्यक्तित्व ही रूपांतरित हो जाता है और यह रूपांतरित व्यक्तित्व ही भारतीय राष्ट्रवाद की बाह्य अभिव्यक्ति है। जब तक राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत अंतस रहेगा और उसमें रूपांतरित व्यक्तित्व होगा तभी तक वह सच्चे अर्थों में राष्ट्र रहेगा। इस मनोविज्ञान से पश्चिम भी परिचित था। इसीलिए भारत में आने के बाद अंग्रेजों ने यहाँ के अंतस को बदलने के अनेकों प्रयास किये।''[2]

भारत का राष्ट्रवाद मूलतः 'सांस्कृतिक राष्ट्रवाद' है। मनुष्य तथा अन्य प्राणियों के बीच भेद का मूल तत्व 'संस्कृति' है। मानव भी एक प्राणी है, पर वह एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिकता के तत्व को लगातार रसमय, सत्यमय, आनंदमय एवं एकात्ममय बनाने का मानवकर्म ही संस्कृति कहलाता है। संस्कृति आत्मपरक, सत्यशोधक और आंतरिक रसमयता का प्रवाह है। भारतीय संस्कृति सततखोजी, सदा आनंद सनातन, तार्किक, निरन्तर तथा लोकतंत्रीय है। व्यक्ति की तरह देश का भी अपना वैशिष्ट्य होता है। व्यक्ति का वैशिष्ट्य व्यक्ति का व्यक्तित्व बनाता है। भारत का वैशिष्ट्य भारत की सनातन संस्कृति है और इसी लिए भारतीय राष्ट्रवाद का वैशिष्ट्य सांस्कृतिक है।''[3]

आज के दौर में राष्ट्रवाद राजनीति की बहस का मुद्दा बना हुआ है। प्रश्न यह उठता है कि हम राष्ट्र हैं या नहीं। यदि राष्ट्र हैं तो क्यों है? भारतीय राष्ट्र का बीज क्या है? सच देखा जाये तो संयुक्त राष्ट्र संघ के पास आज भी राष्ट्र की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं है। भारत टूट कर तीन खंडों में बंट गया। भारत, पाकिस्तान एवं बांग्लादेश। पाकिस्तान एवं बांग्लादेश निश्चित रूप से राज्य हैं और संप्रभुत्व भी हैं, परन्तु वे राष्ट्र नहीं हैं। इस्लामी विचारधारा के आधार पर पाकिस्तान अलग हुआ। वैसे तो इस्लाम में राष्ट्र एवं राष्ट्रीयता की कोई गुंजाइश नहीं है, लेकिन पाकिस्तानी मांग के मूल में इस्लाम ही था। यदि इस्लाम राष्ट्र निर्माण के लिए काफी होता तो बांग्लादेश न बनता। वास्तव में राष्ट्र एक भूसांस्कृतिक अवधारणा है। भूसांस्कृतिक लगाव एवं दुराव ही राष्ट्रों के जन्म एवं मरण का कारण बनते हैं। परंतु भारतीय राष्ट्र एक अनूठा राष्ट्र है। भारत का शाब्दिक अर्थ ही है 'भा' अर्थात् प्रकाश तथा रत अर्थात् संलग्न। भारत से पुरानी विश्व में कोई संस्कृति नहीं है। इस संस्कृति में नित्य नूतन हो जाने का स्वभाव है। इसलिए इससे आधुनिक भी कोई दूसरी संस्कृति नहीं है।

विश्व में केवल भारत ही विश्वास एवं तर्क की परस्पर विरोधी धारणा में जिया है। भारत आस्था का देश है तो संशय की भावभूमि में सत्य का खोजी भी। भारत विश्वासी राष्ट्र है। हिंदुत्व किसी कट्टर आस्था का नाम नहीं है। यह जगत की कोटि-कोटि विविधत्ताओं और सहस्त्रों भिन्न-भिन्न आयामी किरणों, सुरों, गीतों का सहज स्वीकार है, जो सृष्टि को दूसरे सभी रंगों, सभी रूपों और सभी आयामों में जस का तस स्वीकार

करता है वही हिंदू है। मुक्त आकाश जैसा विराट चित्र जहाँ टिम-टिमाते नन्हें नक्षत्र, चमकते रूपऋषि और धीरज देती आकाश गंगा एक जगह पाती है, ऐसा चित्र हिंदू कहलाता है और ऐसी प्रकृति संस्कृति ही हिंदुत्व सोच है और यही हमारे राष्ट्र की आत्मा है। इसीलिए भारतीय राष्ट्र एक सांस्कृतिक राष्ट्रवाद है।''[4]

भारत जिस सांस्कृतिक राष्ट्रवाद पर विश्वास करता है उसका लक्ष्य है सर्वहित, सर्वकल्याण, सभी सुखी हों सभी समृद्ध हों। सबके सुख की बात यद्यपि अन्य संस्कृतियों में भी है। ईसाइयत तथा इस्लाम भी यही चाहते हैं पर ये पंथ या मजहब समाज के उसी अंश के सुख की बात करते हैं जिनका इन मजहबों पर विश्वास है। जिसे इस्लाम पर विश्वास नहीं, उनके लिए तो केवल यातनाएं ही यातनाएं हैं। इसी प्रकार जो ईसा पर आस्था नहीं रखता, वह सुखी और संपन्न हो ही नहीं सकता, परंतु भारतीयत्ता में जो सर्वकल्याण का भाव है वह जड़ चेतना सब पर समान रूप से लागू होता है। वह किसी विशेष आस्था रखने वालों तक ही सीमित नहीं है और न ही केवल मानव मात्र तक ही सीमित है। भारतीय संस्कृति का मानना है कि पर्वत भी सुखी हों, नदियां भी सुखी हों वृक्ष एवं लताएं भी सुखी हों। हर वनस्पति शांति को प्राप्त कर सके। जलचर तथा थलचर सभ सुख तथा शांति प्राप्त कर सकें।''[5]

राष्ट्रवाद एवं देश भक्ति इन दो शब्दों को लेकर लोगों में भ्रम है। प्रायः इन दोनों शब्दों का प्रयोग एक दूसरे के बदले किया जाता है। लेकिन वास्तव में दोनों अलग-अलग शब्द हैं और दोनों में अंतर है। एक देश भक्त अपने देश वहाँ की जीवन पद्धति उसकी उपस्थितियों, उसके इतिहास तथा संस्कृति से प्यार करता है, परंतु वह अपने विचार एवं अपने मत किसी पर थोपता नहीं है। एक राष्ट्रवादी का मन भी अपने देश से प्यार करता है किंतु वह शक्ति एवं प्रतिष्ठा की अहंता से परिचालित होता है और अपने विचारों तथा मत को दूसरों पर थोपता चाहता है।

स्वतंत्रता से पहले भारत के देशभक्ति की बयार फैली हुई थी। भारत का जन्म 1947 में हुआ। उस समय हिटलर, माओ स्टालिन जैसे तानाशाह राष्ट्रवाद की भावना से ओत-प्रोत थे तथा वर्चस्व की मानसिकता से संचालित थे। इसके विपरीत भारत का निर्माण ऐसे संतों की छत्रछाया में हुआ जिन्होंने देशवासियों को वास्तविक देशभक्ति का पाठ पढाया। वे हमें भारतीय बनाना चाहते थे न कि हिंदू, मुस्लिम अथवा सिख, ईसाई, जर्मनी में हिटलर, रूस में स्टालिन तथा चीन में माओ ने राष्ट्रवाद के नाम पर लाखों लोगों की हत्या की जबकि महात्मा गाँधी को देशभक्ति ने अहिंसात्मक तरीके से आजादी दिलाई।''[6]

पिछले कुछ वर्षों से इन दोनों शब्दों के भ्रम ने विश्व को काफी नुकसान पहुँचाया। ब्रिटेन में राष्ट्रवादियों ने देशभक्ति के नाम पर यूरोपीय संघ से अपने देश को बाहर निकाल दियज्ञ। भारत में भी कुछ ऐसी ही स्थिति उत्पन्न हुई। राष्ट्रवादियों ने कई ढंग से वैमनस्थ पैदा करने की कोशिश की। हर छोटे बड़े विरोध को देशद्रोह का नाम देने का प्रयास किया। इसमें कोई संदेह नहीं कि राष्ट्रवादी एवं देश भक्त दोनों सफल एवं सशक्त भारत चाहते हैं। परंतु देशभक्त अल्पसंख्यकों सहित सभी भारतीयों की सफलता चाहते हैं जबकि राष्ट्रवादियों की सोच का दायरा संकुचित है। ऐसे संकुचित राष्ट्रवाद ने विश्व इतिहास में भी पर्याप्त हानिकारक भूमिका निभाई है। 19वीं सदी में यूरोपीय राष्ट्रवाद ने एशिया एवं

अफ्रीका के कई देशों को गुलाम बनाया। 20वीं सदी में राष्ट्रवाद दो विश्व युद्धों का कारण बना।

सच तो यह है कि भारत की मानसिकता एवं भारत की संस्कृति, प्राचीन समय से ही ऐसे संकुचित राष्ट्रवाद के खिलाफ रही है। भारत का संदेश सदैव ज्ञान एवं प्रेम का रहा है। यहाँ कभी भी वसुधा में बर्चस्व की स्थापना के प्रयास नहीं किये गये, वरन् यहाँ के प्रयत्न हमेशा से वसुधा में कुटुम्ब की स्थापना के रहे हैं। यहाँ का जीवनमेत्ता 'वसुधैवकुटुम्बकम्' का रहा है। यहाँ के ज्ञानी ऋषियों ने समस्त देशों, समस्त प्राणियों को ब्राह्मी चेतना से एकाकार माना और अपनी इस अनुभूति को 'सर्व खलिब्दंब्रह्म' कह कर परिभाषित किया। भारत के जनगण मन में यही भाव रचा बसा होने के कारण भारतीयों ने लोकतांत्रिक शासन पद्धति को स्वीकार किया।

परन्तु यह भी सच है कि देश के स्वतंत्र होने के बाद भी हमने सामाजिक, शैक्षिक तथा कानूनी व्यवस्था के क्षेत्र में अंग्रेजों का मॉडल स्वीकार कर लिया और इसी औपनिवेशिक तंत्र की परिधि में लोकतंत्र को चलाना शुरू कर दिया। आज भले ही हम स्वतंत्र हैं परंतु हमारे काम करने के तौर तरीके तथा मानसिकता वही है। आज स्थिति यह है कि भारतीय शरीर में अंग्रेजी आत्मा ही वास कर रही है। स्वतंत्रता के सात दशक बीत जाने के बाद भी इससे छुटकारा नहीं मिला है। भारतीयता एवं देशभक्ति को परिभाषित करने वाले विकल्प की तलाश अभी बाकी है। भारत की मिट्टी भारत की धरती, पहाड़, नदियाँ सभी में भारत देश की आत्मा है और भारत माता की यह चेतना सर्व व्यापी है। भारत की जनता ही भारत की चेतना है, यही भारत देश की आत्मा है। इस प्रकार प्रत्येक के साथ आत्मीयता तथा एकात्मकता में ही भारतीयता है।''[7]

जब हमें यह अनुभूति होगी तभी हम भारत माता एवं भारतीयता का सही ढंग से पहचान सकेंगे और भारतीय लोकतंत्र का सही रूप विकसित हो सकेगा। ऐसे लोकतंत्र में ऐसी व्यवस्था निर्मित होगी जो भारतवासियों के द्वारा भारत के लिए बनाई गई होगी और इसमें प्रत्येक भारतीय के लिए महत्वपूर्ण भागीदारी होगी। ऐसी व्यवस्था में राष्ट्रवाद कट्टरता के रूप में नहीं वरन् देशभक्ति के रूप में परिभाषित होगा। मतभेद तो पर्याप्त होंगे, परन्तु मनभेद न होंगे। विरोध तथा विवाद की प्रक्रिया की अंतिम परिणति संवाद के रूप में होगी। राष्ट्रवाद का ऐसा स्वरूप ही सही राष्ट्रवाद हो सकता है।''[8]

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. दैनिक जागरण, 16 फरवरी 2003, नरेन्द्र मोहन का लेख राष्ट्रीयता की पहचान के आधार।
2. वही
3. दैनिक जागरण, 4 जनवरी 2003, हृदयनारायण दीक्षित का लेख, सॉस्कृतिक राष्ट्रवाद का अर्थ
4. वही
5. दैनिक जागरण, 29 दिसम्बर 2002, नरेन्द्र मोहन का लेख भारतीय राष्ट्रवाद की विशेषताएँ
6. दैनिक भास्कर, 24 अक्टूबर 2017
7. अखण्ड ज्योति सितम्बर 2017 पृ.सं.-5-6
8. वही पृ.सं.-6-7

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

रीवा विधान सभा निर्वाचन 2008 के मतदान व्यवहार का अध्ययन

* सरोज पाठक

===

_सारांश_– लोकतांत्रिक शासन पद्धति में मतदाता और मतदान सत्ता का नियामक होता है। मतदाता, मतदान के माध्यम से सत्ता संचालन हेतु जनप्रतिनिधियों की प्रवर समिति के गठ्न में सहायक बनता है। केन्द्रीय स्तर पर यह संगठ्न विधानसभा और प्रांतीय स्तर पर विधानसभा के रूप में जाना जाता है। इन दोनों प्रवर मंचों का गठ्न मतदाताओं द्वारा दिए गये मत से निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा होता है। इस तरह सत्ता के मूल केन्द्र में मतदाता होता है जो अपने निर्णय से विधानसभा और विधानसभा की दिशा दृष्टि निर्धारित करता है। हालांकि मतदाताओं की भूमिका पूरे रूप रचना में प्रत्यक्ष नहीं दिखती है। पर अप्रत्यक्ष पूरी तरह से मतदाओं के नियंत्रण में रहती जो बेलगाम होती सत्ता या मृत प्राय सत्ता संचालन संगठ्न को राजनैतिक परिदृश्य से बाहर हटाते हुए उदीयमान चिंतकों को सत्ता पर आशीन करती है। 1977 के विधानसभा एवं विधानसभा निर्वाचनों से यह स्पष्ट होता है। इसी प्रकार बिहार की लालू सरकार, मध्यप्रदेश की दिग्गी राजा की सरकार इसके उदाहरण है जिसे जनता ने बड़े धैय और आत्मविश्वास के साथ राजनीतिक परिदृश्य से अलग किया।

===

लोकतंत्रीय शासन प्रणाली की विशिष्टता स्वतंत्र निर्वाचन के कारण है। यह निर्वाचन उन प्रणालियों के औचित्य के सिद्ध करने तथा उसमें जनता की भागीदारी की भावना को व्यक्त करने के लिए निहायत जरूरी प्रक्रिया है। लोकतंत्रात्मक स्थिरता अधिकांशतः इस विश्वास पर निर्भर करती है कि निर्वाचन वास्तविक रूप से जनता की सरकार के उपकरण हैं। इसके विपरीत सर्वाधिकारवादी राज्य सर्व साधारण की राय अथवा भागीदारी पर निर्भर नहीं करता, वरन् शासन व्यवस्था आधारभूत रूप में शक्ति के प्रयोग पर आधारित होती है। शासन सत्ता को अक्षुण रखने के लिए शक्ति का यह प्रयोग शासक एवं अथवा उसकी सलाहकार परिषद के रूप में नियुक्त के लिए शक्ति का यह प्रयोग शासक स्वयं अथवा उसकी सलाहकार परिषद के रूप में नियुक्त कुछ चुनिंदा लोगों का समूह करता है। इस प्रकार की शासन व्यवस्था में भी जनता का शासन के प्रति विश्वास और आवश्यकतानुसार उसके सहयोग की सर्वथा उपेक्षा करना मुमकिन नहीं होता है। अनचाहे ही सही किन्तु सत्ताधारी शासक को देश की जनता को यह विश्वास दिलाना निहायत जरूरी होता है कि शासन जन भावनाओं की उपेक्षा नहीं कर रहा है और वह उसकी अपेक्षाओं और समस्याओं के प्रति यथेष्ट संवेदनशील है।

लोकतंत्र का निहित अर्थ है आत्मनिर्णय का अधिकार और मानव की तर्कसंगतता में

=========================

* रामनगर, जिला-सतना (म.प्र.)

आस्था। सच्चे लोकतंत्र की मूल बात यह है कि प्रत्येक व्यक्ति चाहे उसकी जाति, धर्म, रंग अथवा लिंग कोई भी हो शिक्षा का स्तर आर्थिक, व्यवसायिक पृष्ठभूमि कुछ भी हो शासन सम्बन्धी अपने कार्यों को करने के योग्य है। पंडित नेहरू की प्रजातंत्र में दृढ़ आस्था थी, दिनांक 13 दिसम्बर 1946 में संविधान सभा में बोलते हुए उन्होंने कहा था, ''स्पष्टतः हम सब प्रजातंत्र के लक्ष्य की ओर बढ़ रहे है, उससे कम कुछ नहीं हम सब प्रजातंत्र के लिए एकत्रित हैं और मेरा ऐसा विश्वास है कि भारत में प्रजातंत्र का भविष्य बहुत उज्जवल है।''

इस तरह लोकतात्रिंक प्रक्रिया में मतदाता सबसे महत्वपूर्ण चिंतक होता है जो अपनी रूचि और विवेक अनुसार सत्ता के न्यामक निर्वाचन के माध्यम से पाँच वर्ष के लिए देश की बागड़ोर सौपता है। यदि प्रतिनिधित्व करने वाला सांसद या विधायक या कोई भी निर्वाचित जनप्रतिनिधि लोक रूचि का कार्य नहीं करता तो आगे होने वाले निर्वाचन में उसे जनादेश मतदाताओं द्वारा नहीं प्राप्त होता। निर्वाचन के लिए मतदाताओं का अपना-अपना नजरिया होता है। कुछ मतदाता जहाँ राजकीय व्यवस्था को दृष्टिगत रखते हुए मतदान करते हैं वही कुछ क्षेत्रीय और स्थानीय स्थितियों को गंभीरता से विचार कर मतदान करते हैं। मतदाताओं का मनोभाव समय सापेक्ष बदलते रहते हैं। कभी उनमें जातियता का रंग चढ़ता है तो कभी स्थायीयता का समभावीन परिस्थितियाँ भी मतदाताओं को प्रभावित करती है। भारतीय निर्वाचन परम्परा पर गौर की तो स्पष्ट होता है, कि प्रथम आम चुनाव के समय मतदाताओं के देश की आजादी ने लिए रहे प्ररेक व्यक्तित्वों को अपना मत देकर उनके प्रति विश्वास व्यक्त किया, फिर जैसे-जैसे परिस्थितियाँ बदलती गई वक्त बढ़ाता गया, मतदान अपने मनोभावों को परिवर्तन करने लगा।

प्रस्तुत शोध पत्र में रीवा विधानसभा क्षेत्र के मतदान व्यवहार का अध्ययन में मतदान व्यवहार को प्रभावित करने व प्रेरित करने वाले कारको, परिस्थितियों का आंकलन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि मतदाता की संख्या में पुरूष एवं महिला मतदाताओं की कमोवेश संख्या बराबर होती है। इस प्रकार चुवानों में उनका योगदान पुरूषों के बराबर होने पर भी वे अपने इस उत्तरदायित्व को कितनी जागरूकता सक्रियता से नहीं निभा पाती हैं? यदि हाल अनुसूचित जाति, जनजाति वर्ग के मतदाताओं की भी है।

मतदान व्यवहार पर केन्द्रित प्रस्तुत शोध पत्र मूलतः रीवा विधानसभा क्षेत्र के विधानसभा निर्वाचन 2008 पर केन्द्रित है। भारतीय लोकतंत्र में मतदान जनता के हाथ सबसे शक्तिशाली आल के रूप में है। जब देश का मतदाता शासन में नेतृत्व करने वालों के गुण दोषों का आंकलन कर उसके राजनीति-विज्ञान ऊचाईयों को ध्वस्त कर सकता है और चाहे तो अधिक शक्ति सम्पन्नता प्रदान कर सकता है। इस तरह मतदान भारतीय लोकतंत्र का सबसे अहं कारक है। वर्तमान राजनैतिक परिदृश्य में सत्ता के विकेन्द्रीकरण के कई आयाम निर्धारित किये गये हैं। जिनमें पंचायत, नगरीय निकाय, विधानसभा और लोकसभा के निर्वाचन प्रमुख है। इनमें से विधानसभा राज्य का सर्वोच्च निर्वाचित सदन हैं जिसके प्रतिनिधियों का निर्वाचन जनता के माध्यम से निर्धारित समयावधि पाँच वर्ष के लिए होता है।

वर्तमान में मध्यप्रदेश में 230 विधान सभाएं हैं इनमें से रीवा विधानसभा एक है। रीवा विधानसभा के पूर्वी भाग में चुरहट उत्तर में गुढ़, पश्चिम में सेमरिया एवं दक्षिण में रामपुर बघेलान विधानसभा क्षेत्र सीमावर्ती है। रीवा विधानसभा मूलरूप से नगरीय क्षेत्र का

प्रतिनिधित्व करता है जिस कारण यहाँ की राजनैतिक परिस्थितियाँ अन्य जगहों से भिन्न है जो यहाँ के मतदान व्यवहार और राजनीति-विज्ञान परिदृष्य को प्रभावित करता है। इस तरह रीवा विधानसभा क्षेत्र अन्य क्षेत्रों के कार्य व्यवहार में शैलीगत विभिन्नता लिए हुए है। जैसे लोकतांत्रिक प्रक्रिया आगे बढ़ रही है लोग निर्वाचित होने के लिए तरह-तरह के हथकंडे अख्तियार करने लगे है। कुछ स्थानों पर राजनैतिक दलों की भी भूमिका प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष देखी जाती है।

अध्ययन क्षेत्र रीवा विधानसभा का परिचयात्मक विवेचन किया गया है। रीवा विधानसभा क्षेत्र मध्यप्रदेश के रीवा संभाग मुख्यालय में स्थित है। नगरीय क्षेत्र की अधिकता वाले इस विधानसभा की राजस्वीय सीमा हुजूर तहसील गुढ़ तहसील के गोविन्दगढ़ वृत्त एवं रायपुर कर्चुलियान तहसील के कुछ राजस्व क्षेत्र को मिलाकर बनाया गया था। विधान सभा निर्वाचन 2008 के निर्वाचन हेतु किये गये विधानसभा पुर्नगठन में संशोधन करते हुए गुढ़ एवं रायपुर कर्चुलियान तहसील के अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों के अन्य समीपी विधान सभा क्षेत्रों में समाहित कर दिया गया वर्तमान में रीवा विधानसभा क्षेत्र का राजस्वी विस्तार मूलतः रीवा नगर ही है।

रीवा विधानसभा निर्वाचन 2008 के चुनावी सभा में यों तो कोई राष्ट्रीय व्यक्तित्व नहीं आये, और न ही चुनाव पूर्व ही किसी महत्वपूर्ण व्यक्तित्व द्वारा आयोजन समारोह में सिरकत की गई यह स्थिति कुल देश में प्रभावित विभिन्न राजनीतिक दलों की कमोवेश एक रही। मध्यप्रदेश की क्षेत्रीय राजनीति में प्रभावी राजनैतिक दलों के रूप में भारतीय जनता पार्टी, काँग्रेस पार्टी और बहुजन समाज पार्टी है। इन तीन राष्ट्रीय दलों के अलावा समाजवादी पार्टी, कम्युनिष्ट पार्टी, राष्ट्रवादी काँग्रेस है। स्थानीय एवं क्षेत्रीय दलों में सवर्ण समाज पार्टी, बुन्देलखण्ड मुक्ति मोर्चा एवं गोंड़वाना गणतंत्र पार्टी, गोंड़वाना मुक्ति सेना आदि प्रमुख है। इस तरह प्रदेश की राजनीति में प्रचुर राजनैतिक दलों की सहभागिता रहती है। यह बात अलग है कि विधानसभा चुनावों में अधिकतर राजनैतिक दलों की स्थिति मुख्य प्रभावी राजनैतिक दल भारतीय जनता पार्टी, काँग्रेस पार्टी एवं बहुमत समाज पार्टी है। जिनके अपने स्थिर वोट बैंक है। सत्ता के प्रति आक्रोश की स्थिति में प्रतिपक्ष दल विजयी होकर सत्तासीन होता है। सत्ता परिवर्तन का यह निर्णय मध्यप्रदेश के मतदाता बहुत जल्दी नहीं लेते फिर भी प्रबुद्ध मतदाता होने का परिचय देते हुए यहाँ के मतदाता निर्णायक कदम उठाते हैं।

रीवा विधानसभा के प्रथम विधानसभा चुनाव से लेकर 13वें विधानसभा तक के चुनाव के मतदान और मतदाताओं के प्रभावशीलता का अध्ययन किया गया है। 13वें विधानसभा निर्वाचन 2008 हेतु अधिनियम 324 के अनुच्छेद 172 ए तथा अधिनियम 1991 के तहत निर्वाचन की घोषणा भारत निर्वाचन आयोग द्वारा 14 अक्टूबर 2008 को किया गया। जिसके तहत मध्यप्रदेश के 230 विधान सभा क्षेत्रों के निर्वाचन हेतु निर्देश जारी किये गये, जिसमें 35 विधान सभा क्षेत्र अनुसूचित जाति के लिए और 47 अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित किये गये। इसके पूर्व निर्वाचन आयोग में लोकसभा एवं विधानसभ का पुनर्गठन करते हुए रीवा विधानसभा क्षेत्र के पुर्नगठन के निर्देश जारी किए गये। इन निर्देशों के तहत निर्धारित मापदण्डों के अनुरूप विधानसभा का जनसंख्या के आधार पर पुनर्गठन किया गया। निर्वाचन क्षेत्रों के पुर्नगठन के पीछे एक अन्य कारक देश में बनने वाले नवीन

राज्यों के राजकीय क्षेत्र भी रहे है। बड़े राज्यों के कुछ भागों को अलग कर अस्तित्व में आये नवीन राज्यों के लोकसभा एवं विधानसभा क्षेत्रों में कुछ मतदान केन्द्र दूसरे राज्यों में भी थे जिसके कारण निर्वाचन कार्यक्रम में तकनीकी समस्या आने लगी थी जिसके समाधान हेतु भी लोकसभा एवं विधानसभा क्षेत्रों का पुनर्गठन किया गया। पुनर्गठन के साथ लोकसभा एवं विधानसभा क्षेत्रों के आरक्षण की भी नवीन व्यवस्था की गई जिसके तहत अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, बाहुल्य क्षेत्रों को औसत जनसंख्या के आधार पर सम्बन्धित संवर्ग के लिए आरक्षित किया गया।

विधानसभा पुनर्गठन आयोग द्वारा निर्धारित नवीन मानदण्डों के तहत रीवा जिलें में एक नवीन विधान सभा क्षेत्र सेमरिया अस्तित्व में आया जो सिरमौर, गुढ़ एवं रीवा विधानसभा क्षेत्रों के आंशिक भाग को अलग करके बनाया गया था। इस तरह रीवा जिले में विधानसभाओं की दृष्टि से देखें तो आठ विधानसभा क्षेत्र रीवा, गुढ़, देवतालाब, मऊगंज, त्योंथर, सिरमौर, सेमरिया, मनगवाँ है। विधानसभा निर्वाचन के लिए हुए 13वें आम चुनाव के दौरान मध्यप्रदेश में विधानसभा की 320 सीटें थी। प्रदेश की 320 विधानसभा में सामान्य वर्ग के लिए 148, अनुसूचित जनजाति के लिए 47 तथा अनुसूचित जाति के लिए 35 विधानसभा सीटें आरक्षित था। रीवा विधानसभा सामान्य वर्ग की होने के कारण इस सीट से सभी वर्ग समुदाय के प्रत्याशी अपनी उम्मीदवारी प्रस्तुत किये।

निर्वाचन में प्रदेश के विभिन्न 29 राजनैतिक दलों ने अपनी हिस्सेदारी निभायी। जिनमें से मात्र 27 ने मध्यप्रदेश में हुए विभिन्न विधानसभा सीटों के निर्वाचन में भाग लिया। जिनमें 06 राष्ट्रीय दल 04 राज्यीय दल तथा 16 पंजीकृत दल शेष निर्दलीय थे। कुछ राजनैतिक दलों ने अपने अपने प्रत्याशी चुनाव मैदान में न उतारते हुए सहयोगी दलों के उम्मीदवारों का समर्थन किया।

रीवा विधानसभा निर्वाचन हेतु जारी अधिसूचनानुसार 31 अक्टूबर 2008 से नामांकन दाखिल करने की तिथि घोषित की गई। जारी अधिसूचना में 31 अक्टूबर 2008 से 07 नवम्बर 2008 तक नामजदगी के पर्चे भरे जाने की तिथि निर्धारित की गई। 08 नवम्बर 2008 को नामांकन पत्रों की जांच एवं अन्य प्रक्रिया पूरी की गई। 11 नवम्बर 2008 तक नाम वापसी की तिथि निर्धारित की गई। 27 नवम्बर 2008 को मतदान तिथि घोषित की गई तथा 08 दिसम्बर 2008 को मतगणना की तिथि निर्धारित की गई। अधिसूचना जारी होते ही निर्वाचन प्रक्रिया तेजी से प्रभावित हुई।

रीवा विधानसभा 1952 में प्रथम आम चुनाव के साथ की अस्तित्व में आया उस समय विन्ध प्रदेश की राजधानी रीवा थी। इस तरह रीवा विधान सभा अधिक महत्वपूर्ण विधान सभा के रूप में रेखांकित हुई 1956 में एकीकृत मध्यप्रदेश में समाहित होने के कारण रीवा से राजधानी का गौरव जाता रहा, और एक समान विधान सभा के रूप में रीवा अस्तित्व में आया। फिर भी गौरवमयी अतीत के चलते रीवा विधानसभा से निर्वाचित विधायक एक अलग ही साफ और प्रतिष्ठा मध्यप्रदेश विधान सभा में बनाये रहे। यह कहना अन्यथा न होगा कि रीवा विधानसभा के विजयी होने वाले विधायक मध्यप्रदेश की सरकार में महत्वपूर्ण भूमिका और उत्तरदायित्व और के निर्वहन का अवसर पाते रहे हैं। स्पष्ट होता है कि प्रथम विधान सभा चुनाव में विजयी जगदीश चन्द्र जोशी विन्ध्य प्रदेश में नेता प्रतिपक्ष थे। 1957 में एकीकृत मध्यप्रदेश के लिए हुये निर्वाचन में निर्दलीय प्रत्याशी के

रूप में श्री जगदीश चन्द्र जोशी निर्वाचित हुये। 1962 में काँग्रेस के शत्रुध्न सिंह तिवारी विधायक बने जो प्रदेश सरकार के कई प्रवर समितियों के सदस्य और संयोजक थे। इसी तरह 1972 में विजयी मुनि प्रसाद शुक्ल राजस्व मंत्री बने। 1977 में प्रेमलाल मिश्र जनता दल से विधायक बने उन्होंने काँग्रेस के मुनिप्रसाद शुक्ल को पराजित किया। 1980 में काँग्रेस के मुनिप्रसाद शुक्ला पुनः विधायक बने। 1985 में जनता दल से प्रेमलाल मिश्र विधायक बने। उन्होंने काँग्रेस के मुनिप्रसाद शुक्ल और बी.जे.पी. के मुरलीधर पटेल को पराजित किया। 1989 में पुष्पराज सिंह विधायक बने उन्होंने जनतादल के प्रेमलाल मिश्र एवं भाजपा समर्थक राजेन्द्र ताम्रकार को पराजित किया। 1993 में पुष्पराज सिंह काँग्रेस के उम्मीदवार बनें उन्होंने भाजपा के राजेन्द्र पाण्डेय को पराजित किया। 1998 में काँग्रेस समर्थित प्रत्याशी पुष्पराज सिंह विजयी हुये और प्रांतीय सरकार में शालेय शिक्षा मंत्री बने। 2003 में विजयी राजेन्द्र शुक्ला नगरीय प्रशासन मंत्री एवं 2008 में ऊर्जा मंत्री बने। स्पष्ट है रीवा विधान सभा को एक अप्रतिम सम्मान प्रातीय राजनीति में मिलता रहा।

निर्वाचन में सफलता हासिल करने के लिए प्रत्याशियों द्वारा विभिन्न प्रकार के उपक्रम किये जाते हैं जो मतदाताओं को प्रभावित करते हैं। यही नहीं कुछ ऐसे गौड़ कारक भी होते है जिससे मतदाता गाहे बगाहे प्रभावित होते हैं। अध्ययन के दौरान उत्तरदाताओं महत्वपूर्ण व्यक्तित्वों और मतदान एवं निर्वाचन संबंधी विशेषज्ञता रखने वाले चिंतकों से मिली जानकारी के आधार पर कुछ कारकों का निर्धारण किया गया है जो मतदाता और मतदान व्यवहार को प्रभावित करते हैं। जिनमें से कुद अग्र लिखित हैं -

जाति एवं वर्ग- मतदान को व्यवहार और शिष्टाचार का अंग बनाकर प्रत्याशी और उनके समर्थक जनभावनाओं को इस तरीके से उद्वेलित करते है कि सहज सरल मतदाता को लगता है कि उसका असली रहनुमा उसके वर्ग या जाति का प्रतिनिधित्व करने वाला प्रत्याशी है सो उसे मतदान करके अपने कर्तव्यों की इतिश्री कर लेते हैं यही नहीं कुछ उत्साही लोग भी नाते रिश्तेदारी, खान-पान, भाई-भतीजा वाद, व्यवहार वाद, यारी दोस्ती का साविका देकर के भी इच्छित प्रत्याशी को मतदान कराने में सफल होते हैं। इस तरह जातीय वर्गीय समीकरण मतदान व्यवहार को काफी हद तक प्रभावित करता हैं। खासतौर पर रीवा विधानसभ के निर्वाचन में यह प्रभाव गहराई से प्रभावी है। यहीं कारण है कि यहाँ प्रत्याशी का चयन जातीय आधार पर पार्टियां करती है न कि प्रत्याशी के कद काठी और उपलब्धियों पर।

राष्ट्रीय दल- रीवा विधानसभा निर्वाचन के परिणामों पर गौर करें तो यह स्पष्ट होता है कि यहाँ के मतदाता प्रतिष्ठित राजनैतिक दलों को ही मतदान करते हैं। कुछ अपवाद को छोड़ दे तो शेष निर्वाचनों में मतदाताओं ने भाजपा, काँग्रेस, बसपा, सपा, जनतादल जैसे केन्द्रीय और प्रतिष्ठित राजनैतिक दलों को ही मतदान करते हैं। यह बात अलग है कि मतदान व्यवहार के समय इन पार्टियों से अलग प्रत्याशियों के व्यक्तित्व पर भी मतदाताओं की निगाह होती है। केन्द्रीय और प्रांतीय राजनैतिक घटनाचक्रों में होने वाले परिवर्तन को दृष्टिगत रख कर मतदान करने की प्रवृत्ति मतदाताओं में कम दिखती है।

मतदान केन्द्र- मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाला स्थानीय कारकों में महत्वपूर्ण कारक मतदान केन्द्र की स्थिति है। कभी-कभी मतदान केन्द्र ऐसे स्थलों में बनाये जाते है जहाँ मतदाताओं को पहुँचने में असुविधा होती है। दूर मतदान केन्द्रों, संसाधनों की कमी,

स्थानीय प्रभाव वर्चस्ववादियों का प्रभाव ऐसे कारक है जिनके कारण सामान्य मतदाता इच्छा होते हुए भी मतदान के लिए नहीं जाते। मतदान केन्द्रों के लिए स्थल चयन के समय यह ध्यान रखा जाता है कि मदान केन्द्र तक पहुँच मार्ग हो तथा कोई शासकीय कार्यालय हो ऐसी स्थिति में दूरदराज रहने वाले मतदाता अधिक दूरी के चलते मतदान केन्द्र तक नहीं जाते। रीवा विधानसभा क्षेत्र में गाँव का बसाव अनियमित और विरल है जिस कारण आवासीय बस्तियों दूर-दूर तक फैली होती है लिहाजा मतदान केन्द्र से लोगों के आवास काफी दूर हो जाते है और अत्यधिक दूरी के कारण मतदाता मतदान केन्द्र तक जाने में असुविधा महसूस करते है।

स्वच्छ छवि- मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाले कारकों में प्रत्याशी का व्यक्तित्व भी महत्वपूर्ण कारक होता है। ऐसे प्रत्याशी जिनकी किसी न किसी क्षेत्र में पहचान है मतदाताओं को प्रभावित करते है। साफ सुथरी छवि, आकर्षिक व्यक्तित्व और उनकी निज की उपलब्धता मतदाताओं को प्रत्याशी के प्रति सोचने के लिए विवश करता है और प्रत्याशी उनके पक्ष मतदान करता है। यह बात अलग है कि ऐसे सारभौम व्यक्तित्व वाले प्रत्याशी रीवा विधानसभा को संयोग से नहीं मिल पाए जिनके प्रति मतदाताओं का आम झुकाव हो फिर भी मैदान में उतरने वाले प्रत्याशियों की तुलनात्मक व्यक्तित्व पर नजर रखते हुए कुछ हद तक मतदाता मतदान करते है।

नीतियाँ और घोषणा पत्र- केन्द्रीय निर्वाचन को प्रभावित करने वाले कारकों में राष्ट्रीय दलों की नीतियां और घोषणा-पत्र भी प्रभावकारी होते है। राष्ट्रीय दलों की कुछ नीतियाँ और कार्यक्रम ऐसे होते है जो आम जनता के व्यवहारिक जीवन से जुड़े होते है जिसका प्रभाव मतदाताओं पर प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष पडता है और संबंधित राजनैतिक दल को मतदान करना उचित समझते हैं। हालांकि इन मुद्दों को महसूस कर मतदान करने वालों की संख्या कम होती हैं। यदि पार्टी कार्यकर्ता नीतियों को कुशलता के साथ मतदाताओं के सामने रखे तो उसका सकारात्मक प्रभाव पड़ना स्वभाविक है।

दलों का राष्ट्रीय नेतृत्व- मतदाताओं को प्रभावित करने वाला एक मुख्य तत्व राजनीतिक दलों का नेतृत्व है। जवाहर लाल नेहरू, श्रीमती इन्दिरा गाँधी, राजीव गाँधी, अटल बिहारी बाजपेई, मायावती, मुलायम सिंह, लालू यादव, शरद पवार, बाल ठाकरे, करूणानिधि, जयललिता, ममता बनर्जी, फारूक अब्दुला, नरेन्द्र मोदी, नवीन पटनाय जैसे नेता मतदाताओं को व्यापक स्तर पर प्रभावित करते है। इस स्थानीय स्तर पर क्षेत्रीय नेताओं का व्यक्तित्व मतदाताओं को प्रभावित करता रहा है।

मतदाता प्रत्याशी सम्बन्ध- एक स्वस्थ लोकतंत्र के लिये यह आवश्यक है कि मतदाता अपने मत के महत्व को समझे। उसे निरपेक्ष भाव से राष्ट्र हित में मतदान करना चाहिये। उसे निजी सम्बन्धों, जाति, धर्म, क्षेत्र आदि की भावना के ऊपर उठकर अपने मत का प्रयोग करना चाहिये।

क्षेत्रीय विकास- क्षेत्र के विकास की भावना मतदाताओं के मास्तिष्क में सदैव रहती है। बिजली, पानी, सड़क की सुविधायें लोगों की प्राथमिकता है जो दल या प्रत्याशी उनकी दृष्टि में यह सुविधायें उपलब्ध कराने की क्षमता रखता है, उसके पक्ष में वे मतदान करते हैं। इस पृष्ठभूमि के आधार पर इस शोध अध्ययन में उत्तरदाताओं का अभिमत प्राप्त किया गया है।

दलों की विचारधारा- भारतीय मतदाता यद्यपि बहुत अधिक नहीं, लेकिन कुछ सीमा तक राजनीतिक दलों की विचारधारा, कार्यक्रम और नीतियों में भी प्रभावित होते रहे हैं। गरीबी हटाओ, बीस सूत्रीय कार्यक्रम आदि इसके उदाहरण हैं। अध्ययन के दौराल अध्ययन क्षेत्र के उत्तरदाताओं से इस सन्दर्भ में जानकारी हासिल की गई थी।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. चौहान, बी.आर. (1967) - लीडरशिप इन राजस्थान , लीडरशिप इन इण्डिया में संकलित।
2. राव, ए. एन. (2000) - प्राचीन राजस्व प्रशासन, किताब महल, इलाहाबाद।
3. एस. अखिलेश (2006-07) - रीवा दर्शन, द्वितीय संस्करण, गायत्री पब्लिकेशन, रीवा।
4. कुमार, प्रमीला (2003) - मध्यप्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन, चौदहवां संस्करण, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
5. कोठारी, रजनी (1970) - पोलिटिक्स इन इण्डिया, लिटिल ब्राउन, बोस्टन।
6. गांधी, मो. क. (1996) - स्वराज का अर्थ : सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, कनाट प्लेस, नई दिल्ली।
7. नारायण, जय प्रकाश (1987) - भारतीय राजव्यवस्था की पुनर्रचना: एक सुझाव, सर्व सेवा संघ प्रकाशन वाराणसी।
8. शर्मा, हरिश्चन्द्र (1993) - भारत में प्रशासन, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर।
9. फड़िया, बाबूलाल (1990) - लोक प्रशासन साहित्य भवन आगरा।
10. कपिल, एच. के (1986-87) अनुसंधान विधियॉ, हर प्रसाद भार्गव, आगरा।
11. बसु, दुर्गादास (1997) - भारत का संविधान एक परिचय, सातवां संस्करण, प्रेंटिस हाल आफ इंडिया, प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

प्रधानमंत्री आवास योजना (ग्रामीण) – एक विश्लेषण

* सीमा श्रीवास्तव

==

सारांश- आवास एक आर्थिक सम्पत्ति है। एक स्वच्छ आवास व्यक्ति के स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। साथ ही व्यक्ति को बेहतर शिक्षा के लिये भी प्रेरित करता है। व्यक्ति का जीवन स्तर भी बेहतर होता है। देश की अधिसंख्य आबादी आज भी गॉवों में निवास करती है। देश के समग्र विकास और बेहतर भविष्य के लिये हमें गॉवों में बेहतर सुविधायें उपलब्ध करवानी होंगी। मनुष्य के लिये घर एक बुनियादी आवश्यकता है जिससे उसे सामाजिक आर्थिक सुरक्षा के साथ एक पहचान मिलती है।वर्ष 1972-73 में लोकसभा की प्राक्कलन समिति की 37वीं रिपोर्ट के अनुसार भारत की 83 प्रतिशत आबादी ग्रामों में रहती है जिसमे से 73 प्रतिशत कच्चे घरों में रहती है। अतः ग्रामीण आवास की समस्या पर ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। यद्यपि स्वतंत्रता के तुरंत बाद शरणार्थियों के पुनर्वास के लिये देश में सार्वजनिक आवास शुरू किया गया था किन्तु इसके प्रभावी न होने के कारण वर्ष 1996 में एक स्वतंत्र कार्यक्रम के रूप में इंदिरा आवास योजना नामक ग्रामीण आवास कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। वर्ष 2022 तक 'सभी को मकान' उपलब्ध कराने के लक्ष्य को ध्यान में रखकर दिनांक 01.04.2016 को इसे प्रधानमंत्री आवास योजना ग्रामीण में पुनर्गठित कर दिया गया है। इसका उद्धेश्य सभी बेघर परिवारों तथा टूटे-फुटे मकानो में रहने वाले परिवारों को वर्ष 2022 तक बुनियादी सुविधाओं से युक्त पक्का मकान उपलब्ध कराना है।

==

भारत में ग्रामीण आवास कार्यक्रम का इतिहास- स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात शरणार्थियों के पुनर्वास के लिये तत्कालीन शासन द्वारा एक सार्वजनिक आवास कार्यक्रम शुरू किया गया, जिसके तहत वर्ष 1960 तक देश के विभिन्न भागों में लगभग 5 लाख मकानों का निर्माण किया गया। इसी प्रकार सामुदायिक विकास आंदोलन के एक भाग के रूप में वर्ष 1957 में ही एक ग्रामीण आवास कार्यक्रम शुरू किया गया था जिसके अंतर्गत 5000 रूपये का ऋण दिया जाता था। इसके बाद वर्ष 1980 में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम व वर्ष 1983 में ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के साथ ग्रामीण आवास योजना के अंतर्गत अनु. जाति/अनु. जनजाति तथा बंधुआ मजदूरों को मुक्त कराकर उनके लिये मकान निर्माण की अनुमति दी जाती थी। वर्ष 1989 में प्रारंभ जवाहर रोजगार योजना की 6 प्रतिशत राशि अनु. जाति/जनजाति/बंधुआ मजदूरो के मकान निर्माण के लिये आंबटित की जाती थी। इस राशि को वर्ष 1993-94 में 10 प्रतिशत कर दिया गया। अंत में 1 जनवरी 1996 से इंदिरा आवास योजना एक स्वतंत्र कार्यक्रम बना जो वर्ष

========================

* सहा. प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय बालाघाट (म.प्र.)

2016 में प्रधानमंत्री आवास योजना के रूप में पुनर्गठित किया गया। इस योजना के तहत अनु. जाति/अनु. जनजाति, आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग तथा महिलाओं का प्राथमिकता के आधार पर चयन किया जायेगा।

इंदिरा आवास योजना-

ग्रामीण भारत में गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों के रहने के लिये पक्के मकान बनाने हेतु राशि उपलब्ध कराने के लिये वर्ष 1985-86 में आर.एल.ई. जी.पी. की उपयोजना के रूप में यह योजना शुरू की गई थी। वर्ष 1989 से यह जवाहर रोजगार योजना की उपयोजना बन गई। वर्ष 1996 में इसे जवाहर रोजगार योजना से अलग करके स्वतंत्र योजना बना दिया गया। इसमे वित्तपोषण भारत सरकार एवं राज्य सरकार के बीच 75:25 की लागत साझेदारी है। वर्ष 1985 से प्रारंभ इस योजना के अंतर्गत 1,05,815.80 करोड़ रूपये की लागत से 351 लाख आवासों का निर्माण किया जा चुका है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार अब भी ग्रामीण क्षेत्रों में 20.6 करोड़ घरों में से 20.7 प्रतिशत कच्चे घर है।

संघ क्षेत्रों के मामले में भारत सरकार द्वारा 100 प्रतिशत वित्तपोषण किया जाता है तथा पूर्वोत्तर राज्यों में यह भागीदारी 90:10 होती है। इस योजना में स्वास्थ्य तथा सफाई पर विशेष ध्यान दिया गया है। इसलिये शौचालय तथा धुंआ रहित चूल्हा बनाना अनिवार्य किया गया है।

प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना के तहत 23 मार्च 2016 को देश के ग्रामीण क्षेत्रों में 2.95 करोड़ पक्के घरों के निर्माण का लक्ष्य रखा गया है। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इस योजना के तहत बने घर नेशनल बिल्डिंग कोड के तहत भूकंप, बाढ़, भूस्खलन एवं चक्रवात रोधी होंगे। इसके लिये 2016 से 2019 तक 1 करोड़ पक्के मकान तथा वर्ष 2022 तक सभी को मकान उपलब्ध कराना सरकार की प्राथमिकता है। इंदिरा गाँधी ग्रामीण आवास योजना को प्रधानमंत्री आवास योजना- ग्रामीण में पुनर्गठित किया गया है।

प्रधानमंत्री आवास योजना एक नजर में-

प्रधानमंत्री आवास योजना

↓

गरीबों का सशक्तीकरण

↓

वर्ष 2019 तक 1 करोड़ घर बनाने का लक्ष्य

↓

घर का आकार 20 वर्ग मीटर से बढ़ाकर 25 वर्ग मीटर

↓

वित्तीय सहायता 70,000 से बढ़ाकर 1,10,000

↓

घरो में शौचालय तथा उन्नत चूल्हा बनाना अनिवार्य

प्रधानमंत्री आवास योजना (ग्रामीण) के लिये वर्ष 2017-18 के लिये 23,000

करोड़ रूपये के बजट का प्रावधान केन्द्र सरकार द्वारा किया गया है जो वर्ष 2016-17 के संशोधित अनुमान से 8000 करोड़ रूपये अधिक है। वर्ष 2016-17 में यह 15,000 करोड़ था। इस योजना का प्रारंभिक उद्देश्य अनु. जाति/अनु. जनजाति एवं गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले/मुक्त हुए बंधुआ मजदूरों को निःशुल्क घर प्रदान करना था। वर्ष 1993-94 में इसमें उपरोक्त के अलावा सामान्य श्रेणी के गरीबों के साथ-साथ शहीद सैनिकों के परिवारो तथा गरीब विकलांगो को भी शामिल कर लिया गया।

क्रियान्वयन- इस योजना को पंचायतों द्वारा लागू किया गया है। लागू करने की जिम्मेदारी जिला ग्रामीण विकास एजेंसी तथा जिला पंचायत की होती है।

विशेषतायें-

* वर्ष 2016-17 से 2018-19 तक 3 वर्ष की अवधि में 1 करोड़ पक्के मकान के लिये सहायता राशि देने का लक्ष्य रखा गया है।
* सहायता राशि मैदानी क्षेत्रों में 70,000 रूपये से बढ़ाकर 1,20,000 रूपये तथा दुर्गम व पहाड़ी क्षेत्रों में 75,000 रूपये से बढ़ाकर 1,30,000 रूपये कर दी गई है।
* मकान निर्माण के लिये 70,000 रूपये तक का वैकल्पिक ऋण प्राप्त करने में सहायता का प्रावधान रखा गया है।
* ऋण पर 3 प्रतिशत ब्याज सब्सिडी दी जायेगी।
* मकान निर्माण के लिये अवधि निर्धारित कर दी गई है।
* मकान का न्यूनतम आकार 20 वर्ग मीटर से बढ़ाकर 25 वर्ग मीटर कर दिया गया है।
* मकान के अतिरिक्त स्वच्छ भारत अभियान के तहत शौचालय निर्माण हेतु 12,000 रूपये दिये जायेंगे।
* अलग-अलग भौगोलिक क्षेत्रों के लिये मकान की अलग-अलग डिजाईन निर्धारित की गई है।

आवास आंबटन हेतु प्राथमिकता-

प्रधानमंत्री आवास योजना के पहले इंदिरा आवास योजना में केवल उन्हीं व्यक्तियों को आवास का लाभ मिलता था जो बीपीएल सूची में थे किन्तु अब हर उस गरीब व्यक्ति को आवास हेतु चयनित किया जायेगा जो गरीब है और उसके पास पक्का मकान नही है। इसके अलावा अनु.जाति/ अनु.जनजाति/ विधवा/ सफेद दाग/ कैंसर/ एच.आई.वी. पीड़ित/ इकलौती बेटी के परिवार को आवास प्राथमिकता के आधार पर दिये जायेंगे। इसके अतिरिक्त विस्थापित तथा घुमक्कड़ लोगों को भी इसका लाभ दिया जाता है। लाभन्वितों के निर्धारण के लिये सामाजिक-आर्थिक-जातीय जनगणना 2011 का उपयोग किया जा रहा है।

आवास आंबटन हेतु अपात्र- आवास आंबटन हेतु अपात्र व्यक्ति/परिवार की पहचान निम्न बिन्दुओं के आधार पर की जायेगी-

* जिनके पास दो पहिया अथवा चार पहिया वाहन है।
* मछली पकड़ने की नाव।
* पचास हजार रूपये अथवा इससे अधिक का किसान क्रेडिट कार्ड।
* दस हजार रूपये से अधिक की नौकरी करने वाले व्यक्ति का परिवार।

- आयकर दाता।
- ढाई एकड़ जमीन का स्वामित्व वाला परिवार।

तालिका क्रमांक- 1

इंदिरा आवास/प्रधानमंत्री आवास योजना के अंतर्गत सहायता राशि रूपयों में

क्रमांक	वर्ष	मैदानी इलाके	पहाड़ी / दुर्गम क्षेत्र
1.	1985–1986	रूपये 10,000	रूपये 10,000
2.	1990–1991	रूपये 10,000	रूपये 14,500
3.	1994–1995	रूपये 14,000	रूपये 15,800
4.	1996–1997	रूपये 20,000	रूपये 22,000
5.	2004–2005	रूपये 25,000	रूपये 27,500
6.	2008–2009	रूपये 35,000	रूपये 38,500
7.	2010–2011	रूपये 45,000	रूपये 48,500
8.	2013–2014	रूपये 70,000	रूपये 75,000
9.	2016–2017	रूपये 1,20,000	रूपये 1,30,000

स्टैंडिंग कमेटी की रिपोर्ट का सारांश- ग्रामीण विकास विभाग के अंतर्गत डॉ. पी. वेणुगोपाल की अध्यक्षता में स्टैंडिंग कमेटी ने 31 अगस्त 2016 को प्रधानमंत्री आवास योजना- ग्रामीण पर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसके मुख्य बिन्दु इस प्रकार है-

- वर्ष 2012 से 2016 तक 44 मिलियन मकानों के निर्माण का लक्ष्य था लेकिन यह पूरा नही हुआ।
- वर्ष 2015-16 में लक्ष्य प्राप्ति के आंकड़ो में विसंगतियाँ है। इसका मुख्य कारण है कि कुछ राज्य 100 प्रतिशत से अधिक लक्ष्य प्राप्ति बना रहे हैं इसमे उन्होंने पिछले वर्षो की उपलब्धि को शामिल कर लिया है।
- वित्तीय संसाधन के संबंध में कई अनियमिततायें हैं जैसे- फंड्स पर्याप्त न होना, आबंटन और जारी की गई राशि का पर्याप्त उपयोग न होना।
- जिन स्थानों पर भूमि उपलब्ध नही है वहाँ बहुमंजिला मकान बनाने की अनुमति दी जानी चाहिए।

तालिका क्रमांक-2

इंदिरा आवास/प्रधानमंत्री आवास योजना की उपलब्धियाँ

क्रमांक	वर्ष	लक्ष्य	उपलब्धि	प्रतिशत उपलब्धि
1.	2014–15	25,18,978	1652737	65-61%
2.	2015–16	20,79,146	1831952	88-11%
3.	2016–17	33,00,000	2122549	64-32%

प्रधानमंत्री आवास योजना का ग्रामीणों पर प्रभाव-

इस योजना के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले आवासहीन तथा कच्चे घरों में रहने वाले लोगों को पक्के मकान बनाने हेतु वित्तीय सहायता दी जाती है। एक पक्का मकान हर व्यक्ति के जीवन में बहुत मायने रखता है।

- रहने के लिये स्थायी घर व्यक्ति की समाज में प्रतिष्ठा निर्धारित करता है।
- प्राकृतिक आपदा से सुरक्षा मिलती है।
- स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। एक स्वस्थ पर्यावरण से एक स्वस्थ जीवन

शैली मिलती है।

- परिवार के बच्चों की शिक्षा पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- व्यक्ति का जीवन स्तर बेहतर होता है।
- व्यक्ति की श्रम उत्पादक शक्ति बढ़ती है।
- आवास एक आर्थिक सम्पत्ति है जिससे व्यक्ति के आत्मविश्वास में वृद्धि होती है।
- स्वयं का आवास होने से व्यक्ति पलायन के बारे में नही सोचता है।
- आवास हेतु सहयोग राशि के साथ व्यक्ति को मनरेगा के अंतर्गत रोजगार की सुविधा मिलने से आर्थिक सुदृढ़ीकरण।
- ग्रामीण रोजगार में वृद्धि।
- मकान का आंबटन महिला सदस्य के नाम पर होने के कारण ग्रामीण महिलाओं में आत्मविश्वास बढ़ता है।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. कुरूक्षेत्र- अक्टूबर 2012, फरवरी 2014, दिसंबर 2016
2. कौशिक, डॉ. जगवीर- भारत निर्माण योजना का अवलोकन कुरूक्षेत्र - अक्टूबर 2012, सूचना व प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली।
3. झा संजय- गाँवों में बेहतर हो रही हैं आधारभूत सुविधायें, कुरूक्षेत्र, सितम्बर 2016, सूचना व प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली।
4. सोनी कुमारी- गरीबों के लिये वरदान बनी इंदिरा आवास योजना, कुरूक्षेत्र फरवरी 2014, सूचना व प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली।
5. सिंह संतोष कुमार- सर्वांगीण विकास पर ध्यान, कुरूक्षेत्र अक्टूबर 2012, सूचना व प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली।
6. प्रधानमंत्री आवास योजना- ग्रामीण के क्रियान्वयन का फ्रेमवर्क, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।
7. सतत ग्रामीण विकास- 3 वर्ष पहल एवं उपलब्धियाँ, ग्रामीण विकास मंत्रालय, ग्रामीण विकास विभाग, भारत सरकार।
8. www.prsindia.org. PRS Legislative Research.
9. Evaluation study of Indira Awas Yojna- Planning Commission, Govt. of India, New Delhi, 2013.
10. Indira Awas Yojna Guideline, Govt. of India Ministry of rural development, Krishi Bhawan, New Delhi, June 2013.

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

महिलाओं के आर्थिक विकास में स्व-सहायता समूहों की भूमिका का विश्लेषण (कांकेर जिले एवं चारामा ब्लॉक के विशेष संदर्भ में)

* वन्दना विश्वकर्मा
** नीलम अग्रवाल

सारांश- **प्रस्तुत अध्ययन में महिलाओं के आर्थिक विकास में स्व-सहायता समूहों की भुमिका का विश्लेषण किया गया है। इस अध्ययन में महिलाओं के विकास के लिए चलाए जा रहे कार्यक्रमों का अध्ययन, समूह की स्थिति एवं महिलाओं के विकास अध्ययन करते हुए स्व-सहायता समूहों के विकास हेतु सुझाव दिया गया है।**

मुख्य शब्द– स्व–सहायता समूह, महिला विकास कार्यक्रम।

भूमिका- ''महिलाओं का महिलाओं द्वारा महिलाओं के लिए विकास" के सिद्धांत पर आधारित बंगलादेश के मोहम्मद युनूस की संकल्पना का साकार रूप है। 1992-93 में बंगलादेश में लघु वित्त माइक्रो फायनेंस सिद्धांत के श्री मोहम्मद यूनुस के द्वारा यह सोच प्रतिपादित की गई थी कि गरीब मनुष्य अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए जो कर्ज साहूकारों से अत्यधिक ब्याज पर समय-समय पर प्राप्त करता है या अन्य वैकल्पिक व्यवस्थाओं से ऋण प्राप्त करता है उसके ब्याज से वह मुक्त नहीं हो पाता और न अपनी छोटी-छोटी आवश्यकताओं की पूर्ति कर पा रहा है, इस संपूर्ण प्रक्रिया में कहीं न कहीं परिवर्तन लाना आवश्यक है अत: निर्धन परिवारों के समूह को संगठित करके आर्थिक स्वावलंबन देने के उद्देश्य से स्व-सहायाता समूह का गठन हुआ। स्व-सहायता समूह की अवधारणा इस पर निर्भर करती है कि गरीबों को संगठित करना तथा उन्हें स्वयं गरीबीं उन्मूलन के लिये प्रेरित करना। "स्व-सहायता समूह एक समान सोच, पृष्ठभूमि तथा उद्देश्य वाले सदस्यों का छोटा समूह संगठन है जो अपनी सामूहिक क्षमताओं से अपनी समस्याओं के निदान के लिये प्रयत्नशील होते है। यह समूह सामाजिक-आर्थिक सकारात्मक परिवर्तन तथा सशक्तिकरण का मंच है''

मोहम्मद यूनुस ने अपने अथक प्रयास, सूझबूझ एवं दूरदर्शिता से बंगलादेश में आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग को स्व रोजगार उपलब्ध कराने, कुटीर एवं लघु उद्योगों से जोड़ने तथा छोटी-छोटी बचतों के माध्यम से पूंजी निर्माण करने तथा आसान शर्तो पर ऋण उपलब्ध कराने के लिए महिला स्व-सहायता समूहों का गठन प्रारम्भ किया जो कि

* शोध छात्रा, अर्थशास्त्र, अर्थशास्त्र अध्ययनशाला, पं.रविशंकर विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
** विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, महाप्रभु वल्लभाचार्य स्ना. महाविद्यालय, महासमुंद (छ.ग.)

बाद में बंगलादेश के सबसे बड़े वित्तीय संस्थान, बंगलोदश ग्रामीण बैंक के रूप में स्थापित हुआ। मोहम्मद यूनुस को उनके इस उत्कृष्ट एवं जनकल्याणकारी कार्य के लिए वर्ष 2006 को दुनिया का सबसे सर्वोच्च सम्मान शांति के लिए नोबेल पुरूस्कार से सम्मानित किया गया।

अध्ययन का उद्देश्य-

1. कांकेर जिले में महिला विकास कार्यक्रम का अध्ययन।
2. कांकेर जिले एवं चारामा ब्लॉक में स्व-सहायता समूहों की स्थिति को जानना।
3. स्व-सहायता समूहों के द्वारा महिलाओं के विकास का अध्ययन।
4. स्व-सहायता समूहों के विकास हेतु आवश्यक एवं उपयोगी सुझाव।

शोध प्रविधि-

प्रस्तुत अध्ययन महिलाओं के आर्थिक विकास में स्व-सहायता समूहों की भूमिका का विश्लेषण (कांकेर जिले के चारामा ब्लॉक के विशेष संदर्भ में) प्राथमिक एवं द्वितीयक संमको पर आधारित है।

न्यादर्शो की संख्या-

अध्ययन के लिए कांकेर जिले के चारामा ब्लॉक से 535 समूहों का चयन लॉटरी सिस्टम से किया गया है एवं संमको के संग्रहण के लिए साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है, संमको का विश्लेषण प्रतिशत विधि से किया गया है।

आंकड़ो का विश्लेषण-

कांकेर जिले में महिला विकास कार्यक्रम

तालिका क्रमांक -1

कांकेर जिले में चलाये जा रहे विकास कार्यक्रम

क्र.	योजना का नाम
1	आयुष्मति योजना
2	महिला जागृति शिविर
3	दत्तक पुत्री शिक्षा योजना
4	दिशा दर्शन भ्रमण कार्यक्रम
5	मुख्यमंत्री कन्यादान योजना
6	किशोरी शक्ति योजना
7	मुख्यमंत्री बाल संदर्भ योजना
8	सक्षम योजना
9	उद्यमिता जागरूकता शिविर
10	कौशल उन्नयन प्रशिक्षण

स्त्रोतः- जिला कार्यक्रम अधिकारी महिला एवं बाल विकास उत्तर बस्तर कांकेर

उपरोक्त तालिका क्रमांक -1 से स्पष्ट है कि कांकेर जिले में शासन द्वारा महिलाओं एवं बच्चों के समग्र विकास हेतु विभिन्न कार्यक्रम चलाया जा रहे है। इस योजना के अंतर्गत आगंनबाड़ी केन्द्र संचालित कर इन केन्द्रों के माध्यम से 0 से 06 वर्ष की आयु वर्ग की बच्चों तथा गर्भवती व शिशुवती महिलाओं को सेवाएं दी जाती है। जैसे- पोषण आहार कार्यक्रम, छत्तीसगढ़ निर्धन कन्या सामूहिक विवाह योजना, आयुष्मति योजना, दत्तक पुत्री शिक्षा योजना, महिला जागृति शिविर, किशोरी शक्ति योजना।

जिले में महिलाओं के आर्थिक एवं सामाजिक विकास संबंधी महिला कोष का गठन छत्तीसगढ़ सोसायटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम के तहत् किया गया है। महिला कोष द्वारा ग्रामीण स्व-सहायता समूह को आसान शर्तों पर ऋण उपलब्ध करने के उद्येश्य से 15 अगस्त 2003 से इस योजना का संचालन किया जा रहा है। इस योजना के अन्तर्गत स्व-सहायता समूहों को 50000/ तक का ऋण उपलब्ध कराया जाता है। योजना के तहत् स्वैच्छिक संगठन का 5 प्रतिशत एवं स्व-सहायता समूह को 6.5 प्रतिशत वार्षिक साधारण ब्याज दर पर ऋण प्रदान किया जाता है।

सक्षम योजना ,स्वावलंबन योजना, छत्तीसगढ़ टोनही प्रताड़ना अधिनियम 2005, छत्तीसगढ़ दहेज प्रतिशेध अधिनियम 2004 महिलाओं के विकास हेतु इन योजनाओं को लागू किया गया है।

कांकेर एवं चारामा ब्लॉक में स्व-सहायता समूहों की स्थिति-

तालिका क्रमांक -2

स्व-सहायता समूहों एवं समूहों की सदस्य संख्या का विवरण

वर्ष	समूह संख्या कांकेर जिला	समूह संख्या चारामा ब्लॉक	प्रतिशत के रूप में दर्शायी गयी संख्याएँ चारामा ब्लॉक व कांकेर जिले का	सदस्य संख्या कांकेर जिला	सदस्य संख्या चारामा ब्लॉक	प्रतिशत के रूप में दर्शायी गयी संख्याएँ चारामा ब्लॉक व कांकेर जिले का
2006—07	320	100	32	3500	1100	31.43
2007—08	455	150	33	5325	1800	33.80
2008—09	932	330	35.41	6267	5310	56
2009—10	1267	400	31.57	11167	3580	32.06
2010—11	3613	468	13.26	46468	6154	13.24
2011—12	3132	500	15.96	46757	6502	13.91
2012—13	3132	535	17.08	46757	6824	14.59
2013—14	3300	535	16.21	45034	6824	15.15
2014—15	3300	540	16.36	45034	6874	15.26
2015—16	4500	546	12.13	45094	6934	15.37

तालिका क्रमांक -2 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि छ.ग. राज्य के उत्तर बस्तर क्षेत्र का कांकेर जिला भी स्वसहायता समूहों द्वारा ग्रामीण महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक स्वावलंबन की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है। कांकेर जिला के अन्तर्गत महिला बाल विकास विभाग, वन विभाग, ग्रामीण विकास विभाग एवं एन.जी.ओ. के माध्यम से स्व-सहायता समूहों का संचालन किया जा रहा है। कांकेर जिले में वर्ष 2010-11 कुल 3613 समूह संचालित थे जिनमें 46468 महिलायें सहभागी रही। महिला बाल विकास विभाग द्वारा इस वर्ष 321 महिला स्वसहायता समूहों को आर्थिक स्वावलंबन हेतु बैंक से ऋण मुहैया कराये गये। यह ऋण 6 प्रतिश्त ब्याज की दर दिये गये । वर्ष 2006-07 में समूहों में गठित 215 स्वसहायता समूह समवन्वय,प्रशिक्षण एवं नेतृत्व के अभाव में समाप्त हो गये। किन्तु वर्ष 2008-09 में पुनः वृद्धि होने लगी, जो कि वृद्धि का क्रम 2015-16 तक 546 हो गया है। कांकेर तथा चारामा ब्लॉक में स्च-सहायता समूहों की सदस्यों की संख्या में भी निरन्तर वृद्धि हो रहा है, वर्ष 2006-07 में कांकेर जिले में सदस्यों की संख्या 3500 एवं चारामा ब्लॉक में 1100 थी जिसका प्रतिशत 31.43 था। वर्तमान 2015-16 में

कांकेर जिले में सदस्य संख्या 45094 एवं चारामा ब्लॉक में 6934 है जिसका प्रतिशत 15. 37 है।

स्व-सहायता समूहों के द्वारा महिलाओं के विकास का अध्ययन-

स्व-सहायता समूहों के द्वारा न केवल ग्रामीण महिलाओं के व्यक्तिगत आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो रही है बल्कि परिवार और समाज भी इससे लाभान्वित हो रहा है। ग्रामीण विकास में स्व-सहायता समूहों के प्रभाव को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। समूह की महिलायें आपसी वार्तालाप से कई समस्याओं के हल स्वयं निकाल रही है। जिनमें रोजमर्रा के मसले से लेकर ग्राम विकास तक की समस्याऐं सम्मिलित है। समूह की महिलायें सामाजिक स्तर पर भी प्रभावशाली भूमिका निभा रही है। एक ओर इन महिलाओं की सहभागिता शासन की विभिन्न योजनाओं जैसे- पल्स पोलियो, एड्स जागरूकता अभियान में देखी जा सकती है तो दूसरी ओर सामाजिक, कुरीतियों का बहिष्कार कर अपने पिछड़ेपन के कारणों को दूर करने में सहायक हो रही है जैसे- शराबखोरी, जुआ, दहेज प्रथा, बाल विवाह आदि। स्व-सहायता समूह की महिलाऐं अपने परिवार को आर्थिक सबल प्रदान करने के साथ-साथ ग्रामीण सामाजिक-आर्थिक एवं राजनैतिक गतिशीलता में भी अभूतपूर्व योगदान दे रही है, इन महिलाओं में स्वयं के, परिवार के, ग्राम के, व्यवसाय के एवं राजनीति के सम्बन्ध में निर्णय लेने की क्षमता को विकसित होते देखा जा सकता है, इस प्रकार स्व-सहायता समूह के द्वारा महिलाओं के विकास को निम्न बिन्दुओं के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता है -

* आर्थिक सशक्तिकरण, आर्थिक स्थिति को दृढ़ कर रहा है।
* बाहरी दुनिया से सम्पर्क सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि कर रहा है।
* सहभागिता एवं सामूहिक रोजगार की प्रवृत्ति बढ़ रही है।
* निर्णय लेने की क्षमता का विकास हो गया है। सर्वाधिक महिलायें परिवार के महत्वपूर्ण विषयों पर निर्णय लेने में भागीदार है।
* समूह के रूप में बैठक करने और काम करने से महिलाओं में सीखनें की प्रवृत्ति तीव्र गति से बढ़ रही है।
* समूह में महिलाओं को अपने अनुभवों को बांटने का अवसर प्राप्त होता है जिससे समस्या का समाधान खोजने का ज्ञान मिलता है।

स्व-सहायता समूहों के विकास हेतु आवश्यक एवं उपयोगी सुझाव-

1. समूह की सदस्यों की साक्षरता बढ़ाने के उद्देश्य से अन्य संस्थाओं से समन्वयक स्थापित कर महिला मुद्दें जैसे लिंग भेद, श्रम विभाजन आदि को पाठ्यक्रम में सम्मिलित करते हुये शैक्षणिक गतिविधियों का संचालन स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा किया जाना चाहिए।
2. स्वास्थ्य विभाग द्वारा कार्ययोजना के माध्यम से स्वच्छता, स्वास्थय एवं पोषाहार के सम्बध में जानकारी प्रदान करना चाहिए।
3. समूह की बैठकों में बच्चों की शिक्षा, पालन पोषण एवं नियंत्रण के संबंध में स्वयं सेविकाओं से सहायता प्राप्त करना चाहिए।
4. समूहों की बैठकों में नियमित रूप से पशु पालन, पशु चिकित्सा तथा टीकाकरण से संबंधित नई-नई जानकारियों से अवगत कराना चाहिए।

5. समूहों को समय-समय पर कच्चा माल उपलब्धता, आय व्यय, उत्पादन की गुणवत्ता, मार्केटिंग, रख रखाव आदि के सम्बन्ध में प्रशिक्षण देना चाहिए।
6. ग्रामीण आवश्यकताओं के अनेक उत्पादन बाजार में उपलब्ध है, समूहों को उत्पादनों की बाजारीकरण में जोड़ा जाना चाहिए।
7. ग्रामीण क्षेत्र अल्प आय एवं जागरूकता के अभाव में कुपोषण से जूझ रहा है। स्थानीय संसाधनों से पौष्टिक भोजन बनाने हेतु जागरूक संगोष्ठियों का आयोजन किया जाना चाहिए।
8. कृषि के क्षेत्र में नवीन तकनीकी का प्रशिक्षण समूहों को दिया जाना चाहिए।

निष्कर्ष-

उक्त विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि स्व-सहायता समूह के माध्यम से ग्रामीण महिलायें जागरूक हो रही है। भविष्य में एक ऐसे युग के आगमन की पूर्ण संभावना है जो भारत के केवल ग्रामीण क्षेत्र को ही नहीं बल्कि पूरे भारत की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिस्थिति को सकारात्मक परिणाम देगा। स्वयं सहायता समूह निर्धन एवं ग्रामीण महिलाओं का वह ठोस धरातल साबित हो रहा है जहां ग्रामीण महिलायें स्वतंत्रता पूर्वक अपने इच्छाओं के पंख फैला रही हैं जिन्हें अब रोका नहीं जा सकता।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. प्रेमा, महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण, मार्च 2005
2. वेलु सुरेश कुमार, महिला सशक्तिकरण, स्व सहायता समूह के माध्यम से सफलता, नवम्बर 2005
3. कुमावत सुदीप, ग्रामीण विकास और महिला रोजगार, कुरूक्षेत्र, मार्च 2008
4. महेश्वरी, दुर्गा, महिला विकास कार्यक्रमों का आर्थिक मूल्यांकन, (रायपुर जिले के संदर्भ में) 2006
5. देवपुरा प्रतापमल, आर्थिक स्वावलबंन से होगी महिलाऐं सशक्त, कुरूक्षेत्र, जून, 2010 वर्ष 56, अंक 8 पृ.क्र. 15

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

जिनिंग एवं प्रेसिंग उधोगों की वित्तीय स्थिति (खंडवा जिले के विशेष संदर्भ में)

* डी.के. सिंघल
** दीपा चौरसिया

==

सारांश- **किसी भी व्यवसाय की मूल क्रियाओं का आधार स्तम्भ वित्त माना जाता है। विशेषकर उत्पादन व विपणन सबंधी क्रियाओं में वित्त उसी प्रकार का कार्य करता है, जो मशीन को चलाने में तेल का या मानव शरीर को चलाने मे रक्तका होता है। वित्त व्यवसाय का जीवन रक्तहोता है। बिना वित्त के औद्योगिक इकाइयों की स्थापना और उसके संचालन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। वित्त की आवश्यकता उन सभी क्षेत्रों के लिए होती है जहाँ पर आथक क्रियाएँ सम्पन्न होती है।एक प्रगतिशील व्यवसाय सदैव बढ़ता रहता है, इसकी स्थायी सम्पत्तियों एवं अन्य संसाधनों मे संवर्द्धन होता रहता है। अधिकतम लाभ को जारी रखने के लिए नयी पद्धति अपरिहार्य होती है, परंतु नयी पद्धति के लिए आवश्यक है की पुर्नस्थापन अथवा नयी योजना के रूप में स्थायी सम्पत्तियों मे विनियोग किया जाता है।**

==

जिनिंग एवं प्रेसिंग इकाइयों में वित्तीय स्त्रोत-

इस व्यवसाय संचालन मे पूँजीगत व्यय का अनुमान महत्वपूर्ण होता है। प्रत्येक इकाई के लिए पूँजी के स्त्रोत की खोज करना आवश्यक है। इकाइयों के लिये दीर्घकालीन, अल्पकालीन पूँजी जो कि स्वयं पूँजी या ऋण पूँजी के रूप में होती है। अत: पूँजी का प्रबंधन करना आवश्यक होता है। विभिन्न वैकल्पिक स्त्रोत, जैसे- बैंकिंग संस्थान, वित्तीय संस्थान, देशी बैंकर, मित्र, रिश्तेदार आदि हो सकते है, जिनके माध्यम से दीर्घकालीन एवं अल्पकालीन पूँजी की प्राप्ति की जाती है। जिनिंग एवं प्रेसिंग इकाइयों की स्थापना की प्रवृत्ति-किसी भी राष्ट्र में एक बार औधोगीकरण की प्रक्रिया जब प्रारम्भ हो जाती है तो उसके साथ ही उस देश में सतत परिवर्तनों की श्रृंखला का जन्म होता है। ये परिवर्तन अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं तथा इनके प्रभाव अत्यन्त दूरगामी एवं व्यापक होते है, जिनका संबंध आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रो में परंपरागत मूल्यों के स्थान पर आधुनिकतम मूल्यों के स्थापना करना होता है। वैसे तो अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्र इन परिवर्तनों से प्रभावित होते है, किन्तु कतिपय क्षेत्र ऐसे होते है जिन पर प्रभाव तत्कालीन होता है।

=========================

* निर्देशक, प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय कालिदास कन्या महाविघालय, उज्जैन, म.प्र.
** शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

तालिका क्र.01

जिनिंग एवं प्रेसिंग इकाइयों में वित्तीय स्त्रोत की स्थिति (लाख रुपये)

(खंडवा जिले के विशेष संदर्भ में)

इकाई	संख्या	स्वंय की पूँजी	संबंधी साझेदार	बैंक ऋण अन्य संस्थागत ऋण	कुल
जिनिंग	5	236.23	409.56	276.25	3048.04
जिनिंग एवं प्रेसिंग	5	3177.37	869.36	525.32	4572.05
प्रेसिंग	2	1685.15	482.12	118.76	2286.03
जिनिंग एवं अन्य	6	796.12	669.08	374.35	3840.05
योग	**18**	**10020.87**	**2430.12**	**1295.18**	**13746.17**

स्त्रोतः सांख्यिकी विभाग, खंडवा

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है की अध्ययन के दौरान जिनिंग इकाइयों के स्वंय की पूँजी महत्वपूर्ण नहीं है। आनुपातिक दृष्टि से स्वंय का सर्वाधिक भाग है जबकि बैंक व वित्तीय संस्थानों से लिये गया ऋण का भाग सबसे कम रहा है। सर्वाधिक विनियोजन जिनिंग व अन्य कार्य करने वाली इकाई मे 3840.05 लाख रूपये रहा है तथा सबसे कम विनियोजन 2286.03 लाख रूपये प्रेसिंग इकाई मे रहा है। चूंकि सगे संबंधी या संस्था के साझेदार से उधार लेना आसान रहता है क्योंकि आपसी संबंध का लाभ लेना आसान होता है। बैंक या अन्य संस्था से उधार लेना कठिन कार्य होता है क्योंकि विभिन्न औपचरिकतायें काफी समय लेती है जिससे ऋण का विनियोजन के मे सबसे कम भाग है। इस प्रकार प्रति इकाई औसत विनियोजित पूँजी का विश्लेषण निम्न तालिका मे स्पष्ट किया गया है-

तालिका क्र.02

औसत पूँजी विनियोजन की स्थिति

(खंडवा जिले के विशेष संदर्भ में) (लाख रुपये)

इकाई	संख्या	कुल विनियोजन	औसत विनियोजन
जिनिंग	5	3048.04	609.61
जिनिंग एवं प्रेसिंग	5	4572.05	914.41
प्रेसिंग	2	2286.03	1143.02
जिनिंग एवं अन्य	6	3840.05	640.01
योग	**18**	**13746.17**	**763.68**

स्त्रोतः सांख्यिकी विभाग, खंडवा

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वाधिक औसत विनियोग प्रेसिंग इकाई में 1143. 02 लाख रूपये रहा जबकि सबसे कम औसत विनियोग जिनिंग कार्य करने वाली इकाई में 609.61 लाख रूपये रहा है। इस प्रकार कुल 18 इकाइयों का प्रति इकाई औसत विनियोग 763.68 लाख रूपये रहा है।

अध्ययन मे यह पाया गया है कि प्रेसिंग कार्य करने वाली इकाई मे महँगी तकनीक, कुशल श्रमिक, पैकिंग सामग्री आदि पर अधिक व्यय किया जाता है। खंडवा जिले में जिनिंग एवं प्रेसिंग इकाइयों के वित्तीय आपूर्ति के लिए निजी स्त्रोत सरकारी वित्तीय संस्थान, निजी वित्तीय संस्थान, बैंक आदि शामिल है। उघमियों द्वारा दीर्घ, मध्यम तथा अल्प अवधि के वित्तीय स्त्रोत की खोज की जाती है। इकाइयों मे विनियोजित पूँजी को दो

वर्गो में विभाजित किया गया है। प्रथम मे भवन,भूमि, शेड,मशनरी, उपकरण तथा अन्य स्थिर संपत्तियाँ तथा कार्यशील पूँजी के अंतर्गत कच्ची सामग्री, दैनिक व्यय, वेतन, निर्माण व्यय, प्रशासनिक व्यय आदि को शामिल किया गया है। अध्ययन मे पूँजी कि संरचना एवं पूँजी की प्राप्ति के स्त्रोत का इकाइयों के विकास में योगदान का विवेचन किया गया।

वर्तमान समय में देखा जा रहा है कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों की संगठन क्षमता एवं उनकी प्रबंधकीय क्षमता निश्चित रूप से उन्नत प्रौद्योगिकी का उपयोग करके अपेक्षाकृत कम लागत पर उत्तम गुणवत्ता वाली वस्तुएं एवं सेवाएं उपभोक्ताओं को प्रदान करने मे सफल हो जाती है। इस प्रतिस्पर्धा में स्थानीय कंपनियाँ भी शामिल हो जाती है और वे भी ऊपर उठकर बहुराष्ट्रीय कंपनियों के समकक्ष आना चाहती है।अपनी इस अभिलाषा को पूर्ण करने के उद्देश से विदेशी सहयोग के नये समझौते सम्पन्न करती है और इस प्रकार निरंतर नयी-नयी परियोजनाएँ क्रियान्वित होती रहती है। यह प्रक्रिया बहुराष्ट्रीय कंपनियों की अपनी शृंखला को जन्म देती है जो विदेशों मे उनकी संख्या मे सतत वृद्धि का कारण बनती है।

विगत कुछ वर्षो से खंडवा जिले के क्षेत्र मे कपास की खेती के स्थान पर सोयाबीन की खेती, जिसे लाभ कि खेती के रूप में अपनाना भी इसका एक प्रमुख कारण रहा है।

में परंपरागत कपास के बीज व खेती को नुकसानदायक बनाया है। बिचौलिए एवं बीच वितरक कंपनियों की नीतियों के चलते कृषक भी कपास के प्रति विमुख होने लगा है, जिससे जिले मे अन्य लघु और कुटीर इकाइयों की स्थापना मे विराम लग गया। केवल बड़ी पूँजी वाली इकाइयाँ ही कार्य करने मे सक्षम साबित हुई। कपास संबंधी प्रौघोगिकी मिशन- भारत सरकार ने कपास के विकास एवं गुणवत्ता में सुधार के लिए फरवरी 2000 में कपास के संबंध मे प्रौघोगिकी मिशन प्रारम्भ किया है। कपास तकनीकी मिशन को 13 राज्यों में क्रियान्वित किया जा रहा है।

कपास प्रौघोगिकी मिशन में चार लघु मिशन शामिल है।

1. लघु मिशन-I: इसमें उच्च गुणवत्ता वाले रेशों को शामिल किया है। कपास आधारित फसल प्रणालियों के संबंध में 9 राज्यों को शामिल किया है।

2. लघु मिशन-II: प्रौघोगिकी हस्तांतरण संबंधी भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के माध्यम से चलाया जाता है जिसमे प्रशिक्षण, बीजों की जाँच, कीट निगरानी आदि शामिल किये गए है।

3. लघु मिशन-III: नये मंडी प्राँगण स्थापित करना, विद्यमान बाज़ार प्राँगण में सुधार करना तथा निष्क्रिय पड़े प्राँगण को सुधार करके विपणन व्यवस्था में सुधार करना शामिल है। जिसकी विकास लागत का 60 प्रतिशत भारत सरकार तथा शेष राज्य सरकार द्वारा वहन किए जाने का प्रावधान किया गया है। जिसके लिए 1.5 करोड़ रुपये, सुधार के लिए 9 लाख रुपये निष्क्रिय प्राँगण को प्रारम्भ करने के लिये 25 लाख रुपये तक सीमित है।

4. लघु मिशनप्ट- इसके अंतर्गत जिनिंग एवं प्रेसिंग कारखानों के आधुनिकीकरण हेतु लागत के 25 प्रतिशत कि दर से पूँजी अनुदान प्रदान कि जाती है प्रति इकाई 25 लाख रूपये तक सीमित की गई है, जिसके लिए 616 इकाई को आधुनिकीकरण के लिए स्वीकृत किया गया। लक्ष्य को पूरा करने के लिये कपड़ा मंत्रालय ने इस कार्य को भारतीय कपास

निगम के अधीन कर दिया है।

निष्कर्ष- अध्ययन में यह पाया गया है कि विनियोजक वर्ग द्वारा स्वयं की पूँजी के साथ-साथ साझेदारी पद्धति तथा अन्य संस्थागत वित्तीय सुविधा का लाभ लिया गया है। सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह रहा कि प्रारंभिक पूँजी एवं वर्तमान विनियोजित पूँजी में मुद्रा स्फीति, संसाधन विस्तार, विकास इत्यादि के कारण काफी अंतर देखा गया है। इस प्रकार खंडवा जिले की जिनिंग एवं प्रेसिंग इकाइयों में हजारों व्यक्तियों को दैनिक रोजगार प्राप्त हुआ। जिनिंग एवं प्रेसिंग इकाइयों पर औद्योगिक नीति के प्रत्यक्ष प्रभाव के साथ-साथ कृषि नीति व्यापार की आयात-निर्यात नीति और जिनिंग एवं प्रेसिंग इकाइयों के संबंध में विभिन्न समस्याएं देखी गयी।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. गुप्ता एस.पी., वित्तीय प्रबंध साहित्य भवन, आगरा,पृ.01
2. रिचर्ड टी.गिल., इक्नोमिक्स डेवलपमेंट रिपोर्ट, पृ.12
3. वित्तीय प्रबंध., यशराज पब्लिकेशन, इंदौर

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

औद्योगीकरण का पर्यावरण पर प्रभाव : एक सैद्धान्तिक अध्ययन

* वर्षा राहुल

सारांश- **यदि मानव की विकास प्रक्रिया पर ध्यान दें तो पायेगें कि पाषाण युग से ही मानव ने भोजन तथा सुरक्षा के उद्देश्य से अग्नि प्रौद्योगिकी के आविष्कार द्वारा प्राकृतिक तन्त्र से छेड़-छाड़ शुरू की। पूर्व में चूंकि मानव खानाबदोश जीवन व्यतीत करता था। अतः प्रत्येक नवीन स्थान पर कृषि योग्य भूमि तैयार करने के उद्देश्य से जंगलों तथा वनों में आग लगा देता था जो एक गंभीर भूल बनकर आज हमारे सामने खड़ी है। जनसंख्या में वृद्धि के साथ-साथ वनों की कटान बढ़ती गयी। परिणामस्वरूप भू-क्षरण, नियंत्रण, तापमान, नियमन, भूजल भण्डारण जैसी प्राकृतिक क्रियायें बाधिक होने लगी। जैसा कि किसी दार्शनिक ने कहा है कि ''सभ्यतायें जंगलों का अनुसरण करती हैं परन्तु अपने पीछे रेगिस्तान छोड़ जाती है।''सन् 1750 में ब्रिटेन में हुयी औद्योगिक क्रान्ति विकास की प्रक्रिया में एक मील का पत्थर है। कोयला दहन से प्राप्त होने वाली भाप शक्ति की खोज के साथ ही औद्योगिक उत्पादन करने वाली बृहद इकाइयों की स्थापना होने लगी। उद्योगों की स्थापना, सड़कों, नहरों, पुलों, ऊर्जा प्लाण्टों की स्थापना यातायात साधनों के विकास आदि ने उत्पादकों के लाभ एवं उपभोक्ताओं के सुख-सुविधा में वृद्धि तो की परन्तु इसकी कीमत हमने अपनी प्रकृति से ही वसूल की। आज हम जैव प्रौद्योगिकी उत्पादन के युग में प्रवेश कर चुके हैं तथा भविष्य में विश्व व्यापार का 60 प्रतिशत से ज्यादा इसी क्षेत्र से सम्बन्धित होगा। ऐसी स्थिति में पर्यावरण संकट की अवस्था अधिक चिन्तनीय हो जाती है। पिछले कई दशकों से औद्योगिक प्रगति के फलस्वरूप प्रकृति पर मंडराने वाले संकटों ने सभी का ध्यान आकर्षित किया है। अतः पर्यावरणीय संकट की समस्या को सभी छोटे-बड़े देशों को समय रहते गंभीरता से लेना होगा और सुरक्षित पर्यावरण के मसले को विनाशकारी चुनौती के रूप में ईमानदारी से स्वीकारना होगा।**

हमारी पृथ्वी लगभग साढ़े चार अरब वर्ष पुरानी है। पृथ्वी पर मौसम जीवाणुओं ने करोड़ों वर्षो तक कार्बन डाइआक्साइड सोखकर और आक्सीजन को छोड़कर जीवों के सांस लेने के लिये उपयुक्त स्थितियों का सृजन किया है। इसी क्रिया से पृथ्वी पर जीवन संभव हुआ है। लेकिन अब हम उस दौर में पहुँच रहे हैं। जहाँ जीवन के लिए महत्वपूर्ण यह क्रियायें असंतुलित होती जा रही है।

पृथ्वी पर रहने वाला हर संवेदनशील व्यक्ति संभवतः तापमान के बढ़ने के सिलसिले को महसूस कर रहा है। पृथ्वी के तापमान के रिकाॅर्ड करने का सिलसिला 1860 में शुरू हुआ था अब स्थिति यह आ चुकी है कि वर्ष 2016 को इतिहास का सबसे गर्म वर्ष दर्ज

* सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, डी0वी0 कॉलेज, उरई (उ.प्र.)

किया गया। मार्च 2017 इससे थोड़ा ही पीछे रहा होगा।[1]

तापमान के बढ़ने का मुख्य कारण यह है कि हमारी पृथ्वी पर जितनी ऊर्जा और गर्मी पैदा हो रही है। वह पृथ्वी द्वारा पूरी तरह से अवशेषित नहीं हो पा रही है और चूंकि औद्योगिकीकरण की तेज होती रफ्तार से वायुमंडल में औद्योगिक गैसों द्वारा अधिक मात्रा में गर्मी का उत्सर्जन किया जा रहा है, इसलिये पृथ्वी पर गर्मी की मात्रा लगातार बढ़ती जा रही है। जल, थल एवं वायु का प्रदूषण वस्तुतः अनियंत्रित एवं अनियोजित औद्योगीकरण का ही परिणाम है। विभिन्न शोधों द्वारा यह प्रमाणित किया जा चुका है कि उद्योगों के कारण वायुमण्डल में निष्कषित विषैली गैसों एवं हानिकारक रासायनिक तत्वों के कारण अति औद्योगिक क्षेत्रों तथा महानगरों का पर्यावरण बुरी तरह प्रभावित हुआ है, जिससे वहाँ के निवासी विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रसित हुये हैं।

औद्योगीकरण जहां एक ओर किसी भी देश की आर्थिक प्रगति का द्योतक है, वहीं दूसरी ओर कई विकासशील देश औद्योगीकरण से उत्पन्न विभिन्न प्रमाण की पर्यावरण प्रदूषण की समस्याओं से जूझ रहे हैं। प्रत्येक देश की स्थिति, प्राकृतिक संसाधन, उपलब्ध जलवायु एवं अन्य उपलब्ध परिस्थितियों में भिन्नता होती है। उनकी आर्थिक सामाजिक एवं अन्य समस्याएं भी सामान्यतया सामान्य नहीं है। अतः प्रत्येक राष्ट्र को अपनी विशिष्ट परिस्थितियों को दृष्टिगत रखकर ही औद्योगिक विकास के स्वरूप को निश्चित करते समय इसके पर्यावरणीय प्रभावों को भी ध्यान में रखना आवश्यक है।

वर्तमान समय में सम्पूर्ण विश्व में औद्योगीकरण की होड़ मची हुयी है, इस आपाधायी में प्रत्येक राष्ट्र औद्योगीकरण से होने वाले पर्यावरणीय प्रदूषण को नियंत्रित करने के पर्याप्त उपाय नहीं कर सके हैं। अतः औद्योगीकरण एक ओर देश के आर्थिक रूप से समृद्ध बनाते हैं तो दूसरी ओर विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय प्रदूषण फैलाकर वहां के वनों के विनाश एंव भूगर्भीय अवशिष्ट ईधनों के उपयोग के कारण वायुमण्डल के तापक्रम में धीरे-धीरे वृद्धि हो रही है, जिससे विभिन्न ग्लेशियर पिघल रहे हैं।

प्रमुख गैसें व औद्योगिक वस्तुएं[2]

ओजोनलक्षरण करने वाली प्रमुख गैसें	वस्तुयें
क्लोरो फ्लोरो कार्बन	रेफ्रिजरेटर, वातानुकूल, प्लास्टिक व इलैक्ट्रानिक उद्योग
हेलेन्स	अग्निशामकों
हाइड्रो क्लोरो फ्लोरो कार्बन	रेफ्रिजरेटर
कार्बन टेट्रा क्लोराइड	औषधियों, कीटनाशकों व पेन्ट्स
मेथिल क्लोरोफार्म	धात्विक शोधन, इलैक्ट्रानिक उद्योग
नाइट्रस ऑक्साइड	सुपरसोनिक विमान, उर्वरक

ग्लोबल वार्मिंग की समस्या का सबसे दुष्प्रभाव पिघलती प्राकृतिक बर्फ हैं। हमारी पृथ्वी के विभिन्न स्थानों पर सदियों से जमीं बर्फ चाहे वह पहाड़ों पर जमी बर्फ हो या विशाल ग्लेशियरों के रूप में हिमखण्ड के विशाल भण्डार हो बढ़ती गर्मी के कारण बड़ी तेजी से पिघल रहे हैं। बंग्लादेश, मालद्वीप, डेनमार्क जैसे निचले देशों के बहुत जल्द डूबने का खतरा उत्पन्न हो गया है। जब हमारे ग्लेशियर तथा बर्फीले पहाड़ तेजी से पिघलेगें तो इससे नदियों में पानी तेजी से बढ़ने से बाढ़ की समस्या और नदियों के तट बांध टूटने की समस्या सामने आयेगी। भविष्य में नदियों में जल की आपूर्ति घटेगी जिसका प्रभाव पुनः

हमारे जीवन पर पड़ेगा। गंगोत्री तेजी से सिकुड़ते ग्लेशियर का एक अन्य उदाहरण है। हिमालय क्षेत्र में पिछले पांच दशकों में माउण्ट एवरेस्ट के ग्लेशियर 2 से 5 किमी0 तक सिकुड़ गये हैं, इससे ग्लेशियर की झीलों और आसपास के रिहायशी इलाकों में जल भराव हुआ है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा जारी एक विशेष रिपोर्ट में कहा गया है कि जलवायु परिवर्तन के कारण पेयजल और सिंचाई के लिये उपलब्ध होने वाले जल पर भी बुरा असर पड़ेगा। रिपोर्ट के अनुसार केवल एशियाई पर्वतों पर जमीं बर्फ और ग्लेशियरों के पिघलने से दुनिया भर की 40 प्रतिशत आबादी प्रभावित होगी। माना जा रहा है कि आने वाले 40 से 50 सालों में बांग्लादेश का वजूद समाप्त हो जायेगा। जबकि 20 से 30 सालों में मालद्वीप इतिहास बन जायेगा।

पृथ्वी का तापमान बढ़ने से अनुमान है कि पूरे विश्व में 20 से 30 प्रतिशत पौधों और जानवरों की प्रजातियां लुप्त होने के कगार पर होगी क्योंकि तापमान बढ़ने के साथ-साथ कार्बनडाई आक्साइड की मात्रा भी बढ़ेगी जिससे वनस्पति और प्रजातियों का जीवन चक्र तथा प्रजनन प्रभावित होगा। तापमान बढ़ने पर भारत में घासों से इलाका सिमटता जायेगा जिसका सीधा प्रभाव पशुपालन पर पड़ेगा क्योंकि पशुओं के लिये चारे की उपयुक्त व्यवस्था नहीं हो पायेगी। अनुमान लगाया जा रहा है कि भारत, बांग्लादेश, भूटान, मालद्वीप जैसे विकासशील देशों में बढ़ते तापमान के कारण डायरिया का प्रभाव 20 से 30 तक दोगुना हो सकता है वहीं डेंगू का मौसम परिवर्तन से सीधा सम्बन्ध होगा और मौसम में विचलन से डेंगू के मामलों में वृद्धि आना स्वाभाविक है। कई तरह के विषाणु बढ़ते तापमान में भी अपना अस्तित्व बनाये रखने की क्षमता विकसित कर चुके हैं और आने वाले समय में जब तापमापन और बढ़ेगा तो यह विषाणु काफी घातक सिद्ध होगें।[3]

उक्त समस्या के विषय में 3 से 14 दिसम्बर 2007 में इन्डोनेशिया के खूबसूरत द्वीपसमूह वाली संयुक्त राष्ट्र ने मौसम में हो रहे बदलाव पर एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया। इस सम्मेलन में 180 से अधिक देशों, सरकारी व गैर सरकारी संगठनों ने भाग लिया। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य 2012 में समाप्त हो रहे क्योटो प्रोटोकॉल के स्थान पर एक नये समझौते कि जमीन तैयार करना था।

मौसम परिवर्तन अब कोई छोटी मोटी समस्या नहीं रह गयी है, जैसा कि अभी तक माना जा रहा था मौसम परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभाव हम भोगने लगे हैं। पर्यावरण विशेषज्ञों का मानना है कि वैश्विक गर्मी के कारण पिछले 30 सालों में ही पृथ्वी के वृत्तों की अवस्थिति परिवर्तित होकर ध्रुवों की तरफ 100 मील तक खिसक गयी है इसका अर्थ यह हुआ कि भूमध्य सागर के शुष्क क्षेत्र और शुष्क होते जायेगें और विषुवतीय क्षेत्रों की तरह वर्षा हो सकती है। मौसम तथा वर्षा के पैटर्न में होने वाले यह बदलाव भयावह परिणाम ला सकते हैं, क्योंकि इससे किसी भी क्षेत्र की कृषि वहाँ की जैविक स्थिति, वनस्पतियों की प्रकृति, फसलों की उत्पादकता, लोगों का रहन सहन, आदि सब कुछ प्रभावित हो सकता है।

यह भी संभव है कि मौसमी बदलाव के कारण समुद्री धारायें अपनी प्रकृति ही बदल दें, जैसे गर्म धारा प्रवाह की अक्षांसीय स्थिति में बदलावों के कारण ठंडी धारा में परिवर्तित हो जाये। यह समस्त परिवर्तन मौसमी बदलावों तथा वैश्विक गर्मी के क्रियान्वित करते हुए

इस समस्या को और नजरअंदाज नहीं करना चाहिए अन्यथा इसका परिणाम अति भयावह होगा।

मौसम परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग को यूं तो दो अलग-अलग समस्याओं के तौर पर लिया जाता है, लेकिन दरअसल यह दोनों समस्यायें आपस में सम्बन्धित है। ओजोन छेद की समस्या का पता 1987 में उस समय चला था जब दक्षिणी ध्रुव में अपने अभियान पर गये वैज्ञानिकों के एक दल ने वहाँ समताप मण्डल में ओजोन की उपस्थिति में काफी कमी पायी थी। इसके बाद से वायुमण्डल में ओजोन की उपलब्धता में कमी हो ही ओजोन छेद का नाम दिया गया।

ग्रीनहाउस गैसों द्वारा स्थापित वह प्रभाव है जिसमें पृथ्वी को ऊपर से इन्सुलेट कर पृथ्वी के सतही तापमान को सामान्य से 60 डिग्री फैरनहाइट तक बढ़ा दिया जाता है। यह गैसे पृथ्वी के चारों ओर एक परत जैसी स्थापित कर पृथ्वी की गर्मी को निकलने के रास्ते बन्द कर ग्रीनहाउस प्रभाव स्थापित करती है। ग्रीनहाउस गैसे वे गैसे होती हैं जो पृथ्वी के तापमान को लगातार बढ़ाती है हम जब कोई पदार्थ जलाते हैं तो इससे धुआं निकलता है। इस धुएं से तापमान में गैसे उत्सर्जित होती है। यह गैसे जलाए जाने वाले पदार्थ के गुण, धर्म एवं उनके जलाए जाने की प्रक्रिया पर निर्भर करती है। ग्रीन हाउस गैसों में सबसे प्रमुख गैस है कार्बन-डाई-ऑक्साइड और हमारी पृथ्वी को गर्म करने में सर्वाधिक भूमिका कार्बन-डाई ऑक्साइड की ही है। अन्य प्रमुख गीन हाउस गैसे हैं- मीथेन, परलूरो कार्बन, नाइट्स ऑक्साइउ, हाइड्रो लूरो कार्बन आदि। दरअसल ग्रीन हाउस गैसे कार्बन-डाई-ऑक्साइड मीथेन, नाइ्स ऑक्साइड हाइड्रो क्लोरो लूरो कार्बन आदि के छोटे-छोटे कण जलने के बाद हमारे वायुमण्डल के ऊपर जमा हो जाते हैं और सूर्य से प्राप्त हो रही ऊष्मा और इन्फ्रारेड विकिरण को अपने में अवशोषित कर लेते हैं। जैसे हमारे वायुमण्डल में ग्रीन हाउस गैसों की उपस्थिति बढ़ती जाती है। हमारे मौसम के गर्म होने का खतरा भी बढ़ता जाता है। बाली सम्मेलन में वर्ष 2009 तक ग्लोबल वार्मिंग की समस्या से लड़ने के लिए स्वीकार किए गये 4 बिन्दु हैं- 2009 में तैयार एजेण्डा ऐसा होना चाहिए जिसमें उत्सर्जन में अच्छी खासी कटौती करने की क्षमता हो, वैज्ञानिकों के अनुसार उत्सर्जन को 2020 तक 25 से 45 प्रतिशत तक कम करने पर सहमति बन सकती है। सम्मेलन में 2009 तक नये समझौते का मसौदा तैयार करने की बात कही गयी और 2012 तक नये समझौते को लागू करने को कहा गया। औद्योगिक देश हर हाल में उत्सर्जन को कम करने के लिए तैयार रहें, जबकि विकासशील देश उत्सर्जन में हो रही वृद्धि को नियंत्रित करें। वृक्षों की कटाई की दर को कम करने वाले विकासशील देशों को उनके प्रयासों के लिए यथोचित लाभ मुहैया कराया जाये।[4]

पृथ्वी की सतह से सबसे निकट हमारी पहली वायुमण्डलीय परत है संताप मण्डल जिसमें पृथ्वी पर होने वाली सभी मौसमी क्रियाएं और मौसमी परिवर्तन होते हैं। इस परत के ठीक ऊपर समताप मण्डल है जिसके बीचों बीच ओजोन गैस की एक परत मौजूद रहती है जो काफी विचलन वाली तथा रासायनिक रूप से सक्रिय गैस है। यह गैस सूर्य से आने वाली घातक पराबैंगनी विकिरण को पृथ्वी तक पहुँचने से रोकती है।

ओजोन की इस परत के कारण ही पृथ्वी तक यह पराबैगनी किरणों का विकिरण बहुत कम मात्रा पर पहुँच पाता है लेकिन सी0एफ0सी0 गैसों के लगातार बढ़ते उत्सर्जन ने

ओजोन परत को नुकसान पहुंचाया है स्थिति यह बन गयी थी कि ओजोन परत के यह छेद आकार में तो बढ़ ही रह रहे थे। साथ ही साथ छेद के आकार बढ़ने की रफ्तार में भी वृद्धि हुई थी। इसी परिप्रेक्ष्य में मांट्रियल प्रोटोकाल नामक एक समझौता कर इस समस्या को कम करने का प्रयास किया गया।[5]

कनाडा के मांट्रियल शहर में ओजोन छेद की समस्या की दिशा ने व्यवहारिक उपाय सोचने के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन 1987 में आयोजित किया गया था जिसके पश्चात् 24 राष्ट्रों द्वारा एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गये। इस समझौते में क्लोरो लोरो कार्बन तथा हैलोन के उत्पादन को कम कर ओजोन परत को नुकसान पहुँचने की दर को कम करने के लिए एक समय सीमा तक की गयी इस समझौते को ही मांट्रियलप प्रोटोकाल के नाम से जाना गया। इस समझौते में तय किया गया था कि सी0एफ0सी0 गैसों के उत्पादन में वर्ष 2000 तक 50 प्रतिशत तक की कमी लायी जायेगी। बाद में इस समझौते को 30 अन्य देशों ने अपनी सहमति प्रदान की। मांट्रियल समझौते को वैश्विक पर्यावरण कूटनीति के तहत पर्यावरण की जटिल समस्याओं को सुलझाने का सबसे आदर्श माडल माना जाता है। पहले ही विश्व इस दबाव को महसूस कर रहा है कि पिछले दशक की गर्मियां अब तक सबसे ज्यादा तीखी रही हैं। भीषण चक्रवात और तूफान आये, विनाशकारी अकाल पड़े और बसातें हुयी, समुद्र की सतह खतरनाक रूप से चढ़ गयी और तमाम देशों में खेती नष्ट हुयी ं दूर की छोड़ दें तो भारत में ही इस साल गर्मियों में सूखा पड़ा, मुम्बई में असामान्य बारिश हुई और नरगिस चक्रवात ने म्यांमार को भारी क्षति पहुंचाई यह सब जलवायु परिवर्तन का ही नतीजा है खतरा सिर्फ जानो माल को ही नहीं है बल्कि समाज को भी है, क्योंकि तब असफल देशों की संख्या बढने से आतंकवाद, नशीली दबाओं, हथियारों की तश्करी और विस्थापन में भी इजाफा होगा। जिससे दुनिया और भी असुरक्षित हो जायेगी। लेकिन कोपेनहेगेन के बेल्ला सेंटर में जलवायु परिवर्तन पर चल रहे शिखर सम्मेलन में आसन्न संकट पर बातचीत के लिए जुटे 192 देशों के रूख से नहीं लगता है कि पृथ्वी पर खतरे को लेकर कतई चिन्तित है। सम्मेलन के शुरू में सम्मेलन के अध्यक्ष कोनी हेडेगार्ड ने यह कहकर कुछ उत्साह जगाने की कोशिश की कि ''इतिहास में कुछ क्षण ऐसे आते हैं जब विश्व अलग-अलग रास्ते जोन का चुनाव कर सकता है यह ऐसा निर्णायक क्षण है जब हम हरित समृद्धि और सुरक्षित भविष्य की ओर जाने का रास्ता चुन सकते हैं या गतिरोध वाला रास्ता जिस पर हम जलवायु परिवर्तन के बारे में कुछ भी न करें और उसका खामियाजा हमारी संतानों और उनके बाद वाली संतानों को भरना पड़े जाहिर है चुनाव करना कतई कठिन नहीं है।''[6]

दुख है किऐसी बातें कोई भी गम्भीरता से सुनने को तैयार नहीं लगता। कोपेनहेगेन 3 वर्षों से चल रही बातचीत का चर्मोत्कर्ष था जहां से पृथ्वी को बचाने की रूपरेखा निकलनी चाहिए थी लेकिन हेडेगार्ड और अन्य नेता अब शर्म के साथ इस प्रक्रिया की शुरूआत, न कि अंत बता रहे हैं। 192 देशों के नेता 18 दिसम्बर को अचानक कोई सामूहिक फैसला न कर लें तो यह सम्मेलन एक राजनैतिक समझौते के रूप में समाप्त होने वाला है जिसमें सिर्फ वे सदिच्छा जाहिर करेगें न कि कोई लागू होने वाला कदम उठायेगें। संक्षेप में यह सम्मेलन एक गर्मागर्म बहस भर रह गया है।

कोपेनहेगेन सम्म्लेन कई तरह से अपनी शुरूआत से ही असफल होने वाला था। यह

ऐसा सम्मेलन होने वाला था जिसमें क्योटो प्रोटोकाल के तथाकथित एनेक्स-1 के औद्योगिक देशों को अपने जी0एच0जी0 उत्सर्जन में कानूनी रूप से अधिक कटौती का वचन देना था। उन्हें प्रतिबद्धता की दूसरी अवधि को पूरा करना था जो 2012 से 2016 तक होनी थी। यह और बात है कि प्रोटोकाल के तहत अधिकांश देश 2005 से 2012 तक की प्रतिबद्धता की पहली अवधि के लक्ष्यों को पूरा करने में असफल रहे हैं। इस अवधि में उन्हें अपने जी0एच0जी0 उत्सज्रन में 1990 के स्तर से औसत 5 पतिशत तक कटौती करनी थी लेकिन 1992 में रियो के पृथ्वी सम्मेलन में यू0एन0 फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज (यूएनएफसीसी) पर हस्ताक्षर के बाद से विश्व जी0एच0जी0 उत्सर्जन स्तर 30 प्रतिशत तक बढ़ गया है।[7]

आई0पी0सी0सी0 कह चुका है कि अगर वैश्विक तापमान को दो अतिरिक्त सेंटीग्रेड के खतरे के बिन्दु से आगे बढ़ने से रोकना है तो औद्योगिक देशों को 2020 तक अपने जी0एच0जी0 स्तर में 1990 के स्तर से 25 से 40 प्रतिशत के बीच कटौती करने को भी अमेरिका समेत अधिकांश देश मुश्किल से 5 से 17 फीसदी की कटौती करना चाहते हैं।

भारत की ओर से बातचीत करने वाले चन्द्रशेखर दास गुप्ता इसे दुखद बताते हैं। अमेरिका जो पृथ्वी का शत्रु नं0-1 है, क्योटोप्रोटोकाल का वर्षो से अनुमोदन करने से इन्कार करने बाद राजी हुआ कि वह अपेन कार्बन उत्सर्जन में 2005 के स्तर से 17 प्रतिशत तक कटौती करेगा। अगर आप उसे प्रोटोकाल के कट ऑफ वर्ष 1990 के अनुसार देखें तो यह कटौती मात्र 4 प्रतिशत ही बैठती है जब कि यह इसकी तिगुनी होनी चाहिए थी।[8]

इस बीच अमीर देशों ने ज्यादा जरूरतमंद देशों को वित्तीय मदद देने का प्रस्ताव देकर जी-77 देशों में फूट डालने की कोशिश की, खासकर मालदीप जैसे द्वीपीय देशों को, जो खतरे में है, चीन और भारत को, जो स्वच्छ विकास व्यवस्था के तहत भारी रकम पा चुके हैं, चुप रखने के लिए उन्होने कहा कि जंगलों को बचाने के लिए और मुआवजा दिया जाएगा, इस प्रकार वन कटाई और विनाश से उत्सर्जन में कमी के लिए एक कोश जारी किया गया जो ब्राजील और इंडोनेशिया जैसे देशों को अपने जंगलों को बचाने में मदद करेगा। विकासशील देशों का रूख नरम रखने में असफल होने के बाद विकसित देश अब एक डेनिश प्रस्ताव पर जोर दे रहे हैं जो कोपेनहेगेन से निकलने वाला एक राजनैतिक समझौता होगा। 'प्लेज ऐंड रिव्यू' नाम के इस प्रस्ताव को जी-77 और चीन पहले ही क्योटो प्रोटोकॉल के मुख्य प्रावधानों को नष्ट करने के प्रयास के तैयार पर देख रहे हैं।[9] कोपेनहेगेन में कोई वाजिब समझौता नहीं होता है तो नेताओं को दुनिया भर में आम जनता के गुस्से का सामना करना पड़ेगा। खासकर औद्योगिक देशों में, जिन्हें अपने स्वार्थ के कारण पृथ्वी के दुश्मन के तौर पर देखा जा रहा है। फिल्म 2012 कहीं हमारी आशंका से पहले न सच बन जाये।

निष्कर्ष- अतः संक्षेप में यह कह सकते हैं कि सतत् विकास के सिद्धान्तों पर चलकर हम युक्तिसंगत राजनीति तैयार करें जो विकास और पर्यावरण के बीच की दूरी को कम कर सकें। इसमें कोई शक नहीं है कि इसके लिए प्रदूषण रोकथाम तथा नियन्त्रण सम्बन्धी संस्थाओं को निचले स्तर से बड़े पैमाने पर पुर्नगठित करना होगा तथा पर्यावरणीय मुद्दों को आर्थिक नीति से जोड़क देखना होगा। पर्यावरणीय क्षति के आर्थिक परिणामों के बारे में आम जनता को शिक्षित करने के लिए बड़े पैमाने पर प्रयास किये जाने जरूरी है। ताकि

निर्णय लिए जाने वाले अधिकारियों तथा उपभोक्ताओं को पर्यावरण के गम्भीर मुद्दे पर संवेदनशील बनाया जा सके। संतुलित एवं उल्फुल्ल पर्यावरण के माध्यम से ही विकास का प्रयास जारी रह सकता है और मानव जीवन उच्च स्तर पर पहुंच सकता है। वातावरण स्वच्छ होगा तो पर्यावरण प्रदूषण कम होगा जिससे बीमारियों में कमी आयेगी। कुशलता व कौशलता में वृद्धि होगी, उत्पादन बढ़ेगा और विकास में गति आयेगी।

एजेण्डा-21 के तहत उन्हीं दोनों मुद्दों विकास तथा पर्यावरण की सुरक्षा पर विशेष बल दिया गया है। सतत् विकास वास्तव में इन्हीं दोनों के सह-अस्तित्व की बात करता है और सतत् स्थाई पर्यावरण को हितकारी बनाता है। किन्तु इन्हें कामयाबी तभी मिल सकती है जबकि प्रत्येक व्यक्ति प्रदूषण के हानिकारक प्रभावों से परिचित हों और स्वयं आगे बढ़कर उन्हें नियंत्रित करने हेतु ईमानदारी से प्रयास करें।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. सविन्द्र सिंह (1991), पर्यावरण भूगोल, प्रयाग भवन इलाहाबाद पृ0 275
2. औद्योगिक अर्थशास्त्र, डा0 आर0एस0 कुलश्रेष्ठ, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
3. जोशी, रतन (2005), पर्यावरण अध्ययन, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
4. राव, बी0पी0 (2005) पर्यावरण अध्ययन के आधार, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर
5. पर्यावरण अध्ययन, डा0 एन0एम0 अवस्थी, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा
6. मोर्य, एस0डी0 (2006), संसाधन एवं पर्यावरण, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद
7. Palmer, J.A. (1998¼ Environmental Education in the 21st Century.
8. पर्यावरण पत्रिका, जून 2005
9. पत्रिका योजना, 2013 जून।

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

पंचवर्षीय योजना तथा कृषि एवं ग्रामीण विकास

* अरूण कुमार पाण्डेय

==

सारांश- बारहवीं योजना के दृष्टिपत्र के अनुसार मांग पक्ष में अर्थव्यवस्था में कुल मिलाकर व प्रतिशत की वृद्धि से 4 प्रतिशत की वृद्धि की मांग पैदा होने की आशा है। जिसमें खाद्यान्न मांग में प्रतिवर्ष दो प्रतिशत की वृद्धि होगी और गैर-खाद्यान्न में 5 से 6 प्रतिशत की वृद्धि होगी। चुनौती यह है कि बढ़ती हुई आय के साथ बढ़ रही भारत की जनसंख्या का पेट कैसे भरा जाय। 1981-90 के दशक में कृषि की उत्पादकता में 1.62 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि हो रही थी। जबकि 1991-2000 के दशक में यह वृद्धि केवल 1.55 प्रतिशत ही थी। 2001-20 की अवधि में कृषि का विकास प्रतिवर्ष 3.5 से 4 प्रतिशत की दर से होता है तो कृषि उत्पादकता में 1.72 से 2.08 प्रतिशत की वृद्धि करनी होगी और यदि कृषि उत्पादन में 3.8 प्रतिशत से 4.8 प्रतिशत की वृद्धि होती है तो उत्पादकता में 1.9 से 2.5 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि होनी चाहिए। स्वतन्त्रता पश्चात भारत के समग्र आथिक सामाजिक विकास की आवश्यकता तीव्रता से महसूस की गई। विश्व के अन्य देशों की तुलना में भारत प्रत्येक क्षेत्र में पिछड़ा हुआ था। भारत के पास विश्व के कुल भू क्षेत्र का 2.4 प्रतिशत भाग है किन्तु उसे विश्व की कुल जनसंख्या के 16 प्रतिशत का पालन पोषण करना पड़ता है। बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए खाद्यान्न उत्पादन को बढ़ाना आवश्यक हो गया। देश की समृद्धि प्रत्यक्षतः कृषि तथा उद्योग के विकास पर निर्भर करती है। इस तथ्य को महसूस करते हुए प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि को अधिक महत्व दिया गया। देश में अभूतपूर्व खाद्य की कमी को देखते हुए यह आवश्यक भी था। बढ़ती हुई मुद्रा स्फीति, शरणार्थियों का दबाव तथा देश के विभाजन के बाद बर्बाद अर्थव्यवस्था का सर्वांगीण विकास को आधार मानकर प्रथम पंचवर्षीय योजना की ब्यूह रचना की गई। 1950-51 की तुलना में दालों के उत्पादन में वृद्धि हुई किन्तु योजना काल में इसका उत्पादन 1.7 गुना हुआ है। कुल खाद्यान्नों में दाल का भाग 16.5 प्रतिशत था जो कि घटकर 2009-10 में 6.7 प्रतिशत रह गया है। खाद्यानों के संबंध में पहले खतरा नजर नहीं आ रहा था लेकिन अब स्थिति चिन्ताजनक है। विभिन्न अनुमानों के अनुसार वर्ष 2020 तक हमें 224 लाख टन से लेकर 296 लाख टन दाल की आवश्यकता होगी। दीर्घकालीन अनाज नीति से जुड़ी एक उच्च स्तरीय समिति के निष्कर्षो के मुताबिक यह मांग 260 लाख टन की होगी। वर्ष 2020 में इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमें दालों के उत्पादन स्तर को 191 लाख टन से बढ़ाते हुए इसमें 69 लाख टन का इजाफा करना होगा। इसके लिए कृषि संबंधी रणनीति में व्यापक परिवर्तन की आवश्यकता है।

==========================

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र), सेठ आरसीएस महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

1947 में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भारत को व्यापक निर्धनता व्यापक बेरोगारी, कृषि की न्यू उत्पादकता औद्योगिक विकास की समस्याओं का सामना करना पड़ा। मार्क्स और एंजल्स के वैज्ञानिक समाजवाद के आधार पर सोवियत रूस ने अपने देश के विकास लिए समग्र राष्ट्रीयकरण पर आधारित आयोजन को अपनाया। सोवियत रूस की योजनाओं की सफलता से प्रभावित होकर पंडित जवाहर लाल नेहरू ने भारत के आर्थिक विकास के लिए लोकतांत्रिक समाजवाद पर आधारित आयोजन को स्वीकार किया। भारत ने पूंजीवाद और वैज्ञानिक समाजवाद के बीच के रास्ते को स्वीकार करते हुए मिश्रित अर्थव्यवस्था के ढ़ांचे को भारत के लिए स्वीकार किया जिसमें सार्वजानिक क्षेत्र के साथ निजी क्षेत्र की भूमिका को भी स्थान दिया गया। समाजवादी समाज की स्थापना करने के लिए निर्धन एवं निम्न जीवन स्तर व्यतीत करने वाले लोंगो के लिए चिकित्सा, शिक्षा, खाद्य, कपड़ा, आवास आदि, मूलभूत आवश्यकताओं की व्यवस्था करना है। भारत के पंचवर्षीय योजनाओं में इन्ही उद्देश्यों को लेकर चल रही है। स्वतन्त्रता पश्चात भारत के समग्र आथिक सामाजिक विकास की आवश्यकता तीव्रता से महसूस की गई। विश्व के अन्य देशों की तुलना में भारत प्रत्येक क्षेत्र में पिछड़ा हुआ था। भारत के पास विश्व के कुल भू क्षेत्र का 2.4 प्रतिशत भाग है किन्तु उसे विश्व की कुल जनसंख्या के 16 प्रतिशत का पालन पोषण करना पड़ता है। 1901 में भारत की जनसंख्या 23.6 करोड़ थी जो 1951 में बढ़कर 36. 1 करोड़ हो गई। बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए खाद्यान्न उत्पादन को बढ़ाना आवश्यक हो गया। देश की समृद्धि प्रत्यक्षतः कृषि तथा उद्योग के विकास पर निर्भर करती है। इस तथ्य को महसूस करते हुए प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि को अधिक महत्व दिया गया। देश में अभूतपूर्व खाद्य की कमी को देखते हुए यह आवश्यक भी था। बढ़ती हुई मुद्रा स्फीति, शरणार्थियों का दबाव तथा देश के विभाजन के बाद बर्बाद अर्थव्यवस्था का सर्वागीणं विकास को आधार मानकर प्रथम पंचवर्षीय योजना की ब्यूह रचना की गई। प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि क्षेत्र को प्राथमिकता करते हुए खाद्य सुरक्षा की अवधारणा को महत्वपूर्ण लक्ष्य के रूप में स्वीकार किया। खाद्य सुरक्षा से अभिप्राय है- मानवीय जीवन को कायम रखने के लिए सभी को अनाज, दालों, दूध एवं दूध के उत्पाद, सब्जियाँ, फल, मछली, अण्डे और गोश्त को शामिल कर सकते हैं। खाद्य अतिरेक वाले देश खाद्य अतिरेक का प्रयोग एक ऐसे हथियार के रूप में करते हैं कि कई देशों को बड़ी ताकतों की नीतियों के प्रति घुटने टेकने के लिए मजबूर कर देते हैं। भारत ने यह अनुभव किया है कि खाद्यों के बारे में संधि करना कितना कठिन है। खाद्य सहायता के साथ जुड़े हुए राजनीतिक बन्धनों से राष्ट्रीय अभिमान को ठेस अवश्य लगती है। नेहरू ने कहा था जैसे ही हम खाद्य में आत्मनिर्भर हो जाते हैं तभी हमारे लिए प्रगति और विकास करना संभव होगा। पहली पंचवर्षीय योजना अपने उद्देश्यों में सफल रही है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में कृषि के स्थान पर भारी तथा मूल उद्योगों को प्रोत्साहित किया गया। परिणामतः खाद्यान्न की समस्या पुनः उत्पन्न हो गई तृतीय पंचवर्षीय योजना में कृषि को फिर प्राथमिकता प्रदान की गई। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में कृषि को प्राथमिकता दी गई जिससे कि देश कृषि के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता बन सकें। पांचवी योजना में गरीबी उन्मूलन एवं आत्मनिर्भरता के उद्देश्य को स्वीकार किया गया। छठवीं योजना में सर्वाधिक प्राथमिकता अधिकाधिक रोजगार सृजन करने वाले और निर्धन व्यक्तियों के

जीवन स्तर पर बहुत प्रभाव डालने वाले क्षेत्रों को दी गई सातवीं योजना में गरीबी कम करने, उत्पादकता बढ़ाने व रोजगार के अवसर में वृद्धि को प्राथमिकता प्रदान की गई है। आठवीं योजना में रोजगार सृजन, खाद्य पदार्थो में आत्मनिर्भरता तथा समाज सेवाओं को प्राथमिकता प्रदान की गई। नवीं योजना में ग्रामीण विकास, मूल्यों में स्थायित्व, समाज को न्यूनतम मूलभूत सेवायें प्रदान करना, जनसंख्या वृद्धि को रोकना, महिलाओं और कमजोर वर्ग के लोंगो को शक्तियाँ प्रदान करना, पंचायती राज को बढ़ावा देना व आत्मनिर्भरता का लक्ष्य निर्धारित किया। दसवीं योजना में निर्धनता अनुपात में कमी, रोजगार के अवसरों में वृद्धि, साक्षरता प्रतिशत में वृद्धि, पेयजल उपलब्धता में वृद्धि का लक्ष्य निर्धारित किया गया। ग्यारहवी योजना में शिक्षा, स्वास्थ्य, गरीबी उन्मूलन तथा बुनियादी ढ़ांचे का विकास करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया।

तालिका क्रमांक-1

पंचवर्षीय योजना में विकास

पिछले ग्यारह पंचवर्षीय योजनाओं में विकास के लक्ष्य एवं वास्तविक प्राप्ति निम्न प्रकार रही है-

क्र.	विवरण	लक्ष्य	वास्तविक प्राप्ति प्रतिशत प्रतिवर्ष
1.	प्रथम योजना (1951–56)	2.1	3.60
2.	द्वितीय योजना (1956–61)	4.5	4.21
3.	तृतीय योजना (1961–66)	5.6	2.72
4.	चतुर्थ योजना (1969–74)	5.7	2.05
5.	पंचवी योजना (1974–79)	4.4	4.83
6.	छठवी योजना (1980–85)	5.2	5.54
7.	सातवी योजना (1985–90)	5.0	6.02
8.	आठवीं योजना (1992–97)	5.6	6.68
9.	नवीं योजना (1997–2002)	6.5	5.5
10	दसवीं योजना (2002–2007)	8.0	7.5
11.	ग्यारहवीं योजना (2007–2012)	9.0	8.0

देश में नियोजन के 67 वर्ष पूरे हो चुके हैं। इन वर्षो में देश ने निः सन्देह प्रगति की है। कृषि का उत्पादन बढ़ा हैं उद्योगो का विकास हुआ है। परिवहन एवं संचार सुविधाओं में वृद्धि हुई है। शिक्षा का प्रसार हुआ हैं। विदेशी व्यापार के आकार में समुचित विकास हुआ है। राष्ट्रीय आय, घरेलू बचत व विनियोग दरों में वृद्धि हुई है। हम आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हुए हैं लेकिन अभी भी गरीबी, बेरोजगारी, मंहगाई तथा जनसंख्या को नियंत्रित करने में सफलता नहीं मिली हैं।

1. राष्ट्रीय एवं प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि- 1950-51 में चालू मूल्यों के आधार पर राष्ट्रीय आय 9678 करोड़ रू. थी प्रतिव्यक्ति की आय 255 रू. थी 2009-10 में यह बढ़कर क्रमशः 44,64,854 करोड़ रू. व 33,731 रू. हो गयी है। लेकिन अभी भी अन्य देशों की तुलना में भारत में प्रति व्यक्ति आय बहुत कम है जैसा कि निम्न विवरण से स्पष्ट है-

तालिका क्रमांक - 2

देश	प्रतिव्यक्ति आय (डालर)
भारत	1070
ब्रिटेन	45390
जापान	38210
अमरीका	47580

2. कृषि क्षेत्र में विकास आर्थिक नियोजन के 61 वर्षो में कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है। खाद्यानों का उत्पादन 1950-51 में 508 लाख टन था वह 2009-10 में बढ़कर 2182 लाख टन हो गया है। सिंचाई सुविधायें 1950-51 में 2.26 करोड़ हेक्टयर क्षेत्र में उपलब्ध थी वर्तमान में यह सुविधा 10.82 करोड़ हेक्टयर क्षेत्र में उपलब्ध है भारत में कृषि उत्पादन एवं सिंचाई की उपलब्धता को निम्न तालिकाओं में प्रदर्शित किया गया है -

तालिका क्रमांक-3

विभिन्न योजनाओं में कृषि एवं सिंचाई पर परिव्यय (करोड़ रूपय मे)

कृषि एवं सिंचाई	
पहली योजना	600 (31 प्रतिशत)
दूसरी योजना	950 (20 प्रतिशत)
तीसरी योजना	1750 (21 प्रतिशत)
चौथी योजना	3810 (24 प्रतिशत)
पांचवी योजना	8740 (22 प्रतिशत)
छठवीं योजना	26130 (24 प्रतिशत)
सातवीं योजना	48100 (22 प्रतिशत)
आठवीं योजना	1,01,150 (20.8 प्रतिशत)
नवीं योजना	2,01,442 (21.4 प्रतिशत)
दसवीं योजना	3,27,250 (20.2 प्रतिशत)
ग्यारहवीं योजना	6,74,105 (18.5 प्रतिशत)

खाद्यान्न उत्पादन-

तालिका क्रमांक-4

वर्ष	उत्पादन	वर्ष	उत्पादन मि. टन
1950—51	50.8	2000—01	196.8
1960—61	82.0	2006—07	217.3
1970—71	108.4	2007—08	230.8
1980—81	129.6	2008—09	234.4
1990—91	176.4	2009—10	218.2

उत्पादन में विभिन्न खाद्यान्नो की प्रवृति निम्न प्रकार रही है -

तालिका क्रमांक - 5 (उत्पादन मि. टन)

	1950—51		2009—10	
	उत्पादन	प्रतिशत	उत्पादन	प्रतिशत
चावल	20.6	40.6	89.1	40.8

गेहूँ	6.4	12.6	80.7	37.0
मोटे अनाज	15.4	30.3	33.8	15.5
दालें	8.4	16.5	14.6	6.7
योग	50.8	100.0	218.2	100.0

1950-51 की तुलना में दालों के उत्पादन में वृद्धि हुई किन्तु योजना काल में इसका उत्पादन 1.7 गुना हुआ है। कुल खाद्यान्नों में दाल का भाग 16.5 प्रतिशत था जो कि घटकर 2009-10 में 6.7 प्रतिशत रह गया है। खाद्यानों के संबंध में पहले खतरा नजर नहीं आ रहा था लेकिन अब स्थिति चिन्ताजनक है। विभिन्न अनुमानों के अनुसार वर्ष 2020 तक हमें 224 लाख टन से लेकर 296 लाख टन दाल की आवश्यकता होगी। दीर्घकालीन अनाज नीति से जुड़ी एक उच्च स्तरीय समिति के निष्कर्षो के मुताबिक यह मांग 260 लाख टन की होगी। वर्ष 2020 में इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमें दालों के उत्पादन स्तर को 191 लाख टन से बढ़ाते हुए इसमें 69 लाख टन का इजाफा करना होगा। इसके लिए कृषि संबंधी रणनीति में व्यापक परिवर्तन की आवश्यकता है।

तालिका क्रमांक - 6

कृषि उत्पादन की प्रकृतियाँ - खाद्यान्न फसलें (किलोग्राम प्रति हेक्टर)

फसल	1950—51	1980—81	2000—01	2009—10
चावल	668	1,136	1901	2,130
गेहूँ	655	1,630	2708	2,830
ज्वार	353	660	764	911
बाजरा	288	458	688	728
मक्का	547	1159	1822	2,002
दालें	441	473	544	625

चावल के उत्पादन में 3 गुनी से अधिक वृद्धि गेहूँ के उत्पादन में गुने की वृद्धि हुई हैं। ज्वार और बाजरा की उत्पादकता लगभग गुनी हो गई है। दालों की उत्पादकता में वृद्धि भी नहीं हो पाई है।

तालिका क्रमांक - 7

वाणिज्यिक फसलों में उत्पादकता प्रकृति-(किलो ग्राम-प्रति हेक्टर)

फसलें	1950—51	1980—81	2000—01	2009—10
तिलहन	481	532	810	955
गन्ना (टन/ हेक्टर)	33	58	69	66
कपास	88	152	190	395
जूट	1044	1130	1867	2356
आलू (टन/ हेक्टर)	7	13	18	19
चाय	876	1491	1673	1500
काफी	NA	624	959	1000
रबड़	NA	788	1576	1776

तिलहन क उत्पादन में लगभग दुगनी वृद्धि, गन्ना के उत्पादन में दूगनी वृद्धि, कपास के उत्पादन में गुनी वृद्धि, जूट के उत्पादन में 2.3 गुनी वृद्धि, आलू के उत्पादन में गुनी वृद्धि हुई है। चाय, काफी और रबड़ के उत्पादन में भी वृद्धि हुई हैं।

तालिका क्रमांक - 8

भारत का विश्व के विभिन्न देशों से तुलनात्मक

देश	गेहूँ	चावल	मूंगफली
फ्रांस	7,449		
चीन	3885	6320	2986
अमरीका	2870		2869
भारत	2619	2102	794
जापान		6582	
इण्डोनेषिया		4260	
अर्जेन्टीना			2329

सन् 2012-13 में खाद्यान्न उत्पादन में 3 प्रतिशत की गिरावट संभावित है। 2011-12 में खाद्याान्न उत्पादन 257.44 मिलियन टन था। 2012-13 में यह घटकर 250 मिलियन टन हो जायेगा। कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात एवं राजस्थान में सूखे की स्थिति के कारण यह स्थिति बन रही है। खरीफ फसल के उत्पादन में 10 प्रतिशत अर्थात 117.8 मिलियन टन की गिरावट संभव है। कृषि उम्पादों का निर्यात बढ़ा है। 10 मिलियन टन चावल का तथा 3 मिलियन टन गेहूँ का निर्यात किया गया। दालों के आयात में देश द्वारा 10,000 करोड़ रूपये व्यय किये जाते हैं। दलहन एवं तिलहन के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए हर संभव प्रयत्न आवश्यक है।

तालिका क्रमांक - 9

(साधन लागत पर) सकल देशीय उत्पादन में कृषि

क्षेत्र का भाग	—	(प्रतिशत में)
मद	1950—51	2009—10
1. कृषि व संबंधित क्षेत्र	56.7	16.93
2. विनिर्माण आदि	13.7	25.77
3. सेवा क्षेत्र	29.6	57.30
योग	100.00	100.00

तालिका क्रमांक - 10

विभिन्न देशों में सकल देशीय उत्पादन में कृषि उत्पादन का प्रतिशत

देश	कृषि	देश	कृषि
ब्रिटेन	1	कोरिया गणराज्य	3
यू.एस.ए.	2	मलेशिया	10
फ्रांस	2	चीन	13
जापान	2	इन्डोनेशिया	16
जर्मनी	1	थाईलैण्ड	10
इटली	2	फिलीपीन्स	14
आस्ट्रेलिया	2	पाकिस्तान	23

बारहवीं योजना के दृष्टिपत्र के अनुसार मांग पक्ष में अर्थव्यवस्था में कुल मिलाकर व प्रतिशत की वृद्धि से 4 प्रतिशत की वृद्धि की मांग पैदा होने की आशा है। जिसमें खाद्यान्न मांग में प्रतिवर्ष दो प्रतिशत की वृद्धि होगी और गैर-खाद्यान्न में 5 से 6 प्रतिशत की वृद्धि होगी। चुनौती यह है कि बढ़ती हुई आय के साथ बढ़ रही भारत की जनसंख्या का पेट कैसे भरा जाय।

1981-90 के दशक में कृषि की उत्पादकता में 1.62 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि हो रही थी। जबकि 1991-2000 के दशक में यह वृद्धि केवल 1.55 प्रतिशत ही थी। 2001-20 की अवधि में कृषि का विकास प्रतिवर्ष 3.5 से 4 प्रतिशत की दर से होता है तो कृषि उत्पादकता में 1.72 से 2.08 प्रतिशत की वृद्धि करनी होगी और यदि कृषि उत्पादन में 3.8 प्रतिशत से 4.8 प्रतिशत की वृद्धि होती है तो उत्पादकता में 1.9 से 2.5 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि होनी चाहिए। बीते दशक के दौरान भारतीय उद्योग जहाँ लगातार उत्साहवर्धक वृद्धि कर रहे थे भारतीय कृषि की स्थिति यथावत बनी रही। हर आने वाली सरकार ने अनेक उपाय किए किन्तु परिणाम संतोषजनक नहीं रहे। यह आश्चर्यजनक इसलिए भी कहा जायेगा क्योकि वर्ष 2008 को छोड़कर इस पूरी अवधि में मानसून लगातार अनुकुल बना रहा और यह दशक नियमित वर्षा वाली कुछ लंबी अवधियों में शुमार किये जाने लायक दशा बना। इस अनुकूल आंरभिक स्थिति के बावजूद कृषि क्षेत्र की विकास दर अल्प बनी रही इसका प्रमुख कारण सार्वजनिक निवेश का स्थिर बने रहना ही है। जब यह महसूस किया गया कि सिंचाई तथा अन्य मदों पर सार्वजनिक निवेष के त्वरित परिणाम हासिल नहीं हुए तो धन का आबंटन अन्य क्षेत्रों में किया जाने लगा।

वैश्विक मंदी के उपरांत जब विशेषज्ञों की यह आमराय बनी कि मंदी के वर्षो में भारतीय उद्योगों को स्थिरता प्रदान करने वाली ताकत ग्रामीण भारत की उपभोक्ता वस्तुओं की मांग को बनाये रखना कृषि उत्पादकता की बढ़ोत्तरी से ही संभव है। भारत का धीमा आर्थिक विकास निश्चित रूप से चिन्ता का कारण हैं। आई.एम.एफ ने भारत के आर्थिक विकास दर को 6.1 प्रतिशत के स्थान पर 4.9 प्रतिशत अनुमानित किया है। प्रधानमंत्री के आर्थिक सलाहकार डॉ. रघुराजन ने कहा है कि भारत का आर्थिक विकास दर 5 प्रतिशत से कम नहीं होगा। आर्थिक विकास लोगों के कल्याण में वृद्धि का गारंटी नहीं है। भारत में पिछले दस वर्षो में आर्थिक विकास की दर जहाँ 8 प्रतिशत के आस-पास रही है वही गरीबी की दर में गिरावट तुलनात्मक रूप से कम रही है। एक ओर उच्च वर्ग एवं उच्च मध्य वर्ग के आयो में तीव्र वृद्धि हुई है। जबकि गरीबों की आय में उसी अनुपात में वृद्धि नहीं हुई हैं। 2004-05 के मूल्य के आधार पर प्रति व्यक्ति आय 38527 रू था जबकि 30 प्रतिशत गरीबों की आय शहरी क्षेत्र में 10308 रू. तथा ग्रामीण क्षेत्र में 8074 रू. था। आर्थिक विकास के साथ असमानता में कमी आवश्यक है।

क्या किया जाना चाहिए-

1. सरकार को अपनी नीतियों से एक ऐसा वातावरण प्रदान करना होगा जिसमें हमारे किसानों और उद्यमियों की रचनात्मक भावना को पूरा समर्थन और प्रोत्साहन मिलें।
2. वृहद आर्थिक स्थिरता का वातावरण बनाये रखना।
3. कुशलतापूर्वक कार्य करने वाले बाजार
4. सृदृढ़ वित्तीय प्रणाली

5. पारदर्शिता के साथ सुशासन और कानून के राज को प्रभावी ढ़ग से लागू करना
6. देश को अपनी आगोश में लपेटे नकारात्मकता की भावना से बचाना होगा।
7. पी.पी.पी. (public, private, seetor partnarship) को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
8. कृषि में 4 प्रतिशत विकास दर को प्राप्त करना बहुत आवश्यक है इससे जमीन की उत्पादकता 80 से 100 प्रतिशत तक बढ़ाई जा सकती है।
9. सिंचाई की समुचित व्यवस्था
10. भारतीय किसानों की 50 प्रतिशत आबादी महिलाओं की है और खेती में काम करने वाले श्रमिकों में 60 प्रतिशत महिलाएँ हैं। महिला किसानों के सशक्तीकरण पर ध्यान देना आवश्यक है।
11. कृषि अनुसंधान को जल कुशलता पर ध्यान देना होगा और फसलों के ऐसे प्रकार विकसित करने होंगे जिनमें पानी की जरूरत कम हों।
12. राज्य सरकारें बुनियादी सुविधाओं के विकास और श्रमशक्ति भी दक्षता बढ़ाने की कोशिशें तेज करें तथा पिछड़े क्षेत्रों में उद्योग धंधे प्रारंभ किए जाएं।
13. उद्योगों का विकास ऐसा होना चाहिए जिसमें अधिक श्रमशक्ति लगाई जा सके और जो श्रमशक्ति लगाई जाय वह ग्रामीण क्षेत्रों से आई हुई हो।
14. गैर कृषि सेवाओं में वृद्धि कर नये रोजगार के अवसर पैदा किया जाय।
15. लम्बी अवधि में सब्सिडी से किसानों कों स्वतन्त्र करना होगा।
16. उन्नत किस्म के बीजों का उपयोग करना होगा।
17. राजकोषीय घाटे को 5.1 प्रतिशत से कमकर 3 प्रतिशत के स्तर पर लाना।
18. सबसे अधिक महत्वपूर्ण आर्थिक तत्वों के अतिरिक्त गैर-आर्थिक तत्वों को अधिक ध्यान दिये जानें की महती आवश्यकता है।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि यदि कृषि की दुर्गति होती है और गरीबी एवं भूखमरी लंबे समय तक बरकरार रहती है वो नक्सलवाद का प्रसार और अधिक होगा। एक भूखा आदमी न तो तर्क को सुनता है और न ही धर्म को और न ही वह किसी प्रार्थना के आगे नतमस्तक होता है। जहाँ भुखमरी होगी वहाँ शांति स्थापित नहीं हो सकती। भारत में दुनिया के सबसे अधिक कुपोषित बच्चे, महिलाएँ एवं पुरूष हैं। आधुनिक उद्योग रोजगार रहित विकास को प्रोत्साहित करते हैं, जबकि कृषि, पशुपालन, मत्स्य-पालन, वानिकी तथा खाद्य प्रसंस्करण रोजगार परक विकास को प्रोत्साहित करते है। इसलिए कृषि को सबसे अधिक महत्व दिया जाना चाहिए।

तालिका क्रमांक-11

विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं में उत्पादन और रोजगार के भाग (2006)

देश	उत्पादन में भाग प्रतिशत			रोजगार में भाग प्रतिशत		
	कृषि	उद्योग	सेवायें	कृषि	उद्योग	सेवायें
ब्रिटेन	1	24	75	1	22	77
यू.एस.ए.	2	23	76	1	20	79
फांस	2	21	77	5	25	70
जापान	2	30	68	5	27	68

जर्मनी	1	30	69	3	28	69
चीन	13	46	41	47	22	31
कोरिया गणराज्य	3	35	62	10	28	62
इन्डोनेशिया	16	44	40	44	17	39
फिलीपीन्स	15	32	53	37	16	47
भारत	22	27	51	61	17	22

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. दत्त एवं सुन्दरम, भारतीय अर्थव्यवस्था, एस चन्द्र एंड कंपनी प्रा0 लि0 रामनगर, नई दिल्ली, 2012
2. भारत 2012, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
3. डॉ. मामोरिया एवं एस.सी.जैन, भारतीय अर्थव्यवस्था, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2012
4. डॉ. विवेक शर्मा, कृषि प्रबंध, अर्जुन पब्लिसिंग हाउस, अंसारी रोड, दरिया गंज, नई दिल्ली 2014
5. डॉ. वी. सी. सिन्हा, डॉ. पुष्पा सिन्हा, भारतीय अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन एंड डिस्ट्रिब्यूटरर्स, आगरा, 2015
6. डॉ. जयप्रकाश मिश्रा, कृषि अर्थशास्त्र, साहित्य भवन, आगरा, 2015
7. डॉ. राजपाल सिंह, कृषि अर्थशास्त्र, बी. के. प्रकाशन, बागपथ मेरठ, 2016

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

मध्यप्रदेश में महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का क्रियान्वयन, मूल्यांकन एवं प्रभाव

* पूजा तिवारी

सारांश- महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गांरटी योजना ग्रामीण विकास और रोजगार के दोहरे लक्ष्य को प्राप्त करता है। योजना का उद्देश्य अकुशल मानव श्रम करने के इच्छुक प्रत्येक ग्रामीण परिवार को एक वर्ष में 100 दिवस का विधिमान्य सुनिश्चित रोजगार उपलब्ध कराना है तथा गरीबी उन्मूलन की दिशा में इस अभिनव प्रयास के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में स्थायी सार्वजनिक परिसंपत्तियों का निर्माण एवं सृजन करना है ताकि ग्रामीण अर्थव्यस्था को अधिक सशक्त एवं गतिशील बनाया जा सके। मनरेगा न केवल रोजगार उपलब्ध कराने हेतु एक कानून है बल्कि इसके तहत् जल संरक्षण और संचयन, वनीकरण, ग्रामीण संपर्क तंत्र, बाढ़ नियंत्रण जैसे कार्य किये जाते है। ग्रामीणों के कल्याण एवं रोजगार सृजन की सरकार द्वारा अब तक चलाई गई योजनाओं में महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना सबसे महत्वपूर्ण, महत्वाकांक्षी एवं बहुउद्देशीय योजना है। योजना के कियान्वयन का दायित्व ग्राम पंचायतों को सोंपा गया है प्रस्तुत शोध पत्र में मनरेगा व उसके अधीन चलाई जा रही योजना के कार्यान्वयन एवं योजना की प्रगति में व्याप्त समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है। वर्ष 2013-14 से लेकर 20 नबम्वर 2017 तक लाभांवितों की स्थिति को तालिका के माध्यम से स्पष्ट किया गया है। मनरेगा के अंर्तगत जॉब कार्ड धारक परिवारों की संख्या, रोजगार प्राप्त परिवारों की संख्या, 100 दिवस पूर्ण करने वाले परिवारों की संख्या, व्यय राशि आदि का अध्ययन किया गया है। तथा योजना की प्रगति हेतु सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं।

प्रस्तावना- राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम भारत में लागू एक रोजगार गारंटी योजना है जिसे 25 अगस्त 2005 को विधान द्वारा अधिनियमित किया गया। शुरू में इसे राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम कहा जाता था लेकिन 2 अक्टूबर 2009 को इसका पुनः नामकरण किया गया और अब इसे महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के नाम से जाना जाता है। यह योजना प्रत्येक वित्तीय वर्ष में किसी भी ग्रामीण परिवार के उन व्यस्क सदस्यों को 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराती है जो प्रतिदिन 220 रूपये की सांविधिक न्यूनतम मजदूरी पर सार्वजनिक कार्य संबंधित अकुशल मजदूरी करने के लिए तैयार हैं। गरीबी उन्मूलन के लिए भारत सरकार ने विभिन्न

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य संकाय) सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय भोपाल (म.प्र.)

योजनाओं के साथ प्रयोग किया हैं उनमें से सबसे प्रमुख योजना है मनरेगा। इसके अंतर्गत कार्यों की पहचान करने एवं उनका कियान्वयन करने का दायित्व ग्राम पंचायतो को सोंपा गया है। यह कानून 02 फरवरी 2006 को कार्यान्वित किया गया। प्रथम चरण में यह योजना भारत के 200 जिलों में उपलब्ध कराई गई थी। वर्ष 2007-08 में इस योजना का विस्तार 330 अतिरिक्त जिलों में किया गया। 01 अप्रैल 2008 से इसे देश के शेष ग्रामीण क्षेत्रों में लागू कर सरकार ने सराहनीय कार्य किया है। इसके तहत ग्रामीणों को रोजगार मिला है। मध्यप्रद्रेश में मनरेगा के प्रथम चरण में 18 जिलों को ही शामिल किया गया। ये 18 जिले सबसे पिछड़े एवं आदिवासी बाहुल्य जिले है। वर्ष 2007-08 में द्वितीय चरण में मध्यप्रदेश के 31 जिलों को शामिल किया गया। वर्ष 2008-09 में तीसरे चरण में मध्यप्रदेश के समस्त जिलों में यह योजना कार्यान्वित हो गई हैं।

अध्ययन का उददे्श्य- महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम व उसके अधीन चलाई जा रही योजना के कार्यान्वयन का अध्ययन

* मनरेगा के फलस्वरूप ग्रामीण समाज के किन वर्गो को कितना लाभ पहुँचा है।
* योजना की प्रगति में व्याप्त समस्याओं का अध्ययन
* योजना की प्रगति हेतु सुझाव

शोध प्रविधि-

प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक समंको के आधार पर प्रस्तुत किया गया हैं। मध्यप्रदेश के ग्रामीण परिवेश में व्याप्त बेरोजगारी के अध्ययन हेतु ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 2005 का अध्ययन करते हुए मनरेगा के कार्यान्वयन व योजना की उपादेयता पर प्रकाश डाला गया है। ग्रामीण रोजगार हेतु चलाई गई विभिन्न योजनाओं के अध्ययन हेतु विभिन्न सरकारी विभागों द्वारा प्रकाशित पत्र पत्रिकाओं, पंचवर्षीय योजनाओं की प्रगति रिपोर्ट, आर्थिक समीक्षाओं, प्रगति प्रतिवेदनों, समाचार पत्र पत्रिकाओं, पुस्तकों एवं विगत शोधकार्यो को आधार बनाया गया है।

योजना का कार्यान्वयन-

योजना के अधीन परिवार के व्यस्क को ग्राम पंचायत में पंजीकरण कराना होगा। पंचायत द्वारा एक जॉब कार्ड बनाया जायेगा जो अगले 5 वर्ष तक वैध होगा। पंजीकरण के बाद यदि आवेदन करने पर 15 दिन तक ग्राम पंचायत द्वारा रोजगार उपलब्ध नहीं कराया जायेगा तो उसे बेरोजगारी भत्ता मिल सकेगा। समग्र रूप से केंद्र शासन द्वारा योजना लागत का 90 प्रतिशत खर्च एवं राज्य शासन द्वारा 10 प्रतिशत खर्च वहन किया जाता हैं। बेरोजगारी भत्ते के भुगतान की जिम्मेदारी राज्य सरकार की होगी। प्रत्येक कार्य में मजदूरी एवं सामग्री में 60:40 का अनुपात अनिवार्य है। अकुशल श्रम के लिए आवश्यक संपूर्ण मजदूरी राशि का भुगतान केंद्र शासन के द्वारा किया जाता है और सामग्री मद का 75 प्रतिशत केंद्र शासन एवं 25 प्रतिशत राज्य शासन वहन करती है। इस योजना में यह भी सुनिश्चित किया जाएगा कि पंजीकृत एवं कार्य के लिए आवेदन करने वाले आवदकों में से कम से कम एक तिहाई महिलाएँ रोजगार के द्वारा लाभांवित हो। आम तौर पर ग्रामीणों को दिया जाने वाला काम गांव के 5 कि.मी. के दायरे में उपलब्ध कराया जाएगा। उससे अधिक दूरी होने पर 10 प्रतिशत की दर से अतिरिक्त मजदूरी दी जाएगी। शिकायतों का निराकरण ग्राम पंचायत, जनपद पंचायत एवं जिला पंचायत स्तर पर किया जाता है।

महात्माँ गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना

- प्रत्येक परिवार को प्रतिवर्ष 100 दिन की रोजगार गांरटी।
- ग्रामीण परिवारों का पंजीकरण पंचायत स्तर पर
- पंजीकृत परिवार का महत्वपूर्ण दस्तावेज जॉब कार्ड
- कार्य के लिये आवेदन स्वंय करना होगा
- महिलाओं को विशेष प्राथमिकता
- समयबद्ध रोजगार आबंटन
- रोजगार न मिलने पर बेरोजगारी भत्ता का भुगतान
- न्यूनतम मजदूरी की गारंटी
- कार्यस्थल पर मजदूरों के लिये कल्याणकारी सुविधाएं
- मजदूरी के भुगतान की व्यवस्था
- सभी इच्छुक व्यक्तियों को रोजगार की उपलब्धता
- 5 किमी के अंदर रोजगार की उपलब्धता
- कार्यों का चयन, परियोजना प्रस्ताव तथा क्रियान्वयन
- ठेकेदारी व मशीनों पर पूर्ण प्रतिबंध
- सोशल ऑडिट (अपना पैसा अपना हिसाब)
- शिकायत प्रक्रिया एवं उचित कार्यवाही

तालिका 1.1 (राशि लाख रू. में)

जारी किये गये जॉब कार्ड की कुल संख्या	64.96
कियाशील जॉब कार्ड की कुल संख्या	45.74
श्रमिकों की कुल संख्या	159.67
कार्यरत श्रमिकों की कुल संख्या	88.34
अनुसूचित जाति का प्रतिशत	16.76
अनुसूचित जन जाति का प्रतिशत	34.39

स्त्रोतः ग्रामीण विकास विभाग, म0प्र0 पंचायत एवं ग्रामीण विकास

तालिका 1.1 से स्पष्ट होता है कि मनरेगा के तहत कुल 64.96 लाख जॉब कार्ड जारी किये गये। उनमें से 45.74 लाख जॉब कार्ड क्रियाशील हैं। श्रमिको की कुल संख्या 159.67 लाख है परंतु इनमें से कार्यरत श्रमिक 88.34 लाख हैं। इनमें अनुसूचित जाति एवं जन जाति का प्रतिशत क्रमशः 16.76 एवं 34.39 है।

तालिका 1.2, सृजित मानव दिवस की प्रगति (राशि लाख रूप में)

	2013—14	2014—15	2015—16	2016—17	2017—18
श्रमबजट स्वीकृत	1821.2	1452.83	1766.87	1427.27	1550
कुल सृजित मानव दिव	1229.37	1175.4	1237.42	1130.41	1095.84
कुल श्रम बजट का प्रतिशत	67.5	80.9	70.03	79.2	70.7
सृजित मानव दिवस में अनुसूचित जाति का प्रतिशत	17.21	15.97	16.29	16.13	16.81
सृजित मानव दिवस में अनुसूचित जनजाति का प्रतिशत	32.74	28.71	34.18	35.55	31.36
कुल मानव दिवस में से महिलाओं द्वारा सृजित मानव दिवस का प्रतिशत	42.65	43.21	43.15	35.55	31.36

स्त्रोतः ग्रामीण विकास विभाग, म0प्र0 पंचायत एवं ग्रामीण विकास

तालिका 1.2 से स्पष्ट है कि वर्ष 2013-14 में सर्वाधिक श्रम बजट 1821.2 लाख

रूपये स्वीकृत किये गये। वर्ष 2015-16 में सर्वाधिक कुल मानव दिवस 1766.87 लाख सृजित हुये, जिनमें अनुसूचित जाति का स र्वाधिक 17.21: वर्ष 2013-14 में रहा। अनुसूचित जाति का सर्वाधिक प्रतिशत वर्ष 2016-17 में 35.55: रहा। महिलाओं द्वारा सृजित मानव दिवस में प्रारंभ में लगभग समान वृद्धि रही लेकिन बाद में कमी नजर आई है।

तालिका 1.3

रोजगार प्राप्त लाभांवितों की स्थिति

वर्ष	100 दिवस का कार्य पूर्ण करने वाले परिवारो की संख्या	विकलांग लाभांवितों की संख्या
2013–14	175642	31872
2014–15	158776	38632
2015–16	225502	44703
2016–17	140994	49425
2017–18	15739	47623

स्त्रोतः ग्रामीण विकास विभाग, म0प्र0 पंचायत एवं ग्रामीण विकास

तालिका 1.4

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (म0प्र0)की प्रगति

वर्ष	कुल उपलब्धता	मजदूरी पर व्यय	सामग्री पर व्यय	पूर्ण कार्यो की संख्या
2013–14	245349.45	165695.13	76722.93	292030
2014–15	269399.54	180994.65	89680.09	399852
2015–16	259293.82	146007.51	80413.08	231492
2016–17	366402.76	218835.61	113804.43	319853
2017–18	393022.7	186650.03	105545.62	168364

योजना के कियान्वयन संबंधी समस्याएँ-

* मनरेगा की उपयोजनाओं संबंधी कार्य जैसे कपिलधारा आदि के संबंध में हितग्राहियों का कार्य समय पर पूर्ण नहीं होता हैं तथा भुगतान भी नहीं किया जाता है।
* रिकार्डो का उचित संधारण न होना।
* योजना का पैसा दूसरे मद में खर्च करना।
* अस्वीकार्य कार्यो को हाथ में लेना।
* खरीदी की रसीदों को सार्वजनिक नहीं करना।
* सामाजिक अंकेक्षण नहीं करना।
* गांव में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के अनुरूप कार्य योजना नहीं बनती।
* साम्रगी एवं श्रम में अधिनियम के अनुसार निश्चित अनुपात का ध्यान नहीं रखा जाता।
* वोटर सूची के आधार पर जॉब कार्ड जारी होने के कारण राशि का आबंटन ज्यादा हुआ है परन्तु कार्य की प्रगति एवं निर्माण कार्य की गुणवत्ता अत्यन्त खराब रही।

मजदूरी /बेरोजगारी भत्ता/मस्टररोल एवं अन्य सुविधाओं संबंधी समस्याएँ-

* काम मांगने पर समय पर काम नहीं मिलना, आवेदन की पावती नहीं देना।
* मौखिक काम मांगने पर उसका रिकार्ड नहीं रखना, बेरोजगारी भत्ता नहीं देना एवं समय पर भुगतान नहीं करना।
* 5 कि.मी. के अन्दर काम मिलने की शर्त का भी पालन नहीं होती है।
* काम का आवेदन देने के 15 दिन के भीतर काम मिलना अनिवार्य होता है। परन्तु आवेदन देने के बाद भी काम नहीं मिलता है।
* निर्धारित समयावधि में भुगतान न होने पर मजदूरी मुआवजा अधिनियम 1936 के अंतर्गत मुआवजा राशि भी नहीं दी जाती।
* कार्य स्थल पर मस्टररोल नहीं रखा जाता या मस्टर रोल में गलत प्रविष्टियां होती है, कहीं-कहीं कच्चा मस्टररोल का प्रयोग किया जाता है साथ ही मस्टर रोल में
* उपस्थित श्रमिकों के हस्ताक्षर भी नहीं पाये जाते है।
* कार्य स्थल पर सुविधायें न देना, बच्चों हेतु झूलाघर की व्यवस्था न करना साफ पीने के पानी की उपयुक्त व्यवस्था न होना और काम के दौरान आराम हेतु छायादार स्थान भी नहीं होता है।

पारदर्शिता निगरानी व भ्रष्टाचार सम्बंधी समस्याएँ-

इतनी कामयाब योजना के बावजूद भी मनरेगा भ्रष्टाचार का एक बड़ा केन्द्र बन चुका है। 100 दिनों के बदले 70-80 दिन का ही काम दिया जाता है। फर्जी मस्टर रोल की शिकायते भी सामने आई है और हितग्राहियों को पूरा -पूरा पैसा भी नहीं दिया जाता है। तो कभी मृत आदमी के नाम पर पैसा निकालने की शिकायते अक्सर सुनाई देती है। मनरेगाा से सम्बंधित कैग की रिपोर्ट में वर्ष 2013 के बजट के अनुसार 33,000 करोड़ रूपये की इस वार्षिक योजना पर भ्रष्टाचार से संबंधित तथ्यों को बताया गया है जो इस प्रकार है-

* 47 हजार 687 से अधिक मामलों में लाभार्थियों को न तो रोजगार मिला और है न ही बेरोजगारी भत्ता।
* 3 राज्यों में लाभार्थियों को रोजगार दिया गया लेकिन मजदूरी नहीं।
* कहीं मजदूरी मिली भी तो काफी देर से ।
* मनरेगा के तहत् किये गये काम 5 वर्षो में भी आधे-अधूरे रहे है।
* निर्माणकार्य की गुणवत्ता भी अत्यन्त खराब रही।
* मनरेगा के तहत आवंटित धन का 60: मजदूरी और 40: निर्माण सामग्री पर खर्च करने के नियम का पालन नहीं हुआ।
* केंद्र के स्तर पर निधियों के आबंटन में भी खामिंया पाई गइी।
* वर्ष 2011 में जारी हुए 1960.45 करोड़ रूपये का हिसाब ही नहीं मिला।
* निगरानी के कामों में भी जमकर ढिलाई बरती गई।
* भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने में केन्द्र ने कार्यवाही नहीं की बल्कि उल्टे भ्रष्टाचार करने वालों को बचाया गया।

योजना के कियान्वयन संबंधी सुझाव-

* मनरेगा की अनेक योजनाओं जैसे कपिलधारा, भूमिशिल्प योजना, नंदन फलोद्यान, आदि संबंधी जो काम अधूरे है उन्हे शीघ्र पूरा कराया जाए।

* गांव में उपलब्ध प्राकतिक संसाधनों का भरपूर उपयोग किया जाए इसके लिए मनरेगा कि मीनाक्षी योजना, रेशम, सहस्त्रधारा, शैलपर्ण आदि के काम को प्राथमिकता से सम्पन्न कराया जाए।
* योजना संबंधी समस्त रिकार्डो का उचित संधारण हो।
* सामग्री एवं श्रम संबंधी निश्चित अनुपात का ध्यान रखा जाए।
* कम वर्षा वाले क्षेत्रों में मनरेगा के अंतर्गत तालाबों और जलाशयों में बड़े पैमाने पर जल संरक्षण एवं संचयन को प्राथमिकता दी जाए।

मजदूरी /बेरोजगारी भत्ता मस्टररोल एवं अन्य सुविधाओं संबंधी सुझाव-

* काम चाहने वाले प्रत्येक व्यक्ति से नियमानुसार आवेदन लिया जाये व उसकी पावती दी जाये।
* आवेदन देने के बाद निर्धारित समयावधि में काम न मिलने पर बेरोजगारी भत्ता देने की जिम्मेदारी जनपद स्तर पर कार्यक्रम अधिकारी की सुनिश्चित की जाए।
* मजदूरी/बेरोजगारी भत्ते का भुगतान समयानुसार सुनिशिचित किये जाने की व्यवस्था हो।
* निर्धारित समयावधि में मजदूरी भुगतान न होने पर मुआवजा के प्रावधान को जबावदेहिता के साथ लागू किया जाए।
* प्रत्येक ग्राम पंचायत में जॉब कार्ड , बहीखाता होना चाहिए जिससे जॉब कार्ड की स्थिति की पूर्ण जानकारी हो सके। साथ ही जाबकार्ड की दो प्रतियां बनाई जाए जिससे एक मजदूर के पास हो तथा दूसरा कार्यस्थल पर। जिससे जॉबकार्ड के साथ होने वाली हेरा-फेरी को रोका जा सके।
* 6 वर्ष तक के बच्चों को झूलाघर की सुविधाएँ करने हेतु उन्हे आँगनवाड़ी से जोड़ा जाए तथा एक आँगनबाड़ी कार्यकर्ता का मानदेय रोजगार गारंटी योजना मद से निकाला जाए।
* योजना के अंतर्गत आपातकालीन स्वास्थ्य सेवाओं और कार्य के दौरान आराम करने हेतु उचित छाया की व्यवस्था होनी चाहिए।

पारदर्शिता, निगरानी व भ्रष्टाचार संबंधी सुझाव-

* मनरेगा में लोकपाल की नियुक्ति के पीछे यह मंशा है कि रोजगार गारंटी कानून में जो गारंटी दी गई है उसे पारदर्शी तरीके से कानूनी प्रक्रियाओं के अनुसार क्रियान्वयन कराया जा सके। इसके क्रियान्वयन संबंधी जो भी शिकायतें है उनका निराकरण मनरेगा के तहत नियुक्त लोकपाल करेंगे।
* मनरेगा को तकनीकी सहायता उपलब्ध कराने के लिए महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी मिशन का सृजन किया जाए।
* रोजगार गारंटी योजना में यदि पारदर्शी तरीके से कार्य किया जाए और मांग के आधार पर काम, समय पर मजदूरी का भुगतान, बेरोजगारी भत्ता एवं मुआवजा मिलने के साथ -साथ सामाजिक अंकेक्षण पर जोड़ दिया जाए तो शायद परिस्थितियां कुछ बदली हुई नजर आयेंगी।
* पंचायतों के प्रतिनिधियों एवं ग्राम सभा के लोगो को अपने कार्य एवं दायित्वों के

प्रति संवेदित एवं जागरूक होना चाहिए।

निष्कर्ष-

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का लक्ष्य किसी भी परिवार को आय की गारंटी देना है जो गड्ढो की खुदाई करने उन्हे भरने, सड़को का निर्माण करने आदि जैसे कार्य किये जाते है। मनरेगा अपने आप में एक प्रकार की अनोखी योजना है जो प्रत्येक परिवार को प्रतिवर्ष 100 दिन की रोजगार की गारंटी देती है। रोजगार न मिलने पर बेरोजगारी भुत्ता का भुगतान किया जाता है। महिलाओं को विशेष प्राथमिकता दी गयी है। ठेकेदारी व मशीनों पर पूर्ण प्रतिबंध लगाया गया है।

======================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

शासकीय प्रतिवेदन एवं अन्य प्रकाशन

1. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम मध्यप्रदेश उपयोजनाएं महात्मा गांधी राज्य ग्रामीण विकास संस्थान मध्यप्रदेश जबलपुर
2. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 2005, भारत का राजपत्र
3. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम, मध्यप्रदेश लेखा परीक्षा एवं मॉनीटरिंग मैनुअल मध्यप्रदेश शासन पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग
4. मस्टर रोल की निगरानी, महात्मागांधी राज्य ग्रामीण विकास संस्थान, मध्यप्रदेश जबलपुर

पत्र पत्रिकाएँ-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रतियोगिता साहित्य
2. ग्रामीण भारत, ग्रामीण विकस विभाग की मासिक पत्रिका
3. कुरूक्षेत्र, ग्रामीण विकास मंत्रालय, कृषिभवन नई दिल्ली, योजना प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

समाचार पत्र-

1. दैनिक भास्कर, भोपाल
2. दैनिक जागरण, भोपाल

Internet Websites-

1. www.mgnrega.nic.in
2. www.microfinance gateway.org.
3. www.financialexpress.com
4. www. economist.com

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

सिक्ख साम्राज्य : बंदा बहादुर

* गजेन्द्र सिंह
**भूपेश

सारांश- बंदा बहादुर एक असाधारण संगठनकर्ता था। डा0 गण्डसिंह के मतानुसार, ''पंजाब के निवासियों द्वारा स्वतन्त्रता और सफलता की राह खोज करने का पूर्ण श्रेय बंदा को ही है। पंजाब के मुगलों में असहनीय शासन को करारी चोट देने वाला और इस प्रदेश में सिक्खों द्वारा विजय का ड़ंका बजाने वाला प्रथम पुरुष बंदा ही था। बंदा बहादुर के महामानवीय कार्यो नें पंजाब के निवासियों में अत्याचार का विरोध करने और राष्ट्रीय ध्येय के लिए जीवन-मरण का संघर्ष करने की इच्छा और प्रेरणा संचारित की। बंदा शत्रु की अधिक सैन्य और सिक्खों द्वारा विश्वास-घात के कारण अपने कार्य में असफल रहा।'' कनिंघम के मतानुसार, ''सिक्ख बंदा की स्मृति को अधिक आदर की दृष्टि से नहीं देखते, वह अत्यंत गम्भीर प्रकृति का पुरूष रहा प्रतीत होता है। किन्तु अपने अनुयायियों से व्यक्तिगत सहानुभूति प्राप्त किए बिना भी उसकी आज्ञाएँ उसके साहसिक और तेजस्वी नेता होने के कारण अक्षरशः पालन की जाती थीं। सम्भवतः वह नानक और गोविंदसिंह द्वारा किए गए सुधारों के आधारों को भली भाँति नहीं समझ पाया। संकुचित धर्म-भावना उसके सारे जीवन पर पूर्णरूप से छाई हुई थी और उसने अपने हिन्दू-तपस्वी जीवन की शैली पर ही सिक्ख गुरुओं द्वारा बताये गए जीवन सिद्धान्तों में परिवर्तन करने की चेष्टा की। इर दूरदर्शितापूर्ण परिवर्तनों और नियमों का कट्टरपन्थी सिक्खों द्वार विरोध किया गया, जिस कारण इस महान्, योग्य और कर्मठ नेता की समृति धुँधली पड़ती जा रही है।''

सांस्कृतिक एवं धार्मिक रूप से सिक्खों का उदय 16वीं 17वीं शताब्दी में हुआ। 16वीं शताब्दी के भक्ति आन्दोलन के प्रमुख संत नानक के शिष्यों को सिक्ख कहा गया। ये अधिकांश सिक्ख पंजाब के जट्ट किसान थे। सिक्खों को गुरुओं द्वारा सांस्कृतिक एवं सैन्य शक्ति के रूप में विकसित किया गया। सिक्खों के दसवें एवं अंतिम गुरु, गुरु गोविन्द सिंह के उपरांत बंदा बहादुर सिक्खों का नेता बना। बंदा ने सामाजिक प्रतिरोध आंदोलन चलाकर सबके साथ न्याय एवं समानता का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। उसने देग तेग एवं फतह की नीति अपनाई। देग दान सूचक था जिसके अन्तर्गत भूखों एवं शोषितों को भोजन कराया जाता था जबकि तेग शक्तिसूचक था जिसके अन्तर्गत निशक्तों की रक्षा की जाती थी। बंदा ने स्वयं को सच्चा बादशाह घोषित करते हुए 'राज करेगा खालसा' का नारा

* सहायक प्रोफेसर, राजकीय महाविद्यालय, बावल (रेवाड़ी)
** विद्यार्थी, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र

दिया। मुगलों के विरुद्ध सैनिक रूप से उसने 'ढाई फट' की नीति का प्रतिदिन किया जिसका अर्थ था पहले आक्रमण करो फिर भागते हुए देखो, फिर लौटकर जबरदस्त आक्रमण करो। उसके समय में मुगलों एवं सिक्खों का संघर्ष निरन्तर चलता रहा। मुगल सम्राट बहादुर शाह बंदा का दमन नहीं कर पाया।

गुरू गोबिंद सिंह की मृत्यु के बाद सिक्खों का इतिहास उतार-चढ़ाव की कहानी है। गुरू पद के बाद सिक्खों को नेतृत्व बंदा के हाथों में आ गया। बंदा बहादुर का जन्म 16 अक्टूबर 1670 में पुँछ जिले के राजौरी नामक गांव में हुआ था। बचपन में उनका नाम लक्ष्मण देव था। किन्तु बाद में वैराग धारण करने के बाद वें वैरागी माधवदास कहलानें लगे। इतिहासकारों नें उनकी उत्पत्ति संबंधी विभिन्न विचार दिए है। विपिन बिहारी सिन्हा नें अपनी पुस्तक मुगल भारत में बंदा को डोगरा जाति का माना है। पी.एन. बाली नें उन्हें मोहयल ब्राह्मण बताया है वहीं हाकिम राय नें बंदा को पंजाबी खत्री /राजपूत बताया है। हरजिन्दर सिंह दिलगीर नें उसे राजपूत बताया है। उनके पिता रामदेव भारद्वाज राजपूत थे जिनका मुख्य धंधा खेती-बाड़ी था। परिवार के साधन सीमित थे इसलिए परिवार का गुजारा भर ही हो पाता था। लक्ष्मण देव को बचपन में कोई स्कूली शिक्षा प्राप्त नहीं हुई और वह पिता का कृषि में हाथ बंटाने लगे। खाली समय में लक्ष्मण देव तीर कमान लेकर शिकार के लिए निकल जाते थे। लेकिन एक दिन एक हिरनी के शिकार ने उनकी जीवनधारा ही बदल कर रख दी। उसको तड़पते हुए देखकर लक्ष्मण देव एक तरह से बैरागी बन गए। उन्होंने माधोदास का नाम धारण किया व साधुओं की एक टोली में मिल गए। नासिक की तरफ से होते हुए माधोदास नांदेड़ नामक स्थान पर पहुँच गए। नांदेड़ में गोदावरी नदी के किनारे उन्होंने एक आश्रम बनाया तथा वहां रहकर योग साधना करने लगे। यहां उनके कई अनुयायी बन गए।

नांदेड़ नामक स्थान पर गुरु गोबिंद सिंह की मुलाकात माधोदास बैरागी से हुई जो स्वयं गुरु जी के प्रभावशाली व्यक्तित्व से इतना अधिक प्रभावित हुआ कि सदा के लिए उनका शिष्य व अनुयायी बन गया। यहीं पर उसने, गुरु जी के यह पूछने पर कि तुम कौन हो, कहा कि मैं आपका बंदा हूँ (बंदा दास के रूप में) और गुरू जी ने कहा कि तुम बंदा बहादुर हो तथा अपने तरकस में से उसे 5 तीर देकर सिक्खों का नेता बनाते हुए पंजाब जाने का हुक्म दिया। इसी तरह उन्होंने सिक्खों के नाम हुक्मनामें भी जारी किए कि वे बंदा बहादुर को अपना अगुआ मानें तथा हर तरह से इस मिशन में उसकी सहायता करें। इस समय बंदा के साथ पांच सिक्ख भी भेजे गए जिनके नाम थे बाबा विनोद सिंह, काहन सिंह, दया सिंह, रामसिंह, बाजसिंह तथा बीस और सिक्ख बंदा के साथ भेजे गए।

प्राचीन पंथ प्रकाश में रतन सिंह का यह कहना है कि गुरू जी ने बंदा का यह आदेश कि जब तक सिक्खों को खुश रखोगे तुम भी खुश रहोगे, अगर तुम सिक्खों को परेशानी में डालोगे तो स्वयं भी परेशान होगे। अगर तुमने खालसा की अवहेलना की तो असफल हो जाओगे। गुरू जी ने ये आदेश दिए कि (1) उसे कोई नया धर्म या जाति आरंभ नहीं करनी होगी (2) सदा सत्य पर अडिग रहना (3) गुरूद्वारे में मसनद लगाकर नहीं बैठना तथा न ही स्वयं को गुरू कहलाना (4) स्वयं को खालसा का सेवक समझना तथा सिक्खों के साथ शांति से रहना (5) स्त्री से दूर रहकर सादा जीवन व्यतीत करना। गुरू गोबिंद की प्रेरणा पाकर बंदा ने उतर दिया में कूच किया। औरगंजेब की मृत्यु से उत्पन्न स्थितिया लाभ

उठाकर वह उन जालिम स्थानीय हानियों का अन्त करना चाहता था जिन्होंने उसे तथा उसकी तरह कितने ही अन्य धर्मपुरूषों को तंग किया था, तथा गुरू गोबिंद सिंह के परिवार पर जुल्म किए थे बंदा ने सम्मवतः वही मार्ग अपनाते हुए जो कि औरंगजेब की कैद से फरार होकर शिवाजी ने महाराष्ट्र में जाने के लिए अपनाया था। दिल्ली की दाई तरफ छोड़कर हरियाणा प्रदेश में प्रवेश किया। उस समय उसके साथ गुरू गोबिंद सिंह के आदमी थे।

दक्षिण भारत से बड़ी तेजी से सफर तय करते हुए जब बंदा दिल्ली पहुँचे तो यहीं उन्हें पता चला कि गुरू गोबिंद सिंह की हत्या हो चुकी है। गुरू गोबिंद सिंह की मृत्यु के उपरान्त सिक्खों का इतिहास उतार-चढ़ाव की कहानी है। गुरू पद की समाप्ति के बाद सिक्खों का नेतृत्व बंदा के हाथों में आ गया। मुगल बादशाह बहादुर शाह अभी भी अपने भाइयों के साथ उत्तराधिकार के युद्ध में उलझा हुआ था तथा राजपूतों ने खुले आम विद्रोह कर रखा था।

दिल्ली के पास ही बंदा ने अपना डेरा डाला तथा गुरू जी का संदेश उनके सिक्खों तक पहुँचाया तथा यहाँ पर धार्मिक सभाएँ करनी आंरभ कर दीं। जो धन चढ़ावे में आता था, जरूरतमंदों में बाँट दिया जाता था। यहाँ तक कि बंदा ने यह घोषणा की कि जो भी डाकुओं, चोरों, लुटेरों से भयभीत है, जिसे न्याय नहीं मिला, जिसके साथ दुर्व्यवहार हुआ हो, वह उसकी शरण में आ जाए। इस रूप में यह एक सामाजिक प्रतिरोध आंदोलन बन गया। मालवा के किसान अपने जमींदारों तथा स्थानीय अधिकारियों के अत्याचारों से तंग आ चुके थे। जिन दिनों बंदा सिक्खों को संगठित कर रहे थे उस समय सिक्ख सम्प्रदाय आपसी वैमनस्यता एवं फूट की आग में जुलस रहा था। सिक्ख गुरूओं द्वारा स्थापित प्रचार केन्द्र करतारपुर, खंडुर, गोविन्दवाला, अमृतसर, कीर्तिपुर, बाबा बकाला, मंजियों आदि प्रथियों, धीर मल्लिको, रामराइयों, मजदो अथवा उदासिन साधुओं के अधिकार में थे। वे अपने-अपने ढ़ंग से गुरू नानक के नाम पर सिक्खी सेवकी फैलाकर जनता से उपहार तथा चढ़ावा ले रहे थे। ये बंदा के विराधी थे तथा मुगलों के साथ इनके सम्बंध स्थापित थे। वे बंदा के झंडे के नीचे इकट्ठे होने लगे। खाफी खान के अनुसार हजारो की संख्या में लोगों ने बंदा का नेतृत्व स्वीकार किया यहाँ तक कि उसे गुरू गोबिंद सिंह का स्वरूप ही समझा जाने लगा।

डॉ. हरि राम गुप्ता नें लिखा है कि पंजाब कि इतिहास में सम्भवतः समय और वातावरण नें किसी भी नेता की आकांक्षाओं को संतुष्ट करनें के लिए, उसके लक्ष्य की प्राप्त हेतु ऐसी स्थिति प्रदान नहीं कि जबकि बहादुर लोग उसकी हर काम में सहायता करने के लिए सदैव तत्पर रहते थे। बंदा ने छूटते ही हुक्म जारी किया कि ''सब शाही अफसर इस क्षेत्र से निकल जाए'' अचंभे की बात है कि सब सरकारी अफसर इस तरह डरे की एक-दम भाग खड़े हुए पर सोनीपत का हाकिम इसका अपवाद था। बंदा की सैनिक विजय सोनीपत के साथ प्रारंभ हुई, उसने एक सेना लेकर मुगल फौजदार को परास्त किया। तथा कैथल की जीतते हुए सिक्ख सेनाओं ने समाना को जीतकर 10,000 मुस्लमानों को मौत के घाट उतार दिया। समाना की विजय काफी महत्वपूर्ण थी जहाँ से सरहिंद पर आक्रमण करना आसान हो गया था। शाहबाद और कुंजपुरा के ठिकानेदारों नें साहस दिखाया पर बंदा नें उन्हें परास्त किया। बंदा की सेना नें दोनों नगरों को लुटा और जिन्होंने विरोध किया उन्हें गाजर, मूली की तरह काट दिया। घुरम्म, शाहबाद, मुस्तफाबाद, कपूरी तथा सढोरा को

जीतते हुए बंदा सरहिंद पहुँच गया। सरहिंद में ही गुरू गोबिंद सिंह के दो छोटे बेटों को दीवारों मे चिनवाया गया था और इस कार्य के अगुआ बजीर खाँ सूबेदार तथा सुच्चानंद थे। बंदा सूबेदार ने भूमिहीनों को भूमि देने की घोषणा की तथा लूट के माल को समान रूप से बाँटने की घोषणा की थी इसलिए सैनिकों की तो कोई कमी नहीं थी। दूसरी तरफ वजीर खाँ भी अपनी तैयारियाँ कर रहा था। उसने मुस्लिम भूपतियों से यह कहा कि अगर बंदा सफल हो गया तो उनके घर व संपत्तियाँ सुरक्षित नहीं रहेंगी। सरहिंद का युद्ध काफी भयंकर था। सिक्ख विरोधी फौजदार वजीर खाँ को युद्ध मे परास्त कर उसकी हत्या कर दी और गुरू पुत्राों की मौत का बदला लिया। वजीर खाँ के दम तोड़ते ही मुस्लिम सेनाओं का मनोबल टूट गया और विजयश्री बंदा के हाथ रही। दीवान सुच्चानंद को जीवित ही पकड़ा गया तथा कई तरह की यातनाएँ दी गई। 'फतह दर्शन' का नारा लगाते हुए सिक्ख सेनाओ ने पूरे शहर को रौंद डाला। प्रतिशोध की अग्नि में जलती हुई सिक्ख सेना नें नगर के अनेक मुसलमानों का वध कर डाला। वजीर खाँ के हाथों सरहिंद के गैर-मुसलमान लोग इतनी बुरी तरह से सताए गए थे कि मौका मिलने पर उन्होंने अपने शोषण का बदला गिन-गिन कर लिया। अबरतनाम में मुहम्मद कासिम लिखता है कि ''पिछले खान के समय उेसा कोई भी बीज न बचा जो उसने बोया था और जिसका फल उसे न मिला हो''। शहर का केवल सिक्खों ने ही नहीं कई अन्य उन असामाजिक तत्वों ने भी लूटा जो वजीर खाँ के हाथों पीड़ित थे। गंडा सिंह के अनुसार ''बंदा के हाथों लगभग दो करोड़ की वह लूट पड़ी जो वजीर खाँ के खजाने व वस्तुओं से प्राप्त हुई तथा कुछ लाख सुच्चानंद की संपत्ति से प्राप्त हुए।'' लतीफ के शब्दों में, ''सिक्खों ने उस स्थान पर रहने वाले प्रत्येक मुसलमान का सिर काटकर, किरचों से बेंध कर, गला घोंटकर, फाँसी देकर, गोली मार कर और टुकड़े-टुकड़े करके और जिन्दा ही आग में जला कर, जान से मार डाला। मसजिदें नष्ट करके जला दी गई। मुल्ला, मौलवी, हाफिजों का खूब अपमान किया गया और उनको सताया गया। वजीरखाँ की लाश को पेड़ पर लटका कर कौवों और गिद्धों को खाने के लिए छोड़ दिया गया।''

सरहिंद के सभी 28 परगने जिनसे लगभग 36 लाख की सालाना आमदनी होती थी। 1710 ईसवीं मे सरहिन्द सिक्खों के अधिकार में चला गया इसके बाद बंदा की सेना नें शाहबाद, मुस्तफाबाद, जालान्धर, अमृतसर, सहारनपुर आदि नगरों को अपने अधिकार में कर लिया। बंदा ने साठौन के शासक उस्मान खाँ को भी युद्ध से परास्त किया और उसके क्षेत्र को अपने कब्जें में कर लिया। बंदा को उद्देश्य पंजाब में एक सिक्ख राज्य की स्थापना करना था। सरहिन्द की विजय बंदा की प्रतिष्ठा को चार-चाँद लग गए अब उसकी सेना में शामिल होनें के लिए दूर-दूर से लोग आने लगे। यमुना से सतलज के भीतर का सारा क्षेत्र बंदा के प्रभाव में था। समकालीन स्त्राोतों पता चलता है कि बंदा के प्रभाव से इस समय कई एक धर्म परिवर्तन भी हुए। दीनदार खाँ तो दीनदार सिंह बन गया, मीर नासिरूद्दीन जो सरहिंद का वाकियानवीस था मीर नासिर सिंह बन गया।

सरहिंद का महत्वपूर्ण क्षेत्र मुख्य मार्ग पर स्थित था। बंदा की राजधानी इसे बनाया जा सकता था, लेकिन यह अधिक सुरक्षित राजधानी साबित नहीं हो सकता था। इसलिए मुखलिसगढ़ के किले को अधिक उपयुक्त समझा गया। यह हिमालय की श्रेणियों में स्थित वह किला था जिस पर पहुँचना बहुत आसान नहीं था। इस किले की मरम्मत करवा कर

इसका नाम ''लौहगढ़'' रखा गया। सरहिंद की समस्त लूट, युद्ध का हर्जाना, लगान इत्यादि सभी तरह का खजाना लौहगढ़ में रख दिया गया। यहाँ कई तरह के अस्त्र-शस्त्र का भंडार भी रखा गया। गंडा सिंह के अनुसार बंदा सिंह वास्तव में नाम के अतिरिक्त एक राज के समान था। उसने विभिन्न क्षेत्र विजय किए थे। अपने नायब के द्वारा वह उनका प्रशासन चला रहा था। उसके पास बड़ी संख्या में सेना तथा अनुयायी थे। उसके पास राजधानी तथा रहने के लिए महल थे। इस तरह बंदा जो बैरागी साधु था, सैनिक कमांडर बन कर बंदा बहादुर बना और खुशवन्त सिंह के अनुसार तीसरा अवतार बादशाह के रूप में हुआ। बंदा नें सरहिन्द को अपने नव विजित राज्य का मुख्यालय बनाया उसनें नई प्रशानिक व्यवस्था कायम की जो सैद्धान्तिक रूप से मुगल व्यवस्था की तरह ही थी। उसका शासन न्याययुक्त और दयालु था। उसके आर्थिक शोषण के लिए कोई जगह नहीं थी न धर्म का भेदभाव था और ना ही जाति पाति की रूह रियायत। बंदा नें प्रशासन को भली-भाँति चलाने के लिए मुगल अधिकारियों को हटाकर बाज सिंह का सरहिंद का गवर्नर नियुक्त किया गया और बाबा अली सिंह उसके नायब बने। फतेह सिंह समाना के सूबेदार बने, विनोद सिंह तथा राम सिंह थानेश्वर के सूबेदार बनाए गए। सरहिंद के 28 परगनों में सरकारी अधिकारी व कर्मचारी भी बदल गए। बंदा नें स्वयं ना कोई पदवी ली और ना कभी दरबार लगाया। उसनें सभी कार्य गुरू के नाम से किए इस प्रकार पंजाब में सिक्ख राज्य स्थापना का विचार सिक्खों को सर्वप्रथम बंदा बहादुर ने दिया। सिक्खों नें नव स्थापित राज्य में भ्रष्ट अधिकारी को हटाकर ईमानदार अधिकारी रखे।

किसी भी राज्य की स्थापना उसके स्वतंत्र सिक्कों तथा मोहर से जाहिर होती है। बंदा बहादुर ने गुरू नानक व गुरू गोबिंद सिंह के नाम के सिक्के जारी किए। सिक्कों के एक तरफ यह लिखा रहता था।

''सिक्का जद हर दो आलम ते-ऐ नानक साहिब अस्त
फतेह गोबिंद सिंह शाह-ए-शाहन फजल ए सचा साहिब अस्त''

दो जहानों के लिए ये सिक्के नानक की तलवार तथा गुरू गोबिंद की कृपा से मिली विजय के उपलक्ष में जारी किए गए।

इसके दूसरी तरफ अंकित था :

जर्ब बा अमन उद दहर- समवरत सहर
जीनत उल तख्त ऐ मुबारक बख्त

बंदा नें हुक्मनामे व फरमान जारी करने के लिए सिक्ख राज्य की एक सील व मोहर जारी की गई जिस पर फारसी में यह अंकित रहता था।

देग-ओ-तेग-ओ-फतह ओ
नसरत-ए-बेदरंग
यफ्रत आज नानक गुरू गोबिंद सिंह।

यह सील भविष्य में सिक्ख शासकों द्वारा प्रयोग की गई जिसमें सिक्खों की लोकप्रियता तथा सफलता दोनों का रहस्य दिखाई देता है। देग सूचक थी भूखे, शोषित तथा पीड़ित को भरपेट भोजन देने की तथा साथ ही लंगर की प्रथा सामाजिक समानता के लिए थी जब कि तेग सूचक थी गरीब असहाय भयभीत तथा शोषित की रक्षा के लिए। देग व तेग दान तथा शक्ति के सूचक थे।

गंडा सिंह के अनुसार सरहिंद की विजय से बंदा बहादुर ने एक नये सम्वत का भी आरंभ किया---इसके द्वारा वे सिक्खों के मन में अन्य शासक वर्ग के साथ एकसमानता की भावना पैदा करना चाहते थे ताकि वे किसी भी तरह स्वयं को दीन न समझें।

बंदा बहादुर का आंदोलन इस तरह एक सामाजिक आंदोलन बनता जा रहा था। आर्थिक सुधारों के क्षेत्र में उसने जमींदारी उन्मूलन के लिए कार्य किया। अप्रत्यक्ष रूप से उसने किसानों में आत्मसम्मान की भावना पैदा करनें के लिए भूमि पर अधिकार स्थापित करके उन्हें स्वयं परिस्थितियों से लड़ना सिखाया।

जमींदारों के अत्याचार तथा अनुपस्थित जमींदारों से कृषकों के लिए कई समस्याएँ उत्पन्न हो गई थीं। बंदा बहादुर ने कृषि-सुधारों का बीड़ा उठाया तथा अपने विजित क्षेत्रों में किसानों को भूमि के मालिकाना अधिकार दिए।

सिक्ख राज्य के स्थापित होने से सिक्खों की प्रतिष्ठा तथा सम्मान बढ़ गया। प्रत्येक सिक्ख अपने को बाकी लोगों समझने लगा। इरविन के अनुसार सिक्खों द्वारा विजित क्षेत्रों में पुरानी मान्यताएँ तथा रिवाज बदल रहे थे। निम्न वर्ग का मेहतर, चमड़ा बनाने वाला चमार, निम्नतम में भी निम्न को केवल घर छोड़कर गुरू के पास जाना होता था। थोड़े समय के बाद जब वह अपनी जन्मभूमि में लौटता था तो उसकी नियुक्ति के आदेश उसके हाथों में होते थे। वह जैसे ही उन सीमाओं में प्रवेश करता था तो धनी तथा उच्च जाति के लोग उसकी अगवानी के लिए आगे आते थे तथा हाथ बाँध कर उसके हुक्म की प्रतीक्षा करते थे। यह सामाजिक परिवर्तन का सूचक था जब समाज में निम्न कहे जाने वाले लोग इस धारा में शामिल होकर अपने सामाजिक स्तर को उँचा उठा सकते थे।

मुगल बादशाह बहादुर शाह को राजपूताना में व्यस्त जानकर बंदा बहादुर ने एक बार फिर से यमुना के दूसरी ओर सहारनपुर की तरफ रूख किया। यहाँ के गुर्जर किसान बंदा के आगमन को ईश्वरीय देन समझ रहे थे। उनके लिए वह समय उन नवाबों तथा जमींदारों के विरूद्ध विद्रोह का समय था जिन्होंने शताब्दियों से उन्हें सताया था। उन्होंने स्वयं का नानक-प्रस्थ या नानक के अनुयायी घोषित किया। सहारनपुर को जीतने के पश्चात गुर्जरों ने बेहार, अमहेटा तथा ननौता को तहस-नहस कर दिया। बंदा की उपस्थिति गंगा-यमुना के दोआब में आतंक फैलाने के लिए काफी थी। लेकिन इसी बीच जालंधर के किसानों की पुकार सुनकर तथा बरसात (मानसून) के आने से पहले बंदा बहादुर पंजाब लौट गया।

राहौन के स्थान पर मुगल फौजदार शमरा खाँ के साथ घमासान युद्ध के पश्चात मुगलों का परास्त किया गया। इस युद्ध में सिक्खों ने ''ढाई फट'' की नीति अपनाई थी। माझा किसान सेनाओं ने अमृतसर, कसूर, बुटाला, कलानूर तथा पठानकोट को जीत लिया। लाहौर पर भी आक्रमण किया गया। इस समय मुगल फौजदारों ने मुस्लिम किसानों को धर्म के नाम पर युद्ध लड़ने के लिए उकसाया लेकिन सभी प्रयत्नों के बावजूद बंदा की सेनाओं ने लाहौर को लूटा, पर उसे अपने अधीन नही किया। यमुना से रावी तक और उसके पार अगर कोई अहमीयत रखता था तो केवल बंदा। अगर कोई शक्ति सम्मान पाती थी तो केवल कृषक सेनाएँ।

बंदा की गतिविधियों से सब कुछ थर्रा उठा। मुगल राज्य के अस्तित्व को खतरा हो गया। मुगल बादशाह बहादुर शाह पंजाब जैसे सीमांत प्रदेश में हो रहे आंदोलन से परिचित था। वह इस कृषक विद्रोह को दबा देना चाहता था। उसने उत्तर भारत के सभी नाजिमों

तथा फौजदारों का इकट्ठा कर सिक्खों के विरूद्ध संघर्ष करने का आदेश दिया। 60,000 से सैनिकों सें भी अधिक सेना अमीन खान के नेतृत्व में भेजी गई। बंदा और उसके सैनिकों से निपटने के लिए वृद्ध बहादुर शाह को सेना लेकर उसने भिड़नें के लिए स्वयं मैदान में आना पड़ा। उसके साथ मेवात का प्रसिद्ध सरदार फिरौज खाँ मेवाती भी था। मुगल सेनापति फिरोजखान के नेतृत्व में कृषक सेनाओं को 26 अक्टूबर 1710 को करनाल तथा इन्द्री के बीच हराया। इसके अतिरिक्त तीसरी बार तरावड़ी के युद्ध में बंदा को हराया। तथा अमीनगढ़, थानेश्वर, करनाल, शाहबाद इत्यादि को जीतकर वहाँ मुगल सत्ता फिर से स्थापित की गई। ऐसे समय बंदा बहादुर अपने किले लौहगढ़ तरफ चला गया। बंदा नें अपनी सेना का पुर्नगठन किया सैनिकों को साहस देते हुए नये सिरे से मैदान में उतारा। 13 नवम्बर 1710 को बंदा की सेना नें शाही सेना कों जबरदस्त मात दीं, परन्तु शाही सेना की अधिकता के कारण उनका पलड़ा भारी रहा। बहादुरशाह नें विजयों से प्रसन्न होकर फौजदार खाँ को सरहिन्द का नया फौजदार बनाया। इस दौरान बंदा लुका-छिपीं का खेल खेलता रहा। इस समय बंदा बहादुर के सितारे गर्दिश में थे। मुगल सेनाओं ने मुखलिसगढ़ का घेरा डाला लेकिन बंदा अपने कुछ साथियों के साथ वहाँ से भागने में सफल रहा।

मुखलिसगढ़ की इस मुगल विजय के बंदा बहादुर को न तो निराश किया, न ही हतोत्साहित किया। शीघ्र ही उसने हुक्मनामे भेजने आरंभ कर दिए तथा पंजाब के किसानों को कीरतपुर के स्थान पर अपने झंडे के नीचे आने का आह्वान किया। शिवालिक की पहाड़ियों में बसे विलासफर को घुटने टेकने पर मजबूर किया गया जबकि कुल्लू, मण्डी तथा चम्बा के राज्य स्वयं ही आत्मसर्पण कर गए। बंदा की एक बार फिर से बढ़ती हुई शक्ति को देखकर बहादुरशाह उसे दबाने के लिए बाध्य हुआ। बंदा फिर पहाड़ो की तरफ चला गया। इस समय बादशाह को क्रोध वहाँ के निर्दोष जनता पर निकला और सिक्खों के कत्ले आम का आदेश दिया गया। इसी बीच 1712 में बहादुरशाह की मृत्यु हो जाती है तथा उसके बेटों में उत्तराधिकार का युद्ध शुरू हो जाता है। बहादुरशाह के उत्तराधिकारी जहादार शाह ने सरहिन्द को फौजदारी के लिए जैनूद्दीन को चुना तथा फौजदार खाँ को हटा दिया । इसी समय बंदा बहादुर नें अपनी शक्ति बढ़ाकर पंजाब में प्रवेश किया।

इस अवसर का फायदा उठाते हुए बंदा लौहगढ़ तथा सढेरा को जीतने के लिए आगे बढ़ता है। बंदा बहादुर न केवल उन्हें विजय कर लेता है बल्कि काफी समय तक उन्हें अपने पास भी रखा पाता है क्योंकि नये मुगल बादशाह जहाँदारशाह का भतीजा फर्रूखसियर विद्रोह कर देता है और 1711 में बंदा नें पठानकोट पर आक्रमण कर उस पर अपना कब्जा कर लिया। फर्रूखसियर बंदा बहादुर व उसके अनुयायियों को कुचलने के लिए कटिबद्ध था। तथा उसनें सिक्खों के विरूद्ध दमनकारी नीति अपनाते हुए अबदुस समद खाँ तथा उसके बेटे जकारिया खान को बंदा बहादुर को दबाने के लिए भेजता है। मुगलों की सेनाएँ इन दो सेनापतियों के नेतृत्व में बंदा को सढ़ोरा व मुखलिसगढ़ से खदेड़ने में सफल होती है तथा बंदा बहादुर को शिवालिक की पहाड़ियो में शरण लेनी पड़ती है। मुगल दरबार में इस विजय को जश्न के रूप में मनाया गया। इसे किसान विद्रोह का अंत माना गया तथा अबदुस समद तथा जकारिया खाँ को सम्मानित किया गया। लेकिन यह सामाजिक आदोंलन समाप्त नहीं हुआ था। एक बार फिर बंदा बटाला तथा कालानौर पर आक्रमण करता है तथा उसके कृषक व जाट अनुयायी रोपड़ पर आक्रमण करते है। फर्रूखसियर के

समय में बंदा बहादुर पुनः प्रकट हुआ और इस बीच सिक्खों में आपसी मत-भेद हो गए। ऐसे समय फर्रूखसियर एक बार फिर से अबदुस समद व जकारिया खाँ को इसे दबाने के लिए भेजता है।

बंदा बहादुर गुरदास-नांगल के स्थान पर एक गढ़ीनुमा किले में अपनी छावनी डालता है। इसके आस-पास सुरक्षा की दृष्टि से एक खाई खोदी जाती है तथा उसे पास का नहर से पानी काटकर भर दिया जाता है। इस समय बंदा व उसकी सेनाएँ चारों तरफ से शाही सेनाओं द्वारा घेरी जा चुकी थीं। रसद तथा मदद के सभी मार्ग कट चुके थे। इबरतनामा में मुहम्मद कासिम लिखते है कि क्रूर सिक्खों के बहादुरी व साहस के कारनामे आश्चर्यजनक थे। बीस, तीस के जत्थें में वे लोग अपने पशुओं के लिए घास काटने जाते और शाही मुगल सेना पर तीर तथा तलवारों से वार करते। यह घेरा आठ महीनों तक चला। बंदा बहादुर के पास राशन समाप्त हो गया। घिरे हुए सिक्खों ने कई महीनों तक घास, पत्तों, वृक्षों की छालों, अपने पशुओं के मांस तथा उनकी हड्डियों को पीस कर खाया। बंदा बहादुर ने खास सेनापति विनोद सिंह ने ऐसे समय भाग निकलने की सलाह दी। लेकिन बंदा बहादुर इसे मानसून तक खींचना चाहते थे ताकि मुगल सेनाएँ धीरज खो बैठें। लेकिन विनोद सिंह एक दिन रात के अँधेरे में पहाड़ों की तरफ चला गया। अबदुस समद नें छल एवं कुट नीति के द्वारा झूठा आश्वासन देकर की वह बंदा बहादुर की सिफारिश बादशाह से करेगा बंदा ने हथियार डाल दिए लेकिन 7 दिसम्बर 1715 को बंदा बहादुर ने बिना लड़े आत्म-समर्पण कर दिया। लगभग दो सौ बंदियों को तो वहीं मौत के घाट उतार दिया गया और जो बच गए थे उनको, बंदा बहादुर व उसके परिवार के साथ बंदी बनाकर पहले लाहौर तथा फिर दिल्ली लाया गया जहाँ उन्हें कत्ल कर दिया गया था। तथा 29 फरवरी 1716 को उनके कटे सिरों को भालों व लाठियों पर लटकाकर बंदा को जलूस में लाया गया। बंदा बहादुर से मुगल इतना अधिक भय खाते थे कि बंदी बनाने के बावजूद बंदा बहादुर को जंजीरों से बाँधकर लोहे के एक पिंजरे में बंद किया गया था व उसके पीछे नंगी तलवार लिए एक मुगल अधिकारी को बाँधा गया ताकि जैसे ही बंदा भागने की कोशिश करे वह तलवार उसे भोंक दी जाए। जकारिया खान के नेतृत्व में तथा मुगल सेनाओं के संरक्षण में यह जलूस दिल्ली की गलियों व बाजारों में निकाला गया। हरि राम गुप्ता के अनुसार दिल्लीवासियों के लिए यह एक तमाशा था। 'इबरतनामा' इस बात की गवाही देता है कि सिक्खों की भर्त्सना की गई, उनकी निंदा की गई, बुरे शब्द कहे गए, पर बंदा बहादुर प्रसन्नचित अपने धर्म ग्रंथों की वाणी का जाप करते रहे। बादशाह के आदेश से बंदा व उसके कुछ साथियों को किले में बंदी बनाया गया।

मुगल बादशाह बंदा से कुछ भी सूचना नहीं उगलवा पाया। तीन महीनों की यातनाओं के बाद अंत में 19 जून 1716 को बंदा बहादुर की आँखे निकाल ली गई तथा उसकी चमड़ी को चिमटों से उतार लिया गया। इस प्रकार इस महापुरूष की जीवन लीला समाप्त हो गई। इस हत्याकांड का आरम्भ बंदा बहादुर के पुत्र के टुकड़े-टुकड़े कर देने से हुआ। उसके कत्ल का हुक्म जारी किया गया। बंदा के सामने इस्लाम या मृत्यु का प्रस्ताव रखा गया, पर अपने मालिक का बंदा (गुलाम) उसकी रजा से कब डरने वाला था। उसको बड़ी भयानक यातनाएँ दे कर मारा गया। उसकी इस कुर्बानी की चर्चा करते हुए प्रसिद्ध इतिहासकार खूफी खाँ कहता है कि एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं था जो तनिक भी उदास हुआ

हों अथवा जिसनें सिक्खों की मर्यादा को ऊँचा न किया हो।

बंदा बहादुर के भूमिका की समीक्षा-

हिन्दुओं और सिक्खों के लिए बन्दा बहादुर महान् नेता था, जिन्होंने मुसलमानों के विरूद्ध शस्त्र उठाए और जिसने सरहिन्द में की गई गुरू गोविन्दसिंह के पुत्रों की हत्या का बदला लिया। मुसलमान लेखकों ने उसका वर्णन 'एक खूनी शैतान या निर्दय रक्त पीने वाले' के रूप में किया है। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि बंदा यूरोप के पटिल्ला या एशिया के चंगेजखाँ की तरह निर्दय आततायी नहीं था। प्रारम्भिक जीवन में वह एक सन्त था किन्तु केवल परिस्थितियों के उलट-फेर नें उसे पंजाब में मुगलों द्वारा किए गए घोर अत्याचार के विरूद्ध लड़ने के लिए बाध्य कर दिया। डाक्टर नारंग का मत है कि ''गुरू गोविन्दसिंह ने अपने अनुयायियों का ध्यान हल से तलवार की ओर मोड़ दिया। उन्होंने जो बीज बोया उसकी खेती बंदा ने कमाई। गुरू ने सिद्धान्त स्थापित किए और बंदा ने उन्हें कार्य में परिणत किया। गोविंदसिंह नें मुगलों के अत्याचार से फैले हुए आतंक का नाश किया और बन्दा ने इनकी शक्ति की अक्षुण्णता के विचार को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया।''

बंदा बहादुर एक असाधारण संगठनकर्ता था। डा0 गण्डसिंह के मतानुसार, ''पंजाब के निवासियों द्वारा स्वतन्त्रता और सफलता की राह खोज करने का पूर्ण श्रेय बंदा को ही है। पंजाब के मुगलों में असहनीय शासन को करारी चोट देने वाला और इस प्रदेश में सिक्खों द्वारा विजय का ड़ंका बजाने वाला प्रथम पुरूष बंदा ही था। बंदा बहादुर के महामानवीय कार्यो नें पंजाब के निवासियों में अत्याचार का विरोध करने और राष्ट्रीय ध्येय के लिए जीवन-मरण का संघर्ष करने की इच्छा और प्रेरणा संचारित की। बंदा शत्रु की अधिक सैन्य और सिक्खों द्वारा विश्वास-घात के कारण अपने कार्य में असफल रहा।''

कनिंघम के मतानुसार, ''सिक्ख बंदा की स्मृति को अधिक आदर की दृष्टि से नहीं देखते, वह अत्यंत गम्भीर प्रकृति का पुरूष रहा प्रतीत होता है। किन्तु अपने अनुयायियों से व्यक्तिगत सहानुभूति प्राप्त किए बिना भी उसकी आज्ञाएँ उसके साहसिक और तेजस्वी नेता होने के कारण अक्षरशः पालन की जाती थीं। सम्भवतः वह नानक और गोविंदसिंह द्वारा किए गए सुधारों के आधारों को भली भाँति नहीं समझ पाया। संकुचित धर्म-भावना उसके सारे जीवन पर पूर्णरूप से छाई हुई थी और उसने अपने हिन्दू-तपस्वी जीवन की शैली पर ही सिक्ख गुरूओं द्वारा बताये गए जीवन सिद्धान्तों में परिवर्तन करने की चेष्टा की। इर दूरदर्शितापूर्ण परिवर्तनों और नियमों का कट्टरपन्थी सिक्खों द्वारा विरोध किया गया, जिस कारण इस महान्, योग्य और कर्मठ नेता की समृति धुँधली पड़ती जा रही है।''

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. नौटियाल, विकास, आधुनिक भारत, दिल्ली, 2000 पृ. संख्या 180
2. वही, पृ. संख्या - 180
3. वही, पृ. संख्या - 180
4. सिंह एवं नारंग, भारत का मुस्लिम इतिहास (1000-1707) जालन्धर, पृ. 579
5. वर्मा एच.सी. मध्यकालीन भारत (भाग-2) दिल्ली, (2002) पृ. संख्या 786
6. शर्मा, एल.पी. मध्यकालीन भारत, आगरा (2006) पृ. 365
7. सिन्ध, विपिन बिहारी, मुगल भारत, दिल्ली (2005) पृ. संख्या 194
8. बाली, पी.एन., हिस्ट्री ऑफ मोहयलस

9. राय, हाकिम, लिजेन्द्र ऑफ लक्ष्मण दास, डिसीपल आपफ गुरु गोबिन्द सिंह
10. दिलगिर, हरजिन्दर सिंह, सिख तवारिख, (2008) अमृतसर
11. सिंह एवं नारंग, भारत का मुस्लिम इतिहास (1000-1709) जालन्धर, पृ. 579
12. वर्मा, एच.सी., मध्यकालीन भारत, दिल्ली (2002) पृ. संख्या 786
13. वही, पृ. संख्या - 786
14. यादव, के. सी. हरियाणाः इतिहास एवं संस्कृति (भाग-1) नई दिल्ली (1982) पृ. संख्या 334
15. सिन्हा, विपिन बिहारी, मुगल भारत दिल्ली (2005) पृ. संख्या 194
16. वर्मा एच.सी., मध्यकालीन भारत, दिल्ली (2002) पृ. संख्या
17. सिन्हा, विपिन बिहारी, मुगल भारत, दिल्ली (2005) पृ. संख्या 194
18. यादव, के.सी. हरियाणा : इतिहास एवं संस्कृति (भाग-1) नई दिल्ली (1982) पृ. संख्या 335
19. सिंह, तेजा ए सोर्ट हिस्ट्री ऑफ दी सिक्ख : 1469-1765, पटियाला (1999) पृ. संख्या 79
20. यादव, के.सी. हरियाणा : इतिहास एवं संस्कृति (भाग-1) नई दिल्ली (1982) पृ. संख्या 336
21. सिन्हा, विपिन बिहारी, प्राचीन एवं मध्यकालीन सिक्ख इतिहास, नई दिल्ली (1995) पृ. संख्या 510
22. सिंह एवं नारंग, भारत का मुस्लिम इतिहास (1000-1702) जालन्धर, पृ. 580
23. महाजन वी.डी., मुगलकालीन भारत, दिल्ली पृ. संख्या 273-274
24. शर्मा एल.पी. मध्यकालीन भारत, आगरा (2006) पृ. 365
25. वर्मा एच.सी., मध्यकालीन भारत (भाग-2) दिल्ली (2000) पृ. 788
26. यादव, के.सी. हरियाणा : इतिहास एवं संस्कृति नई दिल्ली (1982) पृ. संख्या 336
27. सिंह गुरबख्स द खालसा जनरल्स कनाडियन सिक्ख एवं टीचिंग सोसाइटी
28. सिंह एवं नारंग, भारत का मुस्लिम राज्य (1000-1707) जालन्धर पृ. 581
29. वही, पृ. संख्या - 581
30. शर्मा एल.पी. मध्यकालीन भारत, आगरा (2006) पृ. 365
31. जवान्डा, नाहर, ग्लिम्पस ऑफ, नई दिल्ली (2010) पृ. 9
32. यादव, के.सी. हरियाणा : इतिहास एवं संस्कृति नई दिल्ली (1982) पृ. संख्या 337
33. वही, पृ. संख्या - 337
34. जौहर, सुरेन्द्र द सिक्ख स्वार्ड टू पावर, एरसी पब्लिशर्स (2002) पृ. 27
35. सिंह, तेजा ए सोर्ट हिस्ट्री ऑफ द सिक्ख : 1469-1765, पटियाला (1999) पृ. संख्या 94
36. सिन्हा, विपिन बिहारी, मुगल भारत, नई दिल्ली (2005) पृ. 194
37. नारंग एवं सिंह, भारत का मुस्लिम राज्य (1000-1707) नई दिल्ली, पृ. 583
38. गिल, प्रीतम, हिस्ट्री ऑफ सिक्ख नेशन : पफाउफन्डर, असैसीनेशन, रिसैरेम्सन (1978) पृ. 279
39. सिन्हा, विपिन बिहारी, प्राचीन एवं मध्यकालीन सिक्ख इतिहास, नई दिल्ली (1995) पृ. संख्या 510
40. सिंह, तेजा ए सोर्ट हिस्ट्री ऑफ सिक्ख : 1469-1765, पटियाला (1999) पृ. संख्या 94
41. एच.सी. वर्मा
42. होयनर्ग डेल, स्टूडेन्टस वियानिका इण्डिया (वोल्यूम 1-5) दिल्ली (2000) पृ. 157
43. नौटियाल, विमाश, आधुनिक भारत, दिल्ली (2004) पृ. 180
44. दुग्गल, करतार, महाराजा रणजीत सिंह : द लास्ट टू ले आर्म, अभिनव पब्लिकेशन पृ. 41
45. सिंह, गण्डा, लाइपफ ऑफ बंदा बहादुर : वेस्सद ऑफ कंटमप्रेरी एंड ओरिजनल रिमार्ड- सिक्ख रिसर्च डिपार्टमेण्ट हिस्ट्री पृ. 229
46. महाजन, वी.डी. मुगलकालीन भारत, नई दिल्ली पृ. 274
47. सिन्हा, विपिन बिहारी, मुगल भारत, नई दिल्ली (2005) पृ. 195
48. महाजन, वी.डी. मुगलकालीन भारत, नई दिल्ली पृ. 275

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

गुप्तकालीन साहित्यिक स्रोतों के आधार पर नारियों का धार्मिक क्षेत्र में योगदान

* रक्षा सिंह

सारांश- प्रस्तुत शोध पत्र का विषय ''गुप्तकालीन साहित्यिक स्त्रोतो के आधार पर नारियों का धार्मिक क्षेत्र में योगदान'' भारतीय इतिहास के सार्थक पृष्ठो के आधार पर उकेरा गया एक नया विषय है। साहित्यिक स्त्रोतो के परिप्रेक्ष्य में भारतीय नारी की धार्मिक स्थिति का आंकलन वर्तमान युग की महती आवश्यकता मात्र इसलिए नहीं है कि नारी का इतिहास उपेक्षित और अधूरा रहा है वरन् इसलिए भी कि भारत जैसे प्राचीन और महान देश की सभ्यता और संस्कृति के निर्माण में नारी की धार्मिक भागीदारी का पृष्ठ उजागर करना आधुनिक नारी समाज के लिए प्रेरणापद रहेगा। मेरा यह शोध पत्र भी इतिहास के एक महत्वपूर्ण युग में नारी की धार्मिक स्थिति को प्रकाश में लाने की एक विनम्र चेष्टा है।

गुप्तकाल भारतीय इतिहास में अनेक विशिष्टताओं के लिए प्रसिद्ध है। एक ओर शासकों का शौर्य और पराक्रम उल्लेखनीय है दूसरी ओर उनकी सहिष्णुता और धर्म निरपेक्षता की भावना तथा कला, कौशल, साहित्य, संगीत के प्रति उनकी रूचि भी इस युग को सांस्कृतिक श्रेष्ठता प्रदान करती है। इस युग में नारी समाज में भी परिवर्तन आया। गुप्तकाल आध्यात्मिक पुनस्थान की नव किरण के आलोक से सुसज्जित था। इस युग में नारी को मात्र मांसलता के स्थान पर आत्मिक और अध्यात्मिक भी माना गया।

गुप्त युग में शांति और समृद्धि के वातावरण में उत्कृष्ट सहित्य की रचना हुयी। इसलिए इस काल को साहित्यिक दृष्टि से स्वर्णयुग भी माना जाता है। इस काल में कालिदास जिन्होने रघुवंशम्, कुमारसम्भवम्, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, विक्रमोर्वशीयम आदि ग्रन्थों की रचना के द्वारा तथा शूद्रक ने मृच्छकटिकम, एवं विशाखदत्त ने मुद्राराक्षसम तथा देवीचन्द्रगुप्त आदि ग्रन्थो की रचनाओं के द्वारा समकालीन समाज एवं संस्कृति का चित्रण प्रस्तुत किया है। अमरकोष तथा कामसूत्र इत्यादि ग्रन्थ भी गुप्तकालीन समाज का विवरण देते है। स्मृतियों, पुराणो को इस युग में अन्तिम रूप दिया गया। नारद, वृहस्पृति, कात्यायन इत्यादि विधि निर्माताओं ने हिन्दू समाज के मौलिक रूप का निर्धारण किया था। साहित्य समाज का दर्पण होता है। अतः गुप्तकालीन साहित्यिक रचनाओं के आधार पर हम समकालीन समाज में महिलाओं की धार्मिक स्थिति का अध्ययन कर सकते है।

गुप्तकालीन समाज में कोई भी धार्मिक अनुष्ठान पत्नी के बिना सम्पन्न नहीं होता था। वह यज्ञ एवं अन्य धार्मिक कृत्यों में पति का साथ देती थी। इसलिए वह धर्मपत्नी

* शोध छात्रा, प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति विभाग, एम.जे.पी. रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली

अथवा सहधर्मिणी मानी गयी।[1] नारियाँ धार्मिक वृत्ति से अपने सामाजिक एवं पारिवारिक दायित्व का निर्वाह करती थीं। बोधायन धर्मसूत्र के अनुसार विवाह एक धार्मिक संस्कार था।[2] यज्ञ, होम, मंत्र, पाठ देवी देवताओं के आवाहन तथा वेद मन्त्रो के साथ वैवाहिक क्रिया सम्पन्न होती थी। गुप्तयुग में विवाह को धार्मिक आधार पर पवित्र स्वरूप प्रदान किया गया। देवताओं का आवाहन करके वर और वधू का वैवाहिक बंधन अत्यधिक पवित्र, अटल, और अविच्छेद माना गया।

साहित्य से हमें पता चलता है कि गुप्तकालीन नारियों को धार्मिक संस्कारो के महत्व और जीवन उपयोगी भूमिका का ज्ञान था। गुप्तकालीन नारियों को गायत्री मन्त्र सिखाया जाता था। गुप्तयुग में कन्याओं को वेदाध्ययन करने की अनुमति की थी। अमरकोष में स्त्री शिक्षिका और वेदपारंगत कन्याओं का वर्णन मिलता है।[3] इस युग में स्त्रियाँ मन्त्रोचारण कर सकती थीं।

नारियाँ अपनी स्वभाविक प्रवृत्ति के अनुरूप पुरूषो की अपेक्षा धर्म के प्रति अधिक आकृष्ट होती थीं तथा ईश्वर में उन्हें अपार श्रद्धा थी। गुप्त युग में नारियां मूर्तिपूजा ईश्वरोपासना तथा गृहदेवी देवताओं की पूजा किया करती थीं। नारियां सभी प्रकार के कार्यो को करने से पूर्व देवी देवताओं का ध्यान किया करती थीं। वे व्रत करती थी तथा धार्मिक उत्सवों में भाग लेती थी। मृच्छाकटिकम् से हमें ज्ञात होता है कि चारूदत्त की पत्नी धूता ने रत्नषष्ठी का व्रत किया था तथा साथ ही साथ ब्रह्मभोज करवाया एवं ब्राह्मणो को दान भी दिया।[4] गुप्तकाल में विधवा नारी को धर्मानुकूल आचरण करना पड़ता था तथा उनसे ब्रह्मचारी जीवन की अपेक्षा की जाती थी। विष्णु धर्मसूत्र में कहा गया है कि विधवा ब्रह्मचर्य का पालन करे अथवा पति के साथ चिता का आरोहण करे।[5] धर्म से गिरने वाली विधवा अनादर की पात्र थी किन्तु धर्मयुक्त विधवा सर्वत्र सम्मान पाती थी।

अभिज्ञान शाकुन्तलम् से पता चलता है कि जिन कन्याओं को जन्म देकर उनके माता-पिता उन्हे ॠषिकुलो में छोड़ देते थे उन्हे ऋषिकन्या कहा जाता था। वह आश्रम में धर्म की शिक्षा ग्रहण करती थीं और धर्म साधना में लगी रहती थीं। कभी-कभी ऐसी कन्याओं का विवाह भी हो जाता था।

गुप्तकाल में नारियाँ साध्वियो एवं भिक्षुणियों के रूप में भी अपना जीवनयापन करती थी। अन्य सभी धर्मो की भांति उनकी जैन व बौद्ध धर्म में भी आस्था थी। साध्वियाँ और भिक्षुणियाँ वस्त्रों के अतिरिक्त आभूषणों का प्रयोग नहीं करती थीं। बौद्ध भिक्षुणियाँ बहुत कम संख्या में होती थीं। उनके वस्त्र नारंगी रंग के होते थे। उनका पूरा शरीर ढ़का हुआ होता था। कुछ नारियाँ बौद्ध धर्म ग्रहण करने के उपरान्त भिक्षुणीयों के रूप में विहारों में रहती थीं।

मृच्छकटिकम अष्टम् अंक के अंत में भिक्षु वसन्तसेना को अपने साथ विहार ले जाते हुए भिक्षुणी के विषय में कहता हैं।

एदशिश विहाले ममः धम्मर्वाहणि अचिट्टादि,
ताहिं शमश्शशिदमणा भविअ उवाशिआ गेहं गामेश्शादि।

अर्थात इस विहार में मेरी धर्म बहिन रहती है धैर्य धारण कर उस उपासिका के घर चले।[6] ऐसा कहकर भिक्षु ने बौद्ध धर्म का आदर्श स्थापित किया है। इन लोगो का जीवन बौद्ध धर्म केन्द्रो को समर्पित था। जैन भिक्षुणियों ने भी जैन धर्म में योगदान दिया। जैन

लोग व्यापार करते थे। उन्हे धन्य धान्य की कमी न थी उनकी महिलाओं ने सामान्य जनता के कल्याण के लिए भी चिकित्सालय, अनाथालय, उपवन आदि बनवाये। गुप्तकाल में नारी की शाक्ति रूप में उपसाना की जाती थी। हिन्दू धर्म के अन्तर्गत नारी शक्ति की उपासना दीर्घ काल से चली आ रही है। गुप्त काल में शक्ति उपासना की लोकप्रियता बढ़ गयी थी। रघुवंश में दिखाया गया है कि तांत्रिक संस्कृति की मूलधारणा ब्राहाण्ड के सर्जकों शिव और पार्वती तथा देवता में एकता की अभिन्नता अभिव्यक्त रहती है।[7]

पौराणिक साहित्य में देवी का विवरण दो रूपो में हुआ है। एक तो देवताओं की सहचरी शक्ति के रूप में यथा लक्ष्मी, सरस्वती, सीता, राधा, वैष्णवी इन्द्राणी आदि। दूसरे स्वतंत्र देवी के रूप में जो जगत की अधिष्ठाता के रूप में प्रतिष्ठित है और भक्तो द्वारा पूजित है। ऐसी देवियों में दुर्गा, काली, महालक्ष्मी आदि की उपासना एवं पूजा गुप्त समाज एवं परिवार में की जाती थी।

गुप्तकालीन साहित्य में श्री अथवा लक्ष्मी का उल्लेख भाग्य की देवी के रूप में हुआ है। यहाँ वे पद्य लिए हुए राज्यलक्ष्मी के रूप में वर्णित हैं।[8] गुप्तकाल के महाकवि कालिदास अपनी रचनाओं में लक्ष्मी को धन समृद्धि की देवी तथा कमल छत्र हाथ में धारण करने वाली राजलक्ष्मी के रूप में वर्णन करते है।[9] लक्ष्मी का कमल के साथ अटूट सम्बन्ध है इसलिए उन्हे कमल रूप वाली भी कहा गया है। लक्ष्मी का कमल धारण करने का अर्थ नारी का विवेकपूर्ण जीवन से माना जाता था।

कालिदास के विक्रमोर्वशीय में शेषशायी भगवान की चर्चा हुयी है जहाँ वे कहते है कि विष्णु के पास कमल पर बैठी हुयी लक्ष्मी उनका चरण गोद में रखकर दबाती है। उनके कमर में मेखला और सुन्दर रेशमी वस्त्र है। साहित्य में नारी का यह चित्रण नारी का अपने पति के प्रति सेवाभाव, प्रेम और समर्पण को दर्शाता है।

गुप्तकाल में लक्ष्मी प्रतिमा का बहुत महत्व था। इनकी प्रतिमा निर्माण में शास्त्रीय मान्यताओं का भी ध्यान रखा जाता था। साहित्यिक शास्त्रीय मान्यताओं के अनुसार जब वे हरि के समीप होती है तो उनका स्वरूप दो भुजी दिव्यारूपा, हाथ में कमल धारण किये हुये सभी आभूषणो से सुशोभित, गोरवर्ण, श्वेतवस्त्र पहने अप्रतिम रूप सम्पन्न होती थी।[10] जब वे स्वतंत्र होती है तो वे सिंहासन पर चार भुजायुक्त तथा अष्टदल कमलपूर्ण रूप से खिला रहता है। मत्स्यपुराण से हमें पता चलता है कि गंधर्वयक्ष तथा लोकपालो से स्तुति की जाती हुयी लक्ष्मी प्रतिमा भी बनायी जाती है।[11]

वैभव और समृद्धि की देवी लक्ष्मी की पूजा गुप्त काल में अत्यधिक की जाती थी। इस युग के साहित्य से ज्ञात होता है कि लक्ष्मी की उपासना धन प्राप्ति के लिए की जाती थी। अतः इस युग की नारियाँ लक्ष्मी के पूजन से अपने धर परिवार के लिए सुख समृद्धि की कामना करती थीं। गुप्तकाल में नारियाँ बुद्धि तथा ज्ञान की देवी सरस्वती की पूजा भी करती थी। सरस्वती मात्र विद्या और ज्ञान की ही नहीं अपितु नृत्य, गीत, वाद्य आदि की भी देवी हैं। विष्णुधर्मोत्तर पुराण में सरस्वती को चार भुजायुक्त एवं सभी आभूषणों से सुशोभित बताया गया है।[12] दो भुजाओं में वे पुस्तक तथा अक्षमाला धारण करती है दोनों बाएं हाथों में वीणा तथा कमण्डल रहता है।

गुप्तकाल में दुर्गा उपासना भी होती थी। दुर्गा शक्ति और क्रियाशीलता का प्रतीक मानी जाती है दुर्गा की पूजा गुप्तकाल में अनेक नामों से की जाती थी उनमें अम्बिका,

महिषासुर मर्दिनी, कात्यायनी, पार्वती, गौरी, भवानी, भगवती, मातृदेवी आदि है।[13] गुप्तकाल में दुर्गा का महिषासुर मर्दिनी का स्वरूप विशेष रूप से लोकप्रिय हुआ। विष्णुधर्मोत्तर पुराण में महिषासुर मर्दिनी का विस्तृत वर्णन मिलता है। पार्वती शिव की शक्ति है। कुमारसम्भवम् में शिवपत्नी को उमा, पार्वती, अम्बिका, गौरी आदि नामों से संबोधित किया गया है।[14] पार्वती की शिव के साथ पूजा करने से हमें पति के साथ पत्नी के महत्व का पता चलता है।

गुप्तकाल में नदियों को देवियों का रूप प्रदान किया गया और इन नदियों की पूजा लोकप्रिय थी। कालिदास ने अपने साहित्य में मकरवाहिनी, चामरधारिणी, कच्छपवाहिन, गंगा और यमुना का उल्लेख किया है।[15] नदियों के नारीकरण से भी हिन्दू धर्म के अनुसार स्त्री की सम्मानजनक स्थिति का पता चलता है। गुप्तकाल में प्राचीन काल की ही भांति यक्षिणी की सत्ता पर लोगों का विश्वास था।

महिलायें गुप्तकाल में धार्मिक मेलों और उत्सवों में जाती थी और सक्रिय भूमिका का निर्वाह करती थीं। वसंतोत्सव, दीपमालिका उत्सव इत्यादि धार्मिक समारोहों तथा पर्वो में स्त्रियां विशेष रूचि लिया करती थीं। मृछकटिक से हमें ऐसे उत्सवो का पता चलता है। इस युग के पश्चात् भी भारत की नारी अपने सिमित साधन और धार्मिक सामाजिक अवरोधों के बावजूद धार्मिक पूजापाठ व्रत त्यौहार, उत्सव, अनुष्ठान और धार्मिक क्रियाकलापों में व्यवस्त रहती थीं।[16] यदि कहा जाय कि भारतीय नारी ने भारतीय संस्कृति और धर्म को सुरक्षित बनाये रखा तो अतिश्योक्ति न होगी।

गुप्तकालीन कोई भी धर्म नारी शिक्षा का विरोधी नहीं था। समाज में यह विचार किया जाता था कि धार्मिक भाव के उदय होने पर ही स्त्रियाँ अपनी रक्षा स्वयं कर सकेगी इसलिए उनकी शिक्षा की धर्मानुकूल व्यवस्था की गयी थी। गुप्तकालीन महिलायें धर्म के आधार पर भेदभाव की शिकार नहीं थी। फिर भी नारी शोषण की निरन्तरता किसी न किसी रूप में व्याप्त थी वह दूसरे दर्जे की नागरिक थी। मन्दिरो में देवदासियों का शोषण मठाधीशो द्वारा होता था।

इस काल में प्रायः सभी धर्मो ने यथा हिन्दु, बौद्ध, जैन, शैव, शाक्त आदि ने नारी के आर्थिक अधिकारो का विरोध नहीं किया। आर्थिक अधिकारो के कारण ही स्त्रियाँ दान, भिक्षुओं को भोजन कराती थीं, तथा जनकल्याण के लिए तलाबों वनो का निर्माण कर पाती थीं। गुप्तकालीन महिलाओं ने धर्मगुरूओ के उपदेश देने के लिए उपवन और बगीचे लगवाये। नारियों ने अनेक कलात्मक तालाब, बाबड़ियाँ बनाकर सिंचाई के कृत्रिम जल श्रोतों के निर्माण में भी योगदान दिया। इनके निर्माण में धार्मिक एवं आध्यात्मिक भावना भी थी।[17] वृहस्पति ने लिखा है कि कोई नया तालाब बनवाये या पुराने तालाब को खुदवाकर उसका जीर्णेद्धार करवाये तो वह अपने समसत कुल का उद्धार करके स्वर्ग लोक में वास करता है।[18] इस प्रकार की धार्मिक भावना उस समय की धनी नारियों को कृत्रिम जल स्त्रोतों के निर्माण के लिए प्रेरित करती थी। यह भारत की परम्परा रही है कि महिलाये धार्मिक संप्रदायों को धन की सहायता करे और उनकी उन्नति में सहायक हो।

इस काल के साहित्य से पता चलता है कि स्त्रियाँ प्राचीन काल की भांति शुभ, अशुभ शकुनों पर विश्वास करती थी। वे दाहिनी आँख का फड़कना अशुभ मानती थीं तथा बायीं आँख का फड़कना शुभ। अभिज्ञान शाकुन्तलम से ज्ञात होता है कि शकुन्तला

भी इस प्रकार के अपशकुन को देखकर विचलित हो जाती थी।[19]

फाह्यान ने भारतीय महिलाओं की प्रशंसा की है और उनकी धार्मिक रूचि को लाभदायक माना है। क्योंकि वे धार्मिक वृत्ति के कारण ही जनकल्याण के कार्य करती थीं। गुप्तकाल में रानियों का जीवन वैभव से परिपूर्ण था। रानियाँ अपने धन को जन कल्याण के कार्यो में लगाती रहती थीं। परिवार में नारी को उसकी आध्यात्मिकता के कारण सम्मान मिलता था।[20] महिलायें अपने धर में भी धर्मिक वातावरण बनाये रखती थी तथा अपने बच्चो को भी वे धर्म में संस्कारित करती थीं।

गुप्त समाज में सभी महिलायें एक सी नहीं थी पर अधिकांश अध्यात्मिक प्रवृत्ति की थी। जहाँ आध्यात्मिकता का अभाव था वहाँ विषमताएं उत्पन्न हो जाती थी। जिसे समकालीन धर्मगुरू उपदेशो के माध्यम से पुनः वही परम्परागत धर्म स्थापित करके सही मार्ग पर लाते थे। गुप्त युग में महिलायें धार्मिक तो थी परन्तु कोई भी धर्म उपदेशक नहीं हुई। अधिकतर महिलाओं का जीवन परम्परागत शैली में व्यतीत होता था।

गुप्तकालीन नारी समाज का आदर्श सीता, सावित्री, अहिल्या के थे वे इन्ही की तरह त्याग तपस्या और दया की परममूर्ति बनाना चाहती थीं। इन आदर्शों को नारी ने अपने अन्दर स्वेच्छा से समाहित किया था। अभिज्ञान शाकुन्तलम में शकुन्तला ने दुष्यन्त के लिए इंतजार किया था। कालिदास ने अपने ग्रन्थ में भी कहीं भी ऐसा चित्रण नहीं किया है जिससे नारी की धार्मिक दशा गिरती प्रतीत हो। गणिका और वेश्या भी धार्मिक होती थीं। गणिका वसन्तसेना के घर मन्दिर था।

स्त्रियों की संगीत में भी रूचि थी और वे भक्ति गीतों की भी रचना करती थीं। वात्सायायन के कामसूत्र से ज्ञात होता है कि स्त्रियाँ जहाँ लौकिक गुणों में प्रशिक्षित की जाती थी वहीं उन्हें अध्यात्म की शिक्षा भी मिलती थी।[21]

वस्तुतः गुप्तयुग में नारी की धार्मिक क्रियाओं में समान रूप से भागीदारी थी। वह अध्यात्म को अपनाकर अपनी आत्मा को पराकाष्ठा पर पहुँचाना चाहती थी। यदि सत्य कहा जाये तो नारी ही वह धुरी थी जो अपने परिवार को धर्म से जोड़कर और धार्मिक अनुष्ठानों को पारिवारिक स्तर पर करने के बाद पूरे समाज को आदर्श प्रदान करती थी।

संक्षेप में गुप्तकालीन प्रचलित धर्म नारी को आदर्श जीवन व्यतीत करने पर बल देते थे और नारियाँ भी अपना जीवन धर्मानुसार ही व्यतीत करती थीं जैसा की धर्म की निर्देश होता था तथा उसी प्रकार आचरण व्यवहार करती थीं और भारतीय संस्कृति के आदर्शो का अनुपालन करती थीं।

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. पारस्कर गृहयसूत्र-(सं0महादेव गंगाधर बाक्टि), बम्बई, 1917 (1,8,8)
2. बौधायन धर्मसूत्र-(हिन्दी व्याख्या, डा0 उ0चं0पाण्डेय), वाराणसी 1966, (2,6,29)
3. गुप्तकाल में नारियों की स्थिति-डा0 अन्विता अस्थाना, राधापब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1982, पृ0-42
4. मृच्छकटिक शास्त्रीय, सामाजिक एवं राजनीतिक अध्ययन-डा0 शालग्राम द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 1982, पृ0-176
5. विष्णु धर्मसूत्र-(सं0 उ0 च0 पाण्डेय) चौखमबा, संस्कृत सीरीज वाराणसी, पृ0 (20,29) (25-14)
6. मृच्छकटिकम्-रामानुज ओझा, वाराणसी, 1966 अंक (8-10)

7. प्राचीन भारत में नारी-उर्मिला प्रकाश मिश्र, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, प्रथम संस्करण, 1987, पृ0-138।
8. रघुवंशम्-(अनु0) श्रीकृष्ण त्रिपाठी, वाराणसी, 1944, (4,12:4,15:4,16)
9. कुमारसम्भवम्-कालिदास, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1927-पृ0-(7,89,:14,3)
10. विष्णु धर्मोत्तर पुराण-(सं0) बेंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई, तृतीय खंड अंक-82, श्लोक (2,8)
11. मत्स्यपुराण-(सं आनंद आश्रम संस्कृत सीरीज), पूना, 1907, अध्याय-30, श्लोक (40-47)
12. उत्तर भारत की प्राचीन हिन्दू देवी मूर्तियां-डा0 कुसुम जायसवाल, आत्माराम खण्ड संस, दिल्ली, 1992, पृ0-74
13. गुप्तकालीन हिन्दू देव प्रतिमाएं-डा0 श्री भगवान सिंह, रामानन्द विद्याभवन, प्रथम संस्करण, नई दिल्ली, 1982, पृ0-76
14. कुमारसम्भवम्-वही, (1,26:, 1,43(8, 27)
15. कुमारसम्भवम-वही (7,42)
16. मृच्छकटिकम्-वही, अंक-4
17. द इकोनोमिक लाइफ ऑफ नार्दन इण्डिया इन गुप्ता पीरियड-एस0के मैत्री, कलकत्ता, 1961, पृ0-117
18. वृहस्पति स्मृति-(सं रंगास्वामी आयंगर) गायकवाड, ओरिएण्टल सीरीज, बड़ौदा, 1941, (1,62)
19. प्राचीन भारत में नारी-डा0 उर्मिला प्रकाश मिश्र, वही, पृ0-(130, 131)
20. बौधायन धर्मसूत्र-वही, (2,2,41)
21. कामसूत्र-वात्सयायन, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1990, पृ0-(4,1,33)

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

जल जनित रोग मलेरिया का भौगोलिक अध्ययनः मंडला जिले के विशेष संदर्भ में

* जे0 श्याम
प्रतिमा संत, * नागमणि मानिकपुरी

सारांश- आज समग्र विश्व जल जनित समस्याओं से त्रस्त है। हेल्थ रिपोर्ट 2000 के अनुसार भारत में होने वाली दो तिहाई बीमारियां प्रदूषित जल से होती है। इस देश में निवास करने वाला हर दूसरा व्यक्ति किसी-न-किसी रोग से पीड़ित है। जल जनित रोगों में मलेरिया संसार के प्रत्येक भाग में पाई जाने वाली संक्रामक बीमारी है। यह''मादा एनाफिलीज'' मच्छर के काटने से होती है क्योंकि इसका कारक''प्लाज्मोडियम प्रोटोजोआ'' इसी मच्छर के शरीर में परजीवी के रूप में रहता है। मलेरिया चार प्रकार के परजीवियों द्वारा होता है-(अ) प्लाजमोडियम वायवेक्स (ब) प्लाजमोडियम फेल्सपेरम। (स) प्लाजमोडियम आवेल। (द) प्लाजमोडियम मेलेरिए। विश्व भर में प्लाजमोडियम वायवेक्स का प्रचलन अधिक है, जो कि हर दूसरे दिन ज्वर उत्पन्न करता है, जबकि प्लाजमोडियम फेल्सीपेरम प्रतिदिन ज्वर उत्पन्न करता है। प्रस्तुत अध्ययन में जल जनित रोग मलेरिया का मानव स्वास्थ्य पर प्रभावों का आंकलन करना है।

मुख्य शब्द– मलेरिया, जल जनित रोग, स्वास्थ्य, प्रभाव।

अध्ययन क्षेत्र- आदिवासी जिला मंडला भारत के मध्य एवं मध्यप्रदेश राज्य के दक्षिण-पूर्व में स्थित है। मंडला शब्द संस्कृत के मंडल शब्द से बना है। सतपुड़ा पर्वत के अंचल में नर्मदा की गोद में स्थित मेकल श्रृंखला में बसा यह जिला जबलपुर संभाग के अंतर्गत आता है। समुद्र तल से जिले की अधिकतम उंचाई 887 मी0 तथा न्यूनतम 443 मी0 तक है। इसका अक्षांशीय विस्तार 22 डिग्री 12 मि0 से 23 डिग्री 22 मि0 व देशांशीय विस्तार 80 डिग्री 1 मि0 से 81 डिग्री 50 मि0 पूर्वी देशांश तक है। नर्मदा नदी इस जिले के मध्य से प्रवाहित होती है। यह संपूर्ण क्षेत्र सतपुड़ा क्षेत्र का हिस्सा है, जो मैकल पठार के नाम से जाना जाता है। इस जिले का विस्तार 8771 वर्ग कि0मी0 में पाया जाता है। अध्ययन क्षेत्र मंडला जिले की उत्तर से दक्षिण लम्बाई 133 कि.मी. और पूर्व पश्चिम 182 कि.मी. चौड़ाई 182 कि.मी. है। नर्मदा नदी इस जिले के मध्य से प्रवाहित होती है। क्रमशः उत्तर में जबलपुर, दक्षिण में बालाघाट, पूर्व में डिण्डौरी एवं कवर्धा (छत्तीसगढ़ राज्य का),

* सहायक प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय महा0, पुष्पराजगढ़, अनूपपुर म0प्र0 (भारत)
** अतिथि विद्वान, भूगोल, शासकीय महा0, पुष्पराजगढ़, अनूपपुर म0प्र0 (भारत)
*** सहायक प्राध्यापक, शासकीय स्नातकोत्तर महा0, बुढ़ार, शहडोल म0प्र0 (भारत)

पष्चिम में सिवनी जिला स्थित है।

अध्ययन का उद्देश्य एवं विधि तंत्र- प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य क्षेत्र में प्रदूषण प्रभावित जल स्रोतों एवं ग्रामों तथा जल जनित मलेरिया रोग का भौगोलिक अध्ययन करना है। अध्ययन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए जिला चिकित्सालय, जिला मंडला, जिला मलेरिया कार्यालय, जिला मंडला से द्वितीयक आंकड़ों एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार विधि के द्वारा प्राथमिक समंक से प्राप्त किये गये हैं। अध्ययन के उद्देश्यों की स्पष्टता के लिए समंकों का सारणीयन कर सामान्य व्यवहारिक सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग कर समंकों का विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र में मलेरिया- अध्ययन क्षेत्र आदिवासी बाहुल्य है और विकास की दृष्टि से बहुत पिछड़ा क्षेत्र है, जनसंख्या वृद्धि, स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव, साक्षरता की कमी, गरीबी, जल की गुणवत्ता में कमी, जल निकासी का उचित प्रबंधन न होना, स्वच्छता का अभाव तथा जागरूकता में कमी आदि के कारण मंडला जिला विभिन्न जल जनित रोगों से ग्रसित है। प्रस्तुत शोध में जल जनित रोग मलेरिया का भौगोलिक अध्ययन किया गया है, जिसमें अध्ययन क्षेत्र मलेरिया से ग्रसित है, जिसका विवरण निम्न सारणी में दिया गया है।

मंडला जिले में मलेरिया से प्रभावित रोगियों की संख्या सन् 2007-2014

क्रमांक	सन्	मलेरिया से ग्रसित कुल व्यक्तियों की संख्या
1	2007	4584
2	2008	3201
3	2009	2519
4	2010	2556
5	2011	1994
6	2012	1044
7	2013	1034
8	2014	363

स्रोतः जिला चिकित्सालय, मंडला से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित।

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि सबसे अधिक मलेरिया से ग्रसित कुल व्यक्तियों की संख्या 2007 में जो कि 4584 है और सबसे कम 2014 में है। दिये गये आंकड़ों के अध्ययन से 2007 से 2014 तक मलेरिया प्रभावित रोगियों की संख्या में कमी आई है।

मंडला जिले में मलेरिया से प्रभावित रोगियों की संख्या सन् 2007-2014

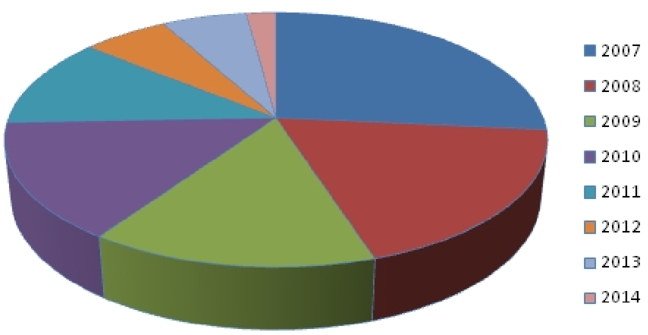

मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव-

* इसमें तेज ठंड के साथ बुखार आता है तथा थोड़ी देर बाद पसीना आकर बुखार उतर जाता है।
* इसमें बुखार एक दिन छोड़कर आता है।
* उल्टी और पूरे शरीर में दर्द होता है।
* रोगी को प्यास अधिक लगती है, चेहरा लाल हो जाता है।
* लीवर तथा प्लीहा में सूजन आ जाती है।
* गंभीर अवस्था में यह खून की कमी का कारण बनता है।

इस प्रकार जल जनित रोग मलेरिया का मानव के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है और स्वास्थ्य संबंधी अनेक समस्याएं उत्पन्न होती हैं, जिससे मानव की कार्यक्षमता प्रभावित होती है और जिससे उनके जीवन-स्तर और आय प्रभावित होती है।

मनुष्य जीवन का ऐसा कोई भी हिस्सा नहीं है जो प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से मलेरिया से प्रभावित न होता हो। हमारे जीवन स्तर को भी विभिन्न दृष्टिकोणों से मलेरिया प्रभावित करता है। गरीबी को बढ़ाता है, खाद्य पदार्थ की मात्रा और गुणवत्ता पर असर डालता है, रहन-सहन के स्तर को प्रभावित करता है, और राष्ट्रीय उन्नति तथा आर्थिक प्रगति में बाधा उत्पन्न करता है।

अध्ययन क्षेत्र में स्वास्थ्य सुविधाएं एवं योजनाएं-

भारत शासन ने 1953 में मलेरिया की रोकथाम के लिये राष्ट्रीय मलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम आरंभ किया। इस कार्यक्रम को आशा से अधिक सफलता प्राप्त हुई। 1953 में मलेरिया से पीड़ितों की संख्या 7.5 करोड़ थी जो 1958 में घटकर 20 लाख ही रह गई। इस परिणाम के आधार पर भारत सरकार ने 1958 में मलेरिया उन्मूलन के लिये एक नया महत्वकांक्षी कार्यक्रम प्रारंभ किया-'' राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम''। स्वस्थ एवं समृद्ध प्रदेश के लिए मध्यप्रदेश शासन द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति के लिए ''संपूर्ण स्वास्थ्य सबके लिए'' के उद्देश्य से कार्ययोजना प्रदेश में दिनांक 16 मई 2012 से लागू की गई है। इसमें समुदाय को प्रेरित कर उनकी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने पर विशेष ध्यान दिया गया है। भारत शासन एवं राज्य शासन द्वारा संचालित की जा रही विभिन्न स्वास्थ्य योजनाएं एवं कार्यक्रम आशा, ग्राम सभा स्वस्थ ग्राम तदर्थ समिति, दीनदयाल चलित अस्पताल, राष्ट्रीय वैक्टर जनित रोग नियंत्रण कार्यक्रम, मलेरिया सर्वेलेन्स कार्य, जैविक नियंत्रण (पर्यावरण मित्र) उपाय,मच्छरदानी के उपयोग को प्रोत्साहन, कीटनाशी दवा छिड़काव कार्य, प्रचार-प्रसार, एकीकृत रोग निगरानी परियोजना (आई.डी. एस.पी.), रोगी कल्याण समिति-कायाकल्प योजना, साफ-सफाई इसका मुख्य आधार होगा। इससे समुदाय ग्राम हेतु विभिन्न स्वास्थ्य कार्यक्रमों, योजनाओं तथा अन्य समस्याओं के निराकरण हेतु ग्राम स्वास्थ्य एवं स्वच्छता समिति के माध्यम से कार्ययोजना तैयार कर उसका गुणवत्तापूर्ण क्रियान्वयन करेगा।

अध्ययन क्षेत्र मंडला जिला उपरोक्त सभी मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम से लाभान्वित हुआ है। जिले में में मलेरिया निरोधक औषधि का वितरण सारणी से स्पष्ट है:-

मंडला जिले में मलेरिया निरोधक औषधि का वितरण वर्ष- 2013

क्रमांक	दवा का नाम	कुल उपलब्ध	वर्ष 2013 में खर्च	कुल शेष
1	क्लोरोक्वीन	1580154	1488115	92039
2	प्राइमाक्वीन 2.5	43872	14442	29430
3	प्राइमाक्वीन 7.5	60122	11240	48882
4	सल्फार्डॉक्सीन पाइरीमिथामिन गोली	0	0	0
5	इंजेक्षन आर्टीथर	1843	1325	518
6	इंजेक्षन क्वीनीन डाइ हाइड्रोक्लोराइड	0	0	0
7	ए,सी,टी, ब्लिस्टर पैक 0–1 आयुवर्ग	469	239	230
	1–4 आयुवर्ग	2463	761	1702
	4–8 आयुवर्ग	458	228	230
	8–14 आयुवर्ग	474	474	0
	14 से अधिक आयुवर्ग	1988	1378	610
8	क्वीनीन सल्फेट गोली	0	0	0
9	रेपिड टेस्ट किट पी,एफ,	182900	116907	65993
10	डी,ई,सी, गोली	0	0	0
11	अल्बेंडाजोल गोली	0	0	0
12	अन्य	0	0	0

स्रोतः जिला मलेरिया अधिकारी, जिला मंडला।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. प्रो.कैलाश चौबे, स्वास्थ्य देखरेख व्यवस्था का निष्पादन, अध्याय 9, स्वास्थ्य चिकित्सा भूगोल
2. राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन, भोपाल मध्यप्रदेश।
3. स्वास्थ्य चिकित्सा भूगोल, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, प्रथम संस्करण 2001, पृष्ठ-174-175,
4. राज्य स्वास्थ्य समिति ' एवं राज्य स्वास्थ्य सूचना शिक्षा संचार ब्यूरो संचालनालय स्वास्थ्य सेवाऐं म0प्र0 द्वारा जारी
5. 13.P.v. Barde, M.K.Shuka, B.K.Kori,G.Chand,L.Jain,B.M.Varun.D.Dutta,K.Baruah & Neeru Singh, Emergence of Dengue in tribal villages of mandla district, M.P., India May 2015, P.584-590.
6. जिला गजेटियर, म0प्र0 भोपाल 1992, पृष्ठ, 6-7,
7. सेहत की बात,स्वास्थ्य संवाद, अक्टूबर 2013ए पोलियो :पोलियो से शिशु का बचाव, पेज नं0 14
8. प्रो.कैलाश चौबे, विश्व स्तर पर प्रमुख रोगों का विवरण, अध्याय 7, स्वास्थ्य चिकित्सा भूगोल, म.प्र,. हिंदी ग्रंथ अकादमी ,प्रथम संस्करण 2001, पृष्ठ-115-116,
9. जिला चिकित्सालय, मंडला।
10. जिला विकास पुस्तिका, जिला मंडला।
11. जिला मलेरिया अधिकारी, जिला मंडला।

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

राम काव्य में नारी चरित्र

* मंजरी अवस्थी

_सारांश_- भारतीय पौराणिक कथाओं में रामकाव्य का विशेष महत्व रहा है। इसका सूत्रपात वेदों से माना जाता है। उत्तरकालीन उपनिषदों में भी रामकाव्य की झलक मिलती है। बाल्मीकि ने भी पौराणिक साहित्य को ही अपनी रामायण का आधार बनाया है। भारत की विभित्र भाषाओं तथा विदेशों में भी साहित्य रचना हुई है। भारतीय भाषाओं के प्रमुख काव्यकारों में आदि कवि बाल्मीकि, महर्षि व्यास, भवभूति, कालीदास, चन्द्रबरदाई, गोस्वामी तुलसीदास शाखदास,, मोरापंत, एकनाथ, केशवदास, सेनापति, पद्‌माकर थे तथा मध्य युग में मेथिल शरण गुप्त, हरिऔध आदि कवि मनीषियों ने रामकाव्य के रूप में साकेत, पंचवटी, वैदेही वनवास आदि की रचना की है। रामकाव्य में जिन नारी पात्रों का विवरण प्रस्तुत हुआ है उनका योगदान किसी न किसी घटना से संबद्ध होकर रामकाव्य की विशेषता को उजागर करता है।

मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम का चरित्र भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का जीवन्त प्रतिबिम्ब है। रामकथा के समस्त पात्र महिमा मण्डित है। निगुर्ण व सगुण भक्ति परम्परा के साधकों ने उनकी गुण गाथा का बखान किया है। कबीर ने श्री राम को निगुर्ण ब्रह्म के रूप में स्वीकारते हुए उनकी अध्यात्म छवि को उजागर किया है कबीर कहते हैं -

दशरथ सुत तिहुं लोक बखाना, राम नाम का मरम न जाना ।।

संत तुलसीदास ने भी श्री राम को कल्पतरू के समान घोषित करते हुए उनके रूप लीला और आदर्शो का बखान किया है। नामु राम को कल्प तरू, कवि कल्याण निवासुष्साकेतकार ने राम के चरित्र का चित्रण करते हुए कहा हैं कि -

राम तुम्हारा व्रत स्वयं काव्य है कोई कवि बन जाए सहज सम्भाव्य है।

वैदेही वनवास में कवि हरिऔध ने जानकी की व्यथा कथा का वर्णन प्रस्तुत किया है। रामकथा के समस्त पात्र हमारी सांस्कृतिक परम्पराओं को महिमा मण्डित करने वाले हैं। समस्त रामकाव्य ग्रंथों में नारी पात्रों की विशिष्ट भूमिका प्रस्तुत की गई है। रामकथा में सीता, कौशल्या, कैकई, उर्मिला, माण्डवी, मंदोदरी, श्रुतकीर्ति, मंथरा त्रिजटा, सबरी आदि का भव्य रूप प्रस्तुत किया गया है।

सीता- पंचवटी में गुप्त ने सीता के आदर्श स्वरूप का वर्णन करते हुए लिखा है -

नारी के जिस भव्य भाव का, स्वाभिमान भाषी हूं मैं, उसे नरों में भी पाने का उत्सुक अभिलाषी हूँ मै।।

रामकाव्य परम्परा में भारतीय नारी भावना का सर्वात्कृष्ट दर्शन सीता के पावन

* सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, इटारसी (म.प्र.)

चरित्र में होता है। वह अत्यधिक विनयशील, सहिष्णु, संयमी, पतिव्रता,लज्जशील,मर्यादित एवं कर्तव्यनिष्ठ बनकर प्रस्तुत हुई है। पत्नी के धर्म का निर्वहन करते हुए राम द्वारा वन गमन के समय साथ नहीं चलने के प्रस्ताव को निरस्त करते हुए कहा है -

प्राणनाथ! तुम्ह बिनु जग माही, मो कहे सुखद कतई कुछ नाही,
जिय बिन देह नदी बिन वारी सो सिय नाथ पुरूष बिन नारी।।

जनक नन्दिनी सती शिरोमणि सीता का आदर्श आर्य संस्कृति की आत्मा है। वैदेही वनवास में सीता के चरित्र को उद्घाटित कर कवि हरिऔध ने नारी की महिमा उसके त्याग और शौर्य को उजागर करने का लक्ष्य प्रतिपादित किया है। जीवन साधना द्वारा पति-पत्नी की सहभागिता के आदर्श प्रस्तुति के साथ मर्यादा और स्वाभिमान की रक्षा के लिए सर्वस्व परित्याग के लिए तत्पर बैठी है।

सुख वासना, स्वार्थ की चिन्ता। दोनों से मुॅह मोडुंगी,
लोकाराधन या प्रभु अराधन निमित्त सब छोडुंगी।।

भारतीय नारी के चरित्र में जितने गुण होने चाहिए वह सीता के जीवन में सम्मिलित है। साध्वी सीता ने जीवन पर्यन्त पूर्ण निष्ठा और समर्पण भाव से मर्यादा पूर्वक पति धर्म का निर्वाह कर एक चरित्रवान नारी का आदर्श प्रस्तुत किया है। भारतीय संस्कृति में पति - पत्नी का एक दूसरे से अन्योन्याश्रित संबध है। जगदम्बा जानकी एक आदर्श पत्नी के रूप में प्रस्तुत है। श्रीराम द्वारा वन में नहीं चलने के प्रस्ताव पर सीता पूर्ण रूपेण असहमत रहती है।

वह कहती है। प्राण नाथ तुम बिनु जग माही मो कहुं सुखद कतहुं कछु नाहीं। सीता जब अशोक वाटिका में थी तब भी रावण के साम, दाम, दण्ड, भेद आदि उपायों से वह विचलित नहीं हुई। उस समय केवल श्रीराम का ही ध्यान रखा।

तृण धरि ओट कहती वैदेही, सुमिरि अवधपति परम सनेही,
सुनु दस मुख खद्योत प्रकासा, कबहुं कि नलीनी करई विकासा।

जग जननी सीता न केवल पतिव्रता नारी ही थी, अपितु उसमें त्याग, सेवा शील और सौजन्य की पराकाष्ठा रही है। वह श्रम साध्य जीवन व्यतीत करने में भी गौरव का अनुभव करती है। यथा -

औरों के हाथों यहॉ नहीं चलती हूं अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूं।

लोकापवाद के कारण निर्वासित होने के बाद भी अपनी सहिष्णुता को बनाये रखा व श्रम भाव से सब कुछ सहन करते हुए भी पति को दोषी नहीं ठहराती है। हनुमान जी जब लंका में सीता को पहचान लेते हैं तभी उनके मुख से व्यक्त होता है। दुष्कर कृतवान् रामों हीनों यदनया प्रभुः धारयत्यात्मनो देहं न शोकेनावसीदति।

कौशल्या- माता कौशल्या उदारमना, सहृदया और कर्तव्यनिष्ठ नारी है। राम के वन गमन के समय यद्यपि कौशल्या का हृदय द्रवित हुआ था फिर भी श्री राम के कर्तव्य पथ के अग्रसर होने पर वह बाधक नहीं बनी। राम के वनवास जाने के समाचारों से अगवत होने पर वह कहती है।

इदं तु दुःखं यदनर्थकानि में व्रतानि दानानि च संयमाश्च हि।
तपश्च तप्तं यदपत्य काम्यया सुनिष्फल बीज मिवोत मूषरे।।

भरत के कारण राम को चौदह वर्ष का वनवास भागना पड़ा फिर भी वह भरत के

प्रति स्नेहासिक्त रह कर अपने कर्तव्य का पूर्ण रूपेण निर्वहन करती है। उसके मातृत्व में किसी की भी प्रकार का अंतराल उपस्थित नहीं हुआ। वह भरत को ही रामरूप स्वीकार कर अपने हृदय की विशालता प्रकट करती है -

खींच उनको, पले गोद, हृदय लिपटाया,
बोल तुमको पा पुनः राम को पाया।।

सुसंस्कृत उदारमना माता कौशल्या की छाया तले बैठकर श्रीराम ने जो संस्कार अर्जित किए हैं उसे मानस कार ने इस प्रकार व्यक्त किया है।

जौं केवल पितु आयेसु ताता। तौ जनि जाहु जानि बड़ी माता।
जौं पितु मातु कहेउ बन जाना। तौ कानन सत अबध समाना।।

कौशल्या मातृत्व भाव से परिपूर्ण थी। कैकयी के प्रति कभी सौत का व्यवहार न कर उसे अपनी बहन का सम्मान दिया। भरत और राम को सदैव समभाव से देखा। पति की मृत्यु के बाद उसने सती होने का प्रस्ताव रखकर अपने शील स्नेह, उदारता, त्याग, समपर्ण का आदर्श प्रस्तुत किया है। राजेन्द्र कुमार सिंघवी लिखते है - वस्तुतः कौशल्या दया, माया, ममता की मंदाकिनी है। तप त्याग एवं बलिदान की अकथ कथा हैश्३।

कैकयी- कैकयी का पुत्र भरत के प्रति असीम स्नेह है इसीलिए वह सबकुछ सहन करने पर भी भरत के लिए राज्य प्राप्ति की अभिलाषा करती है। भरत द्वारा राज्य सिंहासन का त्याग कर जो निस्वार्थ भाव प्रकट किया है वह स्तुस्य है। वहीं कैकयी का पश्चाताप फूट पडता है।

तेरे हित मैनें हृदय कठोर बनाया, तेरे हित मैंने राघव वन भिजवाया।।
तेरे दिल में बनी कलकिंनी नारी, तेरे हित समझी गई महा हत्यारी।।

वह हताशा व निराश होती है तथा समस्त उपेक्षाओं को सहन करते हुए भी मातृत्व की आकांक्षा रखती है वह कहती है कि -

थूंके मुझ पर त्रैलाक्य भले ही थूके, जो कोई जो कह सके, कहे, क्यों चूके?
छीने न मातृपद किन्तु भरत का मुझसे, हे राम दुहाई करूँ और क्या तुझ से।

वाल्मीकि की कैकयी व्याघ का क्रूर बाण है, मानस की कैकयी का शाप पथ वाहक है लेकिन साकेत की कैकयी ममतामयी माता है जिसका जीवन मूल्यों के प्रति गहन राग है। कैकयी को अपने कृत्य पर अत्याधिक दुःख होता है। वह पश्चाताप करती है। साकेतकार ने तो उसके कंलकित चरित्र को भी उज्जवल व श्रेष्ठ बताया है। डॉ उमाकांत गोयल के मतानुसार साकेत के अध्ययन के पश्चात कैकेयी के प्रति युगानतर का घनीभूत मालिन्य निःशेष रह जाता है। कैकयी अपने आप को कोसती है। अपने मातृत्व भाव से उसने जो अपराध किया है। वह सर्वथा अक्षमय निन्दनीय है फिर भी वह कहती है -

युग-युग तक चलती रहे यह कठोर कहानी। रघुकुल में भी थी एक अभागिन रानी।
निज जन्म - जन्म में जीव सुने यह मेरा, धिक्कार! डसे था महास्वार्थ ने घेरा।

रामकाव्य को समस्त प्रासंगिक घटनाओं में कैकयी प्रमुख धुरी के रूप में प्रसतुत हुई है। पुत्र मोह में कैकयी ने राम को वनवास भेज कर अपने स्वार्थ का ही परिचय दिया किन्तु कवि मनीषियों ने कैकयी के इस कृत्य को लोक हिताय मानते हुए उसकी इस दूरदार्शिता कि सराहना की है। श्रीराम ने माता कैकयी का सदा सम्मान किया है। श्री चांद मल चंद्र ने तो कैकयी के चरित्र में उज्जवल रूप ही देखा है। राक्षसों के विनाश और राष्ट्रहित के

लिए जो उसने निर्णय लिया उसका स्वागत करते हुए कहा गया है।

सौ बार धन्य वह एक लाल की माई। जिस जननी ने जना भरत सा भाई।।

सुमित्रा- सुमित्रा ने सदैव अपने पुत्रों को शुभ कार्यो के लिए प्रेरित किया है। वह वह चाहती है कि लक्ष्मण मन, वचन व कर्म से अपने ज्येष्ठ भ्राता श्री राम की निष्ठापूर्वक समर्पण भाव से सेवा करे। उसका कथन हैं कि -

रागु रोषु इरिषा मदु मोहू। जनि सपनेहुँ इन्ह के बस कोहू।।
सकल प्रकार विकार बिहाई। मन क्रम वचन करेहु सेकाई।।

राम वन गमन के समय अनुमति प्राप्त करते समय सुमित्रा कहती है आज से श्री राम ही तुम्हारे पिता है तथा जग जननी सीता तुम्हारी माता हैं और वन तुम्हारे लिए अयोध्या से कम नहीं हैं

उसकी भावना हैं कि यदि पुत्र शुभ कार्यो को करते हुए मृत्यु भी प्राप्त कर लेता है तो माता अपने को धन्य मानती है। जब लक्ष्मण को शक्ति बाण लगा तब भी माता सुमित्रा कह उठती है उसके पुत्र ने उसके दूध की लज्जा रखी।

उर्मिला- राम काव्य से संबंध्द कथा क्रम में उर्मिला के उपेक्षित जीवन को उभारने का प्रसंग साकेत और उर्मिला में अभिवयक्त हुआ है। साकेत का समग्र नवम सर्ग उर्मिला की विरह वेदना से भरा हुआ है। वह समस्त सांसारिक सुखों का परित्याग कर अपनी जीवनचर्या को योगमय बना लेती है।

मानस मंदिर में सती, पति की प्रतिमा थाप,
जलती थी उस विरह में, बनी आरती आप।
ऑखों में प्रिय मूर्ति थी, भूले थे सब भोग,
हुआ योग से भी अधिक, उसका विषम वियोग।।

माण्डवी- राजा जनक के भाई कुशध्वज की कन्या माण्डवी का विवाह भरत जी से हुआ।

वह आदर्श चरित्रवादी निस्वार्थ भाव से परिपूर्ण देवी स्वरूपा नारी थी। राम काव्य में माण्डवी का चरित्र चित्रण संक्षेप में ही प्रस्तुत हुआ है। वह आशा निराशा, राग विराग के अर्न्तद्वन्द से ग्रसित होकर भी साध्वी नारी के रूप में प्रस्तुत हुई है। वह संयोगिनी होकर भी वियोगिनी का दंश झेल रही है। वह भरत के दुख सुख में सदैव साथ रहती है। सेवा भावना और त्याग से परिपूर्ण उसका जीवन अनुकरणीय है। पति की व्यथित दशा देखकर वह कहती है -

नम्र स्वर में वह बोली नाथ! बटाउॅ कैसे दुःख में हाथ,
बता दो यदि हो कहीं उपायएटपाटप गिरे अश्रु असहाय।।

माण्डवी तापसी जीवन के कारण एक विशिष्ट व्यक्तित्व को ग्रहण किए हुए है और इसीलिए हिन्दी महाकावयों के मारी पात्रों के मध्य उसे अलग ही खोजा जा सकता है।। (डॉ श्याम सुन्दर दास)

मन्दोदरी- नीति परायण मन्दोदरी ने राम की शूरवीरता का परिचय देते हुए रावण को समझाने का भरसक प्रयास किया। उसने कहा था -

अति बल मधु कैटभ जेहि मारे। महावीर दितिसुत संघारे।
जेंहि बलि बॉधि सहसभुजमारा। सोई अवतरेउ हरन महि मारा।

रावण के राजकाज में मन्दोदरी का पूरा सहयोग रहता था वह राजनीति में पारगंत थी। राजकाज के कुशल संचालन तथा जनता के विचारों से अवगत होने के लिए महिला दूतों की नियुक्ति कर रखी थी। रावण ने अपने अभिमान के वशीभूत होकर मन्दोदरी की सम्मति स्वीकार नहीं करते हुए राम से विरोध बना रखा।

अनुसूया- अत्रि मुनि की धर्म पत्नी अनुसूया का उल्लेख भी उत्तम नारी के चरित्र के रूप में मानस में प्रयुक्त हुआ है। वह सीता को पतिव्रता धर्म का मर्म समझाते हुए कहती है।

उत्तम के अस वसम न माहीं। सपनेहुँ आन पुरूष जग माहीं।
मध्यम परपति देखई कैसें। भ्राता पिता पुत्र निज जैसे।।

शबरी- रामकाव्य में शबरी की भक्ति का विशेष वर्णन मिलता है। वह राम की अनन्य भक्ति में लीन होकर उनके आगमन की प्रतीक्षा करती है और अपनी भावना को भक्ति मय बनाते हुए उनका अतिथि सत्कार करती है। प्रभु राम ने भी उनके सत्कार को स्वीकार कर अति प्रसन्नता का अनुभव किया है।

कंद मूल, फल सुरस अति दिए राम कहूँ आनी।
प्रेम पहित प्रभु खाए, बारम्बार बखानी।।

शबरी के इस प्रसंग से श्री राम ने अप्रत्यक्ष रूप से दलित वर्ग के प्रति अपना प्रेम प्रकट करते हुए उनसे दूरियों को समाप्त करने का संकेत दिया है। वर्तमान परिपेक्ष में अछूतोद्वारा की दिशा में अनुकरणीय तथ्य है।

त्रिजटा- त्रिजटा राक्षसी होते हुए भी वह संस्कावान तथा नीति निपुण थी। अशोक वाटिका में वह सीता की परम स्नेही सखी के रूप में प्रस्तुत हुई सीता को भय मुक्त रखने में उसका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सीता के आत्मदाह की चाह से व्यथित होकर त्रिजटा सीता को समझाती है कि आत्मदाह महापाप है यह तो कायरता है।

वर्तमान परिवेश में त्याग, समर्पण, सहयोग, सहायता, निष्ठा, आस्था, सहिष्णुता आदि गुण तिरोहित होते जा रहे है। रामकाव्य श्रष्टतम काव्यग्रंथ हैं जो मानव मात्र को जीवन मूल्यों की शिक्षा प्रदान करते है तथा राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते है। इन काव्य ग्रंथों में वर्णित नारी चरित्र आदर्शों की स्थापना की विकृतियों का समाहार नारी महिमा की पुर्नस्थापना और कर्तव्य बोध तथा नारी उत्पीडन की दिशा में कुशल उपदेशक का कार्य करते है नारी अस्मिता का उल्लेख करते हुये कहा है। मैं महिला को समता,ममता,और क्षमता की त्रिवेणी मानता हूँ समता से परिवार में संतुलन व क्षमता से राष्ट्र व समाज को संरक्षण मिलता है।

इस प्रकार रामकाव्य में वर्णित नारी चरित्र वर्तमान परिवेश में भी प्रेरक एवं मानवीय मूल्यों की स्थापना में सहायक सिध्द होते हैं।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. रामायण, महर्षि बाल्मीक।
2. रामचरितमानस, तुलसीदास।
3. राम साहित्य से सम्बंधित ग्रंथ।

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

माखनलाल चतुर्वेदी के कहानी साहित्य का परिचय

* उर्मिला वर्मा

===

_सारांश_- कहानी विश्व का स्वाभाविक साहित्य है। नन्हे से बच्चे को, माँ गोद में लेकर, जो पहिली वस्तु समझा पाती है, वह होती है कहानी। कहानी, यह जरूरी नहीं कि विस्तार ही से बोले, यह आवश्यक नहीं कि व्याख्यान देने खड़ी हो जाय, यह जरूरी नहीं कि उसमें एक विशेष रूचि, विशेष घटना तथा विशेष देशकाल का ही वर्णन हो। कहानी निकाल देने के पश्चात् साहित्य को बहुत थोड़ी वस्तु रह जायेगी। कहानी समाज के जीवन का छायाचित्र है। वेदशास्त्र और उपनिषद् भी कहानी से खाली न थे। किन्तु अन्त में विकसित रूप, पुराणों के रूप में पूर्ण कथाओं का आया।

===

माखनलाल चतुर्वेदी के साहित्यिक अभिव्यक्ति का माध्यम काव्य रहा है। भारत-भारती के पुजारी ने साहित्य के अनेक रूप अपनी अभिव्यक्ति के लिए सफलतापूर्वक अपनाया है। प्रस्तुत कहानी संग्रह (कला का अनुवाद) इस तथ्य का साक्षी है। चतुर्वेदी जी बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार थे। ये कहानियाँ उन्होंने बहुत पहले लिखी थी। उन्होंने गाँव का जीवन, राष्ट्रीय जीवन, साहित्यिक जीवन और देश के वातावरण के सजीव रूपों को उतारा है। अपनी कहानियों में उन्होंनें जीवन के यथार्थ को गहराई के साथ अभिव्यक्त किया है। इन कहानियों में लेखक की व्यंग्य शक्ति का पता चलता है। कहानी के विषय में लेखक का कहना है- ''कहानी, नाटक और उपन्यास ये तो ऐसे साहित्य हैं, जिनका जन साहित्य होने का दावा, सवाल करने से परे रहता है। हाँ, साहित्य के अन्य विभागों को जन-साहित्य होने के अपने दावे को, अपने प्रभाव, प्रचार और मानव-जीवन की नित्य की उपयोगिता से लिप्त करना होता। साहित्य का शिल्प, कविता की अपेक्षा कहानी में अधिक खुलता है।''[1]

''उत्थान हो या पतन, प्रत्येक मानव अनेक कहानियों का एक सजीव संग्रह है। बीमार, मुसाफिर, कष्ट-भोगी, बेचैन, बेकार धनी, गरीब, पुरुष स्त्री सबकी कहानी एक सी पसन्द की होती है। पुरानी से पुरानी घटनाओं में, नया जीवन देने वाले अपने नायकों के जन्मदिन से हजारो वर्षो पश्चात् पैदा होने और अपनी बात लिखने वाला कहानी-साहित्य समाज के जीवन का छायाचित्र है। मध्य में कहानी का युग ''तोता-मैना'' और 'छबीनी भाटियारिन' के लेखकों के हाथ में चला आया। उस समय के भारतीय इतिहास को दुर्भाग्य और दौर्बल्य के इतिहास से ही परिचित किया जा सकता है। यदि यह बात मान ली जाय कि जिस व्यवस्था से मानव समाज का विकास हुआ है उसी परम्परा से मानव मन की तालीम की व्यवस्था होनी चाहिये तो कहानियाँ, शिक्षण, क्रम में पहिली आवश्यक वस्तु होगी। वाल्मीकि और तुलसीदास की रचना के भेद को लोग सह गये, उन्होने दोनो ही

========================

* सहायक प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय टी.आर.एस. कालेज, रीवा (म.प्र.)

साहित्यिकों से यह कभी मत नही ली कि दोनों में कौन सच्चा है। क्योंकि उन सन्त लेखको ने अपनी रचना अपने ज्ञान और अपने जिम्मेदारी की मुहर लगा दी थी। 'बीरबल विनोद' और-एक रात में सौ खून' के लेखको ने, यह सिद्ध किया है कि ज्ञान, और हृदय और जिम्मेदारी से खाली पतनोन्मुख मन भी में खाई हुई कुलाटे हैं। कहानी लेखक की ओर कुमार, उत्साह और बालिका सन्देश पाने के लिए तरूणी, ताड़ित युवा रसों का 'छू जाना' पाने के लिए और बूढ़ें अपने चिन्तन में विश्राम पाने के लिए देखते है। मानव मन की हर बात जानने की साध हर बात की एक कहानी सुनकर पुरी होती है। जो कहानी जीवन के रहस्य को जानकर, भाते हुए जमानों को दिख सकने वाले और आँखों और कानों से परे की वस्तु की ओर संकेत करने वाले होते है, समाज उनके चरणों में बैठकर उसका होने लगता है। जो कहानी-लेखक प्रकट काल में अप्रकट संकेत करते है, जाने हुए जीवन की बेजानी हुई दिशा लोगो के सामने रख देते हैं और दूर की घटनाओं में, हृदय अत्यन्त निकट की, तथा निकट के साधारण जीवन में से दूर की असाधारण बात बता देते हैं, वे कहानी नहीं, युग लिखा करते हैं।''[2]

माखनलाल चतुर्वेदी के गद्य शिल्प अपना मत प्रकट करते हुए आकाशवाणी लखनऊ से प्रसारित समीक्षा में डॉ. रघुवंश ने इस प्रकार वक्तव्य दिया था- (कला का अनुवाद), ये कहानियाँ काफी पहले लिखी गयी हैं। इन कहानियों में गाँव का जीवन और वातावरण सजीव रेखाओं में उभरा है, लेखक कवि है, उसकी शैली अलंकृत तथा लाक्षणिक है, परन्तु अपने समस्त कवित्व के बावजूद लेखक जीवन के यर्थाथ को गहराई के साथ छू तो सका ही है, साथ ही मासिक संवेदना के साथ वैषम्य की परिस्थितियों पर तीखा व्यंग्य भी करता चलता है। इन कहानियों में कथा तत्व शैली दोनों दृष्टियों से शक्ति और प्रभाव है।''[3]

विशाल भारत के कहानी अंक की समीक्षा के माध्यम से लेखक माखनलाल चतुर्वेदी ने कहानी के महत्व को इस प्रकार प्रकट किया है। ''कहानी में उतरकर कविता सौ गुनी प्रेम, प्राण प्रलय से पुष्पित हो जाती है। कहानी को पाकर कविता अपनी मिठास में थोड़ों की वस्तु कहलाने का तंग दायरा छोड़कर, विश्व व्यापी सामर्थ्य पा जाती है। कहानी एक सुन्दर और सजीव भाव-चित्रण है। एक रंग की कलम से लिखी जाने पर भी चलचित्र पटों की तरह, अनजान से अनजान पाठक की आँखों के सामने, घटना के अनुकूल रंगों का चढ़ना-उतरना जारी रहता है। यही क्यों यदि कहानी में युग लिखा गया हो तो पीढ़ियों के रक्त पर भी कहानी-रंग चढ़ाने लगती है।''[4]

कहानी की विशेषताओं को लेकर 25 अप्रैल 1963 को डॉ. कृष्णदेव शर्मा ने माखनलाल चतुर्वेदी से प्रश्न किया था कि अपकी दृष्टि में कहानी में किन विशेषताओ का होना आवश्यक है। कहानी पर प्रश्न भेंट का उत्तर देते हुए लेखक चतुर्वेदी जी ने कहा ''कहानी में ईश्वरत्व से बढ़कर बल है। भगवान की दृष्टि में पैदा हुआ पागल कब पैदा हुआ और कब मर गया कौन जानता है ! पर यदि वह किसी कहानी में पैदा हुआ और उसी में मरा तो युगों तक उसकी जानकारी रहेगी। कहानी में तीन बाते साथ चलनी चाहिए-कथानक का उत्थान-पतन, अनुभवों की लैशज ऑफ एक्सपीरियन्सेज (अनुभवों'' की कौंध) और तीसरे, परिणाम से बचने की बहुत बड़ी सावधानी। यदि उसमें परिणाम से बचा नहीं गया तो कहानी नहीं, लेख है। कहानी में परिणाम देना उसका पतन करना है। परिणाम का पतनोन्मुख होना अवश्यम्भावी है। समुद्र में मिलने के लिए जो नदी निकली है उसमें यदि

उसे गिरना है तो वह नीचे से नीचे ही बहेगी और उसी के लिए लाचार होगी। परिणाम का सदा स्वभाव नीचे ही बहना है, नीचे ही जाना है।''[5]

माखनलाल जी ने अधिक कहानियाँ नहीं लिखी। उनके जीवन काल में उनकी कहानियों का एक ही संग्रह प्रकाशित हुआ- 'कला का अनुवाद'। इसका प्रकाशन 1954 में हुआ था। इसमें मात्र नौं कहानियाँ और एक रूपक है। रचनावली-1 में उनकी छोटी-बड़ी कुल 43 कहानियाँ हैं जिसमें लघु कथाएँ भी सम्मिलित है। इन कहानियों में पुण्य प्रदेश' जेल का साथी, आत्मसमर्पण, गुप-चुप!, गोलमेज की दावत, शान्ति या क्रान्ति, तीर्थयात्रा, एक राजा था, एक रानी, जालिम सिंह, एक ग्रीक कैदी, कमाल की प्रेम-कहानी, अधिकारी पाकर, मजदूरी, हत्यारी, संदेह, वज्रदन्ती, नटबेडनी, जमनिया, कच्चा रास्ता, नवेली मेहमानिन, मुहब्बत का रंग, नीलाम की चीज, बिरन, मेरो सावन बीतो जाय, गरीब का रास्ता, मेहमान, माया तेरे तीन नाम, राजनर्तकी, बेगार दण्ड, तु नरक जायगा, राजा और कवि, दो कलाकार, बाजे वाली की बीबी, भूल की याद, बरसता बैखाख हो गया, कला का अनुवाद, महँगीं पहिचान, मूल्य, दगा नहीं देगें, फरिश्ते का वरदान, जाल, राजा प्रजा : प्रजा राजा, पसीने की गंगा, दो पैरों वाली पशुता संग्रहीत हैं।

इन कहानियों को लेखक ने अपने समय के धधकते हुए कठोर यथार्थ को जीवन्त और मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति प्रदान की है। कच्चा रास्ता, मुहब्बत का रंग, बेगार का दण्ड, बरसता सावन, कला का अनुवाद, सन्देह, वज्रदन्ती, जमनिया, दगा नहीं देगें और जेल का साथी, आदि अनेक कहानियाँ एक सधे हुए, सूक्ष्म दृष्टि सम्पन्न, अभिव्यक्ति-सिद्ध कथा-पुरुष का परिचय देती हैं।

प्रत्येक कहानी यह बोध देती है कि लेखक के लिए जिन्दगी कहानी से बहुत बड़ी है। कहानी माध्यम है जो जिन्दगी की गहरी खोहों तक पहुँचा देती है और अँधेरे में सुलगते हुए सत्य का साक्षात्कार कराती है।

श्रीकान्त जोशी के शब्दो में ''माखनलाल जी की भाषा सहज भी है, घुमावदार भी, प्रसादमय है और आलंकारिक भी। इनमें उपमाओं और रूपकों, कहावतों और मुहावरों के मौलिक प्रयोग है। जो मुग्ध कर देते हैं। कुछ तरोताजा उपमाएँ चाहे कथा गति में अवरोध उत्पन्न करती हों किन्तु जिन्दगी हूबहू सामने ला देती हैं। जिन्दगी के इस तरह लाये गये स्वरूप को देखकर पाठक वह नहीं रह पाता जो कथा पढ़ने से पहले रहा होगा।''[6]

माखनलाल जी ड्राइंग रूम के व्यक्ति कभी नहीं थे उन्हीं के शब्दो में ''मेरी धारणाओं के निर्माण में विन्ध्या और सतपुड़ा के नीचे पहाड़, आड़े तिरछे-घुमाव, उनके बीहड़ नदी-नालों के कभी कल-कल स्वर, कभी चिंघाड़, उनमें मिलने वाले हिंस्र जन्तु तथा मेरा पीछा करती हुई पुलिस-इन के सम्मिश्रण से ही मेरे जीवन और साहित्य का निर्माण हुआ है। ये कहानियाँ ऐसे ही जीवन का प्रतिरूप हैं।''[7]

'पुण्य प्रदेश कहानी शीर्षक के माध्यम से लेखक ने दलजीत और मोहनी के माध्यम से संसार को यह बताने का प्रयास किया है कि ''भारतीय वीर अपने उद्देश्य के पालन में प्राण हथेली लिए रहते हैं।[8]

जेल का साथी उनकी दूसरी कहानी है। लेखक उस समय मध्य प्रदेश के विलासपुर जेल में बन्दी था। उन्हीं अनुभवों को लेखक ने कहानी का स्वरूप दिया है। इस कहानी में ''ममताहीन लातें खाकर खुशामद तो, पशुत्व से भी नीचे की दुनिया की चीज है, यदि

उसके नीचे भी कोई रहती हो? स्नेह और सेवा का साथी वह पशु क्यों लौटता?''[9] एक बिल्ली के माध्यम से यह कथन व्यंग्य विधा को चरितार्थ करती है।

'आत्मसमर्पण' कहानी की घटना तिथि 11 दिसम्बर 1907 है। इस कहानी के पात्र बब्बू भैया ओर कमलनारायण दुबे, पं0 भूधर शास्त्री, पं0 वैशाख शर्मा आदि पात्र हैं। वहाँ एक घटना घटती है। यह यथार्थ घटना थी जिसका प्रकाशन विश्वामित्र पत्रिका में छपा था। ''एक षड्यन्त्रकारी ने, चाँदा षडयन्त्र केस के सरकार गवाह कमलनारायण दुबे के घर में घुसकर दो बजे रात को उन्हें पिस्तौल से मार डाला हत्यारे ने आत्मसमर्पण भी कर दिया है।''[10]

'गुप-चुप' कहानी के अन्तर्गत फूलमणि नाम की हिन्दू रमणी है। वह चम्पारन के एक चाय के खेत में काम करती है। गोरी कम्पनी का नायक ह्विस्लर का नाजायज सम्बन्ध उस मजदूरन से होता है। उसे एक कन्या पैदा होती है। प्रकरण का मुकदमा चलता है। जज के सामने ह्विलर कूक उठा ''मैं स्वीकृत करता हूँ कि कुली औरत, मेरे पास रखैल थी और इस गोरी सन्तान का बाप मैं ही हूँ।''[11]

इसी प्रकार माखनलाल चतुर्वेदी ने कहानी प्रसंगों में 'गोलमेज' की दावत' के अन्तर्गत शेख, सैयद, मुगल, पठान और भूखे बंगाली के चरित्रों का उद्घाटन किया है। इस प्रसंग का एक दृश्य अवलोकनीय है ''द्वितीय गोलमेज सम्मेलन 1931 दिसम्बर महीनों के मध्य लंदन में हुआ था। इसमे भारत के अनेक नेता सम्मिलित हुए थे। स्वयं महात्मा गाँधी भारत की राष्ट्रीय संस्था कांग्रेस के प्रतिनिधि बनकर गये थे। सम्मेलन का वास्तविक लक्ष्य भारत की स्वतन्त्रता के लिए सम्मानयुक्त व असली ढाँचा तैयार करना था। पर ब्रिटिश शासन ने इस विषय को गौण रखा और सम्मेलन को साम्प्रदायिक प्रश्नों में उलझा दिया। उसने विभिन्न जातियों के प्रतिनिधियों को अपनी माँगे बढ़-चढ़कर रखने के लिए उकसाया। उसमें वह सफल रहा। सम्मेलन असफल हो गया। सम्मेलन में असफल समापन पर गाँधी जी ने कहा था, ''आप (ब्रिटिश) लोग ईश्वरीय संकेत से अपरिचित है, आप उस संकेत को नहीं देखते जो क्रान्तिकारी अपने रक्त से लिख रहे हैं। क्या आप यह नहीं देखेंगे। कि हम आज गेहूँ की बनी हुई रोटी नहीं बल्कि आजादी की रोटी चाहते हैं।?''[12] 'शान्ति या क्रान्ति में रामदेव के आन्दोलन का उल्लेख किया गया है। ''भाइयों, यदि आप मेरे उद्देश्य से सहानुभूति रखते है। तो आप शान्ति को भंग न होने दे। सरकार, अधिकारी और विदेशियों के प्रति कभी द्वेष और ईर्ष्या का विचार तक मन में न लायें। अपने हित का कार्य शान्ति, ढ़ढ़ता और प्रेम के साथ करें। गड़बड़ न होने दे, न कभी उत्तेजित हों। यदि आपने इन शर्तो के साथ कार्य किया, तो हम अवश्य विजयी होगे। आपका उद्देश्य सफल होगा और हमारी कष्ट परम्परा नष्ट होगी। अब मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि शान्ति के साथ आप यहाँ से अपने-अपने घर जावें।[13]

तीर्थ-यात्रा कहानी में पं. रामधर पं श्यामधर और रमतूकुर्मी की कथा है। ''रमतू बोला- भाई क्या बताऊ! मैं देखा कि दो देवदूत आये, तो श्यामधर महाराज को ले गये स्वर्ग में, और दो दूसरे आये तो रामधर बाबा को ले गये नरक में। मैंने जागकर सोचा कि आप लोगों को कोई दुनिया में कैसे लौटने देगा? यह सोचकर मै उठा और मैंने वहा रोट, बड़ी तकलीफ के साथ निकाल कर खा लिया।''[14]

'एक राजा था, एक रानी लेखक की भाव कहानी है। इसमें आदम और हउवा के

कथा का जिज्ञासापूर्ण वर्णन है। जहाँ लेखक कहता है- ''कलम की नोक पर टपक पड़ने वाला हृदय ही सबसे ऊचाँ साहित्य है किन्तु आदम का हृदय उसकी पुतलियों की किरणों की नोक पर से टपका। इसीलिए वह साहित्य नहीं था, साहित्य का प्राण था। यदि प्राणों को कैद कर लेने की शक्ति आदम में होती तो वह एक साहित्यिक होता। उसकी यह असमर्थता ही उसकी असाहित्यिकता थी।''[15]

इसी प्रकार जालिम सिंह' कहानी में जालिम की देश भक्ति ''एक ग्रीक कैदी में व्यंग्य, कमाल की प्रेम कहानी में मातृभूमि के प्रेम की गाथा का विवेचन किया गया है। 'अधिकारी पाकर(मजदूरी, हत्यारी, संदेह, लेखक की लघु कहानियाँ है। जो कर्मवीर में छपा करती थी। कुछ कहानियाँ धर्मयुग में भी प्रकाशित हुई।

वज्रदन्ती, नटबेडनी, जमनिया, कच्चा रास्ता नवेली मेहमानिन, मुहब्बत का रंग, नीलाम की चीज, गरीब का रास्ता, मेहमान, राजनर्तकी, माया तेरे तीन नाम, बेगार का दण्ड, इनकी महत्त्वपूर्ण कहानियाँ हैं जिनका संग्रह कला के अनुवाद में हुआ है। इनका रचनाकाल 1936, 1937, 1938 और 39 रहा है। 'दो पैरों वाली पशुता' इनकी अन्तिम कहानी है। इस कहानी का युगारम्भ रचनाकाल अप्रैल 1950 है।

कुल मिलाकर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचती हूँ कि कहानीकार माखनलाल चतुर्वेदी की सभी कहानियों में लेखकीय यथार्थ प्रकट हुआ है। प्रत्येक कहानी यह संकेत देती है कि लेखक के लिए जिन्दगी कहानी से बहुत बड़ी है। माखनलाल जी की कहानियाँ विचारों की भीड़-भाड़ में पड़ाव लेकर अग्रगामी होती है और ऐसे चरित्र-बोध को प्रकट करती है। जो अपने विचारों का मूल्य चुकाने में विचलित नहीं होते हैं।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. 11 मार्च 1933 'कर्मवीर' में प्रकाशित 'विशाल भारत' के कहानी अंक की समीक्षा से।
2. कहानी : समाज के जीवन का छायाचित्र (कर्मवीर) माखनलाल चतुर्वेदी- पृष्ठ 23
3. डॉ. रघुवंश - आकाशवाणी लखनऊ से प्रसारित समीक्षा।
4. विशाल भारत - कहानी अंक 23 अप्रैल 1933 - माखनलाल चतुर्वेदी।
5. कहानी पर प्रश्न भेट- 25/04/1963, डॉ. कृष्णदेव शर्मा से माखनलाल जी की बातचीत।
6. सं. श्रीकान्त जोशी- माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली-1, प्राक्कथन के अंश से।
7. सं. श्रीकान्त जोश - माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली-1, प्राक्कथन से।
8. माखनलाल- कर्मवरी (पुण्यप्रदेश), 20 मार्च 1920
9. माखनलाल- धर्मवीर- 22 दिसम्बर 1957 (जेल का साथी) सन 1921
10. माखनलाल- 04 अप्रैल 1921 (आत्मसमर्पण)
11. श्रीकान्त जोशी- माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली-1, पृष्ठ-316
12. कर्मवीर- 13 अक्टूबर 1931, रामकृष्ण।
13. श्रीकान्त जोशी- माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली-1, पृष्ठ-322 (कर्मवीर, 2 अप्रैल, 1933)
14. श्रीधरणीधर पाण्डेय- कर्मवीर 13 जनवरी-1934
15. श्रीधरणीधर पाण्डेय- कर्मवीर 13 जनवरी-1934, पृष्ठ 325-326 (माखनलाल)।

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

पुराणकालीन साहित्य में वर्णित गढ़वाल हिमालय के पर्वत शिखर व नदियां

* डी.एस. भण्डारी

सारांश- **गढ़वाल हिमालय का सम्पूर्ण भूभाग अलकनन्दा, भागीरथी और युमना की उपत्यका में अवस्थित है। वैदिक काल से ही यह सम्पूर्ण क्षेत्र अपनी भौगोलिक विशिष्टता के लिए प्रसिद्ध माना जाता है। वेदों के साथ ही सम्पूर्ण पुराणों और उपनिषदों में इस क्षेत्र की सुप्रसिद्ध पर्वत मालाओं और नदियों का उल्लेख मिलता है। प्रस्तुत शोध पत्र पुराण साहित्य में वर्णित पर्वत शिखरों और नदियों की विवेचना पर आधारित है जो पर्वत शिखर गढ़वाल हिमालय में अवस्थित हैं एवं जो नदियां इस पावन भूमि से प्रवाहित हो रही है।**

हिमालय के पांच खण्डों का वर्णन पुराणों में मिलता है, इन पांच खण्डों में केदारखण्ड और कूर्मांचल को आज हम गढ़वाल और कुमाऊं के नाम से जानते हैं। प्राचीन साहित्य में यही क्षेत्र इलावृत्त, बह्मपुर, उत्तराखण्ड रूद्र हिमालय, हिमवन्त आदि नामों से वर्णित है।[1] स्कन्दपुराण के मानस खण्ड में कुमाऊं का वर्णन मिलता है। मार्कन्डेय पुराण में जो जनपद सूची दी गई है उसमें वर्णित भारद्राज नामक जनपद को विद्वानों द्वारा गढ़वाल कुमाऊं प्रदेश माना गया है। अंग्रेज विद्वान पार्टीजर उसे गढ़वाल प्रदेश मानते हैं।[2] महाभारत कालीन साहित्य में भी अंतगिरि, बहिर्गिरि और उपगिरि खण्ड का वर्णन मिलता है। हिमालय संस्कृति की भूमिका में डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल लिखते हैं कि हिमालय के दो महत्वपूर्ण खण्ड थे एक बदरी केदार खण्ड और दूसरा कैलाश मानसरोवर खण्ड। इनमें बदरीकेदारखण्ड महाभारत कालीन साहित्य में वर्णित बहिर्गिरि और उपगिरि के अर्न्तगत आता था।[3] महाभारत के सभापर्व में यामुन, कुलिंद, कालकूट, उरग, तंगन आदि जनपदों का उल्लेख मिलता है।[4] डॉ0 गोविन्द चातक कहते हैं कि आधुनिक कूर्मांचल और बदरीकेदार खण्ड की सीमाएं प्राचीन काल में वर्तमान समय के समान रही होगी यह नहीं कहा जा सकता है।[5] उनके इस कथन में आशंका व्यक्त की गई है कि प्राचीन काल के समान ही इन हिमालयी खण्डों की सीमा व विस्तार वर्तमान समय में भी है। बौद्ध धर्म ग्रन्थों में अनेक स्थान पर इस हिमालयी भूभाग के लिए हिमवन्त शब्द का प्रयोग किया गया है। हिमवन्त शब्द इस भूभाग के लिए प्रयोग किये गये शब्दों से सबसे अधिक जीवन्त शब्द प्रतीत होता है। मत्स्य पुराण में वर्णन आया है कि यह भूभाग सप्त सैंधव के अर्न्तगत था। कल्चरल स्टडी फ्रॉम मत्स्य पुराण में डॉ. एस.जी कांतवाल ने भी उक्त तथ्य का उल्लेख किया है। उपरोक्त पौराणिक नाम को छोडकर इस हिमालयी भूभाग का नाम गढ़वाल और

* विभागाध्यक्ष, हिन्दी, बालगंगा महाविद्यालय सेन्दुल केमर टिहरी गढवाल, उत्तराखण्ड

कुमाऊं कैसे विख्यात हुआ इस सम्बन्ध में विभिन्न इतिहासकारों का अलग अलग मत है। केदारखण्ड भूभाग के सम्बन्ध में विद्वानों का मत है कि समय के साथ शासन की दृष्टि से यह कई भागों में बंट गया था। डॉ. चातक का मानना है कि गढ़वाल का नामकरण सम्भवतः 1500ई.पू. पडा, जब अजयपाल ने छोटे छोटे 52 गढ़ों को विजित कर एकछत्र राज्य की नींव डाली। कुमाऊं शब्द भी बहुत पुराना नहीं इस नाम का भी सर्वप्रथम प्रयोग नागनाथ के शिला लेख में हुआ। इसके साथ ही चंद राजाओं के ताम पत्रों में भी यही नाम सामने आया है। पुराणों में गढ़वाल को केदारखण्ड के नाम से ही अधिक ख्याति प्राप्त हुई है भारतीय भूगोल विधा के विद्वान ऋषियों ने कश्मीर से नेपाल तक हिमालय को पांचखण्डों में विभक्त किया था, नेपाल, कूर्मांचल, केदारखण्ड, जलंधर और कश्मीर नामक खण्डों में हिमालय के भूगोल को जिस सुन्दर ढंग से चित्रित किया गया है वह वास्तव में अत्यन्त महत्वपूर्ण है।[7]

स्कन्दपुराण के चालीसवें अध्याय में इस हिमालयी भूभाग का विस्तृत वर्णन मिलता है। इस अध्याय में केदारखण्ड की लम्बाई पचास योजन और चौडाई तीस योजन बताई गई है। एक योजन तीन मील का माना जाता है। इस दृष्टि से केदारखण्ड की लम्बाई 150 मील और चौड़ाई 90 मील मानी जा सकती है। इस तथ्य से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि पुराणकालीन केदारखण्ड और कूर्मांचल की सीमा, विस्तार में वर्तमान गढ़वाल मण्डल, और कुमाऊं मण्डल की सीमा विस्तार में पर्याप्त समानता है। आज भी गढ़वाल मण्डल के पूर्व में कुमाऊं पश्चिम में तमसा और हिमालच प्रदेश उत्तर में श्वेतांत अर्थात हिमालय तथा तिब्बत तथा दक्षिण में गंगाद्वार है। भूगोल वेत्ताओं के अनुसार गढ़वाल 29-26 व 31-28 अक्षांश तथा 77-49 एवं 80-6 देशान्तर के बीच स्थित है। ज्योतिष गणना भी इसी स्थिति को ध्यान में रखकर की जाती है।[8]

यह सम्पूर्ण भू भाग अलकनन्दा भागीरथी और यमुना की उपत्यका में अवस्थित है। यमनोत्री से निकलने वाली नदी हिमाचल प्रदेश से हिमाचल प्रदेश से सीमा का निर्धारण करती है। इस क्षेत्र में दो पनढाल हैं पूर्वी पनढाल और पश्चिमी पनढाल। पश्चिमी पनढाल का सम्पूर्ण जल यमुना में और पूर्वी पनढाल छोटी बडी नदियों का सम्पूर्ण जल गंगा में प्रवाहित होता है।[9] वैदिक काल से ही यह सम्पूर्ण क्षेत्र अपनी भौगोलिक विशिष्टता के लिए प्रसिद्ध माना जाता है। वेदों के साथ ही सम्पूर्ण पुराणों और उपनिषदों में इस क्षेत्र की सुप्रसिद्ध पर्वत मालाओं और पवित्र नदियों का उल्लेख मिलता है। भारतीय लोक संस्कृति का संदर्भ-मध्य हिमालय की भूमिका में डॉ0 गोविन्द चातक कहते हैं कि वैदिक ऋषि गंगा के मातृ गृह से अपरिचित न थे[10] भृगुतीर्थ, बदरीतीर्थ, अलका, गन्धमादन, हेमकूट हिरणयश्रृंग भैनाक मन्दाराचल आदि का उल्लेख तो पुराणों में अनेक स्थानों पर आया है। महाभारत और बाराह पुराण के अनुसार गन्धमादन ही वद्रिकाश्रम है।[11] बौद्ध धर्म ग्रन्थों में भी अनेक स्थानों पर गन्धमादन का उल्लेख मिलता है। डॉ0 भागवत शरण उपाध्याय रचित कालिदास का भारत खण्ड में उल्लेख किया गया है कि मन्दाकिनी और जाह्नवी गन्दमादन पर्वत से प्रवाहित होती हैं।[12] भागीरथी का उद्गम शिवलिंग शिखर के नीचे गोमुख नामक स्थल से होता है। इसके उत्तर पूर्वी भाग में सतोंपंथ शिखर है। सतोपंथ शिखर के हिमनद शिखर और सतोपंथ ताल के निर्मल जल से अलकनन्दा प्रवाहित होती है। अलकनन्दा में विष्णुगंगा, पिंडर, मन्दाकिनी के साथ ही अनेक छोटी नदियां मिलती है। अलकनन्दा की

लम्बाई और अनेक संगमस्थल होने के कारण ही अलकनन्दा को उत्तराखण्ड की सबसे बडी नदी माना जाता है। डॉ0 शिव प्रसाद डबराल भी मानते हैं कि भागीरथी को अलकनन्दा की सहायक धारा मानना ही उपयुक्त है।[13] भागीरथी में बालगंगा, जाडगंगा, और भिलंगना जैसी प्रमुख नदियों का संगम होता है। देवप्रयाग में अलकनन्दा और भागीरथी के संगम के बाद ही इस जलधारा का नाम गंगा हो जाता है।

इस हिमालयी भूभाग में अनेक विश्व प्रसिद्ध चोटियां है। इन पर्वत श्रेणियों का वर्णन न केवल इतिहासकारों वरन पुराणों में भी किया गया है। पूर्वोत्तर सीमा में दूनागिरि (23184) चंगबंग (22416)नन्दाकोट (22530) और नन्दा त्रिशूली (25660) मुख्य हिमशिखर हैं। इन चारों पर्वत शिखरों को नन्दा त्रिशूली के नाम से जाना जाता है। इस पर्वत श्रृंखला का दक्षिण पश्चिमी अधिकांश भाग गढ़वाल भूभाग के अन्तर्गत ही आता है। नन्दा त्रिशूली के दक्षिणी पनढाल से पिंडर निकलती है जो कर्णप्रयाग में अलकनन्दा से मिल जाती है। पश्चिमी छोर से धौलीगंगा निकलती है। जिसका विष्णुप्रयाग में अलकनन्दा से संगम होता है। हेमकूट और हिरण्यश्रृंग पर्वतमालाएं भी गढ़वाल के उत्तरी सीमा पर स्थित हैं। हेमकूट पर्वतमाला और पर्वत चोटी का उल्लेख मत्स्य पुराण में भी किया जाता है। इसमें कहा गया है कि हेमकूट पर्वत हिमालय में उत्तर से दक्षिण की ओर फैला हुआ है।

इस पर्वत शिखर पर गंर्धवों अप्सराओं के साथ ही नागों के अधिवास की मान्यता है। सरस्वती नदी के साथ ही ज्योतिष्मती नदी का उद्गम स्थल भी इसी पर्वत श्रेणी को माना गया है। मत्स्य पुराण के अनुसार यह पर्वतमाला औषधियों की भण्डार है। यही सोने का भण्डार भी है। इस पर्वत माला का गुणगान करते हुए कहा गया है, कि इसी हिरण्यश्रृंग पर गंगा जी का अवतरण हुआ था। मत्स्य पुराण को आधार मानकर अधिकांश विद्वानों का मानना है कि यह स्थान गंगोत्री शिवलिंग श्रृंखला हो सकती है। डॉ0 एम0 जी कान्तवाल ने भी कहा है कि यह स्थान गंगोत्री के अतिरिक्त दूसरा नहीं हो सकता है। हिरण्य श्रृंग और गन्धमादन के सामन ही मन्दराचल पर्वत माला भी गढ़वाल कुमाऊं में ही अवस्थित है। मन्दराचल पर्वतमाला को शिव पार्वती के अधिवास के रूप में मान्यता दी जाती है। यद्यपि कई विद्वानों ने इस पर्वतमाला को गढ़वाल कुमाऊं से बाहर अवस्थित होने का दावा किया लेकिन उनका यह प्रयास व्यर्थ था क्योंकि महाभारत के अनुशासन पर्व, वनपर्व में इस पर्वमाला की स्थिति मध्य हिमालय में मानी गई है। इसके साथ ही कालजयी कवि कालिदास ने भी कुमार संभव में इस पर्वत माला को मध्य हिमालय में अवस्थित माना है।[18] हेमकूट, बन्दरपूंछ, मृगुतीर्थ भी पर्वतमाला की श्रेणियां हैं। हिमालय पश्चिम में राहुल सांकृत्यायन ने यह तथ्य स्वीकार किया है। गन्धमादन पर्वतमाला में कामेर, कुनलिंग, सतोपंथ, चौखम्भा नरनारायण, नीलकंठ, हाथी पर्वत गौरी पर्वत एवं सुमेर मुख्य पर्वत शिखर हैं। यह पर्वत श्रृंखला चमोली गढ़वाल के पैनखण्डा परगने में है इसी पर्वत श्रृंखला के देवताल से पुष्पावती लोकपाल ताल से लक्ष्मणगंगा काकभुषंडी ताल से काकभुषंडी गंगा और विष्णुगंगा निकलती है। विश्व विख्यात फूलों की घाटी और भारत का अंतिम गांव नीतिमाणा भी इसी पर्वत माला की गोद में है।[21]

चौखम्भा के उत्तरपूर्वी भाग में सतोपंथ शिखर है। सतोपंथ शिखर के सतोपंथ ताल से अलकनंदा प्रवाहित होती है। मत्स्य पुराण में वर्णन आया है कि यहां कुबेर की राजधानी अलका पुरी थी। स्वेगारोहिणी पर्वत चोटी भी चौखम्भा और सतोपंथ से मिली हुई है।

स्र्वगारोहिणी पर्वत श्रृंखला से केदारगंगा निकलती है और इसी पवर्तमाला के दक्षिणी पूर्वी ढाल से मंदाकिनी और वासुकीताल से कालीगंगा निकलती है। इनका संगम सोनप्रयाग में होता है। मंदाकिनी कई गंगाओं की स्वयं में समाहित कर इसका रूद्रप्रयाग में अलकनंदा से संगम होता है। पुराणों और अर्थव वेद में वर्णित यामुन पर्वत को आधुनिक यमनोत्री कांठा माना जा सकता है।[22] मेघदूत, रामायण और तैत्तरीय आरण्यक में क्रौंच और मैनाक पर्वत श्रेणियों का नाम भी आया है। यह पर्वत श्रेणियों भी यमनोत्री कांठा के निकट ही मानी जाती है। यमनोत्री कांठा पर्वत चोटी के हिमनद से ही यमनोत्री का उद्गम होता है। तथा पूर्वी छोर से सियागंगा निकलती है। इसका संगम झाला में यमुना से होता है। यमुना कांठा के पश्चिमी भाग से टोन्स नदी का उद्गम होता है। टोन्स का संगम कालसी में यमुना से होता है। स्कन्दपुराण के मानस खण्ड में कुमाऊं क्षेत्र का विशद वर्णन मिलता है। मानस खण्ड में हंसतीर्थ , दारुकवन, पाताल भुवनेश्वर, द्रोण, पंचशिखर गणनाथ आदि पर्वत शिखरों का उल्लेख मिलता है। इन्हीं पर्वतमालाओं में जागेश्वर, दूनागिरी नंदादेवी और त्रिशूली के नामसे जाने जाते है। डॉ0 शिवानन्द नौटियाल के गढ़वाल के लोकनृत्य गीत की भूमिका में तुंगनाथ श्रेणी, मंदाकिनी श्रेणी रामजी श्रृंखला खमिल श्रेणी, नंदा कोट दूधातोली श्रेणी, ग्वालदम श्रेणी, दूधातोली श्रेणी, धनपुर श्रेणी, अकेली रेंज, रवारली श्रेणी उलाई श्रेणी, खतलिंग श्रेणी, चम्बामसूरी श्रेणी, चन्द्रबदनी श्रृंखला , बंदरपूंछ श्रृंखला शिवालिंग श्रृंखला का वर्णन किया है।[23] जिस प्रकार से यहां अनेक पुराण प्रसिद्ध पर्वत श्रेणियां, पर्वत मालाएं हैं उसी प्रकार यहां पुराण वर्णित नदियां भी हैं। वैदिक साहित्य में इन नदियों का उल्लेख किया गया है। यहां प्रवाहित होने वाली प्रमुख नदियों में, अलकनंदा, भागीरथी, यमुना, सरस्वती, तमसा, जाह्नवी मालिनी, मन्दाकिनी, नन्दा, अजरनन्दा, सरयू, रामगंगा आदि प्रमुख हैं। मन्दाकिनी अलकनन्दा की सहायक नदी है परन्तु कुछ विद्वान इसे चित्रकूट में प्रवाहित मानते हैं। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि कालीदास ने अपने अधिकांश काव्य में मन्दाकिनी का उल्लेख किया है। ऐसी मान्यता भी है कि कालीदास ने मन्दाकिनी के तट पर ही काव्य रचना की। तमसा, मालिनी और सरस्वती नदियां अन्य राज्यों में भी प्रवाहित होती हैं, इस कारण विद्वानों में पर्याप्त मतभेद हैं कि पुराणों, या अन्य वैदिक कालीन साहित्य में जिन नदियों का वर्णन आया है वह कौन से भू भाग से प्रवाहित होती है। जो विद्वान सरस्वती नदी को गढ़वाल में मानते हैं उनका तर्क है कि सरस्वती बद्रीनाथ के समीप ही प्रवाहित होती है, गंगाचार्य ने सरस्वती के किनारे तपस्या की थी। स्कन्दपुराण में वर्णन आया है कि सरस्वती के पश्चिमी तट पर व्यास जी का आश्रम था।[24] आज भी यहां व्यास गुफा के नाम से यह स्थान प्रसिद्ध है। तमसा नदी गढ़वाल के रवाईं क्षेत्र भी टोन्स नदी को विद्वान तमसा नदी को मानने के लिए सहमत नहीं है। डॉ0 भागवत शरण उपाध्याय कहते हैं कि गंगा और अयोध्या से थोडी दूर बहने वाली टोन्स नदी पुराणों में वर्णित तमसा नदी नहीं हो सकती है।[25] रामायण के बालकांड और रघुवंश में आगे प्रसंगों के आधार पर भी यह माना जा सकता है कि तमसा नदी का प्रवाह, उत्तराखण्ड में ही है। उत्तर कांड में प्रसंग आया है कि लक्ष्मण और सीता गंगा नदी को पार कर ही बाल्मीकि के आश्रम पहुंचे थे[26] इस कथन के आधार पर बाल्मीकि मुनि का आश्रम ऐसे स्थान पर था जहां गंगा के साथ यमुना और तमसा नदी प्रवाहित होती थी और यह क्षेत्र उत्तराखण्ड ही है। मालिनी नदी भी गढ़वाल में ही प्रवाहित होती है। मालिनी

रामगंगा की शाखा के रूप में प्रवाहित होती है। मालिनी नदी के तट पर कण्व ऋषि का आश्रम माना जाता है। महाभारत के आदिपर्व में यह वर्णन आया है इसमें कहा गया है कि कण्व ऋषि का आश्रम मालिनी के तट पर था केदारखण्ड की सीमा भी यहीं से प्रारम्भ होती है। स्कन्द पुराण में भी इस तथ्य का उल्लेख किया गया है। पुराणों में वर्णित जिन सप्त सिन्धुव का उल्लेख किया गया है उसका निर्णय करना सबसे अधिक कठिन है। कुछ विद्वान पंजाब में इनका प्रवाह मानते हैं। पंजाब में सिन्धु के अतिरिक्त कोई अन्य नदी प्रवाहित नहीं होती है। इतिहासकारों का मानना है कि जब समस्त नदियों का वर्णन पुराणों में आया है और उनका उद्‌गम स्थान उत्तराखण्ड में बताया गया है तो वे नदियां प्रवाहित भी उत्तराखण्ड में ही होती हैं। भजन सिंह ने भी माना है कि सप्त सिन्धुव का प्रवाह उत्तराखण्ड में ही होता है। अलकनन्दा, धौली, नंदाग पिंडारका, मंदाकिनी, गंगा नयार को अधिकांश विद्वान सप्त सिन्धु मानते हैं।

======================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. चातक डॉ0 गोविन्द 1996 भारतीय लोक संस्कृति का सन्दर्भ मध्य हिमालय, तक्षशिला प्रकाशन - पृष्ठ-9
2. पार्टीजर 1997 मार्कण्डेय पुराण का अंग्रेजी अनुवाद पृष्ठ - 320
3. अग्रवाल डॉ0 वासुदेवशरण 1976 हिमालय में भारतीय संस्कृति की भूमिका, तक्षशिला प्रकाशन -पृष्ठ -9
4. महाभारत सभापर्व- (25-5-6)
5. चातक डॉ0 गोविन्द 1996 भारतीय लोक संस्कृति का सन्दर्भ मध्य हिमालय, तक्षशिला प्रकाशन -पृष्ठ 71
6. चातक डॉ0 गोविन्द 1996 भारतीय लोक संस्कृति का सन्दर्भ मध्य हिमालय, तक्षशिला प्रकाशन -पृष्ठ 70
7. नौटियाल डॉ0 शिवानन्द गढ़वाल के लोकनृत्यगीत- पृष्ठ- 2
8. स्कन्दपुराण 40-27, 28, 29
9. डबराल डॉ0 शिवप्रसाद केदारखण्ड गढ़वाल मण्डल -पृष्ठ 57
10. चातक डॉ0 गोविन्द 1996 भारतीय लोक संस्कृति का सन्दर्भ मध्य हिमालय, तक्षशिला प्रकाशन -पृष्ठ 20
11. महाभारत वनपर्त अध्याय 147, 157 वराहपुराण अध्याय अध्याय- 48
12. उपाध्याय डॉ0 भागवत शरण- कालीदास का भारत खण्ड- पृष्ठ 28
13. डबराल डॉ0 शिव प्रसाद, केदारखण्ड गढ़वाल मण्डल- पृष्ठ 61
14. मत्स्य पुराण 121- 25, 30, 40
15. मत्स्य पुराण 121- 26, 32, 42
16. मत्स्य पुराण 122- 20, 30
17. महाभारत अनुशासन पर्व 19- 32, 33 वनपर्व 162
18. कालीदास कुमार संभव 81, 23- 59
19. सांस्कृत्यायन राहुल हिमालय परिचय पृष्ठ 24
20. नौटियाल डॉ0 शिवानन्द गढ़वाल के लोक नृत्यगीत पृष्ठ 4
21. अर्थववेद- 4-9-10
22. ऐटकिन्सन हिमालय डिस्ट्रिक्टस खण्ड- 2, पृष्ठ 281
23. नौटियाल डॉ0 शिवानन्द गढ़वाल के लोक नृत्यगीत, पृष्ठ 6
24. स्कन्द पुराण 1-7-24
25. उपाध्याय डॉ0 भागवत शरण कालीदास का भारतखण्ड, पृष्ठ- 41
26. बुल्के डॉ0 कामिल रामकथा, पृष्ठ 37

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के साहित्य में नारी सौन्दर्य

* कंचनलता यादव

===

सारांश- आचार्य द्विवेदी जी तत्वान्मेषी ललित साहित्यकार हैं। उन्होंने सौन्दर्य के लोक-शास्त्र पक्ष का व्यापक अनुभावन-अनुशीलन-आलोड़न कर अपनी सत्वस्थ प्रज्ञा से मानव-ललिता का मोहन रूप अपने साहित्य में उपस्थित किया है। उनके साहित्य में सौन्दर्य के महत् उपादान उत्कीर्ण हैं। उन्होंने मानव सौन्दर्य का सरल-मोहन रूप बड़े ही रुचिर ढंग से संरेखित किया है। द्विवेदी जी बाह्य सौन्दर्य की अपेक्षा मानव के अन्तः-सौन्दर्य पर अधिक बल देते हैं। उनकी दृष्टि में सुन्दर क्या कोई होने से हो जाता है। देखना यह चाहिये कि सुन्दर हृदय से वह सौन्दर्य-सार में डुबकी लगाकर निकला है। उनमें नारी और पुरुष के सौन्दर्य में सच्चे अर्थों में ग्रहण करने की अपूर्व शक्ति विद्यमान है। उन्होंने मानव-सौन्दर्य को सत्वोज्ज्वल भावु-भूमि पर प्रतिष्ठित करने की महनीय सारस्वत साधना की है। यहाँ उनके द्वारा निरूपित नारी-सौन्दर्य के अमल-विमल संरेखन पर विनम्र दृष्टिपात किया जा रहा है।

===

मानव इस विश्व का सर्वाधिक बुद्धिप्रसन्न जीव है और सौन्दर्य के प्रति वह सहज मोहित हो जाता है। इस मधुमय जगत का मधु-गुंजार सौन्दर्य संदर्शना से ही प्रारम्भ होता है। सौन्दर्य घट-घटवासी, सत्‌चित्‌आनन्द-राशि विधाता का कलात्मक कौतुक है। उस विधाता का रचना विधान अपरिमेय-अनुपम है। उसकी प्रत्येक रचना सहज-ऋजु होने के साथ-साथ कठिन-क्लिष्ट भी है। वैसे रचना कोई भी हो, वह रचनाकार की आत्मा को तुष्ट करने के साथ-साथ लोक का भी रंजन करती है, तो विधाता तो समस्त रचनाओं का कला गुरू है और है महत सौन्दर्य प्रेमी। मानव उसी विधाता का सत्यांश है। जहाँ सुन्दर रूप होता है वहाँ उसकी दृष्टि सहज ही आकर्षित हो जाती है या यों कहे कि सौन्दर्य की रम्यता व्यक्ति को अपनी ओर लीलयैव खींचती है।

लोक शास्त्र की मान्यता है कि जहाँ सुन्दर रूप होता है, वहाँ गुण स्वमेव उपस्थित हो जाते हैं। किन्तु कोई सास्वत नियम है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। बाह्य रूपाकर्षण होने पर भी व्यक्ति दुर्गुण-दुष्ट हो सकते हैं। किन्तु गुणों की महिमा निर्विवाद है। बाह्यतः अनाकर्षण व्यक्ति भी गुणवान हो तो लोकमान्य बन जाता है। फिर भी मधुराकृति अनायास प्रियतर होती है। मधुराकृति के साथ यदि सद्‌गुणों का मेल हो जाय, तब तो सोने में सुगन्ध की अपूर्व स्थिति आ जाती है। जिन स्त्री-पुरूषों में बहिरन्तर सौन्दर्य का सम-समान अधिष्ठान होता है, वे लोकाराध्य बन जाते हैं।[1]

आचार्य द्विवेदी जी तत्वान्मेषी ललित साहित्यकार हैं। उन्होंने सौन्दर्य के लोक-शास्त्र

=========================

* एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, डी0बी0एस0 कालेज, कानपुर (उ.प्र.)

पक्ष का व्यापक अनुभावन-अनुशीलन-आलोड़न कर अपनी सत्वस्थ प्रज्ञा से मानव-ललिता का मोहक रूप अपने साहित्य में उपस्थित किया है। उनके साहित्य में सौन्दर्य के महत् उपादान उत्कीर्ण हैं। उन्होंने मानव सौन्दर्य का सरल-मोहक रूप बड़े ही रूचिर ढंग से संरेखित किया है। द्विवेदी जी बाह्य सौन्दर्य की अपेक्षा मानव के अन्तः-सौन्दर्य पर अधिक बल देते हैं। उनकी दृष्टि में सुन्दर क्या कोई होने से हो जाता है। देखना यह चाहिये कि सुन्दर हृदय से वह सौन्दर्य-सार में डुबकी लगाकर निकला है। उनमें नारी और पुरूष के सौन्दर्य में सच्चे अर्थों में ग्रहण करने की अपूर्व शक्ति विद्यमान है। उन्होंने मानव-सौन्दर्य को सत्वोज्ज्वल भावु-भूमि पर प्रतिष्ठित करने की महनीय सारस्वत साधना की है। यहाँ उनके द्वारा निरूपित नारी-सौन्दर्य के अमल-विमल संरेखन पर विनम्र दृष्टिपात किया जा रहा है।

नारी विधाता के विधान की अनुपम रचना है। अनादि काल से ही वह पुरूष के आकर्षण का केन्द्र रही हैं। विधाता ने सृष्टि की सारी सुन्दर वस्तुओं को समेकित कर नारी-रूप में ही उपस्थित किया है, इसलिये वह पुरूष के लिये सर्वाधिक उपादान सिद्ध हुई है। पुरूष ने स्त्री को अपनी भावनाओं के अनुकूल देखा है। एक स्त्री शब्द ही ऐसा है कि पुरूष की सौन्दर्य-संचेतना ने उसे सुन्दरी, रमण प्रवृति से रमणी, कामना से कामिनी, प्रेम ने प्रिया या प्रणायिनी, विलास से विलासिनी और इसी प्रकार अनेक प्रवृत्तियों के अनेक रूप दिये हैं।[2] द्विवेदी जी के नारी-सौन्दर्य में ऐन्द्रिकता का प्रबल, उज्वाल नहीं, वरन् चेतना की अन्तः प्रकाशिनी उजास है। उनके यहाँ सौन्दर्य के प्रभावक रूप को एकान्विति के बन्धन में बाधकर उज्जाग्रत करने का उपक्रम है। उनके साहित्य में भारतीय ललिता का रूप अपनी रूचिरामा में दमक उठा है। यहाँ उनके द्वारा संसृष्ट नारी-रूप को एक क्रम में संजोने का प्रयास किया गया है।

पुरूषदेह की अपेक्षा नारी-देह अधिक रहस्यमय, अधिक शक्तिशाली और अधिक औदार्य-सम्पन्न होती है। स्त्री-देह को द्विवेदी जी प्रकृति का साक्षात् प्रतिनिधि मानते हैं। वह विधाता की सिसृक्षा का मूर्तमान विग्रह है, वह जगत्प्रवाह का मूल उत्स है।[3] उनके साहित्य में नारी-सौन्दर्य-वर्णन में नारी के अंगो की सुकुमारता, वर्ण-कान्ति, आभा, आकार-प्रकार, कुन्तलों की घनी श्यामता, केशों का अलंकृति-विन्यास, ललाट की शुभ्रता, आखों की रम्यता, भौंहों की वंकिमा, मादक-चपल-चितवन, मुख-सौन्दर्य, भुजा-करतल एवं अंगुलि-सौन्दर्य आदि का वर्णन मिलता है। नारी-सौन्दर्य का मोहन रूप उनके उपन्यासों में उत्कलित हो उठा है। उनकी नारी नग्न, कामुकता एवं मांसल मादकता की मूर्ति नहीं है वरन उसके शरीर में देवत्व की संप्रतिष्ठा है।[4] आचार्य द्विवेदी की नारी-सौन्दर्य-संदर्शना इसी गरिमा के आलोक में निखरी है। यहाँ उनके द्वारा निरूपित नारी-सौन्दर्य का विवेचन केश-सौन्दर्य, ललाट सौन्दर्य, भ्रू-सौन्दर्य, नेत्र सौन्दर्य, कपोल-सौन्दर्य, अधर-सौन्दर्य, मुखमंडल-सौन्दर्य, बाहु-सौन्दर्य आदि बिन्दुओं पर किया जा रहा है।

आचार्य द्विवेदी जी को पिंगलवर्णी, सान्ध्यकालीन मेघाडम्बर की भांति घनमेचक, कस्तूरी की भाँति सुगंध चर्चित, नागों की भाँति काले, लहरदार, मुलायम और मनोहर केश बहुत प्रिय है।[5] इसीलिये केशों की चर्चा में ये गुण उनके यहाँ सहज ही समाहित हो गये हैं। एक उदाहरण दृष्टव्य है।-

"मदन श्री के केशों का वर्णन करते हुये द्विवेदी जी लिखते हैं-'ललाटमणि की लाल

किरणों से धुले हुये उसके मेचक केशपाश संध्याकालीन मेघाडम्बर की भाँति दर्शक को बरबस अपनी ओर आकृष्ट कर रहे थे और ऐसा जान पड़ता था कि एक अदभुत मद्धारा लोचन-जगत को विह्वल कर रही है।"[6]

नारी-सौन्दर्य में ललाट का महत्वपूर्ण स्थान है। ललाट की प्रशस्तता और उज्ज्वलता नारी के मुख-सौन्दर्य को संवर्धित करती है। द्विवेदी जी ने नारी-सौन्दर्य में ललाट पर लगे मनःशिला के लाल बिन्दु और सु-आकारित ललाट को द्वितीया के चन्द्रमा के समान प्रियकर बताया है।[7]

रानी चन्द्रेखा का दर्शन करते हुये सातवाहन कहते हैं-"द्वितीया के चन्द्रमा के समान चमकते हुये ललाट पर यह मनोहर सीमन्त रेखा ऐसी सजी हुई थी, मानों किसी अदृश्य देवता ने फूलों के धनुष पर बाण चढ़ा रखा हो।"[8]

मानव-सौन्दर्य में नेत्रों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। आचार्य द्विवेदी के सम्पूर्ण उपन्यास-साहित्य में अन्य अंगों की अपेक्षा नेत्रों का सर्वाधिक वर्णन है। आखों के औत्सुक्य-उल्लास में द्विवेदी जी के पात्र प्रायः उलझे दिखाई देते हैं।

राजा सातवाहन रानी चन्द्रेखा की आखों को देखते हैं और कहते है- "ये आँखें मुँह जोर घोड़ों की तरह बाग नहीं माग्रती और उछलकर आकाश की ओर जाना चाहती है। मैने सुना है कि विधाता ने आखों की रचना बाह्य वस्तुओं को देखने के लिये की है। परन्तु यहाँ क्या देख रहा हूँ। ऐसा जान पड़ता है कि इन आखों का उद्देश्य कुछ और भी है। इनके कानों से एक अद्भुत द्रावक प्रभा क्षरित हो रही है, जिसके किन्चित स्पर्शमात्र से ही मेरा सारा हृदय गलकर और ढरककर उनके पास बिछ जाना चाहता है। आँखें मैंने बहुत देखी हैं पर इस प्रकार का आकर्षण मैंने नहीं देखा।[9]

द्विवेदी जी नारंगी के समान मनोहर कपोलों को सुन्दर मानते है। हेमाम एवं गुलाबी रंगों के योग से जो कान्ति निखरती है, वास्तव में कम्रता के लिये वही काम्य है। द्विवेदी जी प्रवास के समान लाल-लाल, अनुराग-तरंगों के समान मनोहर, अशोक किसलय के समान आताम्र, बन्धु-जीव पुष्प के समान लाल, दुपहरिया के फूलां की भांति रम्य, अनुराग की भाँति ललित अधरों को श्रेष्ठ मानते हैं।

मुख-सौन्दर्य में मुख का गठन, सुकुमारता, अवयवों का उचित रचाव-कसाव और आनन्द की बंकिम रेखा सहज ही मन मोह लेती है। द्विवेदी जी को स्मयमान मुख-मण्डल बहुत प्रिय है। वे अपने स्वभाव के अनुकूल अपने पात्रों में भी मुख पर आनन्दोत्सव देखना चाहते हैं। वे मुखमण्डल को प्रत्यूषकालीन, वृष्टि से भीगे हुये पुण्डरीक कारक के समान स्वच्छ मेघयुक्त शरच्चन्द्र के समान मनोहर, मध्यकालीन नवमल्लिका की भाँति स्थिर और उत्फुल्ल चन्द्रमा के समान विमल और मयंक की शुभ्र किरणों की भाँति उज्ज्वलामा में रंजित देखते हैं। यथा-"भट्टिनी का मुखमण्डल प्रभातकालीन नवमल्लिका की भाँति खिल गया। स्मयमान मुख की कपोलपालि विकसित हो गयी। नयन-कोरकों में बंकिम आनन्दरेखा विद्युत की भाँति खेल गयी।"[10]

आचार्य द्विवेदी सौन्दर्य-संचेतक साहित्यकार हैं, वे सौन्दर्य की पूर्णता में ही विश्वास करते हैं, इसलिये वे रूप सौन्दर्य को रूचिर एवं महिमा-मण्डित देखना चाहते हैं। उनका मानवीय सौन्दर्य खण्ड सत्य नहीं, वरन जीवन की शाश्वत सत्यता का प्रतिमान है और इसीलिये वे सौन्दर्य चर्चा में पूर्ण विम्ब उपस्थित करना चाहते हैं। ऊपर नारी-देह की रूपामा

का पृथक अवयवगत वर्णन किया गया। अब आगे नारी-सौन्दर्य की समेकित शोभा-श्री का अवलोकन किया जा रहा है।

विरज-सौन्दर्य के अन्तर्गत भट्टिनी, निपुणिका, सुचरिता, चन्द्रलेखा, मंजुला, मृणाल, चंद्रा, धूता, जावाला आदि आ सकती हैं तो साधनागत सौंदर्य के अन्तर्गत भैरवी, नारी माता, माँ ऋतम्भरा आदि। भट्टिनी 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की नायिका है। उसके शरीर की आभा और अवयवों के व्यवस्थापन में विधाता ने किसी प्रकार की चूक नहीं की है। इसीलिये वह प्रियकर है। प्रसन्नवदना भट्टिनी की दुग्ध-मुग्ध मधुरछवि सहज आनन्द की आभा से उत्फुल्ल मालती लता की भाँति अविराम है। अधरों की बंदक-बंधुता, आंखों की स्निग्ध शोभा जो वरूण केवक-पत्रों की भाँति लज्जित करने वाली है, सहज ही मन-मोह लेती है। उसके कपोल मधूक पुष्प कली के समान मोहक है।" आहा, वातुज कवि व्यर्थ ही कल्पना के जाल में उलझकर छटपटाया करते हैं। उन्होंने रमणीयक निधि की अधिदेवता को, सौन्दर्य के मुग्ध निकेतन को, शोभा के उद्वेल समुद्र को देखा ही कहाँ।"[11]

निपुणिका यद्यपि साधारण कुल में पैदा हुई थी, फिर भी उसकी सुन्दरता अपनी गरिमा से सबको मोहित करती थी। भावी जीवन की रंगीन कल्पनाओं में डूबते-उतराते मनुष्य को आस-पास देखने की फुरसत कहाँ होती है। बाण ऐसे ही तो थे। मस्ती में जाते हुये बाण को निउनिया ने पुकारा। आश्चर्यचकित बाण रूके थे और इधर-उधर देखा और बाण को दिखाई दी एक नातकमनीय मूर्ति । उस मूर्ति के मुखमण्डल पर तारूण्य था, परन्तु उसकी दीप्ति धुँधली हो गयी थी। ऐसा लगता था कि वह पान कम बेच रही थी, मुसकान ज्यादा।[12] इस कथन में पान की दुकान पर बैठी नारी की याद बरबस आ जाती है।

सुरचिता निपुणिका की अन्तरंग सखी है। काफी समय बाद बाण निपुणका का संदेश उसके पास ले जाते हैं। जब बाण उसके पास पहुँचते है तब वह स्नान करके तुरन्त आयी रहती है। प्रत्यग्रस्नान से उसकी कांति निखरी हुई थी। उसके घनमेचक केशपास कपोलदेश को घेरकर सुशोभित हो रहे थे। पीत कौशेय बस्त्र से लिपटी हुई उसकी अंगयाष्टि सुवर्ण श्लाका के समान मनोहर दिख रही थी। पूजा सामग्री से भरे गोल उज्ज्वल थाल को लिये हुये वह इस प्रकार सुशोभित हो रही थी, मानो सपुष्पा चन्द्रमल्लिका हो।[13]

चन्द्रलेखा 'चारूचन्द्रलेखा' उपन्यास की नायिका है। वे बत्तीस लक्षणों से युक्त, शोभा एवं सौन्दर्य की मिलित विग्रह है। उनके प्रथम दर्शन के समय राजा सातवाहन भ्रम वश उन्हें लाल पल्लवों वाली लता समझते हैं। वे कोई सामान्य कृषि-वल किशोरिका नहीं। उनका उन्नत ललाट, कुंचित केशराशि, दक्षिणावर्त रोमराज, तिल पुष्प के समान नासिका और घनी भृकुटियों के नीचे सघन सुचिककण, अराल पक्ष्म सामान्य नारी के लक्षण नहीं। वे अपूर्व सौन्दर्य शोभी नारी है।[14]

मंजुला 'पुनर्नवा' की एक नृत्यांगना है जिसमें अपूर्व कलात्मक चारूता है जो देवराज जैसे गम्भीर एवं स्वामिमानी आचार्य को भी द्रवित कर देती है। उसकी सम्पूर्ण देहलता किसी निपुर्ण कवि द्वारा निबद्ध छन्दोधारा की भाँति लहराती है। उसकी बड़ी-बड़ी काली आंखें कटाक्ष-विपेक्ष की घूर्णमान परम्पराओं का इस प्रकार निर्माण करती थी, जैसे नीलकमनों का चक्रवाल चंचल हो उठा।[15]

जाबाला 'अनामदास का पोथा' की प्रधान पात्रा है। ऋषिकुमार उसकी सौन्दर्य पर मोहित होते हैं। वे कहते हैं "सत्य कहते हूँ देवता, मैंने ऐसी सुन्दर आँखें पहले कभी नहीं

देखी। तुम जब हसते हो तो मुझे लगता है कि फूल बरस रहा है, तुम जब बोलते हो तो मुझे लगता है कि अमृत की वर्षा हो रही है। कैसा अद्‌भुत है........... तुम्हारे केश कितने मनोहर एवं मुलायम हैं तुम्हारे अधरों में कैसी दिव्य प्रभा है। कैसा दिव्य मनोहर रूप।[16]

इस प्रकार हम देखते हैं कि द्विवेदी जी की दृष्टि में नारी, पुरूष के मनुहारी मन की पवित्र चेतना है। वह दिव्य लोक की दिव्य सुन्दरी के समान पवित्र, कांतिमती और बुद्धिमती है। स्त्री का रूप संसार की सबसे पवित्र वस्तु है। शोभा, कांति, माधुर्य उससे अनायास बरसते रहते हैं और दर्शक को शांति प्रदान करते हैं। द्विवेदी जी के नारी-सौन्दर्य में नारी के सम्पूर्ण अवयवों का रम्य-रूचिर सरेखन है। नेत्र, भ्रूभंग-विलास, केश, वदन स्निग्ध आभा, मधुर स्मित, कलू कपोल, मंजुल बाहुयुगल, साक्षारस-रंजित चरण और लता की भाँति नृत्याल्लसित देहयष्टि का मोहन प्रस्फुरण हुआ है।

'शक्ति संगत तंत्र' के 'ताराखण्ड' में शिवजी ने बताया है कि नारी ही त्रैलोक्य की माता है, वही त्रैलोक्य का प्रत्यक्ष विग्रह है। नारी ही त्रिभुवन का आधार है और वही शक्ति की देह है। नारी के समान न सुख है, न गति, न मंत्र और न धन है। वही इस संसार की पूजनीय देवता है, क्योंकि वह पार्वती का स्वरूप है। उसके समान न कभी कुछ था, न है और न रहेगा। निश्चय ही उसकी कमनीय मूर्ति पूजनीय एवं वंद्य है।

परिवार के केन्द्र में विद्यमान नारी का धर्माचरण पूरे परिवार और कुटुम्ब को प्रभावित करता है। बच्चों पर उसका उत्तम प्रभाव पड़ता है। सभी का सद्‌गुण सम्पन्न होना केवल वर्तमान को ही नहीं भविष्य को भी उज्ज्वल बनाता है। इसीलिये कहा जाता है नारी की सौम्यता, शालीनता और सद्‌गुण सम्पन्नता से सारा समाज लाभान्वित होता है। ऐसी नारी साक्षात् लक्ष्मीरूपा होती है। उसके सभी कार्यो से सच्चाई और ईमानदारी की सुगंधि आती है। जिस घर में ऐसी लक्ष्मी आ जाती है, वह घर स्वर्ग से भी बढ़कर हो जाता है। जो उसके सम्पर्क में आता है, वह शान्ति अनुभव करता है। ऐसी महिमामयी नारी से परिवार में सौजन्य और सदाचार का संचार होता है। घर के वृद्धजनों का जीवन सुखमय हो जाता है और पास-पड़ोस के लोगों में सदाचार की प्रवृत्ति बढ़ती है।

इस प्रकार धर्मपरायणा, सत्वगुण-सम्पन्ना, सच्चरित्रा नारी कुटुम्ब की मंगल विधात्री देवी होती है। शील-गुणान्विता नारी परिवार की कीर्ति बढ़ाती है। वह शोभा तो है ही, सारी सम्मृद्धियों की उत्सभूमि भी है। द्विवेदी जी का अभिमत है कि उचित शिक्षा के माध्यम से नारियों को समाज में अधिकाधिक परिष्कृत बनाया जाये और परम्परा से प्राप्त आदर्शो की प्रतिष्ठा बढ़ाई जाये। नारी के उत्कर्ष में समाज का उत्कर्ष निहित है। सच्ची गृहलक्ष्मियाँ कुटुम्ब की शोभा और राष्ट्र की शक्ति हैं। उनकी उज्ज्वल अभिराम चेतना से सारा विश्व मधुमय हो सकता है। इसीलिये हमें चाहिये कि हम भी नारियों को स्वच्छ और स्वस्थ दृष्टि से देखें जिससे वे अपने महार्घ गुणों के अनमोल भाव-रत्नों को समष्टि विश्व मे मुक्त भाव से लुटा सके।

======================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. डॉ0 रामशंकर त्रिपाठी - 'साकेत-सुधा', पृ0 13
2. डॉ0 लक्ष्मी नारायण सुधान्शु - 'जीवन के तत्व और काव्य के सिद्धान्त', पृ0 224
3. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-1, पृ0 282

4. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-1, पृ0 29
5. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-1, पृ0 321
6. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-1, 'बाण' पृ0 113
7. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-1, पृ0 272
8. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-1, पृ0 272
9. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-1, पृ0 272
10. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-2, पृ0 321
11. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-1, पृ0 224
12. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-1, पृ0 27
13. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-1, पृ0 164
14. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-1, पृ0 271
15. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-2, पृ0 19
16. हजारी प्रसाद द्विवेदी - ग्रन्थावली-2, पृ0 175

UGC Sl.No. 1962, Journal No. 40942,
Impact Factor 3.112
Vol.- XXIII-I, Hindi Edition, Year-12, Dec.-2017

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों में सांस्कृतिक दृष्टिकोण

* किरण वर्मा

सारांश- ''आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का साहित्य भारतीय संस्कृति, समाज और राष्ट्रीय विचार धारा से आप्लावित है। उन्होंने जहां भारत की प्राचीन सभ्यता सांस्कृतिक परिपेक्ष का वर्णन किया वहीं राष्ट्र चिंतन का स्वर भी मुखरित किया है। साहित्य में वे सर्वत्र राष्ट्र के प्रति चितिंत दिखाई पड़ते हैं, और राष्ट्र सेवा का भार स्वयं पर लेते हैं। राष्ट्र की आंतरिक अस्थिरता और दुर्बल दशा का वर्णन एवं इस अवस्था के निराकरण हेतु किए गए प्रयास द्विवेदी जी की राष्ट्रीय विचार धारा के परिचायक है। आज संसार में जो कुछ हो रहा है, इसे उन्होंने परखा है। समाज में आज भी प्रेम, नैतिकता, करूणा, त्याग जीवित है, इसलिये आचार्य द्विवेदी कहते हैं-''संसार में सद्‌गुणों के समझदार अब भी हैं। लोग सत्य और अहिंसा को आज भी बड़ी चीज मानते हैं, आज भी प्रेम और भक्ति की लोग आदर को दृष्टि से देखते हैं, आज भी लोग अन्याय के प्रतिवाद करने वाले को श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हैं, आज भी विवेक और निष्ठा को वही सम्मान प्राप्त है जो कृष्ण, बुद्ध या विक्रमादित्य के युग में प्राप्त था। देश के प्रत्येक क्रियाकलापों, परम्परा से अब तक होने वाले विकास पर द्विवेदी जी दृष्टि हैं।

द्विवेदी जी की दृष्टि में अभी भी कुछ ऐसा बचा है, जिससे वे आशा करते हैं, और बलिदान देकर भी उसे बचाया जा सकता है। लेकिन इसका मतलब यहनहीं है कि द्विवेदी जी को आज की विसंगतियों से कोई दुख ही नहीं है। दुख है, पीड़ा भी है, किंतु इनके साथ-साथ आशा भी है। आज के जीवन के संत्रास, विघटन, घुटन को देखकर भी द्विवेदी हृदय में कहीं न कहीं यह आशा रखते हैं कि मनुष्यता निःसंदेह बच जायेगी। मनुष्यता आज भी आसुरी वृत्ति से श्रेष्ठ मानी जाती है। आशा की जानी चाहिए कि एक समय होगा जब समस्त संसार हिंसा, घृणा और छीना झपटी के विषाक्त वातावरण से मुक्त होगा, आशा और विश्वास का ही संचार होगा। मनुष्य ने जाने कितनी बार पथभ्रष्ट हुआ है, गिरा, बेहोश हुआ और सम्भल कर उठ भी गया। अपनी ही गलतियों के जाल से अपने को मुक्त किया और फिर नयी ज्योति जलाकर और कुछ नहीं मिला तो अपनी हड्डी-पसलियों का ही मशाल जलाकर (दधीचि ने भी अपनी हड्डियां, अन्याय के विरूद्ध लड़ने के लिए दान दी थी) वह आगे बढ़ा है। निःसंदेह विषम संकट उपस्थित हुआ है, पर इसमें भी संदेह नहीं कि वह इस बार भी बचेगा....द्विवेदी जी कोरे आदर्शवाद नहीं हैं वे गांधी युग में भी राष्ट्र चिंतन से युक्त थे। मानव जाति के प्रति सदैव चिंतित रहे हैं। द्विवेदी जी ने लिखा है कि बड़ी बात यह नहीं है कि लड़ाई और शोषण की व्यवस्था चल रही है या नहीं चल रही है। बड़ी बात

* अध्यापक, शासकीय हाईस्कूल माड़ौ, जिला-रीवा (म.प्र.)

यह है कि लोग अपने को युद्ध या शोषण का उत्तरदायी बताने में लज्जा अनुभव कर रहे हैं। यह मनोवृत्ति मध्य युग की उस मनोवृत्ति से निश्चित रूप से भिन्न हैं, जो विश्व विजेता बनाने में गौरव अनुभव करती थी, और अपना रोब गालिब करने के लिए वृहत्तर जन समुदाय को ही हीन और पंगु रखना आवश्यक समझती थी। आज संसार में जो कुछ हो रहा है, उससे मनुष्य की मनोवृत्तियों की निन्दा हो रही है।

संस्कृति का तात्पर्य समाज में मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन ढंग से है। संस्कृति एक सामाजिक विरासत है जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित हो जाती है। संस्कृति में उन सभी गुणों का समावेश होता है जैसे- धर्म, प्रथा, रीति-रिवाज, रहन-सहन, कानून, साहित्य आदि। समाज में व्यति के द्वारा संस्कृति का निर्माण होता है तथा हर व्यक्ति में एकरूपता लाती है साथ ही समूह के सदस्यों के व्यवहारों का आदर्श रूप होती है और समाज का प्रत्येक सदस्य उसे आदर्श मानता है। समाज का हर व्यक्ति संस्कृति के सम्वर्द्धन में प्रयत्नशील रहता है किन्तु संस्कृति व्यक्तिगत नहीं होती वह सामाजिक होती है। किसी व्यक्ति विशेष के गुणों को संस्कृति नहीं कहा जाता है, संस्कृति तो सामाजिक गुणों का नाम है। भारतीय संस्कृति में मानव समाज के उद्भव और विकास के पतन में संस्कृतियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। अतः आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने उपन्यासों में भारतीय सांस्कृतिक एवं मानवतावादी दृष्टिकोण से तत्कालीन, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक स्थिति का सफलतापूर्वक चित्रण किया है।

आचार्य द्विवेदी ने अपने उपन्यास बाणभट्ट की आत्मकथा में सांस्कृतिक दृष्टिकोण से हर्षकालीन युग के समाज की जटिल सामन्ती विलासयी राजनीतिक स्थिति का वर्णन किया है कि-इस युग में लाख-लाख निरीह प्रजा की बहुओं और बेटियों का अपहरण कर उन्हे बेच दिया जाता था। उपन्यास की नारी पात्र महामाया सभा को सम्बोधित करती हुई कहती है-''आर्य सभा सदों इस उत्तरापथ में लाख-लाख निरीह बहुओं और बेटियों के अपहरण और विक्रय का व्यवसाय क्या नहीं चल रहा है? .... क्या निरीह प्रजा के बेटियां उनकी नयन तारा नहीं हुआ करती क्या राजा और सेनापति की बेटियों का खो जाना ही संसार की बड़ी दुर्घटनाएँ है? मेरी और देखों मैं तुम्हारे देष की लाख-लाख अवमानिता, लाक्षित और अकारण दण्डित बेटियों में से एक हूँ। कौन नहीं जानता की इस घृणित व्यवसाय के प्रधान आश्रय सामन्तों और राजाओं के अन्तःपुर हैं। आप में से किसे नहीं मालुम कि महाराजाधिराज की चामरधारिणियां और करकंवाहिनियां इसी प्रकार भगायी हुई और खरीदी हुई कन्याएँ है।[1] वस्तुतः उस युग के राज समाज की पूर्णता के लिए वारिविलासियां आवश्यक अंग बन गई थी, बाण ने हर्ष चरित में इसका अनेक मंत्र उल्लेख किया है।[2]

उपनिषद्काल की नारी स्वतंत्र थी वह खुलकर पुरूष की तरह यज्ञ में भाग लेती थीं, समाज में उनका सम्मान था साथ ही उन्हें उच्च्य पद प्राप्त करने का भी अधिकार था। ''अनामदास का पोथा'' उपन्यास की नारी पात्र जाबाला, ऋजुका, अरूधंती, ऋतंभरा आदि से इस बात का पता चलता है कि राजनीतिक क्षेत्र में भी उनकी राय लेते थे परन्तु कुछ क्षेत्रों में स्त्री का प्रवेश वर्जित था। इस युग में अभिनय करना उचित नहीं समझते-रंग भूमि में अभिनय करने से अधर्म की बुद्धि होती है और धर्म का हास होता है।[3] उस समय राजा जानश्रुति के राज्य में स्त्री-पुरूष, वृद्ध-बालक, भूख-प्यास से व्याकुलथे आचार्य औदुम्बरायण

बतलाते हैं कि महात्मा ने बताया कि- जिस राजा के राज्य में बच्चें और स्त्रियां भूख-प्यास से व्याकुल होती हैं, उसका सत्यानाश हो जाता है और राजा नरक का अधिकारी होता है।[4] एक तरह से प्रजा भी राजा की संतान की तरह होती है और राजा उसका पिता होता है। इसी बात को स्पष्ट करते हुए महात्मा बतलाते हैं। सबका सम्मान ध्यान रखना चाहिए।[5] राजा अपने राज्य को कर्मचारियों के आंख से देखता है। राजा जब तक स्वयं जागरूक न हो, तो राज कर्मचारी शिथिल हो जाते हैं। राजकर्मचारियों को निरंतर कसते रहना पड़ता है।[6] दोनों मिलकर ही शासन के व्यवस्था को बनाये रह सकते हैं। राजा जानश्रुति तत्वज्ञान के पीछे प्रजा को भूल गये थे, जब औदुम्बरायण ने राज्य की स्थिति से अवगत कराया तो उन्हें अपनी गलती पर पश्चाताप हुआ और सारा ध्यान।

प्रजा की तरफ लगा दिया तथा अपने भण्डार से सभी दीन-दुखियों को अन्न और औषधि तत्काल वितरित करा दिया। इस प्रकार उपनिषद्काल में राजा, प्रजा, राजतंत्र, राज्य कर्मचारी सभी अपने-अपने कर्तव्यों से भली-भांति परिचित थे और उसे पूरा करने का प्रयास करते थे। हमारे सांस्कृतिक संस्कार जो नष्ट होने लगे थे, उन्हें द्विवेदी जी ने पुनः संस्कारित कर आदर्श भारतीय संस्कृति के मूल्य स्थापित किये।

हर्षकालीन युग की राजनीतिक स्थिति ठीक नहीं थी, उस समय दस्युओं का डर था। प्रजा का विश्वास राजा पर नहीं था। भट्टिनी स्वयं स्थाण्वीश्वर के राजवंश में घृणा करती है और कहती है-मैं स्थाण्वीश्वर के राजवंश से घृणा करती हूँ। राजवंश से सम्बद्ध किसी भी व्यक्ति का आश्रय पाने से पहले यमराज का आश्र ग्रहण करूँगी।[7] लोरिक देव इसके ज्वलंत उदाहरण है। वे एक सामन्त होकर अपने कर्तव्य को ईमानदारी से पूरा करते हैं। सम्राट के बहनोई का संधी जब भट्टिनी का अपहरण करके लाता है तो कुमार कृष्ण निःसंकोच घोषणा करते हैं-''देवपुत्र नंदिन्दनी का जिन लोगों ने अपमान किया है और समस्त स्थाण्वीश्वर की राजलक्ष्मी को पैरों से ठुकराया है, उसका हिसाब उन्हें देना होगा।[8] उस समय राजनीतिक स्थिति का पता महामाया के भाषण से चलता है-'अमृत के पुत्रों नागाधिराज हिमालय की शीतल छाती में आज हलचल दिखाई दे रही है....समुद्रगुप्त के प्रताप ने क्या किया, चन्द्रगुप्त के रणहुंकार ने क्या किया, मौखरियों की दुर्दान्त वाहिनी ने क्या किया? अब भी जीवित हैं। आर्यावर्त नाश के कगार पर खड़ा है। राजाओं का भरोसा करना प्रमाद है, राजपुत्रों की सेना का मुंह ताकना कायरता है। आत्म रक्षा का भार किसी जाति पर छोड़ना मूर्खता है,... उन देवपुत्रों की आशा छोड़ों जो सामान्य शोक के आघात में छुई-मुई की भांति मुरझा जाते हैं। जिस आधार पर खड़े होने जा रहे हो, वह दुर्बल है. ... इन राजाओं में लम्पटता बढ़ गयी है, इसके अन्तःपुर निर्यातित बंधुओं के ंकदन से भरे हुए हैं। राजशक्ति के मूल लग गया है।[9] इस प्रकार आचार्य द्विवेदी ने सांस्कृतिक दृष्टिकोण से उपन्यास में पात्रों के माध्यम से राजन्य आदर्शों पर पर्याप्त प्रकाश डाला है।

'अनामदास का पोथा' उपनिषद्काल का वातावरण धार्मिक ही था। भारतीय संस्कृति में मनुष्य के जीवन में कोई भी कार्य करने का अपना दृष्टिकोण होता है। उपन्यास के पात्र रैक्व का उपनयन परम्परा के अनुसार कराया गया। इसमें यज्ञ-याग भी हुआ करता और इस शुभ अवसर पर लोगों को आमंत्रित किया जाता था। इस काल में विवाह के पहले ज्ञान-यज्ञ और इस यज्ञ के अन्त में दैव-विवाह के रूप में कन्यादान का रिवाज था। इस काल में विवाह के पहले ज्ञान यज्ञ और इस यज्ञ के अंत में दैव-विवाह के रूप में कन्यादान

का रिवाज था। भारतीय संस्कृति में धार्मिक कार्यो के अन्तर्गत दान देना, अतिथियों का स्वागत सत्कार करना आश्रम का ब्रम्हचारी रैक्व से कहता है-तुम तो जानते ही हो कि अतिथि का सम्मान नृयज्ञ माना जाता है। उसका आगे बढ़कर स्वागत किया जाता है, पैर धोने के लिए जल देना पड़ता है। आसन, शैया, दीप आदि की व्यवस्था करनी पड़ती है और ऐसे भोजन की व्यवस्था करनी पड़ती है जो अतिथि के उपयुक्त हो।[11] इस तरह की धार्मिक परम्परायें तत्कालीन समाज में प्रचलित थी।

हर्षकालीन समाज में सांस्कृतिक एवं सामाजिक उत्सवों के लोग बढ़-चढ़ कर भाग लेते थे। बाणभट्ट की आत्मकथा में कुमार कृष्णवर्धन के पुत्र जन्मोत्सव एवं नामकरण संस्कार के उपलक्ष्य में हो रहे आयोजन का वर्णन विस्तार से किया है- कर्मपृष्ठ के समान उन्नतोदर राजमार्ग पर एक बड़ा भारी जुलूस जा रहा था। उसमें स्त्रियों की संख्या ही अधिक थी। राजवधुएँ बहुमूल्य शिविकाओं पर आरूढ़ थी। साथ-साथ चलने वाली परिचारिकाओं के चरणविध हनजनित नूपुरों के क्वणन से दिगन्त शब्दामयमान हो उठा था। वेग पूर्वक भुज लताओं के उत्तोलन के कारण मणि जड़ित चूड़िया चंचल हो उठी थी। इससे बहुलताएँ भी झंकार करने लगी थी। उनकी ऊपर की हथेलियों को देखने से ऐसा लगता था, मानों आकाश गंगा में खिली हुई कमलिनिया हवा के झोकों से विलुलित होकर नीचे उतर आयी हो। भीड़ के संघर्ष से उनके कानों के पल्लव खिसक रहे थे। वे एक दूसरे से टकरा जाती थी। इस प्रकार एक का केयूर दूसरी की चादर में लगा कर उसे खरोंच डालता था। साथ में नर्तकियों का भी एक दल जा रहा था। उनके हँसते हुए वदनों को देखकर ऐसा भान होता था कि कोई प्रस्फुटिक कुमदों का वन चला जा रहा है। उनकी हारलताएँ जोर-जोर से हिलती हुई उनके वक्षभाग से टकरा रही थीं, खुली हुई केश-राशि सिन्दूर, बिन्दु पर अटक जाती थी। निरंतर गुलाल ओर अबीर के उड़ते रहने के कारण उनके केश पिंगल वर्ण के हो उठे थे और उनके मनोरम गान से सारा राजमार्ग प्रतिध्वनित हो उठा था।[12] उस समय कोई भी मांगलिक कार्य करने से पहले शुभ-अशुभ घड़ी का विशेष ध्यन दिया जाता था। गंगा दशहरा के दिनों में ही भट्टिनी और निपुणिका को बाणभट्ट स्थण्वीश्वर जाने के लिए कहता है- यह शुभ अवसर है, अभी चलने को तैयार हो जाना चाहिए।[13] बाण जिस दिन भट्टिनी का उद्धार करता है उस दिन चैत्र शुक्ल त्रयोदशी थी। इस दिन कुमारियां वृत करती और कामदेव की पूजा कर अपने वरदान में अभिलाषित वरों को मांग लिया करती। कन्याकुब्ज में यह उत्सव बड़े आडम्बर के साथ मनाया जाता है। आज मदनोद्यान में कुमारियों ने फूल चुने होंगे, हार गूँथे होंगे, कुमकुम और अबीर का तिलक लगाया होगा और लाक्षारस से भूर्जपत्र पर अपने-अपने अभिलाषित वरों की प्रतिमा चुपके से भगवान कुसुम सायक को भेट किया होगा।[14] फाल्गुन की पूर्णिमा (होली) के दिन में भी लोग हर्षोल्लास के साथ रंग खेलते थे। सारा नगर पुरवासियों की करतल ध्वनि मधुर संगीत और मृंदग के घोष से गूँज उठता था। मधुमत्त नगर विलासिनियों के सामने जो भी पुरूष पड़ जाता था उस पर श्रृंगक (पिचकारी के रंगीन जल की बौछार) हो जाती थी।[15] इस कथा में द्विवेदी जी ने भारतीय समाज के सांस्कृतिक स्वरूप को अपस्थित किया है।

अनामदास का पोथा उपन्यास में पर दुःख को दूर करने के सच्चे प्रयास को ही ध ार्म का मूल मानते हैं। मनुष्य के जीवन में सत्य सबसे बड़ा गुण हैं, स्वाध्याय और सत्संग

परमतप है और परदुख कातरता सबसे बड़ा मानवीय गुण हैं। इस उपन्यास में औषस्ति ऋषि का कहना है कि दूसरे के सुख के लिए अपने को दलित द्राक्षा की तरह निचोड़कर देना। इससे बड़ा तप मुझे मालुम नहीं है।[16] भारतीय मनीषियों ने मनुष्य के जीवन के चार पुरूषार्थ मानते हैं। इनमें तीन साधन है, अंतिम साध्य है जो मोक्ष की और बढ़ना ही मनुष्य के जीवन का परम लक्ष्य होना चाहिए। पहले तीन में धर्म सबसे बड़ा है। उसके अनुकूल रहकर अर्थ का उपार्जन करना चाहिए। अर्थ प्रधान नहीं है- धर्म का अविरोधी रहकर ही पुरूषार्थ है। धर्म के विरूद्ध जाने पर त्याज्य है। इसी प्रकार सौम्य काम, धर्म, अर्थ का अविरोधी रहकर ही पुरूषार्थ कहलाता है। धर्म और अर्थ के विरूद्ध जाने पर वह आचरणीय नहीं रहता।[17] यही कारण है कि द्विवेदी जी ने एक और जहां युग विशेष की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक परम्पराओं की सूक्ष्म व्याख्या की है तो दूसरी ओर मानव मूल्यों को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

भारतीय संस्कृति में अनेक प्रकार की देवी-देवताओं की उपासना की जाती रही है। आत्मकथा हर्षकालीन युग में महासरयू के संगम में वज्रतीर्थ की देवी पूजा की जाती थी। बाण कहता है-आज महानवी को तिथि है। आज वज्रतीर्थ की देवी के पूजन का परम माहात्म्य है।[18] उपन्यास में लेंखक का यह कथन महत्वपूर्ण है कि इस ब्रम्हाण्ड का प्रत्येक अणु देवता है। देवता ने जिस रूप में तुझे सबसे अधिक मोहित किया है, उसी की पूजा कर।[19] इसके अलावा बौद्ध उत्सव होते थे इसमें बुद्ध का जन्मोत्सव प्रधान माना जाता था जो वैशाखी पूर्णिमा के दिन मनाया जाता था। ऐसे अवसर पर वेश भूषा का विशेष रूप से ध्यान दिया जाता था- उनके वस्त्र, उष्णीय, अंगराग और माल्या सभी श्वेत थे।[20] बौद्धों के अतिरिक्त ब्राम्हण धर्म के अंतर्गत वैष्णव, शैव और शाक्य भी उपास्य देवता के भेद के आधार पर तत्कालीन समाज में विद्यमान थे। इस युग में विष्णु के केवल महावराह तथा नारायण रूप की उपासना का चित्रण किया है। सुचरिता ओर उसके गुरू वेंकटेश भट्ट द्वारा आराधित वासुदेव नारायण मनोहारी मूर्ति के चित्रण से स्पष्ट होता है कि हर्षकाल में वैष्णव आराधना भी तांत्रिक साधना से प्रभावित थी।[21] शाक्त साधना का प्रचलन खूब था इसलिए तंत्रों में शाक्ति को स्त्री रूप में ही देखे और पूजते थे। इस उपन्यास में बाबा सिद्ध अवधूत विरतिवज्र से कहते है - ''इस मार्ग में शक्ति के बिना साधना नहीं चल सकती। स्त्री को शक्ति समझकर ही पूर्ण हो सकता है।[22] अघोर भैरव अद्वैतवादी प्रवृत्ति के हैं इसलिए कौलाचार्य के रूप में सम्मानित हुए है।[23] लेखक ने धार्मिक दृष्टि से वैदिक धर्म, बौद्ध धर्म, वाममार्गी साधना पद्धतियों के परस्पर संघर्ष का समावेश कर प्राचीन संस्कृति को स्पष्ट कर दिया है। बहु देववाद के कारण भटकते मानव को द्विवेदी जी ने स्थिर चित्त होने की प्रेरणा दी। वे कबीर के दर्शन से प्रभावित थे इसलिए व्यक्ति को आत्मप्रेरित होने का संदेश देते है।

उपनिषद् कालीन उपन्यास 'अनामदास का पोथा' में भी अनेक रूपों में देताओं की उपासना की जाती रही है। औषस्ति ऋषि रैक्व को अपने गुरूमुख से सुनी हुई प्राचीनकाल की कथा सुनाते हैं कि उपमन्यु का वंशज प्राचीनशाल द्युलोक को आत्मा मानकर उसकी उपासना करता है[24] और पुलुष के वंशज सत्यज्ञ आदित्य को इस सूर्य को आत्मा मानकर उपासना करता है। इसी तरह कोई वायु को तो कोई आकाश को कोई पृथ्वी और जल को आत्मा मानकर उसकी उपासना करता है। अश्वपति कैकेय ने उन सभी उपासकों को

समबोधित करके कहा-आप लोग वैश्वानर आत्मा को भिन्न भिन्न तौर से जानते रहे, उसके पृथक-पृथक रूप की उपासना करते रहे हैं। जो यह समझकर उपासना करता है, वह प्रदेश में ही नहीं है, अपितु सर्वत्र विद्यमान है, वह सब लोगों में, सब भूतों में, सब आत्माओं में विद्यमान हैं।[25]

बाणभट्ट की आत्मकथा में कापालिक शैवों का संक्षिप्त चित्रण हुआ है। हर्षकाल में कापालिक लोग देवी के रूद्र रूप की उपासना किया करते थे। अघोर घण्ट भी अपनी साथ साधिका चण्डमण्डना के साथ कराला देवी की पूजा करते थे। जिसका वेश सचमुच विकराल था।[26] इस युग में भी कहीं न कहीं मानव जीलवन तंत्र-मंत्र से प्रभावित था। इन्हीं तांत्रिक साधनाओं की चर्चा द्विवेदी जी ने इस उपन्यास में की है। ये साधनायें तत्कालीन, धार्मिक साधनाओं से निमित्त सामाजिक इतिहास का चित्र भी प्रस्तुत करती है। उन्होंने सामाजिक, सांस्कृतिक यथार्थ को स्वाभाविक रूप से चित्रण किया है।

भारतीय समाज में सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण से मानव जीवन में शिक्षा एवं साहित्य का स्थान महत्वपूर्ण रहा है। उपनिषद् काल शिक्षा की दृष्टि से विशेष है। इस युग में एक तरह से सभी भारतीयों का जीवन ब्रम्हचर्य आश्रम वाला भाग है जिसमें वे अपने जीवन में आदर्शो को धार्मिक आध्यात्मिक एवं दार्शनिक संस्कारों को जो रूप दिया है उन्हीं के दिखलायें हुये रास्ते पर आज भी मानव जीवन चलने का प्रयत्न करता है। द्विवेदी जी ने अपने उपन्यास ''अनामदास का पोथा'' में उस समय की समस्त शिक्षा, साहित्य संबंधी मान्यताओं का सुंदर चित्रण किया है। इस युग में उन दिनों वैदिक अध्ययन की धूम थी। ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद के अतिरिक्त चौथा अथर्ववेद भी अध्ययन के आधारभूत ग्रंथ माने जाते थे। फिर वेदों का वेद समझा जाने वाला इतिहास, पुराण वैदिक ज्ञान की कुंजी माना जाता था। जो इतिहास पुराण नहीं जानता था, उसे अल्पश्रुत माना जाता था और ऐसा विश्वास किया जाता था कि ऐसे अल्पश्रुत व्यक्ति से वेद डरते रहते हैं। उपर्युक्त साहित्य के अलावा पित्र्य शास्त्र, गणित, विज्ञान, दैव विद्या, निधिशास्त्र , वाकोवाक्य (तर्कशास्त्र) एकायन (नीतिशास्त्र), निरूक्त, भूतविद्या नक्षत्र, विद्या, सर्प विद्या, देवजन विद्या (ललित कला) आदि विधि शास्त्रों का अध्ययन अध्यापन चलता था।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अपने उपन्यासों में प्राचीन संस्कृति के उस रूप को स्वीकार किया है जो आज के सामाजिक जीवन को स्वास्थ्य रूप प्रदान कर सकें। उन्होंने उन सामाजिक बुराईयों को कभी भी स्वीकार नहीं किया जा समाज के लिए हानिकारक हैं और न ही समाज के विरोधी वैयक्तिक स्वतंत्रता को मान्यता दी। उनकी दृष्टि प्रगतिशील है और उन्हीं परम्पराओं को स्वीकारा है जो समाज के लिए आवश्यक एवं उपयोगी हैं।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों को सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण से ऐतिहासिक विकास क्रम से रखकर देखा कि अपने वाले प्रत्येक युग में आदर्शो का वहीं रूप नहीं था जो पिछले युग में था। इन्हीं कारणों की ओर संकेत करते हुए द्विवेदी जी लिखते हैं कि जब तक व्यवस्थाओं को निरंतर संस्कार और परिमार्जन नहीं होता रहेगा, तो व्यवस्थाएँ तो टूटेगी ही, साथ ही धर्म को भी तोड़ देंगी। वास्तव में ऐसा ही हुआ। मानवता को भूलाकर समाज को चार वर्गो में बांट कर समाज में ऊंच-नीच एवं जात-पात की दीवार खड़ी कर दी। स्त्री के मातृत्व रूप की अवहेलना करके उसके भोग्य रूप को महत्व देने लगे तथा धर्म नैतिक आदर्शो से उतर कर

उन्हीं के खिलाफ प्रचार करने लगे, दर्शन का अद्वैत और अध्यात्मक का ईश्वर तेरे-मेरे की संकीर्ण परिधियों में बंधकर विद्रोही हो उठा, गुरू-शिष्य सहज प्रेम व श्रद्धा को भूलाकर अर्थ के माध्यम से अपने संबंधों को मापने तौलने लगे, साहित्य का स्वर मानव कल्याण से हटकर व्यक्तिगत स्वार्थो के प्रचार में प्रवृत्त हो गया यानि की सभी कुछ रूढ़ियों में बंधकर विकृत का रूप ले लिया।

समाज में मनुष्य के मन को सत्वस्थ तथा सुंदर बनाने वाले आदर्शों को जब शाश्वत मानकर उन्हें फिर से देखने, संवारने का प्रयत्न नहीं किया गया तो धीरे-धीरे उन आदर्शों का वास्तविक स्वरूप धुंधला पड़ने लगा और वह विकृति का रूप ले लिया। वास्तव में शाश्वत वह नहीं है, जिसे एक बार अविरोधी मान लेने के बाद, कभी उस पर पुनः विचार ही न किया जाये। शाश्वत वह है, जिसे समय-समय पर संवारा जाये, जिससे अपेक्षा करना स्वाभाविक है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने समस्त उपन्यासों में सर्वत्र इसी की ओर ध्यान आकर्षित किया है।

अतः आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपनी समस्त कृतियों में सांस्कृतिक लक्ष्य की ओर बराबर संकेत किया है। उनकी दृष्टि से लक्ष्य पर ही केन्द्रित है। अर्जुन की भांति मत्स्य की आंख ही उन्हें दिखलायी दे रही है और वह मानवतावाद! इस सृष्टि में सभी चिंतनों में केवल एक चिंतन होता है और वह मनुष्य। मनुष्य से बढ़कर कोई अन्य अमूल्य प्राणी इस विश्व में नहीं है। जिस दिन प्रत्येक मनुष्य इस सत्य को खोज लेगा, उस दिन उसे समस्त विश्व में ''स्व'' के विराट रूप के दर्शन होगे। उसी विराट दर्शन का दूसरा नाम ईश्वर तथा मोक्ष है।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. ग्रन्थावली भाग-1, (बाण भट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-174.
2. हर्ष चरितम् द्वितीय अध्याय, पृष्ठ-127-128.
3. ग्रन्थावली भाग-2, (अनामदास का पोथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-394
4. ग्रन्थावली भाग-2, (अनामदास का पोथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-361
5. ग्रन्थावली भाग-2, (अनामदास का पोथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-360
6. ग्रन्थावली भाग-2, (अनामदास का पोथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-380
7. ग्रन्थावली भाग-2, (अनामदास का पोथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-381
8. ग्रन्थावली भाग-2, (अनामदास का पोथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-63
9. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-69
10. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-225.
11. ग्रन्थावली भाग-2, (अनामदास का पोथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-451
12. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-25.
13. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-223.
14. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-37.
15. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-90.
16. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-349.
17. ग्रन्थावली भाग-1, (अनामदास का पोथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-350
18. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-129.
19. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-79.
20. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-151.
21. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-158.

22. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-86.
23. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-82.
24. ग्रन्थावली भाग-2, (अनामदास का पोथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-366
25. ग्रन्थावली भाग-2, (अनामदास का पोथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-368
26. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-130.
27. ग्रन्थावली भाग-1, (बाणभट्ट की आत्मकथा) डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-421.

RNI No MP BIL 01034 / 12 / 1 / 2005 - TC
REGISTRAR OF NEWS PAPERS IN INDIA, GOVT. OF INDIA

ISSN 0973-3914

9 770973 391009

JOURNAL OF
Centre for Research Studies
Rewa-486001 (M.P.) India
Registered under M.P. Society Registration Act,
1973, Reg. No. 1802,Year-1997
www.researchjournal.in

Editor : Prof. Braj Gopal, Printed and Published by Dr. Gayatri Shukla on behalf of Gayatri Publications, 41/42 Raghuwans Sadan, Bichhiya, Rewa, 486001 (MP) and Printed at Yuvraj Press, Ghoghar, Raniganj, Rewa 486001 (MP)